श्रीः

अष्टादश

पुराणोपक्रमणिका ।

जिस में सर्व पुराणों की संख्या तथा अध्यायानुसार
विषयों का विवरण है ।

इति।

पांचखण्ड म २५००० सहस्र श्लोक । पुरान
भूमिखण्ड ३ स्वर्गखण्ड ४ पातालखण्ड पुराण विष्णू
प्रथमसृष्टिखण्ड ।—पुलस्त्य भीष्म पढतसुनत सम अमियपान ॥
धर्म आख्यान और इतिहास कथन इस ार परिष्यत सुकदेव ॥
ब्रह्मयज्ञ विधि ३ वेदपाठादि लक्षण ४ दान वि आनन्द भाव ॥
कथन ६ प्रेत जाया विवरण ७ तारकाख्यान ८ गोम सो दुग्ध जार ॥
दैत्य वध १० ग्रहों की पूजा एवं दान विवरण है ।
द्वितीयभूमिखण्ड ।—सूतशौनकसंवाद । १ पिढ

अष्टादशपुराणोपक्रमणिका ।

प्रथम ब्रह्मपुराण ।

यह पुराण पूर्व्व एवं उत्तर २ भाग में विभक्त है । अवस्थ श्लोक संख्या १०००० दश सहस्र । सूत शौनक संवाद में नाना प्रसङ्ग एवं विविध इतिहास वर्णित हैं ।

पूर्व्वभाग ।—१ देवता एवं असुर गणों की उत्पत्ति वर्णन २ दक्षादि प्रजापति की उत्पत्ति वर्णन ३ सूर्य्यवंश वर्णन एवं तन्मध्य में श्रीराम का चतुर्व्यूह कथन ४ सोमवंश वर्णन तत् प्रसङ्ग से श्रीकृष्ण चरित्र कथन ५ द्वीपकथन ६ वर्षकथन ७ पातालकथन ८ स्वर्गकथन ९ नरककथन १० सूर्य्यस्तुति ११ पार्वती जन्म एवं विवाह कथन १२ दक्षआख्यान १३ एकाम्र चेत्रकथन ॥

उत्तरभाग ।—१ पुरुषोत्तमवर्णन २ तीर्थ यात्राविस्तार कथन ४ यमलोक-कथन ५ पितृश्राद्धविधि ६ वर्णाश्रमाचार धर्म्मनिरूपण ७ विष्णुधर्म्म कथन ८ युगाख्यान ९ प्रलयकथन १० योगकथन ११ सांख्यकथन १२ ब्रह्मवादकथन १३ पुराणांशकथन ।

फलश्रुति ।—यह पुराण लिखा कर वैशाखमास में स्वर्ण युक्त जलधेनु सहित पौराणिक ब्राह्मण को अर्चना पूर्वक दान करने एवं ब्राह्मण भोजन कराने से चंद्र सूर्य्य स्थिति काल पर्य्यन्त ब्रह्मलोक में स्थिति होती है एवं संयत होकर यह पुराण श्रवण वा पाठ करने से सकल धर्म्मफल लभ्य होता है ।

द्वितीयपद्मपुराण

पांचखण्ड में ५५००० सहस्र श्लोक । [illegible] था १ सृष्टिखण्ड २ भूमिखण्ड ३ स्वर्गखण्ड ४ पातालखण्ड [illegible]

प्रथमसृष्टिखण्ड ।—पुलस्त्य भीष्म [illegible] धर्म्म आख्यान और इतिहास कथन इस [illegible] ब्रह्मयज्ञ विधि ३ वेदपाठादि लक्षण ४ दान [illegible] कथन ६ शैल जाया विवरण ७ तारकाख्यान ८ गौम[illegible] दैत्य वध १० ग्रहों की पूजा एवं दान विवरण है ।

सुने,
पुरान तिन
पुराण विष्णु
पढतसुनत सम अमियपान ॥
पार परिष्यत सुकदेव ॥
आनन्द भाख ॥
सो दुख जार ॥

द्वितीयभूमिखण्ड ।—सूतशौनकसंवाद । १ पितृ

शर्म्मा कथा ३ सुव्रतचरित्र ४ वृत्रासुरबध ५ पृथक्वर्ण आख्यान ६ धर्म्मकथा ७ पितृशुश्रूषणकथन ८ नहुषकथा ९ ययातिचरित्र १० गुरुतीर्थ निरूपण ११ राजा के सहित जैमिनि के संवाद में बहुत सी आश्चर्य्यकथा १२ अशोकसुन्दरी की कथा १३ हुण्डदैत्यबध १४ कामदाख्यान १५ विदूषकबध १६ च्यवन कुञ्जल का सम्वाद १७ सिद्धाख्यान १८ ग्रन्थ की फल श्रुति ।

तृतीयस्वर्गखंड।—ऋषि लोगों से सौति का कथा प्रसङ्ग १ ब्रह्माण्डोत्पत्ति कथन २ भूमि लोक संस्थान ३ तीर्थ आख्यान ४ नर्मदा की उत्पत्ति ५ नर्मदास्थ तीर्थ उपाख्यान ६ कुरुक्षेत्रादि तीर्थकथन ७ कालिन्दी की पुण्यकथा ८ काशीमाहात्म्य ९ गयामाहात्म्य १० प्रयागमाहात्म्य ११ वर्णाश्रम धर्म्म एवं योग निरूपण १२ व्यास जैमिनिसम्वाद की पुण्य कथा १३ समुद्रमन्थन १४ व्रतकथन १५ श्रेष्ठमाहात्म्यस्तोत्र ।

चतुर्थपातालखण्ड।—श्रीराम का अश्वमेध एवं राज्याभिषेक कथन २ अगस्त्यादि का आगमन ३ पौलस्त्य का उपाख्यान ४ अश्वमेध कारणादेश ५ अश्वमेधीय घोटकगमन ६ नानाराज कथन ७ जगन्नाथ देव का वृत्तान्त ८ वृन्दावन का माहात्म्य ९ लीलावतारी श्री नित्यलीलानुकथन १० वैशाख स्नान दान एवं अर्चनमाहात्म्य ११ धरावराहसंवाद १२ यमएवं ब्राह्मण की कथा १३ राजा का आचरण १४ श्रीकृष्ण का स्तोत्र १५ शिवशंभुमिलन १६ दधीचि का आख्यान १७ भस्मधारण महात्म्य १८ शिवमहात्म्य १९ इंद्रद्युम्न का आख्यान २० पुराणवित्जन की प्रशंसा २१ गौतम का आख्यान २२ गीता २३ भारद्वाज के आश्रम में श्रीरामचन्द्र का कल्पान्तरीय इतिहासकथन ।

पञ्चमउत्तरखण्ड।—शिव [illegible] वाद १ पर्वत का आख्यान २ जालन्धर की कथा ३ श्री शैलादि [illegible] ४ सगर का उपाख्यान ५ गङ्गा प्रयाग काशी एवं गया की [illegible] ६ दानमाहात्म्य ७ माहात्म्यद्योतकथन ८ चतु[illegible] [illegible] महि विष्णुधर्म्मकथन १० विष्णुसहस्रना[illegible] [illegible] १३ जम्बूद्वीप के तीर्थ सकल का [illegible] १५ नृसिंहोत्पत्तिकथन १६ देवशर्म्मा का [illegible] १८ भक्ति का माहात्म्य १९ श्रीभागवत माहिमा २१ नाना तीर्थकथा २२ मन्वन्तर की [illegible] कथन २४ मत्स्यादि अवतार कथन २५ [illegible] २६ भृगु की विष्णुविभव परीक्षा ।

फलश्रुति ।—यह पुराण लिखाकर स्वर्णयुक्त पुराणवित् ब्राह्मण को दान करने से अथवा श्रवण करने से वैष्णव धाम की प्राप्ति होती है एवं इस को अनुक्रमणिका श्रवण करने से समुदाय पुराण श्रवण का फल लाभ होता है।

तृतीय विष्णुपुराण । *

आदि एवं अन्त २ भाग में २३००० सहस्र श्लोक उस में आदि भाग ६ अंश

---

* विष्णुपुराण २३ हजार श्लोक है परन्तु भूलकर सुखसागर के बारहवें स्कंध में ३०००० तीसहजार लिखदिया ! यही नहीं वरंच चन्द कवि ने भी रायसा में २३ हजार चारसौ लिखदिया परन्तु रायसा के कई एक पुस्तकों में २३४०० और रामरत्न गीता में अस्सी हरजार लिखदिया परन्तु तुलसी स-टार्थ में तेईस हजार लिखा मेरी राय से जिन जिन पुस्तकों में अंतर है उन सब को यहां लिखदेता हूं पाठक गण स्वयं विचार करलें।

सुखसागर में मक्खनलाल ने लिखा है। ब्रह्मपुराण दशहजार वो पद्मपुराण पचपनहजार वो विष्णुपुराण तीसहजार वो शिवपुराण चौबीसहजार वो श्री मद्भागवत पुराण अठारहहजार वो नारदपुराण पच्चीसहजार वो मार्कण्डेयपु-राण नौहजार वो अग्निपुराण पन्द्रह हजार चारसौ वो भविष्यपुराण चौदह हजार पांच सौ वो ब्रह्मवैवर्त्त पुराण अठारह हजार वो लिङ्गपुराण ग्यारह हजार वो वाराहपुराण चौबीसहजार वो स्कन्दपुराण इक्यासी हजार एकसौ वो वामनपुराण दशहजार वो कूर्मपुराण सत्रह हजार वो मत्स्यपुराण चौदह हजार वो गरुड़पुराण उन्नीसहजार वो ब्रह्माण्डपुराण बारह हजार श्लोक है।

पृथ्वी राज रासौ में लिखा है।

पद्धरी—ब्रह्मन्यदेव सम वासुदेव। अष्टादस पुरान तिन कहै समेव॥
तिन कहौं नाम परिमान ब्रन्नि। जिन सुनत सुद्ध भव हो तन्नचि॥
ब्रह्मह पुरान दस सहस तुट्टि। जिहि पढत सुनत तन तप्प छुट्टि॥
पंचास पंचह हज्जार गन्नि। पद्मह पुरान तिन कह्यौ ब्रन्नि॥
तेईस सहस सैं चारि जानि। विष्णू पुराण विष्णू समानि॥
चौबीस सहस कहिं शिवपुरान। तिहिपढतसुनंत सम अमियपान॥
अठार सहस भागवंत मेव। करि पार परिष्यत सुकदेव॥
नारद पुरान कहि पाव लाख। तहां मुक्ति मोट आनन्द भाख॥
मारकंड नाम तेइस हजार। पौरान पवित्र सो दुख जार॥

में विभक्त। मैत्रेय पराशर सम्वाद वराह कल्पोपाख्यान प्रथमभाग प्रथम अंश॥

पंद्रह हजार संख्या सपूर। अग्नि पुरान पढ़ि पाप दूर॥
चवदे हजार में पांच पढ़ि। भवषित पुरान सो पाप जढ़ि॥
ब्रह्मवैवर्त सहसं अठार। केवल गिनान कथि भक्ति सार॥
रुद्रह हजार लिंगह पुरान। आनन्द अर्थ आगम गुरान॥
चौबीस सहस बाराह भक्ति। पौरख पुरान तिन अमित सक्ति॥
हजार इक्यासी कहि विवेक। स्कंद पुरान भव भक्ति एक॥
इग्यारह सहस बावन सु अंक। पौरान सुनत सुधि अग्ग पंक॥
सत्रह हजार कूरंम पुरान। भाषा विनोद प्राक्रम गुरान॥
विद्या हजार मित मच्छ देव। विधि संख उधरे सेव भेव॥
गुनईस सहस गरुडह पुरान। श्रोतान वक्त भक्ति उरान॥
ब्रह्मांड पुरान बारह सहंस। करि व्यास भक्ति प्रभु कंस नंस॥
पंद्रह हजार अरु च्यरि लाख। सम ब्रह्म व्यास कहि चंद भाख॥

तुलसी शब्दार्थ में लिखा है। अष्टादश पुराण—

दोहा—ब्रह्म ब्रह्माण्ड वावन सरस, ब्रह्मवैवर्त सुजान।
मार्कण्ड अरु भविष्य ये, राजस कहैं पुरान॥ १॥
नारद विष्णु वराह अरु, गरुड़ पद्म सुखसार॥
भगवत रूपी भागवत, ये सात्विक निरधार॥ २॥
मीन कूर्म्म अरु लिंग सिव, स्कन्दरु अग्निविचार।
तामस सिव के अंग ए, सुनतहि मिटै खमार॥ ३॥
बावन ब्रह्म दस दस सहस, द्वादस है ब्रह्मण्ड।
ब्रह्मवैवर्त दस सहस पुनि, पचपन पद्म अखण्ड॥ ४॥
पन्द्रह सहस सुचारिसत, मार्कण्ड सु पुरान।
साढ़े चौदह भविष्य है, तेइस विष्णु बखान॥ ५॥
पंचविंस नारद कहत, सूकर चौविस जान।
उनइस गरुड़ बखानिय, अठारह भगवत मान॥ ६॥
मत्स सु चौदह सहस है, कूरम सत्रह होइ।
लिंग इकादस कहत हैं, चौबिस रुद्र जु सोइ॥ ७॥
पावक पन्द्रह सहस पुनि, चारि सैकरा आन।

स्कन्ध इक्यासी सहस अरु , इकसत वारत बखान ॥ ८ ॥
तीन लाख अट्ठानवे , सहस वेद सत आद ।
सब पुरान श्लोक की , कही व्यास मर्याद ॥ ९ ॥

उपपुराण नाम—सनतकुमारहिनानपुनि , नारसिंह अस्कन्ध ।
दुर्वासा आश्चर्यगनि , नारद कपिल प्रबन्ध ॥ १० ॥
मानव अरु ब्रह्माण्ड कहि , भार्गव गरुड़ बखान ।
माहेश्वर पुनि कालिका , सांवक सूर्य पुरान ॥ ११ ॥
विष्णुपुरान परासरी पुनि , संचय सर्वार्थ ।
देवि भागवत मिलि भये , अष्टादस सब सार्थ ॥ १२ ॥

श्रीभागवत के १२ वें स्कंध के १३ वें अध्याय में लिखा है।

ब्राह्मंदशसहस्राणिपाद्मंपंचोनषष्टिच श्रीवैष्णवंत्रयोविंशच्चतुर्विंशतिशैवकम् ॥ ४ ॥
दशाष्टौश्रीभागवतं नारदंपंचविंशति मारकंडेयंनववाह्नंतुदशपंचचतुःशतम् ॥ ५ ॥
चतुर्दशभविष्यंस्यात्तथापंचशतानिच दशाष्टौब्रह्मवैवर्तंलिंगमेकादशैवतु ॥ ६ ॥
चतुर्विंशतिवाराहमेकाशीतिसहस्रकम् स्कांदंशतंतथाचैकंवामनंदशकीर्तितम् ॥ ७ ॥
कौर्मंसप्तदशाख्यातंमात्स्यंतत्तुचतुर्दश एकोनविंशत्सौपर्णंब्रह्मांडंद्वादशैवतु ॥ ८ ॥
एवंपुराणसंदोहश्चतुर्लक्षंउदाहृतः तत्राष्टादशसाहस्रंश्रीभागवतमिष्टाते ॥ ९ ॥

पुराणों के नामों में भी कई एक लोगों ने पृथक पृथक लिखा है। यथा शब्द कोष में लिखा है।—पुराण। (; पुरा पुराना (पुर आगे जाना)—अर्थात् जिसमें पुराने समय की बातें हों, अथवा जो पुराने समय में बने हों) पु० वे ग्रन्थ जिन में से बहुतों को व्यास जी ने बनाये अथवा इकट्ठे किये। पुराण सब पद्य में लिखे हुए हैं और उन को हिंदू पवित्र मानते हैं। हर एक पुराण में विशेष कर से इन पांच बातों का वर्णन है जैसे। सर्गश्च प्रति सर्गश्च वंशोमन्वन्तराणि च वंशानु चरितं चैव पुराणं पंच लक्षणम् ।

अर्थात् १ संसार की उत्पत्ति; २ प्रलय और प्रलय के पीछे फिर संसार की उत्पत्ति; ३ देवता और शूर वीरों की वंशावली ; ४ मनुओं का राज; और ५ उन के वंश के लोगों का व्यवहार और चलन; पुराण अठारह हैं १ ब्रह्म पुराण, २ पद्मपुराण, ३ ब्रह्मांडपुराण, ४ अग्निपुराण, ५ विष्णुपुराण ६

४ दक्षादि वर्णन ५ ध्रुवचरित्र ६ पृथुचरित्र ७ प्रचेता आख्यान ८ प्रह्लाद उपाख्यान ९ प्रह्लाद राज्य का पृथक आख्यान ।

गरुड़पुराण, ७ ब्रह्मवैवर्त्तपुराण, ८ शिवपुराण, ९ लिङ्गपुराण, १० नारद पुराण, ११ स्कन्दपुराण, १२ मार्कण्डेपुराण, १३ भविष्यत पुराण, १४ मत्स्यपुराण, १५ वराहपुराण, १६ कूर्मपुराण, १७ बामन पुराण, श्री मद्भागवत पुराण । इन सब पुराणों में चार लाख श्लोक गिने गये हैं और अठारह उपपुराण भी हैं गु० पुराना ; पहले का; सबसे पहला ।

संस्कृत कोष में लिखा है ।—पुराण पुं० पण अर्थात् व्यवहार दांव मूल्य धन द्यूतव्यवहार अर्थात् जुए का खेल विष्णु चिरंजीवी दीर्घायुः प्राणःजीव ईश्वर वां० त्रि० प्रत्न प्राचीन पुराना वृद्ध जीर्ण न० पंचलक्षण अर्थात् व्यास के बनायेहुए अठारह पुराण तथा च प्रमाणम् ॥ श्लोक मद्वयं भद्वयं चैव ब्रत्रयं वचतुष्टयम् ॥ अनापलिंगकूस्कानि पुराणानि पृथक् पृथक् ॥ १ ॥

मार्कंडेय पुराण १ मत्स्यपुराण २ भविष्योत्तरपुराण ३ भागवतपुराण ४ ब्रह्मांडपुराण ५ ब्रह्मवैवर्त्तपुराण ६ ब्रह्मोत्तर पुराण ७ वाराहपुराण ८ बामनपुराण ९ वायुपुराण १० विष्णुपुराण ११ अग्निपुराण नारद पुराण १३ पद्मपुराण १४ लिंगपुराण १५ गरुड़पुराण १६ कूर्मपुराण १७ स्कंदपुराण ।

शिवपुराण के उलथा में शिवसिंह ने यों लिखा है ।

पुराण १८ हैं और उप पुराण भी अठारह है जिनके नाम यह हैं पद्म १ स्कंद २ गरुड़ ३ मत्स्य ४ वायु ५ ब्रह्माण्ड ६ लिंग ७ अग्नि ८ कूर्म ९ बामन १० नारदीय ११ विष्णु १२ भविष्योत्तर १२ मार्कण्डेय १४ वाराह १५ भारत १६ ब्रह्मवैवर्त्तक १७ भागवत १८ । उपपुराण । काली १ शाम्ब २ सनत्कुमार ३ वरुण ४ मारीच ५ नन्दी ६ शिव ७ दुर्वासा ८ मुनि ९ नारदीय १० कपिल ११ सौरि १२ माहेश्वरी १३ शुक्र १४ भार्गव १५ नृसिंह १६ धर्म १७ पाराशर १८ ॥

अथ श्लोक अष्टादशपुराणे ॥

पद्मस्कन्दविहंगमत्स्यपवनं ब्रह्माण्डलिंगानय: ।
कूर्मोवांमननारदीयसहितं विष्णुभविष्योत्तरं ॥
मार्कण्डेय वराह भारतयुतः श्रीब्रह्म वैवर्त्तकः ।
श्रीमद्भागवतंदिशंतुपरमं श्रेयः पुराणा निवे ॥ १ ॥

प्रथमभाग द्वितीयअंश।—१ प्रियव्रत उपाख्यान २ द्वीप और वर्ष निरूपण ३ पाताल कथन ४ नरककथन ५ सप्तस्वर्ग निरूपण ६ सूर्य्यादिसंचार ७ भरतचरित्र ८ मुक्तिमार्ग निरूपण ९ निदाघादि ऋतुसंवाद।

प्रथमभाग तृतीयअंश।—१ मन्वन्तर कथा २ वेदव्यास अवतार ३ नरकउद्धार और कर्म्म ४ सगर एवं औघ संवाद में सर्व धर्म्म निरूपण ५ वर्णाश्रम निरूपण ६ श्राद्धकल्प ७ सदाचारकथन ८ मायामोह की कथा।

प्रथमभाग चतुर्थअंश।—१ सूर्य्यवंशकथा २ सोमवंशकथा।

प्रथमभाग पञ्चमअंशे।—१ नाना राजा लोगों की कथा २ श्रीकृष्णावतार प्रश्न ३ गोकुल कथा ४ श्रीकृष्ण बाल्य लीला पूतनादिवध ५ कौमार अघासुरादिवध ६ कैशोरकंसवधादि मथुरालीला ७ यौवन द्वारवतीलीला दैत्य वध एवं विवाह ८ भूभारहरण ९ अष्टावक्र उपाख्यान।

प्रथमभाग षष्टअंश।—१ कलिजात चरित्र २ चतुर्विध लय कथा ३ ब्रह्मज्ञान कथा ४ केशिध्वज कर्तृक खाण्डिक्य निरूपण।

द्वितीयभाग—सूतशौनक सम्वाद—१ विष्णु धर्म्म कथन २ नाना धर्म्म कथन ३ पुख्य व्रत नियम एवं यम कथन ४ धर्म्मशास्त्र ५ अर्थशास्त्र ६ वेदान्तशास्त्र ७ ज्योतिःशास्त्र ८ वंश आख्यान ९ स्तवकथन १० मनु सकल की कथा।

फलश्रुति—यह पुराण लिखा कर अषाढ़मास में घृत धेनु के साथ पौराणिक ब्राह्मण को दान करने से सूर्य्यके रथ पर आरोहण करके विष्णुधाम में गमन एवं भक्तियुक्त पाठ किम्बा श्रवण करने से विष्णुलोक में वास औ दिव्य भोग प्राप्ति होती है इस की अनुक्रमणिका पाठ वा श्रवण करने से समुदाय पुराण श्रवण फल होता है।

चतुर्थ वायुपुराण।

पूर्व्व और उत्तर दो खण्ड २४००० सहस्र श्लोक वायु ने श्वेत कल्प प्रसङ्ग से सकल धर्म्म कहा है।

यथा अष्टादश उपपुराणे॥

कालीसांबसनत्कुमारवरुणं मारीचनंदीशिवं।
दुर्वासामनुनारदीयकपिलं शौरचमाहेश्वरो॥
शुक्रंभार्गव कांन्टसिंहमपर धर्म्मचपराशरं।
कुर्वन्त्यूपपुराणकानिसुततेसञ्जीलितेऽष्टादश॥२

पूर्वभाग—१ स्वर्गादि लक्षण विस्तार कथन२ सकल मन्वन्तर के राजगण का वंश कथन ३ गयासुरबध ४ मास गणों की महिमा एवं माघमास की विशेष महिमा ५ दान धर्म एवं राज धर्म विस्तार कथन ६ भूचर पतालचर दिक्चर एवं आकाश चर विवरण ७ व्रत विवरण।

उत्तरभाग—१ नर्म्मदा तीर्थ कथन २ शिवसंहिता कथन।

फलश्रुति—यह पुराण लिख कर गुड़ धेनु के साथ गृहस्थ ब्राह्मण को श्रावण मास में दान करने से चतुर्द्दश इंद्र परिमित काल रुद्रलोक में वासनियम एवं हविष्य से पुराण श्रवण करने से वा श्रवण कराने से रुद्र तुल्यता प्राप्ति पुराण की अनुक्रमणिका सुनने से समुदाय पुराण श्रवण फल लाभ होता है।

पञ्चम श्रीभागवत।

द्वादशस्कन्ध १८००० सहस्र श्लोक सारस्वत कल्पीय कथा।

प्रथमस्कन्ध।—१ सूत और ऋषियों का मिलन २ व्यासदेव का पुण्य चरित्र ३ पाण्डव का चरित्र ४ परीक्षित का उपाख्यान।

द्वितीयस्कन्ध।—१ परीक्षित शुकसम्वाद से सृष्टिद्वयनिरूपण २ ब्रह्मानारद सम्वाद से अवतार कथन ३ पुराण लक्षण ४ सृष्टि प्रकरण कथन।

तृतीयस्कन्ध।—१ विदुरचरित्र एवं मैत्रेय मिलन २ ब्रह्मा सृष्टि प्रकरण ३ कपिल सांख्य कथन।

चतुर्थस्कन्ध।—१ सतीचरित्र २ ध्रुवचरित्र ३ पृथुचरित्र ४ प्राचीन वर्हि आख्यान।

पञ्चमस्कन्ध।—१ प्रियव्रतचरित्र एवं उनका वंशकथन २ ब्रह्माण्डान्तर्गत लोक सकल का वृत्तान्त ३ नरकस्थिति कथन।

षष्ठस्कन्ध।—१ अजामिल चरित्र २ दक्षसृष्टि निरूपण ३ वृत्रासुर आख्यान ४ मरुत जन्म कथन।

सप्तमस्कन्ध।—१ प्रह्लादचरित्र २ वर्णाश्रम निरूपण ३ वासना कर्म इत्यादि कीर्त्तन।

अष्टमस्कन्ध।—१ गजेन्द्र मोक्षण २ मन्वन्तर निरूपण ३ समुद्रमथन ४ बलि वैभव एवं बन्धन ५ मत्स्यावतार चरित्र।

नवमस्कन्ध।—१ सूर्य्यवंश कथन २ रामायण ३ सोमवंश निरूपण।

दशमस्कन्ध।—१श्रीकृष्ण बालचरित्र २ कौमार चरित्र ३ व्रजस्थिति ४ कैशोर लीला ५ मथुरावास ६ यौवन ७ द्वारकास्थिति ८ भूभारहरण।

एकादशस्कन्ध—१ वसुदेव नारद संवाद २ यदु दत्तात्रेय सम्वाद ३ श्री कृष्ण उद्धव सम्वाद ४ यादव मुक्तिकथन ।

द्वादशस्कन्ध—१ भविष्य एवं कलि कथा २ परीक्षित मोक्ष ३ वेदशाखा कथन ४ मार्कण्डेय तपस्या ५ सौरी विभूति कथन ६ पुराण संख्या कथन ।

फलश्रुति—यह पुराण हेम सिंहासनस्थ करके भाद्री पूर्णिमा को प्रीतिपूर्वक ब्राह्मण को वस्त्र एवं स्वर्ण सहित दान करने से भगवद्भक्ति लाभ होता है और श्रवण करने से अथवा श्रवण कराने से भक्ति और मुक्ति लाभ होता है और इस की अनुक्रमणिका श्रवण करने किम्बा कराने से सम्पूर्ण भागवत श्रवण फल लभ्य होता है ।

षष्ठ नारदपुराण ।

पूर्व एवं उत्तर दो भाग में २५००० सहस्र श्लोक पूर्व भाग चार पाद में विभक्त ।

पूर्वभाग का प्रथमपाद ।

सूत शौनक सम्वाद—१ सृष्टि संक्षेपवर्णन एवं नाना धर्म कथा ॥ पूर्वभाग द्वितीयपाद । १ मोक्ष धर्म कथन मोक्षोपाय निरूपण २ वेदाङ्गकथन ३ सनन्दन कर्तृ नारद प्रति शुकोत्पत्ति कथन ४ महातन्त्र से पशुपाश विमोचन ५ मन्त्रशोधन ६ दीक्षा ७ मन्त्रोद्धार पूजाप्रयोग कवच विष्णुसहस्रनाम एवं स्तोत्र ८ गणेश सूर्य्य विष्णु शिव एवं शक्ति का क्रम से उपाख्यान कथन।

पूर्वभाग तृतीयपाद—१ नारद और सनत्कुमार सम्वाद २ पुराण लक्षण प्रमाण एवं दान काल कथन ३ चैत्रादि मास की प्रतिपदादि तिथिव्रत विस्तार कथन ।

पूर्वभाग चतुर्थपाद—१ सनातन कर्तृक नारद प्रति बृहदाख्यान कथन ।

उत्तरभाग—१ एकादशी व्रत विषयक प्रश्न २ वशिष्ठ एवं मांधाता का सम्वाद ३ रुक्माङ्गद की कथा ४ मोहिनी की उत्पत्ति एवं सम्वाद ५ मोहिनी प्रतिवसु का शाप एवं उद्धार ६ गङ्गा की पुण्यकथा ७ गया यात्रा ८ काशी माहात्म्य ९ पुरुषोत्तमवर्णन १० क्षेत्रयात्रा एवं अन्यान्य बहुकथा ११ प्रयागमाहात्म्य १२ कुरुक्षेत्रमाहात्म्य १३ हरिद्वारमाहात्म्य १४ कामोदा आख्यान १५ वदरी तीर्थ माहात्म्य १६ कामाख्या माहात्म्य १७ प्रभासमाहात्म्य १८ पुराण आख्यान १९ गौतमाख्यान २० वेदपाद स्तव २१ गोकर्णक्षेत्र माहात्म्य २२ लक्ष्मण आख्यान २३ सेतुमाहात्म्य २४ नर्मदामाहात्म्य २५ अव-

न्तीमाहात्म्य २६ मथुरामाहात्म्य २७ वृन्दावनमाहात्म्य २८ ब्रह्मा के निकट वसु का गमन २९ मोहिनीचरित्र कथन ।

फलश्रुति—यह पुराण श्रवण करने किम्वा श्रवण कराने से ब्रह्मधाम प्राप्ति होती है और अनुक्रमणिका श्रवण करने से, किम्वा श्रवण कराने से स्वर्ग लाभ होता है और यह पुराण आश्विनी पूर्णिमा को सप्त धेनु युक्त उत्तम ब्राह्मण को दान करने से मोक्ष प्राप्ति होती है।

सप्तम मार्कण्डेयपुराण ।

९००० सहस्र श्लोक ।

१ मार्कण्डेय कर्तृक जैमिनि का पक्षियों के निकट प्रेरण २ धर्म पक्षि सकल का जन्म निरूपण ३ इन की पूर्वजन्म कथा ४ सूर्य्य क्रिया कथन ५ बलदेव तीर्थ यात्रा ६ द्रौपदेय कथा ७ हरिश्चन्द्र पुण्यकथा ८ आड़ीवक नामक युद्ध कथा ९ पिता पुत्र कथा १० दत्तात्रेयकथा ११ हैहय चरित्र एवं माहात्म्य १२ मदालसा कथा १३ अलर्कचरित्र १४ षष्ठी संकीर्त्तन १५ नव प्रकार पुण्यकथा १६ कतिपय अन्तकाल निर्देश १७ पक्षिसृष्टि निरूपण १८ रुद्रादिसृष्टि १९ द्वीप एवं वर्ष कथा २० मनु कथा और अष्टम मन्वन्तर में देवीमाहात्म्य कथा २१ प्रणवोत्पत्ति कथा वेद एवं तेज जन्म २२ मार्कण्डेय जन्म और माहात्म्य २३ वैवस्वत चरित्र सहित वत्समीर चरित्र २४ खनित्र पुण्यकथा २५ अवचत चरित्र २६ किमिच्छव्रत २७ अविनाश चरित्र २८ इक्ष्वाकु चरित्र २९ तुलसाचरित्र ३० रामचन्द्रकथा ३१ कुश वंश आख्यान ३२ सोमवंश की कथा ३३ नहुष को अद्भुतकथा ३४ ययाति चरित्र ३५ यदुवंशकीर्त्तन ३६ श्रीकृष्ण बालचरित्र ३७ मथुरा में श्रीकृष्ण चरित्र ३८ द्वारका चरित्र ३९ सकल अवतार कथा ४० सांख्ययोग उद्देश ४१ प्रपञ्च एवं असत्य कीर्तन ४२ मार्कण्डेय चरित्र ४३ पुराण श्रवण फल ।

फलश्रुति—यह पुराण लिखा कर सुवर्ण संयुक्त ब्राह्मण को दान करने से ब्रह्मपद मिलता है एवं भक्तिपूर्वक श्रवण करने से किम्वा श्रवण कराने से मार्कंडेय तुल्य गति प्राप्ति और वांछित फल लाभ होता है ।

अष्टम अग्निपुराण ।

१५००० सहस्र श्लोक ईशानकल्प कथा वशिष्ठ नल उपाख्यान ।

१ पुराणप्रश्न २ सर्वअवतार कथा ३ सृष्टिप्रकरण कथन ४ विष्णुपूजादि

विधि ५ अग्निपूजा मंत्र और मुद्रादि लक्षण ६ दीक्षाविधान ७ अभिषेक कथन ८ मण्डल करण लक्षण ९ कुशमार्जन १० पवित्रारोपण विधि ११ देवालयकरण विधि १२ शालग्राम पूजा एवं लक्षण कथन १३ प्रतिष्ठाप्रकरण १४ न्यासादि विधि १५ विनायक दीक्षाविधि १६ अन्यान्यकथन १७ देवप्रतिष्ठाविधि १८ ब्रह्माण्ड निरूपण १९ गङ्गादि तीर्थ माहात्म्य २० द्वीपवर्णन २१ ऊर्द्ध एवं अधोलोक रचना २२ ज्योतिषचक्र निरूपण २३ ज्योतिष शास्त्र वर्णन २४ युद्धजयकरण शास्त्र २५ षट् कर्म कथा २६ मन्त्रयन्त्र औषध प्रकरण २७ कुब्जिकादिकथन २८ छ प्रकार के न्यास की विधि २९ कोटि होम विधान एवं विस्तार निरूपण ३० ब्रह्मचर्य्य धर्म ३१ श्राद्धकल्पविधि ३२ ग्रहयज्ञ ३३ वैदोक्त एवं स्मृत्युक्तकर्म ३४ प्रायश्चित्त कथन ३५ तिथिव्रतादि कथन ३६ वारव्रत ३७ नक्षत्रव्रत ३८ मासव्रत ३९ दीपदान विधि ४० नूतन व्यूहार्चन प्रकरण ४१ नरक निरूपण ४२ व्रत एवं दान निरूपण ४३ नाड़ी चक्रवर्णन ४४ संध्याविधि ४५ गायत्री अर्थ ४६ शिवलिङ्गस्तोत्र ४७ राजाभिषेक यन्त्र ४८ राजधर्म्म एवं राजकार्य्य ४९ राजा का अध्ययन ५० शकुन्यादि शुभाशुभ दृष्टि निरूपण ५१ मण्डलादि निर्द्देश ५२ रणदीक्षा विधि ५३ श्रीरामोक्तनीति ५४ रत्नलक्षण ५५ धनु विद्या ५६ व्यवहार निरूपण ५७ देवासुर विवर्द्धन आख्यान ५८ आयुर्वेद निरूपण ५९ गजादि की रोग चिकित्सा एवं आरोग्य कथन ६० गो अश्वादि की चिकित्सा ६१ नाना पूजा प्रकरण ६२ विविधशान्ति ६३ छन्दःशास्त्र ६४ साहित्यशास्त्र ६५ एकार्णवादि शास्त्र समाख्यान ६६ प्रसिद्ध शिष्टानुशासन ६७ धनागार एवं सृष्ट्यादिवर्ग ६८ प्रलय लक्षण ६९ शारीरक निरूपण ७० नरकवर्णन ७१ योगशास्त्र ७२ ब्रह्मज्ञान ७३ पुराण श्रवण माहात्म्य ।

फलश्रुति—यह पुराण लिख कर अग्रहायण मास में सुवर्ण कमल सहित अथवा तिल धेनु सहित पुराण वित्‌ब्राह्मण को दान करने से स्वर्ग लाभ होता है एवं यह पुराण पूजा करके श्रवण करने किम्बा श्रवण कराने से सकल पाप क्षय होता है। और भक्ति युक्त होकर इस पुराण की अनुक्रमणिका पाठ करने से सकल पुराण पाठ का फल लभ्य होता है।

नवम भविष्यपुराण ।

पञ्चपर्व १४००० सहस्र श्लोक । अघोरकल्प वृत्तान्त । नाना आश्चर्य कथा। प्रथमपर्व ब्राह्मपर्व और द्वितीय तृतीय चतुर्थ एवं पञ्चमपर्व एकत्र हैं ।

प्रथमपर्व सूत शौनक सम्वाद—१ पुराण प्रश्न २ नाना आख्यान युक्त सूर्य्य चरित्र वर्णन ३ सृष्ट्यादि लक्षण ४ पुस्तक लेखक एवं लिखने का लक्षण ५ सकल प्रकार संस्थान लक्षण ६ प्रतिपदादि तिथि एवं सप्तकल्प कथन ७ विष्णु विषय अष्टम्यादि शेषकल्प कथा ८ शैव विषय इच्छाधीन भिन्न भिन्न कल्प कथन ९ सौर विषय शेषकथा १० नाना आख्यान युक्त प्रति सृष्टि नाम वर्णन ११ पुराण उपसंहार एवं पञ्चपर्व कथन इस पर्व में धर्म्म विषय में ब्रह्मा की महिमा का आधिक्य कथन है ।

द्वितीयपर्व—भोग विषय में शिवमाहात्म्य कथन ।

तृयीपर्व—मोक्षविषय में विष्णु का माहात्म्य कथन ।

चतुर्थपर्व—चतुर्वर्ग विषय में सूर्य्यमाहात्म्य कथन ।

पञ्चमपर्व—सर्व कथा युक्त प्रतिसर्ग वर्णन इस पुराण में अद्वितीय ब्रह्म का गुण तारतम्य रूप भेद से सकल देव की समता वर्णित है ।

फलश्रुति—यह पुराण लिख कर पौषी पौर्णिमाह्निको गुड़ धेनुस्वर्ण वस्त्र माल्य सहित पुराण पाठक ब्राह्मण को दान करने से एवं श्रवण किम्बा पाठ करने से सकल घोर पाप से विमुक्ति एवं ब्रह्मपद प्राप्ति होती है और पुराण की अनुक्रमणिका पाठ किम्बा श्रवण करने से भक्ति मुक्ति मिलती है ।

दशम ब्रह्मवैवर्त्तपुराण ।

चारखण्ड १८००० सहस्र श्लोक प्रथम ब्रह्मखण्ड द्वितीय प्रकृति खण्ड तृतीय गणेशखण्ड चतुर्थ श्रीकृष्ण जन्म खण्ड ।

सूत ऋषिसम्वाद प्रथम ब्रह्मखण्ड—१ सृष्टिप्रकरण २ नारद और ब्रह्मा विवाद एवं शापान्त ३ नारद का शिवलोक गमन एवं गान शिक्षा ४ शिवादेश से मरीचि के सहित नारद का सावर्णि प्रबोधार्थ सिद्धाश्रम में गमन ।

द्वितीय प्रकृतिखण्ड—१ सावर्णि नारद सम्वाद २ श्रीकृष्ण माहात्म्य युक्त नानाख्यान ३ प्रकृति की अंश और कलाओं का माहात्म्य वर्णन ४ उनका गङ्गादि विस्तार और माहात्म्य वर्णन ।

तृतीय गणेश खण्ड—१ गणेश जन्म प्रश्न २. पुण्यव्रत कथन ३ पार्वती कार्तिक एवं गणेश जन्म ४ कार्त्तवीर्य्य चरित ५ परशुराम विवरण ६ जमदग्नि एवं गणेश का आश्चर्य्य विवाद ।

चतुर्थ श्रीकृष्णजन्म खण्ड—१ श्रीकृष्णजन्म प्रश्न एवं जन्म कथा २ गोकुलगमन ३ पूतनादि बध ४ बाल्य कौमार विविध लीला वर्णन ५ शरत्काल में

गोपीसहित रास क्रीड़ा ६ श्रीराधिका सहित निर्जन क्रीड़ा विस्तार वर्णन ७ अक्रूर सहित हरि मथुरा गमन ८ कंस बध ९ द्विजसंस्कार १० सांदीपनी गुरु निकट विद्योपार्जन ११ कालयवनवध १२ द्वारकागमन १३ नरकादि बंध वर्णन ।

फलश्रुति—यह पुराण लिख कर माघ मास में धेनु सहित ब्राह्मण को दान करने से ब्रह्मलोक प्राप्ति होती है एवं अज्ञान बन्धन से मुक्ति होती है और पाठ किम्वा श्रवण करने से संसार बंधन क्षय होता है तथा इस पुराण को अनुक्रमणिका पाठ करने श्रीकृष्ण के प्रसाद से वांछित फल लाभ होता है।

एकादश लिङ्गपुराण ।

पूर्व एवं उत्तर दो भाग ११००० सहस्र श्लोक । शिवमाहात्म्य प्रकाशक अग्निकल्प कथा ।

पूर्वभाग—१ पुराणान्त में सृष्टि विषयक संक्षेप प्रश्न २ योगाख्यान ३ कल्पाख्यान ४ लिङ्गउद्भव एवं पूजा ५ सनत्कुमार और शैलादि का सम्वाद ६ दधीचि चरित्र ७ युग धर्म निरूपण ८ कोषकथन ९ सूर्य्यवंश एवं सोमवंश वर्णन १० सृष्टिवर्णन एवं त्रिपुर आख्यान ११ लिङ्गप्रतिष्ठा कथन १२ पशुपाश विमोचण १३ शिवव्रत १४ सदाचार निरूपण १५ प्रायश्चित्त कथन १६ श्रीशैल वर्णन १७ अन्धक आख्यान १८ वाराह चरित्र १९ नृसिंह चरित्र २० जलन्धर बध २१ शिवसहस्रनाम २२ दक्षयज्ञ विनाश २३ कामदेव दहन २४ गिरिजा सह शिव विवाह २५ विनायक आख्यान २६ शिवनृत्य २७ उपमन्युकथा ।

उत्तरभाग—१ विष्णुमाहात्म्य २ अम्बरीष कथा ३ सनत्कुमार नन्दि सम्वाद ४ शिवमाहात्म्य ५ स्नान यागादिक वर्णन ६ सूर्य्य पूजा विधि ७ शिव पूजा ८ बहुविध दानादि विधि ९ श्राद्धप्रकरण १० मूर्त्ति प्रतिष्ठा प्रकरण ११ घोरतम कथा १२ व्रजेश्वरी महाविद्या गायत्री महिमा वर्णन १३ त्र्यम्बक-माहात्म्य १४ पुराण श्रवण माहात्म्य ।

फलश्रुति—यह पुराण लिखा कर फाल्गुनी पूर्णिमा को तिल धेनु सहित भक्तिपूर्वक ब्राह्मण को दान करने से जरा मरण वर्जित होकर शिव सायुज्य प्राप्ति होती है और पुराण पाठ वा श्रवण करने से नाना भोग करके अन्त में शिवलोक में गमन होता है और अनुक्रमणिका श्रवण किम्वा पाठ करने से

श्रोता एवं पाठक उभय शिवभक्त होते हैं एवं बहुकाल स्वर्ग भोग करते हैं।

द्वादश वराहपुराण ।

पूर्व एवं उत्तर भाग २४००० सहस्र श्लोक विष्णुमाहात्म्य वर्णन भूमि वराह संवाद मानवकल्प प्रसंग ।

पूर्वभाग—१ आदि सत वृत्तान्त रम्भा चरित्र कथन २ दुर्ज्जय प्रतिश्राद्ध कल्प कथा ३ महा तपस्या आख्यान ४ गौरी उत्पत्ति कथन ५ विनायक कथा ६ नागकथा ७ सेनानी एवं आदित्यकथा ८ देवगण कथा ९ कुबेर गण सकल कथा १० वृषकथा ११ सत्यतप कथा १२ व्रत आख्यान १३ अगस्त्यगीता १४ रुद्रगीता १५ महिषासुर वध में ब्रह्मा विष्णु एवं शिव की शक्ति एवं माहात्म्य कथन १६ पर्वाध्याय १७ श्वेत उपाख्यान १८ गोदान कथा १९ भगवद्धर्म्म २० व्रत एवं तीर्थ कथा २१ अग्नि अपराध कथा २२ शारीरिक प्रायश्चित २३ सकल तीर्थ महिमा २४ मथुरा माहात्म्य विशेष वर्णन २५ ऋषिपुत्र प्रसङ्गाधीन यमलोक वर्णन २६ कर्म्म विपाक २७ विष्णु व्रत निरूपण २७ गोकर्ण माहात्म्य ।

उत्तरभाग—पुलस्त्य कुरुराज सम्वाद सकल तीर्थ माहात्म्य पृथक् पृथक् विस्तारित रूप वर्णन २ अशेष धर्म्माख्यान ३ पौष्कर पुण्य कथा ।

फलश्रुति—यह पुस्तक लिखकर चैत्री पूर्णिमा को काञ्चन गरुड़ एवं तिल धेनु समन्वित भक्ति पूर्वक ब्राह्मण को दान करने से वैष्णव धाम प्राप्ति एवं देवता और ऋषि गण द्वारा वन्दित होता है और पुराण पाठ करने किम्बा श्रवण करने से भगवान की भक्ति होती है। और अनुक्रमणिका पाठ किम्बा श्रवण करने से संसार नाशिनी विष्णुभक्ति लभ्य होती है।

त्रयोदश स्कंदपुराण

सप्तखण्ड८१००० सहस्रश्लोक—१माहेश्वरखण्ड२वैष्णवखण्ड ३ ब्रह्मखण्ड ४ काशीखण्ड ५ अवन्तीखण्ड ६ नागरखण्ड ७ प्रभासखण्ड। इस पुराण में कार्त्तिकेय ने माहेश्वर धर्म्म कहा है।

प्रथम माहेश्वरखण्ड ।

प्राय १२०००सहस्र श्लोक—१ केदारमाहात्म्य २ दक्ष यज्ञ कथा ३ शिव लिंग अर्च्चन फल ४ समुद्रमन्थन ५ देवेन्द्र चरित्र ६ पार्वती उपाख्यान एवं विवाह ७कार्त्तिकेय उत्पत्ति ८ तारकासुर युद्ध ९ पाशुपतआख्यान १० चण्डा-

ख्यान ११ दूत प्रवर्त्तन १२ नारद समागम १३ कुमार माहात्म्य १४ पञ्च तीर्थ कथा १५ धर्म नृपाख्यान १६ नदी एवं सागर कीर्त्तन १७इन्द्रद्युम्न कथा १८ नाड़ी जङ्घ कथा १९ पृथिवी प्रादुर्भाव २० दमनक कथा २१ मही सागर संयोग २२ कुमार कथा २३ नाना आख्यान युक्त तारक युद्ध २४ तारक वध २५ पञ्च लिङ्ग निवेश २६ द्वीपाख्यान २७ ऊर्द्ध लोक स्थिति २८ ब्रह्मांड स्थिति एवं परिमाण २९ वर्क्केश कथा ३० महाकाल समुद्भव एवं अद्भुत कथा ३१ वासुदेव माहात्म्य ३२ कटितीर्थ वर्णन ३३ नाना तीर्थ कथा ३४ गुप्तक्षेत्र कथा ३५ पाण्डवों की पुण्य कथा३६ महाविद्या प्रसाधन ३७तीर्थ यात्रा समाप्ति ३८ अरुणाचल माहात्म्य ३९ सनक एवं ब्रह्मा की कथा ४० गौरी तपस्या एवं तीर्थ निरूपण ४१ महिषासुर के पुत्र का आख्यान एवं उस का अद्भुत वध ४२ शोनाचल में भगवती का नित्य अवस्थान कथन ।

द्वितीय वैष्णवखण्ड—१ भूमि वराह आख्यान रोचक क्रममाहात्म्य २ कमला कथा ३ श्री निवास स्थिति ४ कुलाल आख्यान ५ सुवर्ण मुख कथा ६ नाना आख्यान युक्त भारद्वाज कथा ७ मतङ्गाञ्जन सम्वाद ८ उत्कल में पुरुषोत्तम माहात्म्य ९ मार्कण्डेय कथा १० अम्बरीष कथा ११ इन्द्रद्युम्न आख्यान १२ विद्यापति कथा १३ जैमिनि कथा १४ नारद कथा १५ नीलकण्ठ आख्यान १६ नृसिंह वर्णन १७ राजा की अश्वमेध कथा एवं ब्रह्मलोक गति १८ रथयात्रा विधि एवं जन्म और स्नान यात्रा विधि १९ दक्षिणा मूर्त्ति आख्यान २० गुण्डिचा आख्यान २१ रथ रक्षा विधान २२ शयनोत्सव वर्णन २३ संश्रोक्त श्वेतोपाख्यान २४ वह्न्युत्सव २५ दोलोत्सव २६ भगवान का सांवत्सरिकव्रत कथन २७ विष्णु पूजा २८ मोक्षसाधन मध्योक्त नाना योग निरूपण २९ दशावतार कथा ३० स्नानादि कीर्त्तन ३१ वदरिका माहात्म्य ३२ वैनतेय शिला जात अग्न्यादि तीर्थ माहात्म्य ३३ भगवान के वास का कारण कपाल मोचन तीर्थ कथा ३४ पञ्च धारा तीर्थ कथा ३५ मेरु संस्थापन ३६ कार्त्तिक माहात्म्य में मदालसा माहात्म्य ३७ धूम्र कोष आख्यान ३८ कार्त्तिक मास का दिन कृत्य ३९ भीष्मपञ्चक व्रत आख्यान ४० तीर्थ माहात्म्य प्रसङ्ग से स्नान विधान ४१ पुत्रादि कीर्तन एवं मालाधार कथा और पञ्चामृत स्नान एवं घण्टा वादनादि फल ४२ नाना पुष्प द्वारा अर्चन फल ४३ तुलसीदल से अर्च्चन फल ४४ नैवेद्य माहात्म्य ४५ हरिवास वर्णन ४६ एकादशी एवं जागरण माहात्म्य ४७ मत्स्योत्सव विधान ४८ नाम माहात्म्य ४९ ध्यानादिपु

कथा ५० मथुरा तीर्थ माहात्म्य ५१ द्वादश बन माहात्म्य ५२ श्रीमद्भागवत माहात्म्य ५३ वज्र शाण्डिल्य सम्वाद ५४ अन्तर्लीला कथन और श्रीनाथ केशवदेवादि विग्रह स्थापन ५५ माघ में स्नान दान जप माहात्म्य और नानाख्यान ५६ वैशाख माहात्म्य ५७ शय्या दान फल ५८ जल दान फल ५९ कामाख्या वर्णन ६० श्रुतदेवचरित्र ६१ व्याध उपाख्यान ६२ अक्षय तृतीयादि विशेष पुण्य कीर्तन ६३ अयोध्या माहात्म्य चक्र ब्रह्मतीर्थ प्रसङ्ग ऋण प्रति विमोचन कथा आधार सहस्र एवं स्वर्गद्वार चंद्रहरि और धर्म्महरि वर्णन ६४ स्वर्ण वृष्टि आख्यान ६५ तिलद्वार सहित सरयू मिलन कथा ६६ सीताकुंड कथा ६७ गुप्त हरि कथा ६८ सरयू और घर्घरा आख्यान ६९ गोप्रभाव ७० दुग्धोद कथा ७१ गुरु कुण्डादि पञ्चतीर्थ कथा ७२ घोषार्कादि त्रयोदश तीर्थ वर्णन ७३ गयाकूप माहात्म्य ७४ माण्डव्य आश्रम और पूर्व तीर्थ वर्णन ७५ अजितादि मानसादि असंख्य तीर्थ वर्णन ।

तृतीय ब्रह्मखण्ड—१ सेतुमाहात्म्य प्रसङ्ग से स्नान एवं दर्शन जन्य फल कथन २ गालव तपस्या ३ राक्षसाख्यान ४ चक्र तीर्थ माहात्म्य ५ देवीपतन कथा ६ वेताल तीर्थ माहात्म्य ७ पाप नाशादि तीर्थकथन ८ मङ्गलादि तीर्थ माहात्म्य ९ ब्रह्मकुण्ड वर्णन १० हनुमत् कुण्ड महिमा ११ अगस्त्य तीर्थ फल १२ राम तीर्थ कथन १३ लक्ष्मी तीर्थ निरूपण १४ शंखादि तीर्थ महिमा १५ साध्यमृत तीर्थ महिमा १६ धनुष्कोट्यादि तीर्थ महिमा १७ क्षीरकुण्डादि माहात्म्य १८ गायत्र्यादि तीर्थ माहात्म्य १९ रामनाथ महिमा एवं तत्वज्ञानोपदेश २० सेतु यात्राभिधान २१ धर्म्मारण्य माहात्म्य एवं तत्स्थान सम्भूति और पुण्य कथा २२ कर्म्म सिद्धि आख्यान २३ ऋषिवंश २४ अप्सरातीर्थ माहात्म्य २५ वर्ण एवं आश्रम धर्म और तत्व निरूपण २६ देवस्थान विभाग २७ बकुलार्क कथा २८ छत्रा नन्दा शान्ता श्रीमाता एवं मतङ्गिनी देवी की अवस्थिति २९ इन्द्रेश्वरादि माहात्म्य ३० द्वारकादि निरूपण ३१ लोहासुर आख्यान ३२ गङ्गाकूप निरूपण ३३ श्रीरामचरित्र ३४ सत्य मन्दिर वर्णन ३५ जीर्ण मन्दिरादि उद्धार कथा ३६ शासन प्रतिपादन ३७ जातिभेद कथन ३८ स्मृतिधर्म्म निरूपण ३९ नानाख्यान से वैष्णवधर्म्म निरूपण ४० चातुर्मास्य सकल धर्म्म निरूपण ४१ दान व्रत महिमा ४२ तपस्या पूजा एवं सच्छत्र कथन ४३ प्रकृति आख्यान ४४ शालग्राम निरूपण ४५ तारकासुर वध उपाय ४६ लक्ष्मी अर्च्चन एवं महिमा ४७ विष्णु को शाप से

हृचत्व प्राप्ति एवं पार्वती का अनुनयं ४८ महादेव का ताण्डव नृत्य राम नाम निरूपण ४९ हरलिङ्ग पतन ५० जवन कथा ५१ पार्वती जन्म और चरित्र ५२ तारक वध ५३ प्रणव ऐश्वर्य कथन ५४ तारक चरित्र ५५ दक्ष यज्ञ समाप्ति ५६ द्वादश अक्षर निरूपण ५७ ज्ञान योग आख्यान ५८ द्वादश आदित्य महिमा ५९ श्रावणादि पुण्य कथा।

तृतीय ब्रह्मखण्डउत्तरभाग—१ शिव का अद्भुत माहात्म्य २ पञ्चाक्ष महिमा ३ गोकर्ण महिमा ४ शिवरात्रि महिमा ५ प्रदोष व्रत कीर्तन ६ सोमवार व्रत ७ सीमन्तिनी कथा ८ भद्रायु उत्पत्ति कथन ९ सदाचार १० शिव धर्म कथा ११ भद्रायु विवाह एवं महिमा १२ भस्म माहात्म्य १३ शवराख्यान १४ उमा माहेश्वर व्रत १५ रुद्राक्ष माहात्म्य १६ रुद्राध्याय माहात्म्य श्रवणादि पुण्य कथन।

चतुर्थ काशीखंड । विन्ध्यनारद सम्वाद—१ सत्यलोक प्रभाव २ अगस्त्याश्रम में देवता सकल का आगमन ३ पतिव्रता चरित्र ४ तीर्थयात्रा प्रशंसा ५ सप्तपुरी आख्यान ६ यमपुरी निरूपण ७ शिवशर्मा को भुवलोक इन्द्रलोक अग्निलोक प्राप्ति ८ अग्नि उद्भव ९ क्रव्याद वरुण सम्भव १० गन्धवती अलकापुरी एवं ईश्वरी का उद्भव और चंद्र मङ्गल बुध एवं रवि आदि लोक का उद्भव ११ सप्तर्षि एवं भुवलोक का वर्णन १२ भुवलोक की पुण्यकथा १३ सत्यलोक निरूपण १४ स्कन्ध और अगस्त्य का आलाप १५ मणिकर्णिका का उद्भव १६ गङ्गा का प्रभाव एवं सहस्रनाम १७ वारानसी प्रशंसा १८ भैरव आविर्भाव १९ दण्डपाणि एवं ज्ञानरवि का उद्भव २० कलावती आख्यान २१ सदाचार निरूपण २२ ब्रह्मचारि कथा २३ स्त्रीलक्षण कथन २४ कृत्याकृत्य निर्देश २५ अविमुक्तेश्वर वर्णन २६ गृहस्थ एवं योगि धर्म २७ कालज्ञान २८ दिवोदास कथा २९ काशीवर्णन ३० योगि चर्य्या लोलार्क ३१ शाम्बार्क कथा ३२ द्रुपदार्क एवं तार्क्ष तीर्थ कथा ३३ अरुणार्क का उदय ३४ दशाश्वमेध आख्यान ३५ मन्दराचल से गणपति की माया प्रकाश ३६ पिशाच मोचन आख्यान ३७ गणेश प्रेषण ३८ गणपति का आगमन और माया प्रकाश ३९ पृथिवी से माया का प्रादुर्भाव ४० विष्णुमाया का विस्तार ४१ दिवोदास विमोचन ४२ पञ्च नदोत्पत्ति: ४३ विन्दुमाधव सम्भव ४४ वैष्णव तीर्थ आख्यान ४५ महादेव का काशी में आगमन ४६ जैगीषव्य के सहित महेश का आख्यान ४७ शिवक्षेत्र आख्यान ४८ कन्दुकेश्वर एवं व्याघ्रेश्वर का उद्भव

४९ शैलेश्वर एवं कृत्तिवास का उद्भव ५० देवता संकल्प का अधिष्ठान ५१ दुर्गासुर का पराक्रम ५२ दुर्गाविजय ५३ ॐकारेश्वर वर्णन ५४ ओङ्कार माहात्म्य ५५ त्रिलोचन समुद्भव ५६ केदार आख्यान ५७ धर्मेश्वर कथा ५८ वीरेश्वर आख्यान ५९ गङ्गा महात्म्य कीर्त्तन ६० विश्वकर्मेश्वर महिमा ६१ दक्ष यज्ञोद्भव ६२ सतीश्वर एवं अमृतेश्वर उपाख्यान ६३ पराशर भुजस्तम्भ ६४ क्षेत्र-तीर्थ समूह वर्णन ६५ मुक्ति मण्डप कथा ६६ विश्वेश्वर विभव ६७ यात्रा परिक्रम।

पञ्चम अवन्तीखण्ड—१ महाकाल यवन का आख्यान २ ब्रह्मशीर्षच्छेद ३ प्रायश्चित विधि ४ अग्नि उत्पत्ति एवं आगमन ५ देवदत्त ६ नाना पाप नाशन शिवस्तोत्र ७ कपाल मोचन आख्यान एवं महाकाल वन स्थिति ८ कर्णखलेश तीर्थ आख्यान ९ अप्सराकुण्ड कथा १० स्वर्ग में रुद्रकुंड उपाख्यान ११ कुन्दुड़वेश एवं मर्कटेश्वर तीर्थ वर्णन १२ स्वर्गद्वार चतुः सिंधु शंकरांक गन्धवती एवं दशाश्वमेध कालांश तीर्थ वर्णन १३ पिशाचकादि यात्रा १४ हनूमान एवं यमेश्वर वर्णन १५ महाकालेश्वर यात्रा १६ वाल्मीकेश्वर तीर्थ १७ भेषजाख्य शक्र तीर्थ कुशस्थली प्रदक्षिणा १८ अक्रूर मन्दाकिनी कपाल चन्द्रार्क वैभव वारभेश लड्डुकेशादि तीर्थ वर्णन १९ मार्कण्डेश्वर २० यज्ञवापी २१ सोमेश २२ नरकान्तक २३ केदारेश्वर २४ रामेश्वर २५ सौभाग्येश्वर २६ नरार्क २७ केशार्क २८ शक्तिभेद २९ स्वर्णाचर सुख ३० ओङ्कारेश्वरादि तीर्थ वर्णन ३१ अन्धक स्तुति कीर्त्तन ३२ कालारण्यलिङ्ग संख्या ३३ स्वर्णशृङ्ग ३४ कुशस्थली ३५ अवन्त्याख्य ३६ उज्जयिनी ३७ पद्मावती ३८ कूर्मद्वती ३९ रमावती नामक तीर्थ उपाख्यान ४० विशाला एवं प्रतिकल्प ४१ ज्वरशान्तिक तीर्थ कथन ४२ शिप्रा स्नानादि फल ४३ नाग कृत शिव स्तुति ४४ हिरण्याक्ष वधाख्यान ४५ सुन्दर कुंड ४६ नीलगङ्गा ४७ पुष्कर ४८ विन्ध्यवासनी ४९ पुरुषोत्तम ५० अविनास ५१ अघनाशन ५२ गोमती ५३ वामन एवं कुंडतीर्थ वर्णन ५४ विष्णुसहस्रनाम ५५ कालभैरव तीर्थ वीरेश्वर सरोवर आख्यान ५६ नागपञ्चमी में नृसिंह महिमा वर्णन ५७ जयन्तिका कुठारेश्वर यात्रा ५८ देवसाधक और ५९ कर्कराज ६० विघ्नेशादि सुरोहण तीर्थ विवरण ६१ रुद्रकुंडादि बहु तीर्थ निरूपण ६२ अष्टतीर्थ निरूपण ६३ रेवामाहात्म्य ६४ धर्मपुत्र का वैराग्य वशतः मार्कण्डेय संगम ६५ प्रागलय उपाख्यान ६६ अमृता कीर्तन ६७ प्रतिकल्प में नर्मदा वर्णन ६८ आर्यस्तव ६९ नर्मदास्तव ७०

षराह २१४ चन्द्रप्रभास २१५ आदित्य २१६ श्रीपति] २१७ हंसक २१८ मूल स्थान २१९ शूलेश २२० आग्नेय एवं चित्रदैवक २२१ शिखोश्वर ३२२ कोटि २२३ दशकन्य २२४ सुवर्णक २२५ ऋणमोच २२६ भारभूति २२७ पुङ्ख २२८ मुण्डिम २२९ आमलेश्वर २३० कपालेश्वर २३१ शृङ्गेरगडीभव २३२ कोटी २३३ लोटनेश्वर तीर्थ विवरण २३४ फलश्रुति कथन २३५ दमि जङ्गल माहात्म्य रोहिताश्व कथा २३६ धुन्धुमार उपाख्यान २३७ धुन्धुमार वधोपाय २३८ धुन्धुमार वध कथन २३९ चित्रवह उद्भव एवं २४० नहिमा कथन २४१ चंडीश प्रभाव २४२ रतीश्वर वर्णन और केदारेश्वर वर्णन २४३ लच तीर्थ कथन २४४ विष्णुपदी उद्भव २४५ मुखार२४६ च्यवनाम्ब २४७ ब्रह्मा सरोवर २४८ चक्र २४९ ललिता २५० बहु गोमख २५१ कद्रावर्त्त २५२ मार्कंड २५३ रावणेश्वर २५४ शुद्धपट २५५ देवाम्बु २५६ मेत २५७ ज्ञिद्धोद २५८ सम्भूति और १५९ शिवोद भेद तीर्थ वर्णन २६० फलश्रुति ।

षष्टनागरखंड—१ लिंगोत्पत्ति आख्यान २ हरिश्चन्द्र कथा ३ विश्वामित्र माहात्म्य ४ त्रिशंकु स्वर्ग गति ५ हाटकेश्वर माहात्म्य ६ वृत्रासुर वध ७ नागविलृ और ८ शंख तीर्थ कथा ९ अचलेश्वर वर्णन १० चमत्कार पुराख्यान ११ गयशीर्ष १२ बालसख्य १३ बालमंड १४ मृगाह्वय १५ विष्णुपाद १६ गोकर्ण १७ युगरूप १८ समाश्रय १९ सिद्धेश्वर २० नाग सरोवर २१ सप्तर्षिय २२ अगस्त्य २३ भ्रूणगर्तनेश २४ भेषुम औ इन्दुवैर और अर्क २५ सार्मिष्ट २६ शोभनार्थ औ २७ दौगर्भमान अर्जकेश्वर तीर्थ वर्णन २८ जमदग्नि उपाख्यान २९ नैः चत्रिय कथा ३० राम हृद ३१ नागपुर ३२ षड्लिङ्ग ३३ यज्ञभू ३४ मुंडिरादि ३५ त्रिकार्क ३६ सती परियागेश ३७ यागेश बालिखिल्य और ३८ गाडुर तीर्थ कथन ३९ लक्ष्मी सप्तविंशति शापकथन ४० सोमप्रसाद कथन ४१ अम्बा हृद ४२ पादुकाख्य ४३ आग्नेय ४४ ब्रह्मकुंड ४५ गोसुख ४६ लोहयष्टाख्या ४७ आजावालेश्वरी ४८ शालेश्वरी ४९ हाजवापी ५० रामेश्वर ५१ लक्ष्मणेश्वर ५२ कुशेश्वर औ ५३ लवेश्वर तीर्थ वर्णन ५४ लिङ्ग उपाख्यान ५५ अष्टषष्टि समाख्यान ५६ दमन्ती एवं त्रिजातक उपाख्यान ५७ रेवती ५८ भट्टिका तीर्थ ५९ चेमङ्करी ६० केदार ६१ शुक्ल ६२ मुखारक औ ६३ सत्य-सन्धेश्वर तीर्थ आख्यान ६४ कर्णोत्पला नदी कथा ६५ अटेश्वर ६६ याज्ञवल्क्य ६७ गौरी और ६८ गणेश तीर्थ कथा ६९ वास्तुपदा आख्यान ७० अजा ग्रह कथा ७१ सौभाग्यादि कथा ७२ शूलेश्वर कथा ७३ धर्मराज कथा ७४ मिष्टा-

मृदेश्वर आख्यान ७५ गाणपत्य चय कथा ७६ जावालि चरित्र ७७ मकरेश्वर कथा ७८ कालेश्वरी एवं ७६ अन्धकोपाख्यान ८० अप्सराकुंड उपाख्यान ८१ पुष्यादित्य उपाख्यान ८२ रोहिताश्व उपाख्यान ८३ नागरोत्पत्ति कीर्तन ८४ भार्गवचरित्र ८५ विश्वामित्र चरित्र ८६ सारस्वत चरित्र ८७ पैप्पलाद ८८ कंसारीश एवं ८६ पौण्ड तीर्थ वर्णन ६० सावित्र्याख्यान सहित ब्रह्मा यज्ञ चरित्र एवं रैवत भर्तृ यज्ञाख्यान कथा ६१ मुख्य तीर्थ निरीक्षण ६२ कौरव क्षेत्र ०३ हाटकेश क्षेत्र ६४ एवं प्रभास क्षेत्र उपाख्यान ६५ पौष्कर क्षेत्र ६६ नैमिष क्षेत्र एवं ६७ धर्म्म अरण्य क्षेत्र ६८ वारानसी ६६ द्वारका एवं १०० अवन्ती पुरी कथन १०१ वृन्दावन १०२ खाण्डवारण्य एवं १०३ अद्वैताख्य पुरी कथन १०४ कल्प १०५ शालग्राम एवं १०६ नन्दग्राम का उपाख्यान १०७ असि १०८ शुक्ल एवं १०६ पितृसंज्ञ तीन तीर्थ का वर्णन ११० अर्बुद १११ रैवत एवं ११२ शैत्र इन तीन पर्वतों का उपाख्यान ११३ गंगा ११४ नर्म्मदा एवं ११५ सरस्वती इन तीन नदियों का उपाख्यान ११६ कुपिका औ शङ्ख ११७ अमरक एवं वालमण्डन इन चार तीर्थ का हाटकेश्वर तीर्थ क्षेत्र के समान फल कथन ११८ साम्बादित्य ११६ श्राद्धकल्प १२० युधिष्ठिर १२१ आन्धक १२२ जलशायि १२३ चातुर्मास्य एवं १२४ अशून्य शयन व्रत कथन १२५ मङ्कलेश १२६ शिवरात्रि १२७ तुला पुरुष दान १२८ पृथ्वी दान कथन १२६ वालकेश्वर १३० कपाल मोचनेश्वर १३१ पाप पीड़ १३२ सप्तलिंग वर्णन १३३ युगपरिमाणादि कथन १३४ निंवेशशाक १३५ भार्य्याख्या कथन १३६ एकादश रुद्र कथन १३७ दान माहात्म्य १३८ द्वादश आदित्य उपाख्यान।

सप्तम प्रभास खण्ड—१ सोमेश वर्णन २ विश्वेश वर्णन ३ अर्कस्थल वर्णन ४ सिद्धेश्वरादि का पृथक उपाख्यान ५ अग्नितीर्थ ६ कपर्द्दीश तीर्थ वर्णन ७ भीम ८ भैरव ६ चण्डीश १० भास्कर ११ अंगारकेश्वर १२ बुध वृहस्पति भ-ङ्गल चन्द्र शनि १३ राहु केतु एवं १४ शिव स्वरूप मूर्ति वर्णन १५ सिद्धेश्वरादि पञ्चरुद्र अवस्थिति वर्णन १६ वरारोहा १७ अजापाला १८ मङ्गला १६ ललिता एवं ईश्वरी २० लक्ष्मीश २१ वाडवेश २२ अर्घीश २३ कामेश्वर २४ गौरीश्वर २५ वरुणेश्वर २६ उशीष २७ गणेश्वर २८ कुमारेश २६ शाकल्य ३० शकल एवं उतंक ३१ गौतम ३२ दैत्यघ्नेश और ३३ चक्रतीर्थ संनिहितार्थ कथन ३४ भूतेशादि लिङ्ग कथन ३५ आदि नारायण कथन ३६

चंक्रपराखग्रान ३७ साम्बादित्य कथा ३८ कण्टक शोधिनी कथा ३९ सह्निघ्री कथा ४० कपालेश्वर कथा ४१ कोटीशकथा ४२ बालब्रह्म कथा ४३ नरकेश ४४ सम्वर्तेश ४५ एवं निधीश्वर कथा ४६ बलभद्र कथा ४७ गङ्गा कथा एवं गणेश कथा ४८ जाम्बवती कथा ४९ पाण्डुकूप सत्कथा ५० शतमेध लक्षमेध एवं कोटिमेध कथा ५१ दुर्वासार्क ५२ यदुस्थान एवं ५३ हिरण्यासंगम कथा ५४ नगरार्क ५५ कोल्लाख्य ५६ संकर्षण एवं समुद्रकथा ५७ कुमारी क्षेत्र पाल एवं ५८ ब्रह्मेश की पृथक् कथा ५९ पिङ्गला ६० संगमेश्वर ६१ शंकरार्क एवं ६२ घटेश की कथा ६३ ऋषितीर्थ ६४ नन्दार्क तीर्थ ६५ त्रितग्रकूप कीर्तन ६६ शशपाल ६७ पर्णार्क और ६८ अंशुमती की अद्भुत कथा ६९ वाराह ७० स्वामि वृत्तान्त ७१ छाया लिङ्गाख्य एवं ७२ गुल्फ कथा कनकनन्दा ७४ कुन्ती एवं ७५ गंगेश कथा ७६ चमसोद्भेद ७७ विदुर एवं ७८ त्रिलोकेश कथा ७९ मङ्कनेश ८० त्रैपुरेश और ८१ षण्ड तीर्थ कथा ८२ सूर्य्या प्राची ८३ त्रग्रक्षण एवं ८४ उमानाथ कथा ८५ भूङ्गार ८६ मूलस्थल एवं ८७ च्यवनार्केश कथा ८८ अजपालेश ८९ बालार्क एवं ९० कुबेरस्थल कथा ९१ ऋषितोया कथा ९२ संगालेश्वर कीर्तन ९३ नारदादित्य कथन ९४ नारायण निरूपण ९५ तप्तकुंड माहात्म्य ९६ मूलचण्डीश वर्णन ९७ चतुर्वक्त्र गणाध्यक्ष एवं ९८ कलम्बेश्वर कथा ९९ गोपाल स्वामि १०० वकुल स्वामि एवं १०१ मारुती कथा १०२ क्षेमार्क १०३ उन्नत १०४ विघ्नेश एवं १०५ जल स्वामि कथा १०६ कालमेघ १०७ रुक्मिणी १०८ उर्व्वशीश्वर एवं १०९ भद्रा कथा ११० शङ्खावर्त १११ इक्षुतीर्थ ११२ गोष्पद एवं अच्युत गृह कथा ११३ जालेश्वर ११४ हुङ्कार कूप एवं ११५ चण्डीश कथा ११६ आशापुर विघ्नेश एवं ११७ कलाकुण्ड कथा ११८ कपिलेश्वर कथा ११९ जरद्गव शिव कथा १२० नल १२१ कर्कोट और १२२ हाटकेश्वर कथा १२३ नारदेश १२४ यन्त्रभूषा एवं दुर्गकूट एवं गणेश कथा १२५ सुपर्णलाख्य १२६ भैरवी एवं १२७ भल्लतीर्थ कथा १२८ कर्दमाल कीर्तन १२९ गुप्त सोमेश्वर कीर्तन १३० बहु स्वर्णेश १३१ शृङ्गेश एवं १३२ कोटीश्वर कथा १३३ मार्कण्डेश्वर १३४ कोटीश्वर एवं १३५ दामोदर गृह कथा १३६ स्वर्णरेखा १३७ ब्रह्मकुण्ड १३८ कुम्भीश्वर १३९ भीमेश्वर १४० ब्रह्मायर्थ क्षेत्र मृगाकुण्ड एवं १४१ सर्वस्व कथा १४२ विघ्नेश १४३ गंगेश एवं १४४ रैवत कथा १४५ अर्बुदेश्वर कथा १४६ अचलेश्वर कथा १४७ नागतीर्थ कथा १४८ वशिष्ठाश्रम वर्ण १४९ भद्रकर्ण माहात्म्य १५० त्रिनेत्र माहात्म्य

१५१ केदारमाहात्म्य १५२ तीर्थागमन कीर्तन १५३ कोटीश्वर १५४ रूपतीर्थ एवं १५५ हृषीकेश कथा १५६ सिद्धेश १५७ शुक्रेश्वर एवं १५८ मणिकर्णिकेश कीर्तन १५९ पंगु १६० यमएवं १६१ वाराह तीर्थ वर्णन १६२ चन्द्रप्रभास १६३ पिण्डोद १६४ श्रीमाता १६५ शुक्ल १६६ एवंकात्यायनी तीर्थ माहात्म्य १६७ पिंडारक माहात्म्य १६८ कनखल १६९ चक्र एवं १७० मानुषतीर्थ माहात्म्य १७१ कपिलाग्नि घोर १७२ रक्तानुबन्ध तीर्थ कथा १७३ गणेश १७४ पार्थेश्वरयात्रा १७५ मुद्गलयात्रा कथन १७६ चण्डीस्थान १७७ नागोद्भव शिव कुण्ड एवं १७८ महेश कथा १७९ कामेश्वर एवं १८० मार्कण्डेय उत्पत्तिकथा १८१ उद्दालकेश एवं १८२ सिद्धेश गत तीर्थ कथा १८३ श्री देवमाता उत्पत्ति १८४ व्यास एवं १८५ गौतम तीर्थ कथा १८६ कुल सान्ता माहात्म्य १८७ राम एवं कोटि तीर्थ कथा १८८ चन्द्रोद्भव १८९ ईशानशृङ्ग १९० ब्रह्मस्थानोद्भव १९१ त्रिपुष्कर १९२ रुद्र हृद एवं १९३ गुहेश्वर कथा १९४ अविमुक्त माहात्म्य १९५ उमा माहेश्वर माहात्म्य १९६ महौजस प्रभाव १९७ जम्बु तीर्थ वर्णन १९८ गङ्गाधर एवं मिश्र कथा १९९ फलश्रुति २०० द्वारका मातृस्य प्रसंग चन्द्र शर्म्म कथा २०१ एकादशी जागरणादि व्रत २०२ महा द्वादशी कथा २०३ प्रह्लाद एवं ऋषि समागम २०४ दुर्वासा उपाख्यान २०५ यात्रा उपक्रम कीर्त्तन २०६ गोमती उत्पत्ति कथन २०७ गोमती स्नानादि फल २०८ चक्रतीर्थ माहात्म्य २०९ गोमती समुद्र सङ्गम २१० दुः सनकादि हृदाख्यान २११ नृग तीर्थ कथा २१२ गो प्रचार कथा १२३ गोपी द्वारका गमन २१४ गोपीसरोवर आख्यान १२५ ब्रह्मतीर्थादि कीर्त्तन २१६ नानाख्यान युक्त पञ्च नदी आख्यान २१७ शिवलिङ्ग २१८ महातीर्थ एवं २१९ कृष्ण पूजादि कीर्त्तन २२० त्रिविक्रम मूर्त्ति कथा २२१ दुर्वासा एवं श्री कृष्ण कथन २२२ कुशदैत्य वधोपाख्यान २२३ एवं प्रतिमा आख्यान एवं २२४ विशेष पूजा फल २२५ गोमती एवं द्वारका में तीर्थ आगमन कीर्त्तन २२६ कृष्ण मन्दिर दर्शन फल २२७ द्वारावती अभिषेक २२८ द्वारका तीर्थ वास कथा २२९ द्वारका पुर कीर्त्तन ।

फलश्रुति—यह पुराण लिख कर हेमशूल युक्त ब्राह्मण को दान करने से शिव लोक प्राप्ति होती है।

चतुर्दश [illegible] पुराण ।

पूर्व्व उत्तर [illegible] सहस्र श्लोक [illegible] उत्तर भाग बृहत्वामन संज्ञक

इस पुराण में त्रिविक्रम चरित्र बहुविध वर्णित है कूर्म कल्प का आख्यान।

प्रथम पूर्व भाग—१ पुराणप्रश्न २ ब्रह्मा शिरच्छेद कथा ३ कपाल मोचन आख्यान ४ दक्ष यज्ञ विनाश ५ महादेव का काल रूप धारण ६ कामदेव दहन ७ प्रह्लाद नारायण का युद्ध एवं देवता असुर का युद्ध एवं सूर्य्य की कथा ८ भुवनकोश वर्णन १० काम्य व्रत आख्यान ११ दुर्गाचरित्र १२ तपती चरित्र १३ कुरुक्षेत्र वर्णन १४ सरोवर माहात्म्य १५ पार्वती जन्म तपस्या एवं विवाह कथन १६ गौरी उपाख्यान १७ कौशिकी उपाख्यान १८ कुमार चरित्र १९ अन्धक वध उपाख्यान २० साध्य उपाख्यान २१ जावालि चरित्र २२ अरजा कथा २३ अन्धक युद्ध एवं गण कथन २४ मरुत जन्म कथा २५ बलिचरित्र २६ लक्ष्मी चरित्र २७ त्रिविक्रम चरित्र २८ प्रह्लाद की पूर्व में तीर्थ यात्रा २९ धुन्धुचरित्र ३० प्रेत उपाख्यान ३१ नक्षत्र पुरुष आख्यान ३२ श्रीदाम चरित्र ३३ त्रिविक्रम चरित्र ३४ ब्रह्म उक्तस्तव ३५ प्रह्लाद एवं बलि सम्वाद ३६ सुतल में हरि प्रशंसा कथन॥

द्वितीय उत्तरभाग—१ माहेश्वरी संहिता श्रीकृष्ण के भक्ति का कीर्तन २ भागवती संहिता अवतार कथा ३ सौरी संहिता सूर्य्य महिमा कथन ४ गाणेश्वरी संहिता गणेश महिमादि कथन। यह संहिता चतुष्टय के प्रत्येक संहिता में एक सहस्र श्लोक॥

फलश्रुति—यह पुराण लिख कर कार्तिकी संक्रान्ति को घृत धेनु के साथ वेदज्ञ ब्राह्मण को दान करने से नरक भोग से मुक्ति और स्वर्ग लाभ होता है एवं भोगादिक और देहान्त में विष्णु के परम पद को प्राप्ति होती है यह पुराण पाठ किम्वा श्रवण करने से परम गति प्राप्ति होती है।

पञ्चदश कूर्म्मपुराण।

पूर्व एवं उत्तर २ भाग १७००० सहस्रश्लोक। उत्तरभाग पञ्चपाद में विभक्त लक्ष्मी कल्पचरित्र। इसी कल्प में हरि ने कूर्म रूप धारण किया है एवं इन्द्र द्युम्न प्रसंग से धर्म्मार्थ काम मोक्ष का माहात्म्य कहा है॥

प्रथम पूर्वभाग—१ पुराण उपक्रम कथन २ लक्ष्मी इन्द्रद्युम्न सम्वाद ३ कूर्म ऋषि गण कथा ४ वर्णाश्रमाचार कथा ५ जगदुत्पत्ति कथा ६ काल संख्या एवं लयान्त में विभु स्तव ७ सर्ग संक्षेप कथा ८ शंकर चरित्र ९ पार्वती सहस्रनाम १० योग निरूपण ११ भृगुवंश आख्यान १२ स्वायम्भुव कथा १३ देवतादि उत्पत्ति १४ दक्ष यज्ञ नाश १५ दक्ष सृष्टि कथा १६ कश्यप

वंश कथन १७ आत्रेय वंश कथन १८ कृष्ण चरित्र १९ मार्कण्डेय कृष्ण सम्वाद २० व्यास पाण्डव की कथा २१ युगधर्म्म कथा २२ व्यास जैमिनी की कथा २३ वाराणसी माहात्म्य २४ प्रयाग माहात्म्य २५ त्रिलोक वर्णन २६ वेदशाखा निरूपण।

द्वितीय उत्तरभाग—१ ऐश्वरीगीता २ नानाधर्म्म प्रकाशिका व्यास गीता ३ नानाविध तीर्थ का पृथक् माहात्म्य ४ ब्राह्मीसंहिता ६ भागवती संहिता इस में सकल वर्णन से पृथक् वृत्ति निरूपण है ।

उत्तरभाग में प्रथम पाद में ब्राह्मण की सदाचारात्मिका व्यवस्थिति कथन। द्वितीय पाद में क्षत्रिय की वृत्ति निरूपण। तृतीय पाद में वैश्य जाति की चार प्रकार की वृत्ति निरूपण। चतुर्थ पाद में शूद्र की वृत्ति कथन । पञ्चम पाद में वर्णसंकर की वृत्ति कथन।

फलश्रुति—यह पुराण लिख कर भक्ति पूर्वक हेम कूर्म्म युक्त ब्राह्मण को दान करने से परमागति होती है और श्रवण किम्वा पाठ करने से सर्व्वोत्कृष्ट गति मिलती है॥

षोड़श मत्स्यपुराण ।

१४००० सहस्रश्लोक सत्य कल्प कथा—१ व्यास कर्तृक नरसिंह वर्णन २ मनु एवं मत्स्यसम्वाद ३ ब्रह्मांड वर्णन ४ ब्रह्मदेव एवं असुर उत्पत्तिकथन ५ मारुत उत्पत्ति ६ मदन द्वादशी कथा ७ लोकपाल पूजा ८ मन्वन्तर कथन ९ वैश्य राज्याभि वर्णन १० सूर्य्य एवं वैवस्वत की उत्पत्ति ११ बुध का संगम १२ पितृ वंशानु कथन १३ श्राद्धकाल निरूपण १४ पितृतीर्थ प्रचार १५ सोमोत्पत्ति १६ सोमवंश कीर्तन १७ ययाति चरित्र १८ कार्तवीर्य्यचरित्र १९ सृष्टवंश कीर्तन २० भृगुशाप २१ विष्णु का दश मूर्त्ति धारण २२ पुरुवंश कथा २३ हुताशन वंश कथन २४ क्रिया योग कथन २५ पुराण कीर्तन २६ नक्षत्र पुरुष कथन एवं व्रत २७ मार्कण्डेय,शयन २८ कृष्णाष्टमी व्रत २९ तड़ाग विधि माहात्म्य ३० पादुकोत्सर्ग ३१ सौभाग्य शयन वर्णन ३२ अगस्त्य व्रत कथन ३३ अनन्त तृतीया ३४ रस कल्यानी व्रत कथा ३५ आनन्दकर व्रत सारस्वत व्रत ३७ उपराग अभिषेक ३८ सप्तमास स्नपन व्रत कथा ३९ भीम द्वादशी व्रत ४० अनङ्ग शयन व्रत ४१ अशून्य शयन व्रत ४२ अंगारक व्रत ४३ सप्तमी सप्तक व्रत ४४ विशोक द्वादशी व्रत ४५ दशधा मेरुप्रदान व्रत ४६ ग्रहशान्ति ४७ ग्रह स्वरूप कथन ४८ शिव चतुर्दशी व्रत ४९ सर्वफल त्याग

व्रत ५० सूर्यवार व्रत ५१ संक्रान्ति स्नान ५२ विभूति द्वादशी व्रत ५३ धृष्टि व्रत माहात्म्य ५४ स्नानविधि क्रम ५५ प्रयाग माहात्म्य ५६ द्वीप एवं लोकानुवर्णन ५७ अन्तरीच और दिशा कथन ५८ ध्रुव माहात्म्य ५९ इन्द्र भवन वर्णन ६० त्रिपुर घातन ६१ पितृ प्रवर माहात्म्य ६१ मन्वन्तर निर्णय ६३ चतुर्युग सम्भूति युगधर्म्म निरूपण ६४ वज्राङ्ग सम्भूति ६५ तारकासुरोत्पत्ति एवं माहात्म्य ६६ ब्रह्म देव अनुकीर्तन ६७ पार्वती सम्भव कथा ६८ शिव तपोवन वर्णन ६९ अनङ्ग देह दाह ७० रतिविलाप ७१ गौरी तपोवन ७२ शिव प्रसादन ७३ पार्वती ऋषि सम्बाद एवं विवाह ७४ कार्तिकेय जन्म औ विजय ७५ तारक वध ७६ नरसिंह वर्णन ७७ पद्मकल्प कथा ७८ अन्धकासुर घातन ७९ बारानसी माहात्म्य ८० नर्मदा माहात्म्य ८१ प्रवरानुक्रम ८२ पितृ गाथा कीर्तन ८३ उभयमुखी दान ८४ कृष्णाजिनदान ८५ सावित्र्यु पाख्यान ८६ राजधर्म्म ८७ विविधोत्पात कथन ८८ ग्रह शान्ति कथन ८९ यात्रा निमित्त कथन ९० स्वप्नमङ्गल कीर्तन ९१ वामन माहात्म्य ९२ वराह माहात्म्य ९३ समुद्र मन्थन ९४ कालकूट अभिशान्तन ९५ देवासुर विमर्द्दन ९६ वास्तुविद्या ९७ प्रतिमा लक्षण ९८ देवता स्थापन ९९ प्रासाद लक्षण १०० देवमंडप लक्षण १०१ भविष्य राजा का उद्देश कथन १०२ महादान कथन १०३ कल्प कथा ।

फलश्रुति—यह पुराण लिख कर भक्ति पूर्वक विषुव संक्रान्ति को ब्राह्मण को दान करने से परम पद मिलता है और इस पुराण के पाठ किम्वा श्रवण करने से आयुः कीर्ति कल्याण की वृद्धि एवं हरि भवन प्राप्ति होती है ।

सप्तदशगरुड़पुराण ।

पूर्व एवं उत्तर २ खण्ड में १९००० श्लोक गरुड़ प्रति भगवान ने कहा है इस पुराण में तार्क्ष कल्प की कथा है ।

प्रथम पूर्वखण्ड—१ पुराण उपक्रम वर्णन २ संक्षेप स्वर्ग वर्णन ३ सूर्य्यादि पूजा विधि ४ दीक्षा विधि ५ लक्ष्मी पूजा प्रकरण ६ नव व्यूह अर्च्चन ७ विष्णु पूजा विधान ८ वैष्णव पञ्जर ९ योगाध्याय १० विष्णु सहस्र नाम ११ विष्णुध्यान १२ सूर्य्य पूजा १३ मृत्युञ्जयार्च्चन १४ नानामंत्र १५ शिवपूजा १६ गणपूजा १७ गोपालपूजा १८ त्रैलोक्य मोहन श्रीरामार्च्चन १९ विष्णुपूजा एवं पञ्चतत्वपूजा २० चक्रार्च्चन २१ देवपूजा २२ न्यासादि कथन २३ सन्ध्यादि

उपासना २४ दुर्गार्च्चन २५ सुरार्च्चन २६ माहेश्वर पूजा २७ पवित्रा रोपणा-र्च्चन २८ मूर्तिध्यान २९ वास्तु प्रमाण ३० प्रासाद लक्षण ३१ सकल देवता प्रतिष्ठा ३२ सकल देवता पृथक् पूजा ३३ अष्टांग योग ३४ दानधर्म्म ३५ प्रायश्चित्त विधि क्रम ३६ द्वीप ईश्वर और नरक वर्णन ३७ सूर्य्य व्यूह कथन ३८ ज्योतिष शास्त्र वर्णन ३९ सामुद्रिक स्वर ज्ञान ४० नवरत्न परीक्षा ४१ तीर्थ माहात्म्य ४२ गयामहात्म्य ४३ मन्वन्तर पृथक् २ आख्यान ४४ पित्राख्यान ४५ वर्णाधर्म्म ४६ द्रव्यशुद्धि ४७ द्रव्य समर्पण ४८ श्राद्धकथा ४९ विनायक पूजा ५० ग्रहयज्ञ ५१ आश्रम कथा ५२ जननाख्यान एवं प्रशौच ५३ नीतिसार ५४ व्रतोक्ति ५५ सूर्य्यवंश ५६ सोमवंश ५७ हरि अवतार कथन ५८ रामायण ५९ हरिवंश ६० भारताख्यान ६१ आयुर्वेद ६२ निदान ६३ चिकित्सा ६४ द्रव्यगुण ६५ रोग्न विष्णु कवच ६६ गरुड़ कवच ६७ त्रिपुर आख्यान ६८ प्रश्न चूड़ामणि ६९ अश्वायुर्वेद ७० ओषधी नाम कथन ७१ व्याकरण शास्त्र ७२ छन्दःशास्त्र ७३ सदाचार ७४ स्नानविधि ७५ वैश्वदेव तर्पण ७६ सन्ध्या ७७ पार्वण कर्म्म ७८ नित्यश्राद्ध ७९ सपिण्डश्राद्ध ८० धर्म्मसार निष्कृति ८१ प्रतिसंक्रम ८२ युगधर्म्म कृतफल ८३ योगशास्त्र ८४ विष्णुभक्ति ८५ भगवत्प्रणाम फल ८६ वैष्णव महात्म्य ८७ नरसिंह स्तव ८८ ज्ञानामृत ८९ गुह्याष्टक स्तव ९० विष्णु अर्चना ९१ वेदान्त सार सांख्य और सिद्धान्तशास्त्र ९२ ब्रह्मज्ञान ९३ आत्मज्ञान ९४ गीतासार एवं फल कथन।

द्वितीय उत्तरखण्ड प्रेत कल्प कथा—१ धर्म्म प्रकटित कारण २ पूर्व्वयोनि गति कारण ३ दानादिफल ४ और्द्ध दैहिक क्रिया ५ यमलोक मार्ग वर्णन ६ षोड़श श्राद्ध फल ७ यममार्ग से निष्कृति कथन ८ धर्म्मराज वैभव ९ प्रेत पीड़ा निर्णय १० प्रेत चिह्न निरूपण ११ प्रेत चरित्र १२ प्रेत कारण १३ प्रेतकृत्य विचार १४ सपिण्डी करण १५ प्रेतत्व मोचण आख्यान १६ विमुक्ति कारण दान १७ प्रेत आवश्यक दान १८ शारीरिक विनिर्द्देश १९ यमलोक वर्णन २० प्रेतत्व उद्धार कथन २१ कर्म्म कर्त्ता निर्णय २२ मृत्यु की पूर्व्व क्रिया कथन एवं पश्चात् कर्म्म निरूपण २३ षोड़श श्राद्ध कथन २४ स्वर्ग प्राप्ति क्रिया २५ सूतक संख्या २६ नारायण बलिकर्म्म २७ वृषोत्सर्ग माहात्म्य २८ निषिद्ध त्याग २९ अपमृत्यु क्रिया ३० मनुष्य कर्म्म विपाक ३१ कृताकृतत्र विचार ३२ मुक्तिकारण विष्णु ध्यान ३३ स्वर्ग गमन विहित आख्यान ३४ स्वर्ग सुख निरूपण ३५ भूर्लोक वर्णन ३६ सप्तलोक वर्णन ३७ पञ्चउर्द्ध लोक कथन ३८.

ब्रह्माण्ड स्थिति कीर्तन ३९ ब्रह्माण्ड अनेक चरित्र कथन ४० ब्रह्मजीव निरू-पण ४१ आत्यन्तिक लय कथन ४२ फलश्रुति निरूपण।

फलश्रुति—यह पुराण पाठ करने किम्बा श्रवण करने से पाप शमन होता है और लिख कर विषुव संक्रान्ति को सुवर्ण हंस हय युक्त ब्राह्मण को दान करने से स्वर्ग लाभ होता है।

अष्टादश ब्रह्माण्डपुराण।

४ पाद तीन भाग १२००० सहस्रश्लोक प्रथम भाग में—१ प्रक्रिया पाद २ अनुषङ्ग पाद ३ उपोद्घात पाद मध्य भाग ४ उपसंहार पाद शेष भाग इस पुराण में भाविकल्प की कथा है।

प्रथम भाग प्रक्रिया पाद आरम्भ—१ कृत्य समुद्देश २ नैमिषाख्यान ३ हिरण्यगर्भोत्पत्ति ४ लोक कल्पना कथा॥

द्वितीय अनुषङ्गपाद—१ कल्प मन्वन्तराख्यान कथा २ लोक ज्ञान कथन ३ मानसिक सृष्टि विवरण ४ रुद्र प्रसव विवरण ५ महादेव विभूति वर्णन ६ ऋषिसर्ग वर्णन ७ अग्नि उत्पत्ति विवरण ८ काल सद्भाव वर्णन ९ प्रियव्रत समूह उद्देश १० पृथिवी आयाम एवं विस्तार वर्णन ११ भारतवर्ष वर्णन १२ अन्यवर्ष वर्णन १३ जंब्वादि सप्तद्वीप वर्णन १४ अधः एवं ऊर्द्धलोक विवरण १५ ग्रहाचार १६ आदित्य व्यूह विवरण १७ देव ग्रह वर्णन १८ नीलकण्ठाख्यान १९ महादेव वैभव २० अमावस्या कथा २१ युग तत्व निरूपण २२ यज्ञ प्रव-र्तन २३ मध्य एवं अन्त्य युग की क्रिया एवं सत्ययुग की प्रजा का लक्षण २४ ऋषि प्रवर वर्णन २५ वेद आख्यान २६ स्वायम्भुव निरूपण २७ शेष म-न्वन्तराख्यान २८ पृथिवी दोहन।

मध्यभाग उपोद्घात पाद—१ सप्तऋषि कथा २ प्रजापति उपाख्यान ३ देवादि उद्भव ४ जय एवं क्रीड़ा ५ मरुत् उत्पत्ति कीर्तन ६ काश्यप विवरण ७ ऋषि वंश निरूपण ८ पितृकल्प कथा ९ श्राद्ध कल्प कथा १० वैवस्वतोत्पत्ति ११ वैवस्वत सृष्टि विविरण १२ मनुपुत्र निर्णय १३ गन्धर्व निरूपण १४ इक्ष्वाकुवंश विवरण १५ अत्रिवंश विवरण १६ अमावसु अर्च्चन १७ रजि चरित्र १८ ययाति चरित्र १९ यदुवंश निरूपण २० कार्तवीर्य्य चरित्र २१ जमदग्नि विवरण २२ वृष्णिवंश विषय २३ सागर उपाख्यान २४ भार्गव चरित्र गय वध २६ समर विवरण २७ पुनर्वार भार्गव विषय २८ देवासुर

युद्ध में श्रीकृष्ण का आविर्भाव बरणन २८ शुक्र कर्तृक इन्द्रस्तव ३० विष्णु माहात्म्य विवरण ३१ हरिवंश निरूपण ३२ कलियुग के भविष्य राजागण का चरित्र ॥

अन्तभाग उपसंहार पाद—१ वैवस्वत मन्वन्तर का संक्षेप विवरण २ भविष्य मनु का कर्म चरित्र ३ कल्प प्रलय निर्द्देश ४ काल परिमाण विवरण ५ परिमाण और लक्षण सहित चतुर्द्दश लोक विवरण ६ नरक एवं विकर्म्म वर्णन ७ मनोमयपुर आख्यान ८ प्राकृतिक लय विवरण ९ शैवपुर वर्णन १० सत्वादि गुण सम्बन्ध से जीव की गति विवरण ११ अनिर्द्देश्य ब्रह्म वर्णन ॥

फलश्रुति—यह पुराण श्रवण किम्वा पाठ करै उसका पाप मोचन होय एवं देवलोक में गति होय यह पुराण लिख कर * स्वर्ण सिंहासनस्थ करके ब्राह्मण को दान करने से ब्रह्मलोक प्राप्ति होती है ॥

---

* इतिहास तिमिर नाशक तीसरा खण्ड में यह सिद्ध किया गया है कि पहले आर्यलोग लिखना न जानते थे किंतु यह भ्रम है पुराणों में प्रायः लिखने का अनेक स्थानों में वर्णन आया है जो इस अनुक्रमणिका से मालूम हुआ होगा और इस का अनेक प्रमाण मैंने कईएक स्थलों में संग्रह किया है इतिहास तिमिरनाशक का भ्रम मूल लेख नीचे लिखा है। अब इसलोग मेक्समूलर साहब के लेखों को मानै या पुराण को। यथार्थ में मेक्समूलर को भ्रम हुआ है और उसी को मूल मानकर राजा जी चले हैं तब वह क्यों न भूलें।

" इस का कुछ प्रमाण नहीं मिलता कि इनको लिखना भी आता हो वेद श्रुति स्मृति शास्त्र दर्शन सूक्त ऋचा साम वर्ग अध्याय अध्यापक उपाध्याय ग्रंथ पाठ पाठक पठन मनन घोषण इत्यादि सब शब्द जब उन के अर्थ पर ध्यान करो यही गवाही देते हैं कि वेदों के ज़माने में लिखना किसी को नहीं आता था वेद वा ब्राह्मण वा सूत्रों में इसका कहीं कुछ ज़िकर नहीं है कोई शब्द ऐसा नहीं कि जिस से इसका इशारा पाया जाय उणादि सूत्र में जो अति प्राचीन व्याकरण है और जिस का ज़िकर पाणिनि ने किया है यदि कोई शब्द ऐसा मिल भी जाता है तो वह पीछे से मिलाया हुआ मालूम होता है [इसी तरह उणादिसूत्र में दीनारः जिनः तिरीटम् स्तूपः इत्यादि शब्द पीछे से लिख दिये हैं दीनारः (Denarious) रूमी शब्द है और जि धातु को जिस से जिन निकला है सायन ने जहां उणादि से लिखा" छोड़ दिया है न्टसिंह ने भी अपनी स्वरमंजरी में जि धातु को

छोड़ि अनेकन साधन कों मन मान कह्यौ न करै चित चाही ।
नन्द के लाल सों नेह करै किन भूलत दौरि ह्था जिय दाहो ॥
आजु लौं मोचन सों हरिचन्द से कौन ने बोलि तौ प्रीत निबाही ।
हैं गनिका सबरी गज गीध अजामिल आदिक याकी गवाही ॥ १ ॥

छोड़ दिया है यह धातु किसी प्रामाणिक ग्रन्थ में नहीं मिलता है] जैसा अरबी शब्द किताब (पुस्तक) जिस का अर्थ ही लिखना है अथवा यूनानी शब्द पेपर (कागज़) जिस का अर्थ ही पेपरिस वृक्ष की छाल से बनाया हुआ है कोई भी हाथ नहीं लगता संस्कृत में सूत्रों की रचना ऐसी है कि ज़ुबानी याद रक्खे जायं सूत्रकारों ने उन्हें लिखने के लिये कदापि नहीं रचा मनुजी ने जहां पढ़ने पढ़ाने का बहुत विस्तार पूर्वक नियम बांधा है [ब्रह्मारम्भेवसाने च पादौग्राह्यौगुरोस्सदा । संहत्यहस्तावध्येयं सहि ब्रह्माञ्जलिःस्मृतः ॥ अध्येष्यमाणन्तु गुरुर्नित्यकालमतन्द्रितः । अधीष्व भो इति ब्रूयाद्विरामोस्त्विति चारमेत् ॥] पुस्तक क़लम दवात कागज़ का नाम भी नहीं लिखा लिखने का कहीं किसी प्रकार से कुछ चर्चा ही नहीं किया और देखो अब तो लिखना पढ़ना ये दोनों ऐसे द्वंद हो गये हैं कि पर्यायी से जान पड़ते हैं एक के स्मरण के साथ ही दूसरे का स्मरण भी हो आता है निदान लिखने की विद्या इस देश में पीछे से फैली [यदि पहले होती महाभारत में जहां कौरव पांडव के दूतों का हाल लिखा है उन के साथ पत्र जाने का भी हाल लिखा होता ।] पत्र लेखनी मसी ये सब शब्द पीछे से काम में आये उत्तर में पहले भोजपत्र पर और दक्षिण में पहले तालपत्र पर लिखा होगा इसी से जिस पर लिखें उसका नाम पत्र रह गया और ताल पत्र पर लीकों के खोचने अर्थात् खोदने से यह काम ही लिखना ठहरा लिप लीपना है जब पत्रों पर सियाही लगाई होगी यह शब्द काम में आया यदि पाणिनि के समय में भी लिखना किसी को मालूम होता वह अवश्य इस के लिये कोई शब्द बनाता उसने जो वर्ण अक्षर और विराम लिखा है वर्ण का अर्थ आवाज़ का रंग है अक्षर का अर्थ अविनाशी है विराम का अर्थ आवाज़ का बंद होना है यदि वह लिखना जानता होता अनुस्वार विसर्ग जिह्वामूलीय और उपध्मानीय का नाम बोपदेव की तरह बिन्दु द्विबिन्दु वज्राकृति और गजकुंभाकृति रखता ।"

वैष्णवसर्वस्व

संप्रदायपरंपरा और स्वल्प पुरावृत्त समेत।

'चतुर्भुज भुजच्छाया समालंबा ह्सुनिर्भयाः ॥
जयंति संप्रदायास्ते. चत्वारो हरिवल्लभाः ॥'

सर्वस्वपंचकप्रणेता तदीयनामांकित अनन्य वीर वैष्णव

श्री हरिश्चन्द्र

रचित।

पटना—"खड्गविलास" प्रेस—बांकीपुर।

साहब प्रसाद सिंह ने मुद्रित किया।

१८८८.

वैष्णवसर्वस्व।

(पूर्व्वार्द्ध)

१—चर से पर अचर ब्रह्म स्वरूप नित्य लीला का गोलोक में धाम है जहां श्रीवृन्दावन में श्री यमुना जी के निकट अनेक कुंजलताओं से वेष्टित एक मणिमय महायोगशिलास्तंभ है उस भूमि का नाम विहार भूमि और तीर्थों की नाम मूल स्वरूप योगपीठ शिलासे मंडित उस कुट्टिम का नाम खेला तीर्थ है, जहां वेद वेदान्तादि सर्वशास्त्र वेद्य सच्चिदानन्द घन परमात्मा परमानन्द स्वरूप अनेक कोटि नित्यसिद्ध, साधन सिद्ध, भक्त, गोप, गौ, और श्री गोपीजनों से वेष्टित उस योगपीठ पर एकाग्र चिन्ता से ध्यानावस्थित होकर श्रीव्रजेश्वरी की मानावस्था का ध्यान करते हैं।

२—एक समय सब देवताओं के पूर्वज, सब विद्याके ईशान, सब भूतों के ईश्वर चराचर के गुरु, मुमुक्षु शरण, गुण ब्रह्मस्वरूप श्री शिवजी उस गोकुल मंडप में गये वहां अनेक प्रकारके गान से भगवान को रिझाया और संसार के उद्धार के हेतु प्रेम मार्ग का सिद्धान्त पूछा, और भगवान ने प्रेममार्ग का परम गुप्त तत्व और रहस्य सब शिव जी को कहा, जो सुनकर शिव जी ने जगत् के विरुद्ध दिगम्बर रूप प्रेमानन्द में मग्न हो अनेक प्रकार से नृत्य किया और कभी उस प्रेममार्ग का प्रकाश न किया यदि कभी कुछ कहा भी तो भगवान की परामाया श्री पार्वती से ही कहा क्योंकि युगलस्वरूप के परम गुप्त विहार के अनुभव करने वा कहने सुनने का पुरुष शरीरधारियों में शिव जी को छोड़ कर और कोई अधिकारी नहीं।

३—श्री महादेव जी की इस अवस्था में देखकर नारद जी ने अनेक बार तत्व पूछा परन्तु श्री महादेवजी ने न बताया पर जब त्रिपुरासुर के युद्धमें भगवान ने त्रिपुर का नाश किया तब नारदजी ने बड़ी स्तुति किया और जब भगवान ने प्रसन्न होकर कहा कि "वर मांगो" तब नारदजी ने यही वर मांगा कि प्रेममार्गका तत्व हम को बताइये औरभगवान ने प्रेममार्ग के अनेक तत्व इन को बताये और सनकादि सिद्धों तथा आदि ऋषियों को भी भक्ति मार्ग का उपदेश किया इस से ये नारदजी भक्ति मार्ग के तीसरे आचार्य हुए।

४—श्री नारदजी ने कृपा कर के उस तत्व को शाण्डिल्य, गर्ग, कौण्डिन्य

आदि ऋषियों से कहा और अनेक ऋषियों के वाक्यों तथा शास्त्रों की विचित्र प्रवृत्तियों से व्याकुल श्री व्यासजी को भी अपना तत्वोपदेश किया।

५—व्यासजी ने उस तत्व को श्री शुकदेवजी से कहा।

६—श्री शुकाचार्य यह परम्परा में तृतीय और सप्तम दोनों हैं तृतीय तो यों है कि नित्यलीला से वियुक्त एक शुक संसार में भ्रममाण होकर कहीं शांति न पाता हुआ कैलास में योगवट पर जा बैठा वहां श्री महादेवजी पार्वती जी से परमगुप्त भगवद्रहस्य कहते थे और यह लीला शुक उस नित्य लीला से वियुक्त वह सब चरित्र ध्यान बल से सुनता था तथा केवल लीला के अधिकारी होने ही के कारण उस रहस्य स्थान में उस का प्रवेश भी हुआ, श्री महादेवजी श्रीपार्वती जी से अंबिकावन में युगल स्वरूप का विहार तत्व कह रहे थे क्योंकि उस अंबिकावन में पुरुष भी जाय तो स्त्री हो जाय क्योंकि पुरुष शरीर उस गुप्त रहस्य सुनने का अधिकारी नहीं उस लीलाख्य शुक ने वे रहस्य चरित्र सुने उस के नेत्र से प्रेमाश्रु के बिन्दु गिरे और श्री महादेवजी के जंघा पर पड़े महादेव जी ने यह जान कर कि इस शुक ने हमारा रहस्य सुना बड़ा क्रोध किया और उस के मारने को अपना त्रिशूल चलाया और वह शुक वहां से भागा और व्यासजी के स्त्री के गर्भ में छिपा इस से ब्राह्मणी और स्त्री को अवध्य जान कर शिवजी का त्रिशूल फिर आया और शुकदेव जी ने व्यासजी के घर में जन्म लिया तो जो रहस्य शुकदेवजी ने साक्षात शिवजी से सुने थे वे अपने शिष्य श्री विष्णु स्वामी से कहे इससे तो ये (शुक) तृतीय हुए। और घर से निकल जाने के पीछे नारदजी से "अहो बकीयं स्तनकालकूटं" यह श्लोक गाते हुए सुन के भगवान के चरित्र पूछे तब नारदजी ने कहा कि तुम्हारे पिता ये सब चरित्र भली भांति जानते हैं उन से जाकर पूछो यह नारदजी का वाक्य सुन शुकदेवजी घर आए और अपने पिता व्यासजी से सब रहस्यतत्व सीखे, इस रीति से ये षष्ठ हुए।

७—श्री विष्णुस्वामी महाराज युधिष्ठिर के राज्य समय से किञ्चित कलियुग बीते द्रविड़ देश में एक राजा हुआ उस का मंत्री सर्वगुण संपन्न एक ब्राह्मण हुआ जिस का नाम नारायण भट्ट था उन के घर में भाद्रपद कृष्ण भौमवार रोहिणी नक्षत्र दो पहर की समय में श्रीविष्णु स्वामी का जन्म हुआ इनका बालपन का नाम माधव भट्ट था सातवें बरस में इन के पिता परलोक सिधारे और माता पति के साथ सती हो गई तब श्री विष्णु स्वामी अपने मामा

रंगनाथ के साथ विद्याभ्यास के हेतु श्री काशी क्षेत्र में चले मार्ग में पंढरपुर के राजा मंगलसेन को भेंट कर के काशी में आए और सदाशिव नामक ब्राह्मण से विद्याध्यन किया और जब गुरुदक्षिणा में गुरु ने यह मांगा कि हम को व्यास सूत्र में कुछ संदेह है सो व्यासजी के मुख से वह अर्थ सुनाय दीजिये तब योग-बल से श्री विष्णु स्वामी ने एक दिव्यरथ मंगाया उस पर आप आरूढ़ होकर अपने गुरु और उन के अनुज हरिहर भट्ट और पुत्र रंगनाथ भट्ट को साथ लेकर व्यासजी के आश्रम में जाकर व्यासजी के मुख से शुद्धाद्वैत मत के अनुसार मायावादका खंडन कर के गुरु को सुनवाया और फिर पृथ्वीपर आकर हरिहर भट्ट रंगनाथ को शिष्य किया और सात से बरस भगवान की आज्ञा से अपना शरीर रक्खा परन्तु यह काशी की यात्रावाला प्रसंग सब चरित्र के ग्रंथों में नहीं मिलता केवल श्री विष्णुस्वामी चरितामृत नामक ग्रंथ ही में मिलता है सर्वचरित्र सम्मत मत यह है कि श्री विष्णुस्वामी ने घर में सब विद्या पढ़ी और उनको इस बात का सोच पड़ा कि हम अब किन गुणों कर के अपने पिता से अधिक होंय क्योंकि हमारे राजा से बढ़ कर इस देश में कोई राजा नहीं और हमारे पिता से बढ़ कर राजा के घर में और कोई मानपात्र नहीं तब कुबेर को सेवा करें तो कुबेर भी इन्द्र का अनुयायी है और इंद्रादिक देवता रुद्र के हैं और रुद्र तो ब्रह्मा का पुत्र है ब्रह्मा भी नारायण के नाभि में से निकला है और नरायण भी अनेक मत्स्यादि अवतार बारम्बार लिया करते हैं इस से परतंत्र ज्ञात होते हैं इस से उपनिषदों में सर्वेश्वर जिस्को कहा है हम उस की उपासना करेंगे और जो सर्वेश्वर है उसकी सेवा महाराजोपचार से करने योग्य है ऐसा विचार कर के छत्र चमर, सिंहासन, शय्या, धूप, दीप, भोग, राग इत्यादि राज सेवा सामग्री सिद्ध कर के और भगवान का नाम रूपादि न जान कर के सर्व्वस्वामी के भाव से सेवा करने लगे, ऐसे ही नित्य सेवा करें पर जब उसको कोई अङ्गीकार न करे जब ऐसे ही बहुत दिन बीते और उन की सेवा अङ्गीकृत न हुई तब उन्हों ने यह पण किया कि यदि आज से सर्वेश्वर मेरी सेवा न ग्रहण करेंगे तो मैं भी अन्न ग्रहण न करूंगा और ऐसे ही बिना अन्न जलादि से छ दिन बीत गये तब सातवें दिन नित्य की भांती भोग धर के प्रतिज्ञा की कि यदि आज भी सेवा का अङ्गीकार न होगा तो हम अग्नि प्रवेश करेंगे ऐसी इन की बुद्धि की दृढ़ता देख कर श्री मच्छ्ड्गुणैश्वर्य्य भगवान्

आविर्भूत हुए और सब सेवा का अङ्गीकार किया जब स्वामी भीतर गए और वहां सच्चिदानन्द रूप घन साक्षात् पर ब्रह्म द्विभुज मुरली भूषित दक्षिण और बाम दोनों भागों में स्वामिनी समेत को देख कर बोले कि आप यहां क्यों आए हैं आप तो पुराण और तन्त्रों के प्रतिपाद्य साकार देवता हैं और हम ने तो श्रुतिशिरः प्रतिपाद्य निर्गुण सर्व स्रष्टा सर्वस्वामी की उपासना और सेवा की, यह श्री विष्णुस्वामी का वाक्य सुन भगवान बोले—'यदि हम से बढ़कर कोई ईश्वर है तो उस ने तुम्हारी सेवा क्यों नहीं लिया ? और मैंने यदि चोर भाव से लिया तो उस ने दण्ड क्यों नहीं दिया ?' तब विष्णुस्वामी ने कहा—'तुम साक्षात् ईश्वर हो हम तुम्हारे शरणापन्न हैं अपना माहात्म्य आप स्थापन कर के हमारा संशय दूर करो' इस पर भगवान ने अनेक युक्ति और प्रमाणों से अपना स्वरूप प्रतिपादन किया तब विष्णुस्वामी ने कहा कि आप स-परिवार यहीं विराजो और मेरी सेवा का अङ्गीकार नित्य करो, तब आप ने आज्ञा किया कि हमारी मूर्त्ति की प्रेम से सेवा करो हम सब स्वीकार करेंगे और भगवान ने पंचाक्षर मंत्र का उपदेश कर के गीता और श्री भागवत परम शास्त्र हैं, हमारी सेवा ही मुख्य धर्म्म है और प्रेम मात्र साधन है यह उपदेश किया और आप अंतर्हित हुए। भगवान के कहे हुए प्रकारसे और जैसी मूर्त्तिका स्वामी ने दर्शन किया था वैसी मूर्ति निर्मित करा के स्वामी सेवा करने लगे और लोकोपकार के हेतु आप ने शिष्य संग्रह भी किया और किसी लेख के मत से आप ने विवाह कर प्रतिरोध किया किसी के मत से आप ने विवाह नहीं किया केवल त्रिदंडी सन्यास कर के सतत श्री हरि सेवन किया। जिस का मत "विवाह किया" यह है उसी का यह भी लेख है कि आप ने शरीर सात सौ बरस रक्खा और आप को जो पुत्र हुआ उन का नाम श्रीगोपीनाथ था जिनका उसी लेख के मतानुसार चैत्र कृष्ण १३ धनिष्ठा नक्षत्र प्रथम प्रहर मे जन्म हुआ था और २१ पीठी तक बंश भी रहा और हरिहर, रंगनाथ, जयगोविन्द, भट्टाचार्य्य, मोहनलाल, व्यंकटेश, नरहरि, चिंतामणि, सोमगिरि, पद्मावती, कुलशेखर, चंद्रसेन, हरिजीवी, शंकर, गोविंददास, देवजीव, यज्ञनारायण, नरसिंह, लक्ष्मणगिरि, हरिदास, गोविन्ददास, दयाराम, जीवनराम, मनसाराम, कृष्णदत्त, बोपदेव, केशव, जयदेव, रत्नपाल, दुर्गावती, नामदेव, बिल्वमंगल इत्यादि शिष्यवर्ग स्वामी ही के काल में हुए हैं वरंच श्री महाप्रभु जी को भी स्वामी ने आप

ही उपदेश कर आचार्य पदवी दे भाष्य करने की आज्ञा दी परन्तु यह मत अप्रमाण है वास्तव में श्रीगोपीनाथ से ले कर श्रीविल्वमंगल तक सात से परम्परा प्राप्त शिष्य हुए और यहां जिनका नाम लिखा है वे उन में प्रसिद्ध थे और बहुतों के नाम काल बल से लुप्त हो गए इसी से यहां पहिले और वर्णन छोड़ के उस घोर काल का वर्णन किया जाता है जिस में वैदिक धर्म प्रायः उच्छिन्न सा हो गया था। भगवान ने बुद्धावतार ले कर बहुत से उपधर्मों का उपदेश करके सारे भारतवर्ष को उस धर्म से परिपूर्ण कर दिया। उस के कुछ काल पीछे एक दिन कैलाश के शिखर पर सिद्ध वट के निचे रत्नवेदि पर व्याघ्रचर्म के आसन पर बैठ के श्रीपुरुषोत्तम का ध्यान करते रहे कुछ काल के बाद भगवान् उनकी समाधि से प्रगट हो कर कहने लगे कि "तुम द्वापरादि युगों में मनुष्यादि में अंश से अवतीर्ण हो कर अपने बनाये हुये शास्त्रों में लोगों को मुझ से विमुख करो और अपना प्रभाव प्रगट करो" यह सुन शिवजी ने स्वीकारा अनन्तर अपने को प्रगट करने की संधि देख रहे थे उसी समय दक्षिण में द्रविड़ देश के एक महा शिव भक्त वृद्ध ब्राह्मण था उस को कोई संतति नहीं थी इस लिये वह ब्राह्मण कुछ अनुष्ठान करता था सो एक दिन आप प्रसन्न हो कर "वरं ब्रूहि" यह बोले यह शिव जी की वाणी सुनते ही ब्राह्मण ने कहा "महाराज ! यदि आप प्रसन्न हैं तो मुझे पुत्र मिले" इस पर शिव बोले 'निर्गुणि मूर्ख पुत्र चाहोगे तो एक सौ पांच बरस का मिलेगा और दूसरा सर्व गुण संपन्न १२ वर्ष का मिलेगा। इस पर ब्राह्मण बोला 'महाराज ! तब तक आप ठहरिये जब तक मैं अपनी स्त्री से इस्की सलाह पूछूं' महादेव जी का ठहरने का विचार जानके स्त्री से पूछने गया और स्त्री की सम्मति से शंकर जी से कहा महाराज ! सर्व गुण सपन्न पुत्र मुझे दीजिये शिवजी ने बहुत अच्छा कह कर अन्य सर्व गुण सम्पन्न कोई पुत्र न देखकर स्वयं उसका पुत्र होना स्वीकार किया और गर्भ काल समाप्त होने पर उस ब्राह्मणकी स्त्री से अवतीर्ण हुए। ब्राह्मण ने शिव का प्रसाद जान कर उस पुत्र का नाम शंकर रक्खा और क्रमसे उपनयन तक संसकार किये और साम वेद पढ़ाया। यह जनम से हो महाकवि हुआ कभी शक्ति, कभी शिव और कभी विष्णु का स्तव करता था जिस से वे देवता प्रत्यक्ष होकर उसको वर देते थे। अनिमादि सिद्धि तो इस के वंश में थीं कुछ काल के अनंतर किसी ब्राह्मण के घर में अवतीर्ण गौरी से यथा विधि विवाह हुआ गृहस्थाश्रमी होकर त्रैवर्णिक

धर्मका अर्जन किया और लक्ष्मी ऐश्वर्य संतति की इच्छा करने वाले लोगों के लिये उपासना काण्ड प्रसिद्ध किया। सर्वजन में इस की कीर्त्ति होने के कारण सब इसके वाक्य पर विश्वास करने लगे। ऐसे एकादश वर्ष व्यतीत हुए तब शंकराचार्य ने अपने तात से कहा कि पिता अब कुछ अनिष्ट होगा ऐसा ज्ञात होता है इस लिये मेरी मनीषा काशी में जाने का है सो आप की आज्ञा चाहताहूं यह सुन पिता ने कहा बहुत अच्छा है परन्तु हम को भी काशी को ले चलो तब शङ्कराचार्य ने अपने मा बाप को शीविका में बैठाल कर स्त्री समेत काशी में आगमन किया काशी में आते ही शंकराचार्य को कालज्वर आया और अपनी अंत की वेला जान मणिकार्णिका में स्नान किया और "निमज्जता नाथ भवार्णवान्तश्चिरान्मया पोतइवासि लब्धः" इस श्लोकार्ध से स्तवन करते करते प्राण त्याग किया।

यह पुत्रका अन्त देख कर माता पिताने बहुत विलाप किया अन्तर शौर्यप्रभूत शंकराचार्य की स्त्री ने अग्रिम आधा श्लोक पढ़ा यथा "त्वयापि लब्धं भगवन्निदानी मनुत्तमं पात्रमिदं दयायाः" यह श्लोकार्थ सुनते ही शंकराचार्य्य जीवित होकर स्त्री से बोले कि यद्यपि तुमने हमको जीवित किया तथापि हम सन्यास करेंगे ऐसा कहकर चतुर्विध कुटीचर, बहूदक, हंस और परमहंसात्मक सन्यास किया यद्यपि शास्त्र की आज्ञा, यावत् मदिरामत्त के समान ज्ञान से मत्त हुए विना शिखा सूत्र का त्याग करने के विषय नहीं तथापि इन्हों ने अपना पूर्व श्रीविष्णु का "जनान्महिमुखानकुरु" यह वाक्य स्मरण करके शिखा सूत्रका त्याग किया और काषाय वस्त्र और दंड ग्रहण किया अनंतर इनके बहुत से शिष्य भी हुए क्योंकि "यद्यदा चरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरोजनः। सयत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदन वर्तते" अनंतर शंकराचार्य्य ने यही भगवान का वाक्य पूर्ण मनोगत कर के व्यासमूत्र का भाष्य मायावाद अर्थात् दैत्य मत के अनुसार किया कुछ दिन के अनंतर प्रायः इन का मत इस देश में फैल गया।

उसी समय गुजरात देश में गाहिल पत्तन में एक राजा था उसका पुत्र कुमारपाल नामक था यह हेम सूरि नाम किसी श्वेताम्बर जैन से पढ़ाया गया था किसी समय कुमारपाल ने स्वप्न में राहू से ग्रसा हुआ पूर्ण चन्द्र देखा और हेमसूरि से इस का फल पूछने को तत्काल आया। स्वप्न का वृत्त सुनते ही हेमसूरि ने उस की बहुत निंदा की, राजपुत्र हेमसूरि के दुष्टभाषण

सुन घर आया और हेमसूरि को मारने का विचार करते करते शेष रात्र तक लागा। प्रभात होते ही हेमसूरि ने शिष्य द्वारा राजपुत्र को कहला भेजा कि यह 'स्वप्न बहुत लाभदायक है आज से सातवें दिन राज्य सर्व तुम्हारे हस्तगत होगा यदि यह असत्य हो तो हमें दण्ड देना नहीं हमारी आज्ञा मानना' राजपुत्र ने हां कहा और ऐसा ही हुआ तब राज पुत्र से कह कर हेम सूरि ने वैष्णव शैव मीमांसक सब को नगर से निकलवा दिया ।

उसी काल में सूर्यांश देवप्रबोध नामा और जैमिनि के अंश भट्टाचार्य नामा पूर्व में दो पण्डित हुए वे लोग जब काशी में आये तब सुना कि गुजरात में जैनों ने वेदमार्ग का नाश किया ये सुन के वे लोग गुजरात गये और काल पाकर हेमसूर्य के विश्वाश पात्र शिष्य हुए। एक दिन पद्मावती की अतरंग आराधना में हेमसूर्य ने इन दोनों को मद्य पीने को दिया। देव प्रबोध ने तो मारे डरके पी लिया भट्टाचार्य ने कहा कि थोड़ी देर ठहर के पीयेंगें अनन्तर हेमसूर्य ने वेद धर्म की निन्दा करना शुरू किया। यह सुन कर भट्टाचार्य की आंखों से आसू गिरने लगा और हेमसूर्य ने जाना कि यह कोई छिपा हुआ ब्राह्मण है। हेमसूर्य ने उसे अपने ऊपर के कमरे में कैद किया वहां जैनमार्ग की बहुतसी पुस्तकें रक्खी थीं। जिनको पढ़ कर भट्टाचार्य ने वह वशीकरण सिद्ध कर लिया जिससे हेमसूर्य ने राजा को वश कर लिया था, उस राजा की एक रानी वैद्यक थी और नित्य शालिग्राम का पूजन करके जल पीती थी, उसका महल भट्टाचार्य के बंगले से बहुत निकट था। एक दिन उस रानी ने लम्बी सांस लेकर यह आधा श्लोक पढ़ा "किंकरोमि क्व गच्छामि को वेदानुद्धरिष्यति" यह सुनते ही भट्टाचार्य ने उत्तर दिया "माविषीद वरारोहे ! भट्टाचार्योऽस्तिभूतले" और यह कहके कूद पड़े कि जो वेद प्रमाण हो तो हम न मरें, कहते हैं कि इतने ऊंचे से गिरने से वेद की सत्यता से उनके प्राण तो नहीं गये पर 'जो वेद सत्य हो' इस सन्देह के वाक्य कहने से उनकी एक आंख में चोट आई और वहां से निकल कर उस नगर में एकांत में वे छिपे छिपे रहने लगे, एक दिन एक बगीचे में एकांत में एक तुलसी का पेड़ देखा और वहीं बैठे रहे जब सांझ हुई तब माली आया और तुलसी की पुड़िया फूल में छिपा कर ले चला, भट्टाचार्य ने माली से बहुत हठ पूर्वक रानी का सब वृत्तान्त जाना और 'किं करोमि क्वगच्छामि' यह पूरा श्लोक लिखकर माली को दिया वह रानी को

देवे। रानी ने एकान्त में भट्टाचार्य्य को बुलाया और यह जैन बनकर उस्के महल में गये और फिर ब्राह्मण होकर रानी को दर्शन दिया, रानी ने इस-की बड़ी पूजा किया और दोनों ने मिल कर वेद धर्म्म के लिये बड़ा विलाप किया, रानी ने उन को अपने महल में छिपा कर रक्खा फिर जैसा वशीकरण का बाजू हेमसूर्य्य ने राजा के हाथ में पहिनाया था वैसाही दूसरा बाजू भट्टाचार्य्य ने बनाकर रानी से राजा के हाथ में बंधवा दिया और वह बाजू अपने पास मंगवा लिया इस अभिचार से राजा को बड़ा ज्वर आया, राजा ने हेमसूर्य्य से ज्वर की निवृत्ति का उपाय पूछा उस ने कहा कि ब्राह्मण को काल पुरुष दान देने से ज्वर छूटेगा, राजा ने एक ब्राह्मण का लड़का खोज कर जनेऊ पहना कर काल पुरुष को दान दिया, और उससे राजा को ज्वर छूट गया। राजा के चित में उसी दिन से ब्राह्मणों का महत्व बढ़ा और ब्राह्मणों को राज्य में रहने की आज्ञा मिली उसी समय देव प्रबोधाचार्य्य भी प्रायश्चित्त करके नरसिंह जी से वर पाकर सिद्ध होकर पालकी पर चढ़ कर बहुत से शिष्यों के साथ उस नगर में आये, भट्टाचार्य्य इन से आकर मिले। एक दिन जब ये श्राद्ध करते थे तब हेमसूर्य्यने अपने मंत्र से इनका श्राद्ध नाश करना चाहा और जहां पाक होता था तहां मद्य बरसाना चाहा भट्टाचार्य्य ने भी मन्त्र से नारियल उड़ाये जो जैनसिद्धों के सिर पर गिरने लगे जिससे वे वहां से भाग गये। दूसरे दिन सब ब्राह्मण मिल कर राजसभा में गये राजा ने प्र-णामादि से इन का बड़ा सत्कार किया; ज्योतिषी ने पंचाङ्ग सुनाया स्मार्त्त ने कहा आज अमावास्या है श्राद्ध करना चाहिये सुनते ही हेमसूर्य्य ने क्रुद्ध कर कहा कि आज अमावस्या नहीं पूर्णमासी है, अंत में यह ठहरी जिसकी बात झूठ हो वह अपने मत की पुस्तक समेत पृथ्वी में गाड़ा जाय, सांझ को हेमसूर्य्य ने अपनी इष्ट देवता पद्मावती से प्रार्थना करके उसका कुण्ड चन्द्र-मा के स्थान पर उदय कराया, देव प्रबोधने नृसिंह जी के प्रसाद से यह बात जानकर राजा से कहा कि यह कुण्डल है और इसका प्रकाश केवल बारह कोश तक है। राजा ने उसी समय सवार भेजकर जब यह वृत्त जाना तब

॰रे दिन हेमसूर्य्य को पुस्तकों समेत पृथ्वी में गाड़ दिया, जिस समय हेमसू-
कुमार॰
॰ा जाता था उस समय बड़ी भीड़ हुई और सब लोगों ने मिल कर
गया था।॰
॰छा कि 'अब तुम धर्म्मका सच सच तत्व बताओ' तब, यह श्लोक
देखा और हेम
॰प्राण त्याग किया—"हरिर्भागीरथो विप्राः विप्राः भागीरथे
सुनते ही हेमसू॰

हरिः भागीरथी. हरिर्विप्राः सारमेकं जगत्त्रये" जैनों का बल टूटने से वेद फिर प्रवर्त्त हुये, और वैष्णव शैवमत प्रचार हुआ, भट्टाचार्य ने अपना वेदान्त मत चलाया और पद्मावती को शाप दिया कि तू मनुष्य हो, वही सरस्वती नाम से भट्टाचार्य ही के कन्या हुई और भट्टाचार्य ने उस का विवाह ब्रह्मा के अंश शुरेश्वराचार्य नामक अपने शिष्य से कर दिया। शुरेश्वर अपनी स्त्री को लेकर काशी में रहने लगी जिस समय, भट्टाचार्य शतायु होकर जैन ग्रन्थ पढ़ने के प्रायश्चित में तुषानल करके जलने लगी उस समय शंकराचार्य ने आकर इनका हाथ पकड़ा और कहा कि हम से वाद करो, भट्ट ने कहा तुम काशी जाव वहां हमारे जामाता से वाद करना हम तो अब देह त्याग करते हैं। शङ्कराचार्य काशी में आये और शुरेश्वर की स्त्री को मध्यस्थ कर के वाद आरम्भ किया, पद्मावती ने पूर्व वैर स्मरण कर के शङ्कराचार्य का पक्ष किया सातयें दिन सुरेश्वराचार्य हारे और शंकराचार्य ने उन्हें सन्यासी किया। शंकर दक्षिण में गोकर्ण शिवक्षेत्र में आये और चार शिष्यों को आज्ञा दिया कि चार दिशा में जाकर तुम लोग शिखा सूत्र परित्याग पूर्वक सन्यास मत का प्रचार करो। उन शिष्यों में मध्वनामक एक ब्राह्मण को भगवान श्री रामचन्द्रजी ने रात्र को स्वप्न में आज्ञा दिया कि तुम तो हनुमान के अंश हो और वैष्णव मत फैलाने का तुम्हारा अवतार है सो उठो और शंकराचार्य का मत खण्डन करके हमारे तत्व वाद के अनुसार व्यास सूत्र की व्याख्या कर के वैष्णव मत फैलावो। मध्वाचार्य ने भगवदाज्ञानुसार दूसरे दिन से शंकराचार्य का मत कण्ठरव से खण्डन करके वैष्णव मत का प्रचार किया।

बिल्वमङ्गल के पीछे और मध्वाचार्य के पहले द्रविड़ देश में रामानुज नाम एक ब्राह्मण हुये लक्ष्मी को तप से प्रसन्न करके उनसे वर मांगा कि हम से भगवत् सिद्धान्त कहो लक्ष्मीजी ने गरुड़ जी को आज्ञा दिया और गरुड़ जी ने नारायणीय सिद्धान्त रामानुज से कहा जिसके अनुसार श्रीरामानुजाचार्य ने गीता और सूत्र पर भाष्य करके विशिष्टा द्वैत वैष्णव सम्प्रदाय संसार में फैलाया। इसी सम्प्रदाय में अगस्त्य और परशुराम के बनाये हरिहरोपासक और लक्ष्मी के उपासक वैष्णव शाखान्तर में हुए हैं।

इस काल से बहुत पूर्व ही पण्ढरपुरमें व्यास और सूर्य के अंश से निम्बादित्य ब्राह्मण हुये जिनको श्री विट्ठल नाथ जी ने अपना सिद्धान्त कहा और उसके अनुसार उन्होंने द्वैताद्वैत मत प्रवर्त्त किया, जैनों के बल से लुप्त सम्प्रदाय को श्री निवासाचार्य ने सूत्र और गीता पर भाष्यकरके फिर से प्रवर्त्त किया।

यह चारो सम्प्रदाय अर्थात् विष्णुस्वामी, मध्व, रामानुज, और निम्बादित्य की पूर्व्व व्यवस्था हुई, ये सम्प्रदाय रुद्र, ब्रह्म, लक्ष्मी, और सनकादि के क्रमसे प्रवर्त्त किये हुये वास्तव में एक पर प्रगट अलग२ संसार में प्रसिद्ध हैं।

मध्वाचार्य्य से श्री जगन्नाथजी ने आज्ञा किया था कि 'जो इन चारो सम्प्रदाय के बाहर हैं वह हमारा प्यारा नहीं है।,

इन्ही सम्प्रदायों के चार उपसम्प्रदाय हैं विष्णुस्वामी का उपसम्प्रदाय चैतन्य, रामानुजका नन्द, मध्वाचार्य्यका प्रकाश, और निम्बादित्यका स्वरूप, इनमें स्वरूप और प्रकाशकी सम्प्रदाय कालवलसे विच्छिन्न होगई ये चारो उपसम्प्रदाय मूलसम्प्रदाय से अविरुद्ध हैं केवल आचार्योंके रुचिभेदसे नामान्तरसे प्रसिद्ध हैं।

चतुर्भुजभुजच्छाया व्यवसायत् सुनिर्भयाः। जयन्तिस सम्प्रदायाश्चत्वारो हरिवल्लभाः॥१॥

उत्तरार्द्ध।

अथ श्री विष्णु स्वामी सम्प्रदाय परम्परा।

श्री पुरुषोत्तम, शिव जी, श्री नारद जी, श्री व्यास जी। व्यासजी के दो शिष्य शुकदेवजी और शाण्डिल्य; शण्डिल्य के शिष्य गर्ग और कौण्डिन्य, शुकदेवजी के शिष्य विष्णुस्वामी, विष्णुस्वामी से क्रम से परमानन्द मुनि, आनन्द मुनि, प्रकाश मुनि, श्रीकृष्ण मुनि, नारायण मुनि, जै मुनि, श्रीमुनि, शङ्कर भट्ट पद्मभट्ट गोपाल भट्ट श्रीधर भट्ट श्याम भट्ट राम भट्ट सेतु भट्ट कृष्ण भट्ट दिवाकर भट्ट कृपाल भट्ट विद्याधर भट्ट दिनकर भट्ट मधुनिधान भट्ट ज्ञान देव भट्ट शुकदेव भट्ट शिवदेव शांतिदेव दयालदेव क्षमादेव सन्तोषदेव धीरजदेव ध्यानदेव विज्ञानदेव महाचार्य्य तत्वाचार्य्य नृसिंहाचार्य्य सूवाचार्य्य सुबुद्धाचार्य्य प्रबुधाचार्य्य प्रबोधाचार्य्य प्रभुवाचार्य्य रुद्राचार्य्य भगवन्ताचार्य्य रामेश्वराचार्य्य ब्रह्मविधिचर्य्याचार्य्य सुदयाचार्य्य लक्ष्मनारायणाचार्य्य ज्ञानदेव नामदेव त्रिलोचनदेव इत्यादि विल्वमङ्गल जी तक सात से आचार्य्य हुए हैं इसी से श्री महाप्रभु जी पहले से गिनने से सात से सातवें आचार्य्य हैं।

कहते हैं कि विष्णुस्वामीने फिरसे जन्म लियाथा और व्यास अवतारकहलातेथे।

श्री वल्लभी मतके अतिरिक्त श्री विष्णुस्वामीके सम्प्रदायके लोग और कहीं कहीं भी मिलते हैं जैसा कि श्री प्रेमाकर गुसाईं के शिष्य नारायण दास जो सारस्वत जिनको श्री शुकदेव जीने दर्शन दिया था उन के पीछे पुरुषोत्तम जी और वंशीधर जी इस वंश में प्रसिद्ध हुए हैं नाभा जी ने इन्ही नारायण दास का भक्तमाल में वर्णन किया है यह गद्दी नवल गोस्वामी के नाम से अब तक प्रसिद्ध है ऐसेही व्रज में और भी कुछ लोग इस सम्प्रदाय के हैं॥

अथ श्री मध्व सम्प्रदाय ।

	देवता	अंशावतार	पृथ्वोस्थित्यङ्गा पुण्यतिथि ।			स्थल ।
१	वायुदेव	श्री आनन्द तीर्थ स्वामी	६८ माघ शुक्ल	९	१	स्थलदच्चिणस्थवृन्दावने
२	रुद्रदेव	पद्मनाभतीर्थस्वामी	७ कातिक कृष्ण	१४	२	बंद्रिकाश्रम
३	मन्मथदेव	नरहर तीर्थस्वामी	८ पौष कृष्ण	७	३	अनोगोंदी
४	गरुड़देव	माधव तीर्थ स्वामी	१७ भाद्रपद कृष्ण	१५	४	इंविरुपाक्षी
५	रुद्रदेव	अक्षोभ तीर्थ स्वामी	मार्गशीर्ष कृष्ण	१५	५	मेगुर भीमातीर
६	इंसदेव	जय तीर्थ स्वामी	९ आषाढ़ कृष्ण	८	६	मलखेडा
७	सूर्यदेव	विद्यानिधि राजतीर्थ	६४ वैशाख शुक्ल	३	७	जगन्नाथ
८	चन्द्रदेव	कवीन्द्र तीर्थ स्वामी	७ चैत्र शुक्ल	९	८	पंपा सरोवर
९	यमदेव	वागोश तीर्थ स्वामी	४ चैत्र शुक्ल	२	९	आनिगोदी
१०	अग्निदेव	रामचन्द्र तीर्थ स्वामी	३३ वैशाख शुक्ल	८	१०	मलखेडा ।
११	वरुणदेव	विद्या तीर्थ स्वामी	८ कार्तिक कृष्ण	४	११	आनिगोदी ।
१२	कुबेरदेव	रघुनाथ तीर्थ स्वामी	२६ मार्गशीर्ष कृष्ण	२	१२	कोलुर
१३	प्रवाहदेव	रघुवर्य्य तीर्थ स्वामी	८ ज्येष्ट कृष्ण	३	१३	पेनगोड़ी

	देवता	अंशावतार	पृथ्वोस्थित्यङ्कापुण्यतिथि				स्थल
१४	नैऋतिदेव	रघुत्तम तीर्थ स्वामी	३८	पौष शुक्ल	११	१४	ये चक्रमगर
१५	तुंबुरुदेव	वेदव्यास विधि तीर्थ	२४	चैत्र शुक्ल	२	१५	पुष्कर पुर भीमातीर
१६	हाहागन्धर्व	विद्याधीष तीर्थ	१८	पौष कृष्ण	१४	१६	सांगल्गि कृष्णातीर
१७	हूहू गन्धर्व	वेदनिधि तीर्थ स्वामी	१७	कार्तिक शुक्ल	१२	१७	निव्रत्ति संगमतीर
१८	लोमसऋषि	सत्यवर्य तीर्थ स्वामी	८	फाल्गुण शुक्ल	६	१८	विलोच नगर
१९	जावालि ऋषि	सत्यनिधि तीर्थ स्वामी	२२	मार्गशीर्ष शुक्ल	४	१९	माचारगुडी कावेरीतीर
२०	विश्वामित्र	सत्यनाथ तीर्थ स्वामी	३९	मार्गशीर्ष शुक्ल	११	२०	कोलुर
२१	मेधातिथि	सत्याऽभिमान तीर्थ	६९	ज्येष्ट कृष्ण	१४	२१	चारपी
२२	पराशर ऋषि	सत्यपूर्ण स्वामी	२२	ज्येष्ट कृष्ण	२	२२	माना मदरी
२३	जामदग्नि ऋषि	सत्य विजय स्वामी	१३	ज्येष्ट कृष्ण	१२	२३	सावपुर सावणूर
२४	कश्यपऋषि	सत्यप्रिय स्वामी	९	चैत्र शुक्ल	१३	२४	तुङ्गभद्रा तीर
२५	मांडव ऋषि	सतत्रबोध तीर्थ स्वामी	४०	फाल्गुण कृष्ण	१	२५	मांतविवतुर
२६	—	सत्यसन्धतीर्थ स्वामी	११	ज्येष्ट शुक्ल	२	२६	—
२७	—	सत्यवर तीर्थ स्वामी	२	श्रावण शुक्ल	७	२७	—
२८	—	सत्य धर्म तीर्थ स्वामी			—	२८	—
२९	—	सतत्र सङ्कल्प तीर्थ स्वामी			—	२९	—

अथ श्री चैतन्य सम्प्रदाय परम्परा।

श्रीकृष्ण ब्रह्मा नारद व्यास मध्व पद्मनाभ नृहरि माधव अक्षोभ्य जयतीर्थ ज्ञानसिंधु दयानिधि विद्यानिधि राजेन्द्र जयधर्म्मा पुरुषोत्तम ब्रह्मण्य व्यासतीर्थ लक्ष्मीपति माधवेन्द्र, उन के तीन शिष्य ईश्वर १ अद्वैत २ और नित्यानन्द, ईश्वर के श्रीकृष्ण चैतन्य उन के गोपालभट्ट उन के गोस्वामी गोपीनाथ जिन का वंश अब प्रसिद्ध है। श्रीकृष्ण चैतन्य के मुख्य चौदह पार्षद और चौंसठ महन्तों के नाम नीचे लिखे के अनुसार जानो। और श्रीकृष्ण चैतन्य विद्या में केशवपुरी के शिष्य थे।

अद्वैत १ अभिराम २ नित्यानन्द ३ सुन्दर ठकुर ४ धनञ्जय पण्डित ५ कमलाकर ६ सारंग पण्डित ७ पुरुषोत्तम ८ श्रीधर ९ हलायुध १० गौरीदास ११ उद्धारण १२ परमेश्वर १३ कृष्ण १४।

नीलाम्बर चक्रवर्त्ती १ गदाधर पण्डित २ गदाधर ठकुर ३ नरहरी ४ मुकुन्द ५ सदाशिव कविराज ६ जगदानन्द पण्डित ७ दामोदर ८ वनमाली ९ रघुनाथ भट्ट १० गदाधर भट्ट ११ प्रबोधानन्द १२ राघोगोस्वामी १३ भूगर्भ गोस्वामी १४ काशीमिश्र १५ रूप गोस्वामी १६ सनातन गोस्वामी १७ रघुनाथदास १८ रघुनाथ भट्ट १९ गोपाल भट्ट २० लोकनाथ २१ दूसरे गदाधर भट्ट २२ जीव गोस्वामी २३ गोविन्द २४ माधव २५ वासू घोष २६ शिवानन्द की स्त्री २७ परमानन्दपुरी २८ राघौदास २९ शुक्लांबर ब्रह्मचारी ३० जगदीशपण्डित ३१ श्रीलाचार्य्य ३२ मुकुन्द ३३ गोपीनाथ सिंह ३४ शङ्कर ३५ गुणसागर राय ३६ माधव ३७ भास्कर ३८ वनमाली ३९ सार्वभौम ४० सिंहानन्द ४१ लोकनाथकविचन्द्र ४२ श्रीनाथ ४३ रामनाथ ४४ काशीमिश्र ४५ रामानन्द ४६ प्रतापरुद्र ४७ कालीदास ठकुर ४८ माकी स्त्री ४९ गोपीनाथाचार्य ५० शारङ्गदास ५१ विश्वेश्वर ५२ सत्यराज ५३ रामानन्द ५४ गोविन्द ५५ गरुड़ ५६ आचार्य्यरत्न ५७ श्रीवल्लभ ५८ वृन्दावन ५९ शिवानन्द ६० जगन्नाथपण्डित ६१ अनन्त ६२ हरिदास ६३ हृदयानन्द ६४॥

अथ श्रीरामानुज सम्प्रदाय।

पुरुषोत्तम लक्ष्मी विश्वक्सेन शठकोप श्रीनाथ पुण्डरीकाक्ष राममिश्र यामुनाचार्य्य पूर्णाचार्य्य रामानुज गोविन्दाचार्य्य पराशर वेदान्ताचार्य्य कलिवैरिदास श्रीकृष्णपाद लोकाचार्य्य श्रीशैलनाथ वरवर मुनि वरदनारायण

श्रीनिवासदास प्रणतार्तिहराचार्य्य वरदाचार्य्य वेंकटेश वरदार्य्य प्रणतार्तिहर वेङ्कटार्य्य वेङ्कटेश वरदाचार्य्य प्रणतार्तिहर श्रीनिवास वेङ्कटाचार्य्य कृष्णाचार्य्य शेषाचार्य्य श्रीनिवासरङ्गाचार्य्य यह तो वर्तमान श्री वृन्दाबनस्थ स्वामी रङ्गाचार्य्य तक परम्परा लिखी है परन्तु रामानुज संप्रदाय में चौहत्तर गद्दी है। और देवाचार्य्य से प्रबोधानन्द राघवानन्द रामानन्द यह रामानन्दी शाखा है। रामानन्द से अनन्तानन्द कृष्णदास कील्हदास अग्रदास नारायणदास गोविन्ददास कान्हरदास तक अग्रदासी शाखा है। और निम्बादित्य और रामानुज सम्प्रदाय से मिलकर श्रीजानकी घाट की और मिथिलापुर की सम्प्रदाय स्वतन्त्र बन गई है। कितने साधु अग्रस्वामी के सम्प्रदाय के पौहारी बाबा को रामानुज के अन्तर्गत मानते हैं पर महाराज विश्वनाथ सिंह ने अपनी गुरु परम्परा में इन लोगों को निम्बादित्य के अन्तःपाती हितहरिवंश जी के सम्प्रदाय में माना है।

अथ श्री निम्बादित्य सम्प्रदाय परम्परा।

हंस सनकादि नारद निम्बादित्य। निम्बादित्य का नाम निम्बार्क और नियमानन्द भी है। इन की माता जयन्ती और पिता अरुण द्राविड़ ब्राह्मण इसी से इनको आरुणी भी कहते हैं। अन्तरङ्ग रूप इनका श्रीललिता जी और रङ्गदेवी का है मर्य्यादा में ये सुदर्शन चक्र का अवतार हैं। शिष्य परम्परा श्रीनिवासाचार्य्य विश्वाचार्य्य पुरुषोत्तमाचार्य्य विलासाचार्य्य स्वरूपाचार्य्य माधवाचार्य्य बलभद्राचार्य्य पद्माचार्य्य श्यामाचार्य्य गोपालाचार्य्य कृपाचार्य्य देवाचार्य्य सुन्दर भट्ट पद्मनाभ उपेन्द्र भट्ट रामचन्द्रभट्ट वामनभट्ट कृष्णभट्ट पद्माकरभट्ट भूरिभट्ट माधवभट्ट श्यामभट्ट गोपालभट्ट बलभद्रभट्ट गोपीनाथभट्ट केशवभट्ट गङ्गलभट्ट केशवकाश्मीरिभट्ट श्रीभट्ट हरिव्यासदेव। हरिव्यासदेव जी से पांच शाखा नीचे लिखे हुए के अनुसार यथा।

श्रीभूराम कर्णहरदेव मथुरेश नरहरिदास प्रह्लाददास इत्यादि।

दूसरी शाखा।

कर्णहरि परमानन्ददेव नागजी सोहनदेव आत्माराम नारायण दास भगवानदास गिरधारीदास गोपालदास।'

तीसरी शाखा।

श्रीभूराम मथुरेशदेव बदरीशदेव जयरामदेव कृष्णदेव धर्म दास जी।

चौथी शाखा ।

व्यासदेव परशुराम हितहरिवंश नारायणहित वृन्दावनहित श्री गोविन्द हित ।

पांचवीं शाखा ।

व्यास जी के पहले किसी महात्मा से है यथा श्री आशाधीर जी श्रीहरिदास स्वामी विट्ठलविपुलविनोदविहारण विहारणदास जी नरहरदेव जी रसिकदेव जी पीतांबरदेव गोवर्द्धनदेव नरोत्तमदेव। रसिकदेव जी के दूसरे शिष्य ललितकिशोरी उनके मौनीदास जी जिनको श्रीवन में टट्टी है।

शोभूराम जी के भाई आत्माराम उन को दो शिष्य परंपरा एक सन्तदास की एक माधव दास की।

इसी सम्प्रदाय में सुमुखन भक्त के पुत्र व्यासजी बड़े प्रसिद्ध हुए हैं संवत १६१२ में जन्म पैंतालीस वर्ष की अवस्था में श्रीवन आए और बारह सम्प्रदाय चलाई ।

श्रीहित हरिवंश जी का निवास देवनगर गौड़ब्राह्मण कश्यप गोत्र ययुर्वेद माध्यनन्दी शाखा पिता व्यास मिश्र माता तारावती वंशी का अवतार संवत १५५९ वैशाख सुदी ११ को जन्म इनके ताऊ नृसिंहाश्रम प्रसिद्ध भक्त थे इन को बारह भाई और स्त्री का नाम रुक्मिणी, मोहन जी इत्यादि तीन पुत्र और एक कन्या श्रीस्वामिनी जी से अश्वत्थ वृच पर मन्त्र पाया कृष्णदासी और मनोहरी दो स्त्री और व्याही संवत १५८२ कार्तिक सुदी १३ को श्रीराधावल्लभ जी को पाट बैठाया पांच भोग सात आरती का नेम रक्खा इनका संस्कृत ग्रन्थ श्रीराधा सुधानिधि श्लोक २७० भाषा ग्रन्थ पद चौरासी मुख्य शिष्य नरवाहन नाहरमल विट्ठलदास मोहनदास छबीलदास नवलदास वलीदास परमानन्दरसिक हठी हरिदास खड्गसेन और गङ्गा, यमुना ॥

इति श्री वैष्णव सरवस्व परम्परा वर्णने—उत्तरार्द्ध समाप्तः ।

श्रीवल्लभीयसर्वस्व

श्रीश्रीवल्लभाचार्य महाप्रभु चरणकमलमिलिंदमरंद।

'चिंतासंतानहंतारो यत्पादांबुजरेणवः ॥
स्वीयानां तान् निजाचार्यान् प्रणामामि मुहुर्मुहुः'

सर्वस्वपंचकप्रणेता तदीयनामांकित अनन्य वीर वैष्णव

श्री हरिश्चन्द्र

रचित।

पटना—"खड्गविलास" प्रेस—बांकीपुर।

साहब प्रसाद सिंह ने मुद्रित किया।

१८८८.

श्रीवल्लभीयसर्वस्व ।

दक्षिण में तैलङ्ग देश में आंध्र प्रान्त में आकवीडु जिला में। खम्मम काकरिवल्लि ग्राम में यजुर्वेद तैत्तरीय शाखा भारद्वाज गोत्र में महादेव पात्र के वंश के ब्राह्मण रहते थे। इसी वंश में रामनारायण भट्ट के पुत्र यज्ञनारायण सोमयागी हुए। ये वेद के अवतार थे इन पर वेद पुरुष अत्यन्त ही प्रसन्न रहते थे। जब इन को वेद में कोई संदेह होता तब स्नान कर के वेद पुरुष का ध्यान करते और वेद पुरुष प्रत्यक्ष हो कर संदेह नाश कर देते।

एक वेर मायावादियों ने हँसी से इन से कहा कि आप वेद के अवतार हो तो बकरे से वेद पढ़वावो तब यज्ञनारायण जी ने बकरे की ओर देख कर कहा "भोलुकायत्व'वेदानुच्चारय" इतना सुनते ही वह बकरा वेद पाठ करने लगा। ऐसे ही दक्षिण में उन ने अनेक चमत्कार दिखाये। ये श्री रामानुजाचार्य्य मत के बड़े पण्डित थे।

जब यज्ञनारायण जी ने पहिला सोमयाग किया तब अग्निकुण्ड में से यह शब्द सुन पड़ा कि ऐसे सौ सोमयाग के पीछे भगवान का अवतार होता है। बतीस सोम याग करके ये देवलोक पधारे।

इनके पुत्र गङ्गाधर भट्ट सोमयागी साक्षात शिव जी के अवतार थे जिन्हों ने अवभृत स्नान करती समय लोगों को प्रत्यक्ष अपने केश में से जल धारा निकलती दिखाई। अट्ठाइस सोमयाग कर के ये देवलोक गये।

इन के पुत्र गणपति सोमयागी थे, काशी में पण्डितों की सभा में इन्हों ने गणेश की भांति दरशन दिया और इसी से सभा में इन का प्रथम पूजन होता था; एक वेर सब प्रसिद्ध नगरों में जाकर शास्त्र का दिग्विजय किया था। तीस यज्ञ करके ये देवलोक सिधारे।

इन की तीन स्त्री थीं उन में ज्येष्ट स्त्री के ज्येष्ट पुत्र वल्लभ भट्ट साक्षात सूर्य्य के अवतार थे क्योंकि एक बार इन्हों ने यज्ञ करते करते सायंकाल की समय प्रहर दिन चढ़े के सूर्य्य की भांति दर्शन दिया था, पांच यज्ञ करके ये भी देवलोक गये।

इनके पुत्र लक्ष्मण भट्ट जी बड़े विद्वान साक्षात अक्षर ब्रह्म शेष जी के अवतार हुए। इन की छोटी ही अवस्था में इन के पिता का परलोक हुआ

था इससे इन के मातामह ने लालन पालन कर के इनको विद्या पढ़ाया था। इन की स्त्री देवकी जी का अवतार श्री इल्लमागारू जी थीं। इन के तीन पुत्र हुए। बड़े भाई का नाम नारायण भट्ट उपनाम रामकृष्ण भट्ट। ये कुछ दिन पीछे सन्यासी हो गये तब केशवपुरी नाम पड़ा। यह ऐसे सिद्ध थे कि खड़ाऊं पहिने गङ्गा पर स्थल की भांति चलते थे। मझले श्री महाप्रभु जी और छोटे रामचन्द्र भट्ट जी। ये महा भारी पण्डित थे वेदान्त, मीमांसा, व्याकरण, काव्य और साहित्य बहुत अच्छा जानते थे। लक्ष्मण भट्ट जी के मातुल वशिष्ट गोत्र के ब्राह्मण अपुत्र होने के कारण इन्हें अपने घर ले गये थे। कृष्णकुतूहल गोपाल लीला महाकाव्य इत्यादि कई ग्रन्थ इन्हों ने बनाये हैं। ये श्री महाप्रभु जी के विद्या में शिष्य थे और प्रायः अयोध्या में रहते थे। बादों ऐसे भारी थे कि प्रायः उस काल के सब पण्डितों को जीता था यहां तक कि इसी बाद के लाग पर इन को विष दे दिया।

लक्ष्मण भट्ट जी के पूर्व पुरुषों ने पञ्चानबे सोमयाग किये थे सो इन्हों ने पांच और कर के सौ पूरे किये। अन्त के सोमयज्ञ का आरम्भ चैत सुदी ८ सोमवार पुष्य नक्षत्र अभिजित् योग में संवत् १५३२ में किया। जब यज्ञ समाप्त हुआ तो कुण्ड से यह अलौकिक वाणी सुन पड़ी कि तुम्हारे कुल में पूर्ण पुरुषोत्तम का प्रागट्य होगा, यह बानी सुनते ही यज्ञ में सब को बड़ा आनन्द हुआ और लक्ष्मण भट्ट जी ने उसी समय काशी में सवा लक्ष ब्राह्मण भोजन का सङ्कल्प किया। उसी समय में संयोग से दक्षिण में कुछ यवनों का उपद्रव भी हुआ इससे लक्ष्मण भट्ट जी कुटुम्ब को ले कर और बहुत सा द्रव्य साथ ले कर काशी की ओर चले।

विदित हो कि श्री लक्ष्मणभट्ट जी संवत १५३२ के चैत्र के अंत में बहुत से विद्यार्थी और ब्राह्मण भोजन के हेत बहुत सा द्रव्य ले कर काशी चले और कांकरवार से सात मञ्जिल पर भङ्ग सार्थक तीर्थ में जहां सर्वतोभद्रकुण्ड में राजा वरुण ने अपने यज्ञ का अवभृतस्नान किया है तीन दिन तक रहे। वहां वैशाख बदी ११ को अर्द्धरात्र को श्री ठाकुर जी ने श्री स्वामिनी जी सहित दर्शन दिया और आज्ञा किया कि जब तुम काशी से लौट कर चम्पारण्य आवोगे तब तुम्हारे यहां हमारा प्रागट्य होगा। यह आज्ञा कर के एक उपरना, एक तुलसी की माला, एक कण्ठी, दे कर श्री मुख से कहा कि जब बालक हो तब उसको यह उपरना उढ़ा देना, यह कण्ठी माला पहना देना

और यह बीड़ा जन्म घोटी में पिला देना । इतना सुनतेही जब लक्ष्मण भट्ट जी नींद से चौंक पड़े तो इन वस्तुओं के सिवा और वहां कुछ न देखा ।

लक्ष्मण भट्ट जी भीमरथी, उज्जैन, पुष्कर, इत्यादि तीर्थ होते हुए प्रयाग आये। वहां भारद्वाज ऋषि के आश्रम में आकाशवाणी हुई कि तुम हमारे गोत्र में धन्य हो जिस के घर साक्षात पूर्ण पुरुषोत्तम का प्रागट्य होगा।

प्रयाग से भट्ट जी काशी आये। वहां गङ्गा स्नान काशी विश्वेश्वर का दर्शन करके एक स्थान ले कर उतरे और वेद का पारायण अग्निहोत्र और ब्राह्मण भोजन प्रारम्भ किया और थोड़े दिनों में सवा लाख ब्राह्मण का भोजन समाप्त किया। इसी समय में दिल्ली के यवन राज्य में मुगलों और पठानों के विरोध के कारण बड़ा उपद्रव उठा और भारत वर्ष के पश्चिमोत्तर प्रान्त में चारो ओर हल चल पड़गई। लोग नगर छोड़ २ कर गांव में बसने लगे। लक्ष्मण भट्ट जी के जाति के लोग भी काशी छोड़ कर इधर उधर चले गये और लक्ष्मणभट्ट जी भी कुटुम्ब ले कर दक्षिण की ओर चले सो जब चम्पारण्य पहुंचे तब शके १४०० संवत १५३५ वैसाख सुदी ११ रविवार को श्री इल्लमगारू जी का सात महीने का गर्भ स्राव हुआ सो माता जी ने केले के पत्ते में वह गर्भ लपेट कर शमी के खोढ़रे में रख दिया। यहां से ये लोग चौंड़ा नगर में गये और वहां सुना कि देशोपद्रव सब शांत हो गया यहां एक रात्रि निवास कर के जब लक्ष्मण भट्ट जी फिर काशी की ओर फिरे तो उसी शमी के वृक्ष के नीचे चालीस हाथ के लंबे चौड़े अग्नि कुण्ड में बालक खेलता देखा। श्रीइल्लमगारू जी के स्तन से दूध की धारा उस समय निकली सो श्रीमहाप्रभु जी के मुखारविंद में पड़ी। तब श्रीलक्ष्मण भट्ट जी ने वेदमन्त्र से और माता जी ने अपनी भाषा में अग्नि और वरुणकी स्तुति किया और अग्निने इल्लमगारू जी को मार्ग दिया। माता जी ने बड़े आनंद और वात्सल्य से पुत्र को गोद में उठा लिया। उस समय आकाश से पुष्प वृष्टि हुई और देवताओं ने प्रत्यक्ष हो कर जै जै कार किया। सब के चित्त में अकस्मात नन्द महोत्सव के आनन्द का अविर्भाव हुआ।

श्री लक्ष्मण भट्ट जी बालक को लेकर काशी फिर आए और श्री ठाकुर जी की आज्ञा प्रमाण कण्ठी, माला, उपरना और बीड़ा श्री महाप्रभु जी को दिया। तैत्तिरीय शाखा के अनुसार नामकरणादिक सब संस्कार बड़े आनन्द से हुए और जब श्री इल्लमगारू जी गङ्गा पूजने को गईं तब श्रीगङ्गा जीने माता

की गोद ही में श्री महाप्रभु जी का चरण स्पर्श किया और स्त्रियों सहित माता जी के वरदान मांगने पर जल में से शब्द सुन पड़ा कि तुम्हारा पुत्र सब वादियों को जीतैगा।

अथ जन्मपत्री।

स्वस्ति श्री मन्नृपति विक्रमार्क राज्याब्दे १५३५ शके १४०० वैशाखे मासे कृष्णपक्षे तिथौ १० रविवासरे घ० १६ प० १४ परच ११ तिथौ धनिष्ठा नक्षत्रे घ० ३८ प० ४६ शुभयोगे घ० ३८ प० २ ववकार्णे श्रीसूर्योदयात् इष्ट घ० ३७ प० ४२ वृश्चिक लग्नोदये श्रीलक्ष्मण भट्ट पत्नीपुत्र वल्लभजीजनत्।

९
७
८
१०
६
११ शु
चं रा
५ के
१२
बु
२ श
गु ४
म
सू १
३

सूर्य ० ।२।२२।११ लग्न ७। १० । १९। ३१ दिनमान ३०।२८ रात्रिमान २९।३२। एक वेर श्री इल्लमगारू जी को ब्रजयात्रा की इच्छा हुई और आप ने अपने पति से निवेदन किया कि कृपा पूर्वक ब्रज चलिये परन्तु भट्ट जीने कहा कि पुत्र का यज्ञोपवीत करके चलेंगे। यद्यपि इल्लमगारू जी ने पति की आज्ञा का कुछ उत्तर नहीं दिया तथापि ब्रज यात्रा की आप को बड़ी ही इच्छा थी यहां तक कि एक वेर श्री महाप्रभु जी को गोद में लिये आप बैठी थीं सो ब्रज का स्मरण कर के उनके नेत्रों में जल भर आया। सर्वान्तर जामी श्रीमहाप्रभु जी ने माता की इच्छा पूर्ण करने को जम्हाई लिया और मुखारविन्द में चौरासी कोस ब्रज का दर्शन कराया। श्रीइल्लमगारू जी को यह देख कर बड़ा ही आश्चर्य हुआ और आपने लक्ष्मण भट्ट जी से सब वृत्तान्त कहा। भट्ट जी ने कहा कि एक वेर इस अग्निशाला में भूमि पर शयन करते थे तब अग्नि ने स्वप्न में हम से आज्ञा किया कि तुम इस बालक के विषय में सन्देह मत करना सो यह बालक अलौकिक साक्षात् नारायण का स्वरूप है।

एक बेर श्रीविश्वनाथ जी ने यह विचार किया कि श्री ठाकुर जी ने हम को तो माया मत फैलाने की आज्ञा दिया है और आप अपने संप्रदाय फैलाने को क्यों प्रगट हुए हैं हम से एक बेर दर्शन तो करना चाहिये कि आप ने कैसा वेष लिया है और क्या इच्छा है। यह विचार कर योगी बन कर एक सोने का बघनहां हाथ में ले कर श्रीलक्ष्मण भट्ट जी के द्वार पर आये। श्री महाप्रभू जी उस समय अत्यन्त रुदन करने लगे और कोई प्रकार से चुप न हों। तब लक्ष्मण भट्ट जी ने अप ने पास बैठे हुए ज्योतिषियों से पूछा कि आज कल बालक के ग्रह कैसे हैं ब्राह्मणों ने उत्तर दिया कि ग्रह तो अच्छे हैं परन्तु एक बघनहां इस के गले में पड़ा रहे तो अच्छा है। श्री लक्ष्मण भट्ट जी ने अपने शिष्यों को आज्ञा किया कि अभी बघनहां मोल ले कर सोने से मढ़ा कर पोहवा लाओ। शिष्य लोग जैसे ही बाहर निकले वैसे ही देखा कि एक योगी बघनहां लिये खड़ा है। बड़े हर्ष से शिष्य लोग योगी को भीतर ले गये। श्री महादेव जी ने श्री महाप्रभू जी को कठुला पहना कर पूछा "भगवान कोयं वेषः" श्री महाप्रभू जी ने उसी क्षण उत्तर दिया "सर्वेश्वरश्चसर्वात्मा निजेच्छातः करिष्यति" यह सुन कर सब लोगों को बड़ा आश्चर्य हुआ कि इतने छोटे बालक के मुख से शब्द स्पष्ट और फिर संस्कृत कैसे निकला। किसी ने कहा योगी बड़े सिद्ध हैं किसी ने कहा नहीं बालक ही बड़ा प्रतापी है। उस पीछे श्रीमहादेव जी कई बेर योगी के वेष में खिलौना ले कर प्रायः मिलने को आते थे।

संवत् १५४० चैत्र बदी ८ अर्थात् श्री रामनवमी रविवार को लक्ष्मण भट्ट जी ने वेद विधि से आप का यज्ञोपवित किया। सोरोंजी नामक प्रसिद्ध वाराहक्षेत्र में केशवानन्द नाम के एक बड़े सिद्ध योगी वैष्णव संप्रदाय के थे सो जब श्री महाप्रभु जी का चम्पारण्य में प्राकट्य हुआ उसी समय उन्हों ने अपने शिष्यों से कहा कि इस समय पृथ्वी पर कहीं पुरुषोत्तम का अवतार हुआ है उनके सेवकों में से कृष्णदास मेघन नामक एक सेवक थे सो वह गुरु का वचन सुनते ही यह विचार करके घूमने निकले कि जो पुरुषोत्तम का प्राकट्य कहीं हुआ होगा दरशन होहींगे। और जो हमको नाम लेकर पुकारेगा उसी को हम पुरुषोत्तम जानेंगे यह कृष्णदास मेघन फिरते फिरते श्री महाप्रभू जी के उपवीत समय काशी में आये और भीड़ देखकर जो श्री

लक्ष्मण भट्ट जी के घर में गये तो उनको देखते ही श्री महाप्रभू जी ने आज्ञा किया "कृष्णदास तू आयो" इन्होंने दण्डवत करके उत्तर दिया "जे मैं आयो" और एक अंगूठी श्री महाप्रभू जी के यज्ञोपवीत भिक्षा में दी और तब ये आजन्म श्रीप्रभु जी के साथ ही रहे।

उपवीत धारण करने के पहले और पीछे जब आप खेलते तो ब्राह्मण के लड़कों को शिष्य बनाते और आप गुरु बन कर उपदेश करते।

लक्ष्मण भट्ट जी के घर के पास सगुन दास नामक ढाढ़ी रहते थे उनको श्री महाप्रभू जी के दर्शन साक्षात पूर्ण पुरुषोत्तम के होय इससे उनका नेम था कि नित्य आप का दर्शन करके तब जल पीते। तो जब श्री महाप्रभू जी चरणारविन्द से चलने लगे तब आप उनके घर पधार कर दर्शन देते सो एक दिन श्री लक्ष्मण भट्ट जीने आप से आज्ञा किया कि शूद्र के घर आप मत पधारा करो इस पर श्री महाप्रभु जी ने यह वाक्य पढ़ा "स्त्रियो वैश्या तथा शूद्रा तेपियान्ति परांगति" यह सुनकर लक्ष्मण भट्ट जीने श्री महाप्रभू जी को सगुन दास जी के यहां जाने की आज्ञा दिया।

यज्ञोपवीत के पीछे श्री महाप्रभू जी को लक्ष्मण भट्ट जी घरही में वेद पढ़ाते थे परन्तु आप की बुद्धि बड़ी तीक्ष्ण थी इस हेतु असाढ़ सुदी २ पुष्यार्क योग में माध्वानन्द स्वामी के यहां लक्ष्मण भट्ट जी ने आप को पढ़ने को बैठाया सो चार ही महीने में चारोवेद, छवोशास्त्र पढ़ कर सब को बड़ा आश्चर्य उत्पन्न किया, गुरुदक्षिणा में माध्वानन्द स्वामी ने श्री ठाकुर जी की सेवा मांगी तब आप ने आज्ञा किया कि जब श्री नाथ जी को प्रगट करेंगे तब आप को सेवा देंगे। इन्ही को और ग्रन्थों में माधवेन्द्र पुरी करके लिखा है और ये मध्व सम्प्रदाय के आचार्य थे। और विद्याविलास भट्टाचार्य से आप ने न्याय, पातञ्जल और काव्य पढ़ा। श्री महाप्रभू जी की विद्या देख करके लक्ष्मण भट्ट जी को फिर सन्देह हुआ परन्तु श्री ठाकुर जी ने स्वप्न में पुनर्दर्शन देकर वह सन्देह निवृत्ति कर दिया। यही माधवेन्द्र पुरी श्रीकृष्ण चैतन्य के मन्त्र गुरू हैं और इसी कारण श्री महाप्रभू जी और श्री कृष्ण चैतन्य से मित्र भाव था और आप ने उनको श्रीगोवर्द्धन की कन्दरा से लाकर कृष्णप्रेमामृत ग्रन्थ दिया था और ऐसेही निम्बार्क सम्प्रदाय के आचार्य केशव काश्मीरी जी से भी आप का बड़ा संग रहता था। विदित हो कि चैतन्य संप्रदाय के ग्रन्थ हृहद्गौर गणोद्देश दीपिका ने श्री महाप्रभू जी को

चौंसठ महानुभावों की गिनती में अनन्त संहिता के ७५ वें अध्याय के प्रमाण से श्रीशुकदेव जी का अवतार लिखा है।

एक समय श्री लक्ष्मण भट्ट जी ने मायावादी सन्यासियों को अपने घर भोजन को बुलाया था सो श्री महाप्रभू जी ने ऐसा शास्त्रार्थ उठाया जिस्से मायावाद का खण्डन होय तब लक्ष्मण भट्ट जी ने कहा जो अपने घर आवे उसका अपमान नहीं करना इस्से आप ने उनसे शास्त्रार्थ नहीं किया पर वैष्णव धर्म प्रचार की आप को ऐसी उत्कण्ठा थी कि काशी में जहां शास्त्रार्थ होता वहां आप जाते और वैष्णव मत का मण्डन और अन्य मत का खण्डन करते यहां तक कि लक्ष्मण भट्ट जी के पास लोग उरहना देने आते कि आप के पुत्र ने भरी सभा में हमारा अपमान किया, तब लक्ष्मण भट्ट जी आप को निषेध, करते तब जिन पण्डितों से आप निषेध करते उन पण्डितों से शास्त्रार्थ न करते, उस काल में विश्वनाथ के सभामण्डप में पण्डितों की सभा नित्य होती थी और वे लोग एक बात पर निर्णय करके तब उठते थे। सो श्री महाप्रभू जी उस सभा स्थान की भीति पर एक श्लोक नित्य लिख आते और जब पण्डित लोग उसका एक दिन में निर्णय करते तो दूसरे दिन दूसरे श्लोक से उनका सब निर्णय खण्डित होजाता ऐसे ही तीस दिन तक आप ने यह खेल खेला और उसी से पत्रावलम्बन ग्रन्थ बन गया। एक प्रसङ्ग यह भी है कि आप से बहुत से पण्डित शास्त्रार्थ करने को आते थे और समय बहुत थोड़ा था इस लिये आप ने पत्रावलम्बन ग्रन्थ करके विश्वेश्वर के द्वार पर चिपका दिया था, और नगर में चारो ओर और विश्वनाथ के द्वार पर भी डगडुगी फेर दी थी कि जिसको हमसे शास्त्रार्थ करना हो वह पहले जाकर वह पत्र देख ले। यह सुन कर जो पण्डित वह पत्र देखने जाते वह सब अपने प्रश्न का उत्तर पाकर चले जाते और इसी से पत्रावलम्बन ग्रन्थ बना।

श्री लक्ष्मण भट्ट जी को श्री महाप्रभू जी के इस घोर शास्त्रार्थ करने से बड़ा क्षोभ हुआ और आप ने वात्सल्य भाव से यह सोचा कि ऐसा न हो कि द्वेष करके जादू से कोई पण्डित हमारे पुत्र को मार डाले यह विचार कर आप ने देश जाने का मनोरथ किया क्योंकि, बारह वर्ष की काशी में रहने की आप की प्रतिज्ञा भी पूरी हो गई थी। यह सब बात विचार कर आप सकुटुम्ब काशी से दक्षिण चले।

वहां से सात मंजिल पर यह सुन कर कि विष्णुस्वामी संप्रदाय के कोई

पण्डित लक्ष्मण भट्ट जी अपने पुत्र सहित काशी में अनेक पण्डितों को जीत कर यहां आते हैं, बहुत से पण्डित मिल कर एक साथ लक्ष्मण भट्ट जी के डेरे पर शास्त्रार्थ करने गए और जब श्री महाप्रभु जी ने उनको शास्त्रार्थ में जीता तब लक्ष्मण भट्ट जी ने प्रसन्न हो कर कहा कि वरदान मांगो तब आपने दो वरदान मांगे प्रथम तो यह कि आप हमको शास्त्रार्थ करने जाने से कहीं रोको मत और दूसरे यह कि शास्त्रार्थ में कोई हमारा तेज पराभव न कर सके। लक्ष्मण भट्ट जी ने बड़ी प्रसन्नता पूर्वक दोनों वरदान दिए।

लक्ष्मण भट्ट जी साक्षात् पूर्ण पुरुषोत्तम के धाम अक्षर ब्रह्म शेष जी के स्वरूप हैं, इस से आप को त्रिकाल का ज्ञान है सो जब आपने अपना प्रयाण समय निकट जाना तब कांकरवार से बड़े पुत्र रामकृष्ण भट्ट जी को बालाजी में बुलाया और वहीं आप ने डेरा किया पुत्रों को अनेक शीक्षा देकर राम कृष्ण भट्ट जी को श्री यज्ञनारायण के समय के श्री रामचन्द्र जी पधराय दिए और कहा कि देश में जाकर सब गांव और घर आदि पर अधिकार और वेल्लिनाटि तैलङ्ग जाति की प्रथा और अपने कुल अनुसार सब धर्म्म पालन करो। ऐसेही श्री यज्ञनारायण भट्ट के समय के एक शालिग्राम जी और मदनमोहन जी श्री महाप्रभू जी को देकर कहा कि आप आचार्य्य होकर पृथ्वी में दिग्विजय करके वैष्णव मत प्रचार करो और छोटे पुत्र राम चन्द्र जी को जिनका काशी में जन्म हुआ था अपने मातामह को सब स्थावर जङ्गम संपत्ति दिया * और श्री महाप्रभु जी के ग्यारह वर्ष की अवस्था में

* ये रामचन्द्र भट्ट बड़े पण्डित थे। गोपाललीला महाकाव्य, कृष्ण कुतूहल महाकाव्य और शृङ्गार वेदान्त ये तीन ग्रन्थ इनके मिलते हैं। अयोध्या में ये रहते थे और श्री महाप्रभु जी को विद्यागुरु करके मानते थे। वैष्णव दीक्षा श्री महाप्रभु जी से इन्हों ने पाई थी कि नहीं इसमें संदेह है। और राम कृष्ण भट्ट जी कुछ दिन पीछे सन्यासी हो कर केशवपुरी नाम से खड़ाऊ पहन कर जल पर चलने वाले बड़े सिद्ध विख्यात हुए। इन लोगों के समकाल के प्रसिद्ध पण्डित ये थे, मध्व मत में व्यासतीर्थ, निम्बार्क मत में केशव भट्ट, रामानुज मत में ताताचार्य्य और व्यङ्कटाध्वरि, शंकर मत में आनंदगिरि, स्मार्त्तों में वा अन्य मत में मुकुंदानंद केवलानंद माधवानंद, बरदराज के महन्त हस्त शृङ्गार और रङ्गनाथ जी के महन्त आनंदराम।

लक्ष्मण बाला जी का शृङ्गार करते करते शरीर समेत उनके स्वरूप में लय हो गए। उनके पुत्रों ने लक्ष्मण भट्ट जी के वस्त्र का लौकिक संस्कार बड़ी धूम धाम से किया और श्रीमहाप्रभू जी ने एक वर्ष तक यथा शास्त्र विहित सब रीति का बरताव किया।

काशी में वैष्णव तन्त्र, शैव तन्त्र, कौमारिल पञ्चाकार, मोहन इत्यादि मत के ग्रन्थ और शैव, पाशुपत, काला मुख, अघोर, ये चार शैव संप्रदाय और विष्णुस्वामी इत्यादिक चार वैष्णव संप्रदाय के ग्रन्थ नहीं मिलते थे इस हेत दक्षिण के सरस्वती भण्डार में जा कर इन ग्रन्थों को आप ने अवलोकन किया और वेद की २६ शाखा की संहिता ब्राह्मण इत्यादिक कण्ठाग्र किया। फिर जब इल्लमगारू जी पति के हेत विलाप करतीं तब आप को दुःख होता इससे श्री बाला जी ने स्वप्न में इल्लमगारू जी को विलाप करने का निषेध किया।

जब आप को पृथ्वी परिक्रमा की इच्छा हुई तब मातृचरण को अपने मामा के पास पहुंचाने को आप विद्या नगर पधारे और मार्ग में अपने अन्तरङ्ग दामोदर दास जी को सेवक किया।

विद्यानगर में राजा * कृष्णदेव के यहां आचार्य्य के मामा रंगनाथ विद्या

---

* राजा कृष्णदेव की वंस परम्परा यों है। पाण्डु वंश में चन्द्रबीज राजा के दो पुत्र थे बड़ा मेरु छोटा नन्दि नन्दि को भूतनन्दि उस को नन्दिज। नन्दिज के दो पुत्र शेषनन्दि और यशोनन्दि। इन दोनों को चौदह पुत्र थे जिन को अमित्र और दुर्मित्र नामक दो भाई राजाओं ने जीत लिया। इन में से सात भाई दक्षिण गए जिन में से नन्दिराज ने नन्दपुर वा रंगोला बसाया (१०३० ई०) उन के वंश में फिर चालुक्यराज (१०७६ ई०), विजय राज जिन्हों ने विजयनगर बसाया (१११८), विमलराज (११५८), नरसिंह देव जो बड़ा प्रसिद्ध हुआ (११८०), रामदेव (१२४८) और भूपराज (१२७४) भूपराज अपुत्र था इस से इस ने अपने निकटस्थ गोत्रज वीर बुक्कराय को गोद लिया। वीर बुक्कराय (१३२४) की सभा में सायन के बड़े भाई माधवाचार्य्य (विद्यारण्य) बड़े पण्डित थे और इन्हों ने वेदों पर भाष्य किया है और अनेक ग्रन्थ बनाए हैं। वीर बुक्कराय की सभा में कई विलायत के लोग आए थे। इन के हरिहर राय (१३६३) उन के देवराज

भूषण दानाध्यक्ष थे श्रीमहाप्रभु जी अपने मामा के घर उतरे और वहीं यह सुना कि राजा कृष्णदेव की सभा में आज कल नित्त मत मतांतर का बाद होता है यह सुन के आप ने इच्छा किया की हम भी चलेंगे दूसरे दिन प्रात:काल स्नान संध्या होम कर के ब्रह्मचारी का भेष कर आप राजा के सभा में पधारें। इनका दर्शन पातेही सब सभा तेजोहत हो गई और राजा कृष्णदेवराय ने बड़े आदर से इनको बैठाया। तब आप ने राजा से सभा का वृत्तान्त पूछा। राजा ने हाथ जोड़ कर निवेदन किया कि आज छ महीने से सब मत मतान्तर के पण्डितों से यहां शास्त्रार्थ हो रहा है सो माया मत वालों को अब तक किसी ने जीता नहीं है। यह सुन कर आप ने पण्डितों से प्रश्न किया और शास्त्रार्थ प्रारम्भ हुआ। चौदह दिन तत्व बिचार में बारह दिन स्थानवदादेश इस सूत्र से आरम्भ हो कर व्याकरण में और एक दिन जैन बौद्ध शास्त्र विचार में इस तरह सब मिला कर सत्ताइस दिन शास्त्रार्थ हुआ और जितने बादी सभा में उपस्थित थे सब निरुत्तर हुए। तब राजा ने

(१३६७) विजयराज (१४१४), और उनके पुण्डरदेव (१४२८)। पंडरदेव को श्री रङ्गराज ने जीत कर अपने पुत्र रामचन्द्रराय को (१४५०) राजा बनाया। इन के नृसिंहराय (१४७३), फिर बीर नृसिंहराय (१४९०)उन के अच्युतराय और उन के कृष्णदेवराय० राजा कृष्णदेव ने सं० १५७० तक (१५२४ ई०) राज्य किया और गुजरात जय किया और मुसलमानों से लड़े। राजा कृष्णदेव के सेनापति नार्ग नायक ने मथुरा जीत कर राज्य स्थापन किया जो १६ पीढ़ी तक रहा। इन के रामराज हुए जो निजामशाह और इमदादुल मुल्क की लड़ाई में मारे गए। उन के पीछे श्री रङ्गराज, त्रिमल्लराज, वीरसंघ पतिराज, द्वितीय श्री रङ्गराज, रामदेवराय, व्यङ्कटपतिराय, द्वितीय त्रमधराय, द्वितीय रामदेवराय और द्वितीय व्यङ्कटपतिराय हुए। द्वितीयव्यङ्कट मुगलों से हार कर चन्द्रदेवगिरि में बसे। इन के पुत्र रामराय उन को हरिदास (१६९३), चक्रदास (१७०४), त्रिम्मदास (१७२१) रामराय (१७३४), गोपालराव व्यङ्कटपति, त्रिमल्लराय, वीर व्यङ्कटपति और रामदेवराय क्रम से राजा हुए। इस वंश के अन्तिम राजा रामदेवराय जिन को सं० १८७५ (१८२८) ई० में टीपू सुलतान ने मार कर राज्य नाश कर दिया।

सब पण्डितों से जयपत्र लिखवा कर उस पर अपनी मुहर करके इनको दिया और सब पण्डितों और मत के आचार्यों ने मिल कर आचार्य्य पदवी से महाप्रभु जी को पुकारा । राजा कृष्णदेव ने कनकाभिषेक से आप की पूजा किया और सपरिवार शरण आकर सेवक हुआ । † इस अभिषेक के सोने को श्री महाप्रभु जी ने दीन ब्राह्मणों को बांट दिया और अनेक ब्राह्मण के लड़कों के यज्ञोपवीत और लड़कियों के विवाह और अनेक का ऋण शोधन इस से हुआ । इस सुवर्ण के सिवाय एक थाली भर कर मुहर राजा ने आप को भेंट किया था जिस में से सात मोहर आप ने अङ्गीकार करके उस का श्री नाथ जी का नूपुर बनाया । फिर राजा को और वहां के अनेक ब्राह्मणों बृहस्पति सव वाजपेय आदि यज्ञ और अनेक महादान कराया और उस से जो द्रव्य एकत्र हुआ उस का तीन भाग किया । एक भाग से श्री विट्ठलनाथ जी की कटि मेखला बनी दूसरे भाग से पिता का ऋण शोधन किया और तीसरे भाग को कारणीय यज्ञ के व्यय निर्वाहार्थ माता को सौंप दिया । और अनेक दिन तक ज्ञान भक्ति वैराग्य व्रत यज्ञादि धर्म्म का उपदेश करते आप विद्या नगर में विराजे ।

कुछ दिन तक विद्यानगर में निवास करने के उपरान्त माता से आज्ञा लेकर पृथ्वी परिक्रमा करने को संवत् १५४८ वैशाख बदी २ को आप नगर से बाहर चले । उस समय ब्रह्मचर्य्य व्रत के कारण सीआ हुआ वस्त्र नहीं

---

† विद्यानगर के, कृष्णगढ़ के और नवानगर के राजा लोग उसी काल से इस मत के सेवक होते आते हैं किन्तु विद्या नगर का वंश अब नहीं रहा उस काल में दक्षिण प्रान्त के सब राज्य बने हुए थे । विद्या नगर जाने के पूर्व आप हेमाचल, गोआ इत्यादि होते हुए चौंड़ा गए थे । चौंड़ा के राजा ने एक स्याना और दो प्यादा साथ देकर आचार्य्य को विद्या नगर पहुंचवाया था । यहां पर एक बात और जानने के योग्य है कि श्री महाप्रभु जी विद्या नगर की सभा में श्री विष्णुस्वामी की गद्दी पर विराजे । इसी समय श्री बिल्वमङ्गल जी ने श्री विष्णुस्वामि के रहस्य और मतभेद सब आप को देकर तिलक किया था । यह भी जनश्रुति है कि श्री महाप्रभु जी ने सभा में योग बल से अपना कमण्डलु फेंका जो सूर्य्य का सा सभा में प्रकाश किया । तदनन्तर आप सभा में गए ।

पहरते थे इस से धोती उपरना पहर कर दण्ड कमण्डलु छत्र और पादुका धारण किए हुए आप चलते थे। (इसी ब्रह्मचर्य्य के दण्ड धारण पर भ्रम से बहुत से मूर्ख आक्षेप करते हैं कि श्री वल्लभाचार्य्य पहले दण्डी थे फिर गृहस्थ हुए) दामोदर दास और कृष्णदास ये दो सेवक आप के साथ थे। पहले भीमरथी के तट पर पण्ढरपुर में आए वहां सप्ताह परायण करके बैठक स्थापित किया। (आगे जिस तीर्थ के वर्णन में पा॰ बै॰ स्था॰ यह संकेत देखो वहां समझो कि पारायण करके बैठक स्थापन किया) फिर नासिक त्र्यंबक पञ्चवटी गोदावरी तीर्थ में आए वहां सप्ताह पा॰ बै॰ स्था॰ वहां से उज्जयिनी में आए वहां सिप्रा और अङ्कपात कुण्ड (जिस में भगवान जब सान्दीपनी जी के यहां पढ़ते थे तब पटिया धोते थे) में स्नान करके महाकालेश्वर का दर्शन करके नगर के बाहर एक पीपल की डाल गाड़ कर उस पर कमण्डलु का जल आप ने छिड़का जिस से वह तत्क्षणात् एक वृक्ष हो गया और उस के नीचे सप्ताह पा॰ बै॰ स्था॰ (यह पीपल का वृक्ष अद्यापि वर्तमान है) वहां से पुष्कर जी की यात्रा कर आप व्रज की ८४ कोस की परिक्रमा करने के हेतु संवत् १५४८ के भाद्र पद कृष्णाष्टमी अर्थात् जन्माष्टमी के दिन श्री गोकुल में पधारे। तब श्री नाथ जी को यमुना जल में क्रीड़ा करते देख आप भी उन के समीप जाने लगे, तब तो श्री नाथ जी गिरिराज ऊपर आए,वहां भी आप उनके पीछे पीछे गये, इसी से श्री भगवान ने प्रसन्न हो यह वरदान दिया कि "यावत यमुना जी में गङ्गा जल रहेगा तावत् तुमारी सम्प्रदाय अचल रहेगी" ऐसा कह कर श्री नाथ जी अन्तरध्यान हो गए। तब आप जिस मार्ग से पूर्व में गए थे पूर्व गत मार्ग से आ अपने व्याकुल शिष्यों से मिल कर आसन पर आए। तदनन्तर श्री आचार्य्य जी महाप्रभु जी व्रज की यात्रा करने चले, और उस का निर्णय करके अनुक्रम से वर्णन किया है। और जिस जिस स्थल में आप ने श्री मद्भागवत का पारायण कर बैठकें नियत की है, जो अद्य पर्यन्त प्रसिद्ध हैं उस जगे ऐसा चिन्ह किया है।

श्रीयुगलसर्व्वस्व ।

अर्थात्

श्री नित्यलीला के निकुंज सखा सखी सहचरी
सेवक परिवार आदि का नाम रूप वर्ण
स्वभावादि वर्णन ।

श्री भागवत, उसकी टीका, पद्मपुराण, नारदपुराण, कृष्णजन्मखंड, बाराहपुराण, आदिपुराण, रहस्यपुराण, ब्रह्मांडपुराण, नारदपचरात्र, गौतमीतंत्र, रासोल्लासतंत्र, वृन्दावनपटल, लघुराधा वृहद्राधातंत्र, हयग्रीवपंचरात्र, तथा श्रीहरिरायजी श्रीगोकुलनाथजी की भावना, श्रीद्वारकेशजी श्रीब्रजधीशजी श्रीगोपिकेशजी की रहस्य भावना और उज्ज्वलनीलमणि तथा गणोद्देशदीपिका आदिक ग्रन्थों से संग्रह किया ।



DEDICATION.



हे अन्तरंगी जन।

आज तक जो पुस्तकें प्रकाशित हुईं वह दूसरे को समर्पित हुईं थीं परन्तु यह युगलसर्व्वस्व तुम को समर्पित है माथे चढ़ा कर अंगीकार करो। इस को अनधिकारी के हाथ खबरदार खबरदार मत देना और इस से परमानन्द लाभ कर के मेरा परिश्रम सफल करना।

भाद्रपद्र कृष्णा ८ सं० १९३३
श्रीनन्दमहोत्सव



आप लोगों के चरणरज
का वांछक
हरिश्चन्द्र

युगलसर्वस्व।

दोहा।

भरित नेह नवनीर नित, बरसत सुरस अथोर।
जयति अपूरब घन कोऊ, लखि नाचत मन मोर॥ १॥
तन्नमामि निज परम गुरु, श्रीवल्लभ द्विज भूप।
जाको कृपा अपार लहि, उबस्यो हौं भवकूप॥ २॥
श्री वृन्दावन राज है, जुगल केलि रस धाम।
तहं के परिकार आदि को, बरनत या थल नाम॥ ३॥
वंश, सखी, परिचारिका, पशु पच्छी नर वृन्द।
इन सब को बरनन करत, निज अनुभव हरिचन्द॥ ४॥
प्रेमवारि परजन्य जो, जिन सम धन्य न अन्य।
सोई श्याम परजन्य के, दादा श्री परजन्य॥ ५॥
दादी नाम बरीयसी, नाना सुमुख बखान।
नानी देवी पाटला, जामी और न आन॥ ६॥
बड़ो मात श्री रोहिणी, पिता नन्द सरदार।
माता जसुदाजू अहैं, जा हित यह अवतार॥ ७॥
बड़ काका उपनन्दजू, अरु अभिनन्द प्रमान।
नन्दन अरु संनन्द ये, काका छोटे जान॥ ८॥
तुंगा अतुला पीवरी, कुवला पुनि रस धाम।
उलटे क्रम सों जानिये, काकिन के ये नाम॥ ९॥
मामा जसवरधन, जसोधर जसदेव सुदेव।
मौसी विदित जसस्विनी, मौसा मल्ल सुदेव॥ १०॥
तण्डुल पुरट कुबेर ये, सगरे ददा समान।
गोष्ठ कलोल करण्ड ये, मातामह सम जान॥ ११॥
शीला भेरी अरु शिखर, पितामहो सी होय।

पूरनमासी भगवती, सिद्ध विधाइनि सोय ॥ १२ ॥
जटिला भेला घरघरा, मुखरा घोरा जान ।
करवालिका करालिका, मातामही समान । ॥ १३ ॥
मंगल पिंगल रंगपिठ, पट्टिस माटर पिंग ।
नेह करत पितु से सबे, संगर संकर भृंग ॥ १४ ॥
तरलाक्षिनी तरालिका, शुभदा कुशला नारि ।
मालिकाङ्गदा वत्सला, ताको आदि बिचारि ॥ १५ ॥
और हु हदा मेदुरा, भरी नेह चित चाय ।
हरि पै वत्सलता करत, जैसे जसुमति माय ॥ १६ ॥
परम नेहवारी अहै, नाम धनिष्टा धाय ।
तथा तिलिम्बा अम्बिका, तांको जुगल सहाय ॥ १७ ॥
वेदगर्भ भागुरि महायज्वा, द्विज निरधारि ।
सुलभा गौतमी भारगी, चंडिलादि द्विज नारि ॥ १८ ॥
भाई श्री बलदेव से, भक्तन के अवलम्ब ।
छनमहं जिन हति लम्ब किय, खल कुल लम्ब प्रलम्ब ॥ १९ ॥
भाबी श्री मति रेवती, जा को हरि पै चाव ।
सख्य तथा वात्सल्य मिलि, जाको अनुपम भाव ॥ २० ॥
मराडल दराडो कुराडली, भद्रकृष्ण से भ्रात ।
बहिन नन्दिरा मन्दिरा, नन्दो, नन्दा बात ॥ २१ ॥
धाय अम्बिका को सुअन, बिजय नाम को जौन ।
हरि तन रच्छत सर्वदा, असि लै संग रहि तौन ॥ २२ ॥
दिव्यसक्ति कुलवीर पुनि, महाभीम रनभीम ।
रणधिरं रणथिर सूरप्रभ, सूर सभा बल सींम ॥ २३ ॥
इन आदिक हरि जेठ जे, गोप बाल सरदार ।
पितु आयसु नित संग रहि, रच्छत सदा कुमार ॥ २४ ॥

वीरभद्र भद्राङ्ग भट, गोभट यत्त सुरेश ।
भद्रमण्डली भद्रवरधन, ये सुहृद हमेस ॥ २५ ॥

गद्य ।

विशाल, वृषभ, श्रोजस्वी, देवप्रस्थ, वरूथप, मिलिन्द, कुसुमापीड़, मणिबन्ध, करन्धम, मरन्द, चंदन, कुंद, कलिंद और कुलिक इत्यादि कनिष्ट सखा हैं, वे सेवा करे हैं ॥ २६ ॥

दामा, सुदामा, किंकिणी, तोककृष्ण, यंश, भद्रसेन, बिलासी, पुंडरीक, विटंकाक्ष, कलंविका, प्रियंकर और श्री दाम आदि समान सखा हैं; तिनमें श्रीदामा मुख्य है, पीठमर्द है, बड़ोइष्ट है ॥ २७ ॥

सब सखा की सेना को भद्रसेन सेनापति है, अरु तोककृष्ण तो मानो श्रीकृष्ण ही को दूसरो प्रतिमूर्ति है, और यह श्री कृष्ण को बहुत ही प्यारो है ॥ २८ ॥

सुबल, अर्जुन, गन्धर्व्व, वसन्त, उज्वल, कोकिल, सनंदन, और विदग्ध आदि प्रिय नर्म्मसखा हैं; इन सों कोई रहस्य छिप्यौ नहीं है ॥ २९ ॥

मधुमंगल, पुष्पांक और हंस आदि विदूषक हैं और कड़ार भारती गन्धवंद और वेध आदि श्रीकृष्ण के विट हैं ॥ ३० ॥

भंगुर, भृङ्गार, संधिक और ग्रहल आदि चेटक हैं। तथा रक्तक पत्रक, पत्री, मधुकंठ, मधुव्रत, शालिक तांडिक, माली, मालू और मालाधर आदि दास हैं ॥ ३१ ॥

पल्लव, मंगल और फुल्ल कोमल और कपिल आदि छोटे बालक नाचि नाचिकै विचित्र विचित्र चेष्टा करिकै प्रभु को हंसावैं हैं ॥ ३२ ॥

सुविलास, विशालाक्ष, रसाक, रसशाली और जम्बुक इत्यादि पान खवाइवेवारे हैं ॥ ३३ ॥

पयोद और वारिद नाम के पानी पियावे को काम करें, तथा सारंग बकुल आदि वस्त्र धरावैं हैं ॥ ३४ ॥

प्रेमकंद नाम को अतर लगावे और मधुकंदला सैरंध्री केसादिक सवारैं है ॥ ३५ ॥

मकरंदादिक सदा शृंगार करे हैं, तथा सुमना, कुसुमोल्लास, पुष्पहास हर इत्यादिक चंदन और मालादिक को काम करे हैं ॥ ३६ ॥

दक्ष, सुबन्ध, कर्पर और सुगन्धकुसुम आदि नाई हैं; क्षेश को काम करैं,

तैल लगावैं, पांव दाबैं और दर्पण दिखावै हैं ॥ ३७ ॥

स्वच्छ, शीतल और प्रगुण आदि धन संबंधी काम करैं हैं, अरु कमल बिमल आदि पीढ़ा, खड़ाऊं, छाता लिये साथ चलै हैं ॥ ३८ ॥

धनिष्ठा, चंदनकला, गुणमाला, तड़ित्प्रभा, भरणी, इन्दुप्रभा, शोभा और रंभा इत्यादि दासी हैं, और तिनमें धनिष्ठा मुख्य धाय मातृतुल्या है ॥ ३९ ॥

कुरंगी, भृंगारी, सुलम्बा और लम्बिका इत्यादि दासी दधिमन्थन, मार्जन तथा और घर के काम करै हैं ॥ ४० ॥

विशारद, तुंग, नीतिसार, मनोरम और वावदूक इत्यादि दूत निकुंज विहार के उपयोगी हैं ॥ ४१ ॥

दोहा।

वृन्दा, मेला, मुरलिका, वृन्दारिका सुजान ।
दूती सबै निकुंज की, वृन्दा तासु प्रधान ॥ ४२ ॥
पूनी बीरा नाम की, दूती परम प्रसिद्ध ।
जामीं नहिं कोऊ बची, करत सबै जो सिद्ध ॥ ४३ ॥
सोभन दीपक नाम के, है मसालची खास ।
मधुरराव सुविचित्ररव, ये जुग बन्दो पास ॥ ४४ ॥
चन्द्रहास, शिव, चन्द्रमुख, नचवैया ये तीन ।
सुखद, सुधाकर बहुरि, सारंग मृदंगप्रवीन ॥ ४५ ॥
सुधाकंठ कलकंठ इन, आदि गान रस लीन ।
सबै कलारत अति सुघर, गाय बजावैं बीन ॥ ४६ ॥
सारंग, रमद, विलास ये, नाटक नट अभिराम ।
सबोअभिनय जानहिं निपुन, करहिं सदा नट काम ॥ ४७ ॥
दरजी रौचिक नाम को, रागाच्यं राग सुसुनार
चित्र बिचित्र चितेर दोऊ, कर्मठ, पवन कुम्हार ॥ ४८ ॥
वर्द्धमान अरु बर्द्ध को, है बढ़ई सुखरास ।
पोटी मन्थन दाम, कुंठार आदि फरास ॥ ४९ ॥

कुमुद कुंड कंडोल कारंड करंड अनेक।
सेवक सेना में रहत, धरे दासपन टेक ॥ ५० ॥
हंसी वंसी पिंगला, गंगा रंगा नाम।
प्रिया पिशंगी धूमला, मणि सारनी ललाम ॥ ५१ ॥
इन आदिक जे नैचिकी, तिन सों हरि को हेत।
तिन में पद्मनी मुख्य अति, निज कर जेहि तृण देत ॥ ५२ ॥
वली वहँ है अति भले, उत्पल गंध पिशंग।
कपि सुन्दर दधिलोल है, नाम सुरंग कुरंग ॥ ५३ ॥
स्वान व्याघ्र भ्रमरक दोऊ, विदित कलस्वन हंस।
शिखी तांडविक शुक जुगल, बोलत परम प्रशंस ॥ ५४ ॥
नित्य बाग वृन्दाविपिन, जहां जुगल रस केलि।
करहिं नित्य, को लखि सकै, बाहु बाहु पर मेलि ॥ ५५ ॥
क्रीडा गिरि गिरिराज है, नीलमंडपक घाट।
गुफा बनी मणिकान्दली, केलिकुंज रस टाट ॥ ५६ ॥

गद्य।

केलि सरोवर को नाम मानसी गंगा है और वाके मुख्य घाट को नाम पारंग है और वामें सुविलास नाम की नाव है ॥ ५७ ॥

नन्दीश्वर नामा पर्वत पै इन्दिरालय नामा सुन्दर मन्दिर है, जहां अनेक प्रकार की संगमरवर पत्थर की आमोदवर्द्धन नाम्नी सुगन्ध सों भरी बैठक है। जाके आगे पावन नाम सुन्दर कुण्ड है, जापै मन्दार नामक मणि को फरस है और कुंज और आकाश नामक महा तीर्थ है; जिन के चित्त में काम की वासना को लेश है वे या तीर्थ को दर्शन नहीं पावे हैं। और वहां की पृथ्वी को नाम अनङ्गरंग है और श्रीजमुना जी के घाट को नाम खेला तीर्थ है और पुलिन को नाम लीला पुलिन है जहां कदम्बराज नामक बड़ो कदम्ब को वृक्ष और भांडीरवट नामक वड़ को वृक्ष है, जहां नित्य जुगुल स्वरूप को विहार है ॥ ५८ ॥

आपके दर्पन को नाम शरदिन्दु है और पंखा को नाम मधुमारुत है और स्मेर नाम को नित्य लीलाकमल श्री हस्त में धारन करे हैं और गेंदा को नाम चित्रकोरक है ॥ ५९ ॥

उज्वल नाम आपके को बाण है विलासकार्मुक नाम धनुष और मणिबद्ध नाम वाकी डोरी है और अनेक रत्न सों जड़ी बड़े सुन्दर मूठ की तुष्टिदा नाम की छुरी है ॥ ६० ॥

शृङ्ग को नाम मंजुघोष और श्री राधाचित्तहारिणी, महानन्दा, तथा भुवन मोहिनी ये तीन वंसी हैं, और मुरली को नाम सरला है, और मदनझंकृत बंधुर और षड्ंध्र ये तीन वेणु हैं, और काकली को नाम मूकितपिका है, जाको श्रवन करि के कोइल मूक होइ जाय हैं, और गौरी और गूजरीटोडी ये दोऊ राग अत्यन्त प्यारे हैं। और बीणा को नाम नादवरांगिणी है। ६१।

वेत्र को नाम मंडल है और लठ्ठ को नाम पशुवशीकर है और दोहिनी को नाम अमृतदोहिनी है ॥ ६२ ॥

श्री मातृ चरण ने नव रत्न की भुजा पै रक्षा बांधो है और रंगद नाम के बाजू और चंकन नाम के कांकण और रत्नमुखी नाम को अंगूठी है और निगम शोभन नाम को पीताम्बर है, और कलझंकार नाम की किंकिनी है और नूपुरन को नाम हंस गंजन हैं, जाके शब्द सुनतही श्री व्रजदेविन के चित्त चलायमान होत हैं। ६३।

हार को नाम तारमणि हैं, और माला को नाम तडित्प्रभा है और कण्ठा को नाम कौस्तुभ है, जाके नीचे भुजंग मणि को पदक है। रति और राग के अधि देवता मकराकृत कुण्डल हैं और रत्नपार नाम को मुकुट है और अमरडामर नाम को सीस फूल है और मोर के चन्द्रका को नवरत्नविडम्बक नाम है और गुजा को माला को नाम रागवल्ली और तिलक को नाक दृष्टिमोहन है और पल्लव, पत्र पुष्प और मोर के पच्छ तथा कमल इत्यादि सों गुथी श्री चरणारविन्द तक बनमाला शोभित है और जो पंचरंगी फूलन सो गुथी कटि के नीचे तक सुंदर माला हैं वाको नाम वैजयंती है। ६४।

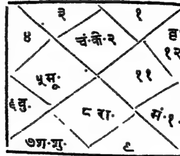
श्री युगल सर्वस्व को प्रथमप्रकरण समाप्त भयो।



अथ युगल सर्वस्व को दूसरो प्रकरण लिखियत है ।

सोरठा—मंगल माधव नाम, मंगल व्रज वृन्दा विपिन ।
मंगल राधा बाम, मंगल सब व्रज गोपिका ॥

अब श्री पूर्ण·पुरुषोत्तम को मंगल समयं कहत हैं । श्रीशुभ सम्वति ईश्वरे नाम्नि द्वापरार्द्धे ८६३८७४ शेष १२५ श्रीसूर्ये दक्षिणायने वर्षाऋतौ भाद्रपदे मासि कृष्णे पक्षे अष्टम्यां घटि ५६ पल ४५ बुधवासरे कृत्तिकानक्षत्रे घटि २८ पल० हर्षणयोगे घटि ४१ पल ३७ कौलव करणे इष्ट ४६ घटि १४ पल एतस्समये चन्द्रवंशांत:पाति वैश्यवंशावतंस गुरुगोब्राह्मणसेवापरायण श्री मत्पर्जन्यात्मजश्रीमन्नन्दराजगृहे श्रीयशोदा कुक्षौ पुत्ररत्नमजीजनत् ।



१९५५८७३८७५ सृष्टि प्रारंभतो गताब्दा: ।
१९७२९४३८७५ वाराहकल्पप्रवेशप्रारंभगताब्दा:

वंश वृक्ष ।

- महाबाहु
  - पद्मनाभ
    - चित्र
      - देवमीढ़
        - सुजन्य
        - पर्जन्य
          - नन्दिनी
          - उपनन्द
            - श्यामदेवी
            - श्रीकृष्ण
          - अभिनन्द
            - सुबाहु
          - नन्द
            - श्रीकृष्ण
          - सुनन्द
            - सुबल
          - नन्दन
            - तोककृष्ण
          - सुनन्दा
        - अर्जन्य
        - राजन्य

अथ उपनन्द जी को बर्णन। उपनन्द जी श्री नन्द राय जी के सब भाइन में बड़े हैं। गांव में इन को बड़ो मान है। गांव में जो कछु काहू को धर्म वा आदत वा औषधी पूछनो होय. तो इन सों आय के पूछें। इन्हें भगवद्वात्सल्य सिद्ध है और व्रज के सब गांव की देव पितर की रीति जो कोई करे सो इन सों पूछि के करे। केशी दैत्य के भय सों वृन्दाबन छोड़ि के ये महा बन में सब भाइन के साथ वास करें हैं। इनकी स्त्री को नाम तुंगी है। इन को वर्ण गौर दाढ़ी श्वेत और नाभि तक लम्बी है और हरे रङ्ग को वस्त्र पहिने हैं और नव लाख गऊ और लाखन हाथी घोड़े इन के पास हैं।

अथ अभनन्दजी को वर्णन। इन को वर्ण गौर है, शरीर पुष्ट और बलवान्, केश सब श्वेत होय गये हैं, पर दांत नहीं टूटे, गालन पै सुन्दर गल-मुच्छा है और आठलाख गऊ हैं और लाल बस्त्र पहिने हैं।

अथ नन्दजी को वर्णन। श्री नन्दराय जी को वर्ण गौर है; केश कछु श्याम और श्वेत मिलुवाँ हैं। तोंद बड़ी है, छाती ऊंची है, वस्त्र नीलो पहिरे हैं, इन को स्त्री को नाम श्री यशोदा है, जिन को अंग कछु स्थूल है और रंग सांवरो है। फूलन सों वेनी सदा गूथी रहै और वस्त्र पीरो पहने। और इन को नैहर को नाम देवकी है। श्रीनंदरायजी के ७२००००००० बह-त्तर करोड़ गऊ हैं और भैंस बकरी बहुत हैं। भाइन के हिस्सा में श्रीनंदराय जी को नव लाख गऊ मिली हैं, सो अब वे गऊ मोहना नामक ग्वारिआन के सरदार के पास हैं। उपनंदजी और अभिनंद जी ने आप राज्य नहीं लियो तासों नंदराय जी व्रज के राजा भये। इनके कुलदेवता नारायण हैं, इन के कुल को वेद साम और शाखा कौथुमी है; पर जबसों व्रज के राजा भये तब सों यजुर्वेद और माध्यंदिनी शाखा भई। इनके कुलपुरोहित शाण्डिल्य हैं इनके राज्य में तीन प्रकार के गोप बसे हैं, प्रथम वे जो व्यापार और गोरचण करें हैं, दूसरे वे जो गाय भैंस रखें और खेती करे हैं, और तीसरे वे जो बकरी इत्यादि छोटे जीव पालें। श्रीनंद रायजी को मुख्य मंदिर उत्तराभिमुख है और दरवाजे के बाहर दोउ ओर बड़े२ सिंह बने हैं, भीतर बड़ो चौक है वहां एक ऊंचो चौतरा है जा पै सांझ को सब व्रज के लोग आयके बैठे हैं, ताके पीछे जो

दरवज्जा है याके दोऊ ओर बड़े२ हाथी बने हैं और वाहू के भीतर दरवज्जा जो है याके दोउ ओर चन्द्रमा और सूर्य बने हैं वाके भीतर अनेक चौक हैं जिन में सर्वतोभद्र कमलचौक और मणिचौक ये तीन मुख्य चौक हैं, ताके आगे श्रीव्रजरानीजूको मंदिर है और भीतर बाहर ताईं अनेक दर दालान और मंदिर हैं और इनके बीच में कहूं कहूं बड़े बड़े वृक्ष लगे हैं और कहीं तुलसी को थावरो है। इनकी या पारकी राजधानी को नाम गोकुल और वा पार की राजधानी को नाम नंदीश्वर है। गोकुलके देवता चिन्तामणि माधव श्री मथुरानाथजी हैं और नंदगांव के ग्रामदेवता नंदीश्वर शिव हैं, और शैलासन और पांडु नाम को दो अथाई हैं।

अथ सुनन्दजी को वर्णन। सुनन्दजी को शरीर बड़ो ही पुष्ट है और अवस्था हू वृद्ध नहीं भई है, केश सब श्याम हैं और व्रज की सेना को सब प्रबन्ध करें हैं और सृंग और तरवार सदा हाथ में लिये रहैं, वस्त्र पीरे पहरें हैं। इनकी स्त्रीको नाम कुवला और गऊ नौ लाख हैं।

अथ नन्दन को वर्णन। ये सबसों छोटे हैं, रंग गेहुआं और केश बड़े लम्बे लम्बे हैं। वस्त्र सफेद पहिरैं और स्त्री को नाम अतुला है जाको रंग गौर है और श्याम रंग को वस्त्र पहिरै। इन को निज की गऊ सात लाख हैं।

श्रीनन्दजी की माता को नाम वरीयसी है इन को अंग नाटो और केश सब श्वेत होय गये और वस्त्र हरे हैं।

अर्जन्यको स्त्री को नाम नटी और राजन्यको स्त्री को सूरा है। नन्दराय जी के फूफा को नाम गुरुवीर है और ये वृषभान जी के मामा लगै हैं। और नन्द रायजी के दोऊ बहिन के पतिन को नाम लीन और काम है।

उपनन्द जी के पुत्र को नाम कृष्ण (कोऊ कोऊ को मत है कि उपनन्द जी को पुत्र नहीं भयो सो जब नन्द राय जी को पुत्र भयो तब उपनंद जी के गोद में दे दियो तासो भगवान् को नाम नंद जी उपनंद जी दोउन की बंश परम्परा में आवै है) और इनकी एक बेटी या को नाम कामा और प्रसिद्ध नाम शारदेवी है। जाको रंग सावरो है और रूप में सब कृष्ण को उन्हार हैं।

अभिनंद जी के पुत्र को नाम [illegible] है; या को रंग गोरो और वस्त्र हरो है। यह श्रीकृष्ण के साथ रक्षा के हेतु सदा लकुट लिये रहै, क्योंकि श्रीकृष्ण को बड़ो भाई है तासों याके सख्य में वात्सल्य मिलो है।

सुनन्द जी के पुत्र को नाम सुबल है, याको रंग लाल और वस्त्र कारो है और श्रीकृष्ण को बड़ो प्यारो मित्र है, क्योंकि याकी और भगवान् की अवस्था एक ही है।

नन्दन जू के पुत्र को नाम तो छाया है (कोऊ को मत है कि या को रंग श्याम और वस्त्र पीत हैं) याके पुकारवे को नाम तोक है और या को चलन बोलन सबहूंश्रीकृष्ण को सो है और यह श्रीकृष्ण को अत्यन्त प्यारो है, क्यौंकि आप को नेम है कि जो थोड़ी हू वस्तु आरोगें तो अपने हाथ सों पहिलो कवर या के मुख में देत हैं।

अब जन्म समय को भाव लिखत हैं। तहां श्री पूर्ण पुरुषोत्तम ने विश्वावसु नाम संवत में जन्म लियो है ताको भाव यह है,—जो विश्वावसु गंधर्वन को राजा है ताके संवत में आपने जन्म लियो तासों यह जतायो कि हम गान विद्या की प्रवृत्ति करेंगे। और दक्षिणायन में जन्मलियो ताको भाव यह है कि आप अनेक नायकागण को दक्षिण होयेंगे और भक्तजन सों हू दक्षिण रहेंगे, और यज्ञअवतार में स्त्री को नाम हू दक्षिणा है तासूं दक्षिण-अयन में जन्मलियो। और वर्षा ऋतु में जन्म लियो ताको भाव यह है कि वर्षा ऋतु सब जगत को जीवन है और सब ऋतुन की अपेक्षा आनन्द दायक है या ही सों सब अन्न आदि उत्पन्न होय हैं तासों यह जनायो कि हम जगत के हेतु हैं और सब को आनन्द देंगे। अरु सब महीना छोड़िके भाद्र पद में जन्म लियो ताको यह हेतु है कि भद्र अर्थात् कल्याण वही भाद्र वाको पद नाम घर अर्थात कल्याण को घर तासो आप ने सब मास छोड़िके भाद्रपदही में जन्म लियो। अब वर्षा ऋतु के २० दिन को एक ऐसे तीन पाद हैं तामें मध्य पाद में जन्म लियो ताको भाव यह कि प्रथम पाद में उष्णता विशेष है और तृतीय में शीतता, तासों मध्य के पाद में जन्म लियो, और ब्रह्मा विष्णु महेश्वर तीन देवता हैं तामें मध्य में विष्णु हैं ताको हेत यह जो प्रधान मध्य में रहे हैं तासो मध्य पाद में जन्म लियो सो जाननो। अब कृष्ण पक्ष में जन्म लियो ताको कारण यह है कि आप को अपने नाम को पक्ष है तासों यह जनायो कि हम अपनो पक्ष थापेंगे। और अष्टमी तिथि को कारण यह है कि अष्टमी शिव तिथि है, कल्याण रूप है, यद्वा श्री महादेव जो परम वैष्णव हैं तिनकी तिथि है, यद्वा पन्दरहो तिथि के मध्य में अष्टमी है सो प्रधान मध्य में रहै है तासों, यद्वा अष्टमी जयतिथि है सो हम असुरन को

प्रकाश करेंगे यह जनायो। वा यह श्री वसुदेवजी की जन्मतिथि है। और रात को जन्म लियो ताको हेत यह है कि हम चन्द्रवंशी हैं सो चन्द्रमा रात्रि को राजा है तासों हम को दिन सों प्रयोजन नहीं। और अर्द्धरात्र को जन्म लियो ताको हेत यह है कि वा समय में कोई कार्य नहीं कियो जाय है, स्वस्थ वेला है, तासों जा समय मेरे भक्त स्वस्थ रहैं वा समय जन्म लियो चाहिये। और चन्द्रमा के उदय होत जन्म लियो ताको हेत यह है कि जैसे चन्द्रमा जगत को आह्लाद करै है तैसो आह्लाद हम करेंगे यह जनायो, यहा हम चन्द्रवंशी हैं सो अपने वंशस्थ के उदय संग अपनो उदय कियो। और भगवान के जन्म समय आकाश में मेघ छाये याको हेत यह है जैसो मेघ सब को आनन्द देत है तैसो हम आनन्द देंगे, यहा मेघ प्रसन्न भये कि हमारो नाम घनश्याम श्रीठाकुर जी को होयगो, हमारी उपमा ब्रह्म को दी जायगी तासों प्रसन्न भये, यहा जल को नाम जीवन है सो जीवन जगत को हम करेंगे यह जनायो। और रोहिणी नक्षत्र पर जन्म लियो ताको भाव यह कि जैसे यद्यपि चन्द्रमा को अनेक नक्षत्र हैं तथापि वाके साथ नित्य रोहिणी ही रहै है तैसही यद्यपि आप को अनेक सखि सेवन करैं तथापि मुख्य श्रीप्रिया जी ही हैं। और रोहिणी में जन्म ग्रहण करके आपने श्री बलदेवजी से सहोदरता सूचन कराई। बुधवार में आपने जन्म लियो ताको हेत यह है कि सब ग्रहण में बुध अत्यन्त सुंदर है तासों आप अलौकिक सौन्दर्य प्रगट करेंगे और बुध आप के वंशको पूज्य हू है तासों वंश को पक्षपात जनायो। वा "विष्णु चन्द्रसुते" यासों बुध के दिन आप अवतीर्ण भए। काहू पुराण को मत सोमवार के हू जन्मदिन मानवे को है सो वाहू में पूर्वोक्त भाव जानने। इत्यादि अनेक भाव हैं कहां ताई लिखिये।

अथ हस्त चिन्ह वर्णनं।

जव खुर तोरन कमल लता बंसी त्रिकोन ध्वज।
वृक्ष शंख घट अग्निकुण्ड अंकुश गृह रथ गज।
सफरी ऊरधरेख कलस फल सब मन भाये।
छत्र गदा धनु सरसुचक्र अरु बिजन सुहाये।
बर पानपात्र गो सीप तिल स्वस्तिक श्रीश्री छपाकर।
हरिचन्द चिन्ह बत्तीस ये सोहत नित जन सीसपर॥ २

इति श्रीयुगल सर्वस्व के पूर्वार्द्ध को दूसरो प्रकरण।

उत्तरार्द्ध ।

अथ अष्ट सखिन की नाम ।

अपने मत सों । श्रीचन्द्रावली जी, श्रीललिता जी, श्रीविशाखा जी, श्री-चम्पकलता जी, श्रीचन्द्रभागा जी, श्रीराधासहचरी, श्रीश्यामा जी और श्री भामा जी ८। इन में श्रीचन्द्रावली जी को स्वामिनित्व है और सबन कों सखित्व है याही सों पञ्चाध्याई में अन्तर्ध्यान और आविर्भाव और महारास तीनिहूं समै में काचित् काचित् करिकै सात ही गिनाई हैं । और स्वभावरणात्मक श्रीस्वामिनीजी तथा श्रीठाकुरजी को स्वरूपहू है । यथा चतुर्व्यूहात्मक, कालात्मक, संयोगात्मक, और वियोगात्मक श्रीठाकुरजी को स्वरूप है । वियोगात्मक स्वरूप ब्रज में प्रगटे हैं और ब्रज ही में विराजत हैं मथुरा द्वारका नाहीं जात ॥ तथा श्रीस्वामिनीजी शक्ति त्रयात्मक स्वामिन्यात्मक संयोगात्मक और वियोगात्मक हैं तिन में वियोगात्मक स्वरूप है वर्ष पहले सेवा कुञ्ज में प्रादुर्भाव भए हैं और संयोगात्मक स्वरूप पूर्ण पुरुषोत्तम के साथ श्री यशोदा जी के यहां प्रगटे हैं और पञ्चावर्णात्मक स्वरूप पन्द्रह दिन पाछें श्री वृषभानजू के घर प्रगट होत हैं याही सों एक एक आवर्ण की सेवा के हेतु एक एक सखी को प्रादुर्भाव है । और श्रीचन्द्रावलीजी युगल स्वरुप के प्रेम की मूर्ति हैं रासलीला में विशेष रस पोषकता अर्थात् परकीया विभाग सुख प्राप्ति की कारण है और स्वामिनीजू के मान के कारण इन को प्रागट्य है याही सों एकादश सखा की भांति सात सखी मुख्य हैं और याही सों वेणु में सप्तरन्ध्र तथा गुसांई जी के घरहू सात बालकन को प्रादुर्भाव है । कोऊ महात्मा को मत है कि श्री स्वामिनीजी और श्रीचन्द्रावलीजी को स्वामिन्यात्मक स्वरूप के अतिरिक्त एक एक सख्यात्मक स्वरूपहू है । यथा । श्री स्वामिनीजीको राधा सहचरी वा रङ्गदेवात्मक और श्रीचन्द्रावली जी को इन्दुमुख्यात्मक ॥

अथ अन्य मत सों अष्ट सखिन के नाम ।

ललिता, विशाखा, तुङ्गविद्या, रङ्गदेवी, सुदेवी, इन्दुरेखा, चन्द्रभागा, और चम्पकलता । एक के मत सों ललिता विशाखा चन्द्रभागा संध्यावली तुङ्गभद्रा श्यामा भामा और तुलमा । एक के मत सों श्रीचन्द्रावली ललिता विशाखा पद्मा भद्रा धन्या रङ्गदेवी और श्यामा हैं ॥

एक के मत सों । ललिता, विशाखा, चन्द्रभागा, श्यामा, भामा, कुसुमा, तुलसी, और माधवी ।

एक मत में । ललिता, विशाखा, चन्द्रभागा, चम्पकलता, चित्रा स्वर्ण लेखा, इन्दुमती, और संध्यावली ।

इति श्री युगल सर्वस्व उत्तरार्ध को प्रथम अध्याय संपूर्ण ।

अथ स्फुट वर्णन । श्रीगोपीजन के यूथ अनगिनित हैं इन को कोऊ संख्या नाहीं करि सकत ।

इन यूथनी में एक पुराण के मत सों ये मुख्य यूथाधिकारिणी हैं और इन के यूथ में इतनी सखी हैं । यथा चन्द्रावली १६०००, सुशीला १६०००, शशिकला १४०००, चन्द्रमुखी १३०००, माधवी ११०००, कदम्बमाला १३०००, कुन्ती १००००, यमुना १४०००, जान्हवी ८०००, सावित्री १५०००, सुधामुखी १४०००, शुभा १४०००, पद्मा १४०००, गौरी १४०००, सर्व्वमंगला १६०००, सरस्वती १३०००, भारती १००००, अपर्णा १४०००, रति १००००, गंगा १४०००, अंबिका १६०००, सती १३०००, नंदिनी १००००, सुंदरी १३०००, कृष्णप्रिया १६०००, मधुमती १४०००, चम्पा १३०००, और चंदना १४००० ॥

काहू के मत सों श्रीनंदराय जी की परम्परा यह है । आभीरभानु के चन्द्रसुरभि तिन के सौलुक सौलुक कों महावाह तिन के कञ्जनाभ तिन के वीरभानु तिन के धर्म्मधीर तिन के धर्म्मश्रवा तिन के काननेन्दु तिन के जयबल तिन के जयकीर्ति तिन के यशोधन तिन के काष्ठभानु तिन के महाबुद्धि तिन के मानमित्र तिन के मनोरथ तिन के वराङ्गद तिन के चित्रसेन तिन के सुनंद तिन के उपनंद तिन के महानंद तिन के नंदन तिन के कुलनंद तिन के बन्धुनंद तिन के केलिनंद तिन के प्राणनंद तिन के नंद हैं ।

एक मत सों चित्रा जी को वर्णन । श्रीकुण्ड के पूर्व्व आनंद सुखद नाम इन को निकुंज है इन को वय तेरह वर्ष आठ महीना को वर्ण गौर वस्त्र जाती पुष्प तुल्य और सेवा चित्र की है ।

श्यामला जी दोऊ स्वरूप की सबन्धिनी हैं श्रीठाकुर जी के काका की बेटी हैं सांवलो रंग है । श्रीठाकुर जी की उनहार बहुत मिलत है । कोऊ को मत है कि श्री ठाकुर जी को काका को बेटी को नाम श्यामदेवी है श्यामला जो श्री ठकुरानी जी की काका की बेटी हैं परंतु श्री ठाकुर जी की पक्षपातिनी हैं ।

अथ अष्ट सखिन के राग तथा बाजन को वर्णन । तहां श्री

स्वामिनी जी संयोग में विपंची जाति को वीन और वियोग में वंशी बजावत हैं। राग केदार और कान्हरो रात में तथा दिन में सारंग और मालकोस वर्षा में मेघ और मल्लार।

श्री चन्द्रावली जी।	बाजा	अमृत कुंडली राग सोरठा [और जलतरङ्ग।	
श्री ललिता जी।	बाजा	बीन	राग भैरवकालिंगड़ा।
श्री विशाखा जी।	बाजा	मृदंग	राग सारंग।
श्री चन्द्रभागा जी।	बाजा	स्वरोदय	राग केदार।
श्री चम्पकलता जी।	बाजा	रवाव	राग कान्हरा।
श्री भामा जी।	बाजा	चङ्ग	राग कल्यान।
श्री सन्ध्यावली जी।	बाजा	सारङ्गी	राग सोरठ।
श्री इंदुलेखा जी।	बाजा	ताल	राग विहाग।
श्री चित्रा जी।	बाजा	सितार	राग संकरा।

अन्य मत सों बाजन को वर्णन।

श्री ललिता जी मृदंग। श्री जमुना जी सहनाई। श्री विशाखा जी सुरमण्डल। श्री श्यामला जी दुधारा। श्री चम्पकलता जी सारङ्गी। श्री भामा जी करताल। श्री कामा जी तुरही अरु सहचरी किन्नरी॥

अथ अन्य मत सों प्रियाजी के हस्त को चिन्ह।

जब माला कमल वाटिका भ्रमर व्यञ्जन छत्र अर्द्धचन्द्र कर्णफूल मड़वा अरु जलपात्र।

अथ वामहस्त के चिन्ह।

लक्ष्मी सोप वृक्ष वेदी आसन कुसुमलता अरु चामर।

अथ श्री ठाकुर जी के दक्षिण हस्त के चिन्ह।

हाथी अंकुश घोड़ा वृक्ष बान गज पङ्खा मंड़वा वंशी चक्र माला और कमल।

अथ श्री ठाकुर जी के बाम हस्त के चिन्ह।

मड़वा कमल तरवार थापा धनु परिघ विल्ववृक्ष मीन बान अरु नंदावर्त्त।

अथ श्री ठाकुरजी के उत्सव। भादों सुदी २ को दसूठन, भादों सुदी ५ को श्री चन्द्रावलीजू को जन्म, क्वारबदी ८ को महीना को चौक, पौष सुदी ८

को अन्नप्राशन, माघ बदी ६ को नामकरण, वैसाख सुदी ८ को ब्याह और असाढ़ सुदी ३ को गौना। पूस सुदी ८ कों श्री नन्दजू को जन्म, माघ सुदी ६ कों यशोदाजू को जन्म और सावन बदी ५ अठवासा तथा अगहन सुदी २ कों श्रीठाकुरजी कूख में पधारे हैं। कार्तिक सुदी १५ कों यज्ञपत्नी कों अंगीकार।

आधिदैविक ऊधव आधिदैविकी सुभद्रा आधिदैविक अर्जुन आधिदैविकी रुक्मिणी और अधिदैविकी सत्यभामा को व्रज की लीला में अङ्गीकार है तैसेही आधिदैविक बलदेवजी और रेवतिजी सदा व्रज में विराजत हैं और मर्य्यादा श्रुतिरूपा गोपी इन को यूथ है।

श्रीठाकुरजी के बूआ को नाम मैना है और धरानन्द अर्थात् सुनन्दजी की बेटी सुभद्रा श्री ठाकुरजी की प्यारी बहन है। श्रीवृषभानुजी विवेक और श्रीकीर्ति जी भक्ति को स्वरूप हैं तथा देवतांन की आदि जननी महामाया देवकी जी को स्वरूप है और धर्म्म को स्वरूप वसुदेवजी को है इन दोउन कों व्रज में कबहूं २ बाललीला के दर्शन होत हैं।

गोलोक में श्रीगोवर्द्धन कों बिस्तार बारह हजार कोस है और भगवान के आनंद सों उन की उत्पत्ति है। श्रीस्वामिनीजी के सात्विक भाव सों रास की उत्पत्ति है। तिरानवे कोटि रासलीला और उतने ही कुञ्ज हैं तिनहूं में चौरासी मुख्य हैं। निज निकुञ्ज में श्री ठाकुरजी कबहूं गौर विराजत हैं कबहूं श्याम। सात्विक कुञ्ज फूलन के हैं, राजस मणि कांच इत्यादि के और तामस धातु पाषाणादिक के हैं। निर्गुण कुञ्ज इच्छामय षट ऋतु सम्पन्न हैं। कुञ्ज मण्डल में पहलो निकुंज श्री यमुनाजी को दूसरो अग्नि कुमारिका को तीसरो श्रुति रूपा की मुखिया श्री चन्द्रावलीजी कों और चौथो निज निकुंज है। ऐसेहीं अन्तरङ्ग कुंज में इन स्वरूपन के आधिदैविक, स्वरूप क्रम सों श्री यमुनाजी श्री राधा सहचरी श्री चन्द्रावलीजी और जुगल स्वरूप विराजत हैं और वे स्वरूप अलौकिक मनुष्य के ज्ञान के बाहर के हैं जिन स्वामिनी और सखिन को जगत भजन करत है वे गुणमई हैं।

श्री चन्द्रावलीजी को गांव व्रज में रिठौरा है। नवधा भक्ति वात्सल्य में तो श्री नवनंद के स्वरूप में और शृङ्गार में सखी स्वरूप में रहत हैं। व्रज में अनेक अवतारन के बरदान सों श्रुतिरूपा, ऋषिरूपा, यज्ञसीता, रमासहचरी, लोकालोकवारी, रजोगुण की, तमोगुण की, सतोगुण की, कोशलपुरी, पुलिंदी, श्वेतदीप की, मिथला की, ऊर्द्धवैकुंठ को, भूमिगोलोक की, अजितपद

की, दिव्या, विष्णुलोक की, अदिव्या, समुद्रकन्या, अप्सरा, पुरंध्री,लता, गोपी. वर्हिष्मती, नागकन्या, सुतलनिवासिनी और श्रीरामावतार की मानवी इतनी जूथन को मनोरथ पूर्ण पुरुषोत्तम ने पूर्ण कीनो है।

इन में जालन्धरी तो रङ्गजीत नामक गोप की कन्या भई हैं और मत्स्य अवतार के वरदान की बर्हिष्मती अप्सरा नागकन्या और सुतलवासिनीन ने व्रज के पास बर्हिषद नगर में जन्म लीने हैं। रिषीरूपा बङ्ग देश में मङ्गल गोप के घर पांच हजार उत्पन्न भई हैं। और श्री नंदरायजी ने इन कों बङ्गाले सों लाय के महल में रक्खो हैं। कोशल की स्त्री नव उपनंद की पत्नी हैं। मालव को राजा दिवसपति गोप व्रज में बसत है सो देवतान की स्त्री वा की कन्या गोपी भई हैं। सिन्धु देश में चम्पक देश को राजा विमल वाके यहां अवध और मिथलापुर की स्त्री एक करोड़ प्रगटी हैं वे पहले काम वनमें रहीं फिर द्वारका गईं जासों इन को राज्यलीला प्रिय है। दक्षिण में उशीर नगर के गोप पानी न बरसिवे सों व्रज में आय बसे हैं तिन की बेटी यज्ञ जानकी और पुलिंदी भई हैं। दिव्य बाहु, गोपेष्ट, पतङ्ग भार्गव, शुक्ल और नीतिविद ये छः लघु वृषभान हैं इन के घर उर्द्ध विष्णुपदवासिनी, रमासखी, जलकन्या, श्वेत दीप की स्त्री लोकाचलवासिनी और अजितपद की स्त्री प्रगटी हैं। वीति-होत्र, श्रुत, अग्निभुक, गोपति, श्रीकर, शान्त, पावन,शाम्भ, और व्रजेश ये नव लघु उपनंद हैं। त्रिगुणा और दिव्याऽदिव्या के यूथ को इनके घर प्रागट्य हैं।

और अवतारन में स्वकीया छोड़ के और स्त्री सों रमण करें तो धर्म्म की मर्य्यादा जाय वाही सों जब पूर्ण पुरुषोत्तम प्रगटे हैं तब इन सबन को मनोरथ पूर्ण भयो है।

विशेष करं कें श्री रामावतार की स्त्रीन को व्रज में प्रागट्य है जा सों श्री राम जू साक्षात वासुदेव स्वरूप और मर्य्यादा पुरुषोत्तम हैं और अत्यन्त ही सुंदर हैं देखतमात्र स्त्रीजन को चित हरन करत हैं सो मर्य्यादा पुरुषोत्तम में आसक्त होइ कें पुष्टि पुरुषोत्तम सों रमण की अधिकारणी होत हैं ताहू में अग्निकुमार दण्डकारन्य के पांच हज़ार ऋषी को मुख्य नित्य लीला में अंगी-कार है क्योंकि पुरुष होइ कें प्रभु में इन ने स्त्री भाव कीन्हो है सो कुमारि-कान को यूथ जा को मुखिया श्री राधा सहचरी जू हैं इन्हीं दण्डकारन्य के ऋषिन को है।

सुभद्र गोप की स्त्री जसा सों कीर्त्ति जी को प्रागट्य है सुनैनाजी इन की

अंश हैं चन्द्र वंश में कुरंग नामक राजा और वा की स्त्री विशालाक्षी सों सुनैना जू की उत्पति है।

श्री जानकी जू इनहीं के गृह प्रगटी हैं और मंदोदरी, पृथ्वी, पारबती, और सुनयना इन सबन सों आप सों मातृ सम्बन्ध है। जब ऋषिन की ब्रह्म-तेज एक घड़ा में बंद होय के रावण के पास आयो तब मंदोदरी ने वा कों अपने गर्भ में धारण कियो सो नारद जी के कहिवे सों रावण ने वा गर्भ कों पीड़ित करि वा घड़ा में भरि के जनकपुर के पास गड़वाय दियो। ताही सों श्रीजानकी जी प्रगटी है और श्री लक्ष्मन जी सब ब्रह्मान के भरत जी सब विष्णुन के और शत्रुघ्न जी सब शिवन के आधिदैविक स्वरूप हैं।

आल्हादिनी, चारुशील, अतिशोभा, सुशीला, हेमा, लक्ष्मना ये ६ श्री जानकी जी की कुञ्जन की, शोभना, सुभद्रा, शान्ता, सन्तोषा, शुभदा, सत्य-वती, सुस्मिता, चार्वंगी, लोचना, हेमांगी, क्षेमा, क्षेमदात्री, सुधाक्षी, धीरा, धरा, और चारुपा, ये सोरहसिंगार की, माधवी, मनोजवा, हरिप्रिया, वागीशा, विद्या, सुविद्या, नित्या और वैसा ये आठ अंग की मुख्य सखी हैं।

इति श्रीयुगल सर्वस्व के उत्तरार्द्ध को द्वितीय अध्याय स्फुट प्रकरण समाप्त भयो।

उत्तरार्द्ध।

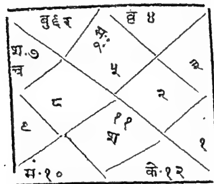
३ अध्याय।

अब प्रसङ्गवशात् अन्य अन्य रहस्य निरूपण करत हैं। १। रसिक जन और महात्मान के निकुंजादि वर्णन में अनेक मत हैं तिन कों परस्पर विरुद्ध देखि के शंका न करनी काहे सों कि यह तो निकुञ्जलीला भाव सिद्ध है जैसो जाको भाव को अधिकार है वैसो वाहि दर्शन होत है। २। रहस्य पुराण में तिरानवे कोटि रासलीला लिखी हैं। ३। तिरानवे कोटि कुंजहू हैं। ४। धाम एक भूमंडल पर श्रीवृन्दावन एक गोलोक को नित्य वृन्दावन। ५। सब कुञ्जन में ८४ कुंज मुख्य हैं। याही सों ८४ सेवक हू श्रीमहाप्रभु जी ने अङ्गीकार किए हैं। ६। श्रीठाकुरजी के गुणमय नौ स्वरूप उन की भार्या १ अजा २ अरूपा ३ निर्गुणा ४ निराकारा ५ सनातनी ६ निरीहा ७ परब्रह्मभूता ८ अविनाशिनी और ९ निरंजना सो इन नवो स्त्रीन सों श्रवणादिक प्रेम भक्ति उत्पन्न

होत भई । ७ । और निर्गुण स्वरूप श्रीठाकुर जो की एक सच्चिदानन्द घन ताको स्त्री अलौकिकी तासों प्रेम लक्षणा उत्पन्न भई ताके सहज सुहित और सुहृत तीन पुत्र भए । ८ । श्रवणादिक प्रेमन कों एक एक कों नौ नौ पुत्र भए तेहो ८१ और ३ प्रेमलक्षणा के पुत्रन के पुत्र सब मिलि कै चौरासी प्रकार के प्रेम तेई निकुञ्ज होत भए ९ । श्रवण की भार्या श्रुति ताके ९ पुत्र मूलकुंज उन की संज्ञा उन के नाम यथा प्रीतिकुंज प्रेमकुंज कंदर्पकुंज लीलाकुंज मज्जनकुंज विहारकुंज उत्कण्ठकुंज मोहनकुंज युगलकुंज १० कीर्त्तन की स्त्री नर्त्तकी ताके नौ देहकुंज पुत्र भए यथा हावकुंज, भावकुंज, कटाक्षकुंज, अलककुंज, मुक्ताकुंज, भ्रूकुंज, वेनीकुंज, रोमराजी-कुंज, नीवीकुंज । ११ । अर्चन की भार्या पूजा ताके ९ पुत्र विहारकुंज यथा कटिक्षोणकुंज, मानकुंज, स्वसनकुंज, तिष्ठनकुंज, संगीतकुंज, आलस्यकुंज, अ-लकूजितकुंज, विविधाकारकुंज, दुकूलकुंज, कुचकुंज, । १२ । पाद सेवन की स्त्री पादोदका ताके ९ शृङ्गारकुंज, यथा नेत्रकुंज, कुंडलकुंज हारकुंज, ताम्बूल-कुंज, आड़कुंज, लावन्यकुंज, हास्यकुंज, उत्साहकुंज, उग्रताकुंज । १३ । स्मरण की स्त्री स्मृति ताके ९ महाकेलिकुंज यथा कोकिलालापकुंज ग्रीवकुंज आलि-ङ्गनकुंज, चुम्बनकुंज, अधरपानकुंज, दर्शनकुंज, दर्पनकुंज, प्रलापकुंज, उन्-मादकुंज, । १४ । वंदन की स्त्री नति ताके ९ एकान्तकुञ्ज यथा दर्पकुंज, उल्लासनकुंज, उत्कर्षकुंज, दीनकुंज, अधीनकुंज, सुरतकुंज, आर्षणकुंज, उच्चाटनकुंज, मूर्छाकुंज, । १५ । दास्य की स्त्री विनया ताके ९ गोप्यकुंज यथा वशवारणकुंज, स्तम्भनकुंज, प्रियास्कन्धारोहणकुंज, आवेशकुंज, व्यालालाप-कुंज, पर्य्यंकशयनकुंज, प्रियाचरणताड़कानकुंज, नखक्षतकुञ्ज, दन्तक्षतकुंज । १६ । सख्य की स्त्री मैत्री तासों ९ भावकुंज, यथा चपितरंगकुंज, विगताभ-रणकुंज, भूषणकुंज, कंपकुंज, रतिप्रलापकुंज, तुत्तुनगिरकुंज, प्रियावामभवन-कुंज, मदनगुह्यकुंज, आसक्तकुंजकुंज, । १७ । निवेदन की स्त्री आत्मसमर्पिणी ताके ९ परमरमकुंज यथा पीड़ाबाटाकुंज, सुरतयमनिषेधकुंज, ठुनुककुंज, वाग्विलमकुंज, व्यस्तभावकुंज, कामटंककुंज, किंकिनिरवकुंज, वीरविपरी-तकुंज, सुरत्तांतकुंज, । १८ । सुहृत् की स्त्री सुहृदा तासों वालिकाकौतुककुंज और सुहित की स्त्री हितकारिणी तासों सुरतकुंज तथा सहज की स्त्री सहजा तासों सहज प्रेमकुंज येई ८४ कुंज भए । १९ । इन कुंजन में एक एक में सब कुंज अन्तरभाव सों रहत हैं कहूं प्रछन्न रहत हैं और कहूं प्रकाशितहोत हैं ।२०।

अब और स्फूट रहस्य वर्णन करत हैं। व्रज में सप्तावरण स्वरूप श्रीठाकुर जी को तथा श्रीस्वामिनीजी को विराजत है ॥ २ ॥ वासुदेव संकर्षण प्रद्युम्न अनिरुद्ध कालेश्वर संयोगरसात्मक और वियोगरसात्मक यह सात स्वरूप मिलि के पूर्ण होत हैं सो इन में अन्यकल्पन में कहूं एक कहूं दोय ऐसे स्वरूप प्रकट होत हैं ॥ ३ ॥ जब पूर्ण प्राकट्य भयो तब छ स्वरूप मथुराजी में प्रकटे वियोगात्मक स्वरूप व्रिज ही में प्रगटे ॥ ४ ॥ श्रीशक्ति भूशक्ति लीलाशक्ति मनोरथात्मक स्वामिन्यात्मक वियोगात्मक संयोगरसात्मक यह सात स्वरूप श्री स्वामिनी जी के हैं तिन में अन्य युगन में कोउ एक स्वरूप प्रकटत हैं जब पूर्ण प्रागट्य भयो तब पांच स्वरूप कीर्त्ति जी के यहां प्रगटे और जब श्रीठाकुर जी प्रकटे तिन के साथ सायाहृत संयोग वियोग रसात्मक दोय स्वरूप यहां प्रकटे सो जब कीरतिजी अपुने घर सों श्री स्वामिनी जी कों लाईं तब श्रीठाकुर जी माता की गोद सों किलके और हंसे वाही समें इन दोऊ रसात्मक स्वरूपन को उन पंचावरणात्मक स्वरूप में स्थापन कीनो ॥ ५ ॥ जब आकु आवरण सों मथुरा पधारे तब वियोगरसात्मक मुख्य स्वरूप श्रीस्वामिनीजी के हृदय में बिराजे ॥ ६ ॥ श्रीस्वामिनीजी को मनोरथात्मक जो स्वरूप हैं ताही में अन्य के प्रभु सों रमण करिवे के मनोरथ तथा वरदान आदि सों जे स्वामिनी प्रकटत हैं ते मिलि रहत हैं और स्वामिन्यात्मक स्वरूप में प्रति कुंज प्रतिमंडल प्रतिजूथ में जो स्वामिनी जी के अंश स्वरूप रहत हैं तिनकी एकता है ॥ ७ ॥

अथ श्रीस्वामिनी जन्म समय।



अथ ब्रह्मणो द्वितीय प्रहरार्धे श्वेत वाराह कल्पे द्वापरान्ते विश्वावसु संवत्सरे भाद्रपदे शुक्लाष्टम्यां गुरु वासरे अरुणोदये विशाखायां सिंहलग्नोदये प्राङ्मुहूर्त्त द्वयान्विते

श्रीश्रीस्वामिन्याजन्म ॥ ८ ॥

नव बृषभानों का चक्र ।

नाम	स्त्री नाम	संतति	वर्ण	चालवस्त्र	गुण	वय	गज
सत्यभानु	सत्यकला	श्रीललिताजी	गौरमोचश्वेत	शरीरांठगना चित्तगंभीरवस्त्र काले	श्रौदार्य	७५	२२०००००
गुणभानु	गुणकला	श्रीविशाखाजी	गुलावी,केशश्वेत	रंगशहाना	विद्या	६७	२१०००००
धर्मभानु	धर्मकला	श्रीरंगदेवी	सांवला,केशश्वेत	वस्त्रलाल शरीर लंबा	धर्म	६४	२००००००
रुचिभानु	रुचिरकला	श्रीचित्राजी	पीन शरीर लंब चौड़ा केश अध-कचरे	लीला	ज्योतिष	६०	१९०००००
सुभानु	सुष्टुकला	श्रीतुंगविद्याजी	सांवला, केश अधकचरे	डाढी, पीत, प्रसन्नवदन	रोचकता	५७	१८०००००
चंद्रभानु	चंद्रकला	श्रीचंद्रावलीजी श्रीचंपकलताजी	गौर केश कृष्ण किंचित्श्वेत	हरित	कला	५४	१७०००००

नव वृषभानों का चक्र ।

नाम	स्त्री नाम	संतति	वर्ण	चालवस्त्र	गुण	वय	गज
वरभानु	वरकला	श्रीइंदुलेखाजी	लाल, केश काले	धानी पछलवानी	गानविद्या	५२	१६००००००
उदधिभानु	कमला	श्रीसुदेवीजी	पक्का	केश काले श्वेत	व्यायाम पशुपरीक्षण	५०	१५००००००
श्रीवृषभानुजी	कीर्तिजी	श्रीदामा श्रीराधिकाजी	लाल	केश काले	राज्यविद्या	४५	१०००००००

युगल सर्वस्व के उत्तरार्द्ध को तीसरो प्रकरण समाप्त भयो ।

अथ चतुर्थ अध्याय ।

६४ गुण श्रीभगवान के

सुरम्याङ्ग १ सर्वसल्लक्षणान्वित २ रुचिर ३ तेजोयुक्त ४ बली ५ वयोयुक्त ६ विविधाद्भुतभाषान्वित ७ सत्यवाक्य ८ प्रियम्बद ९ वावदूक १० पण्डित ११ बुद्धिमान १२ प्रतिभान्वित १३ विदग्ध १४ चतुर १५ दक्ष १६ कृतज्ञ १७ दृढ़व्रत १८ देशकालसुपात्रज्ञ १९ शास्त्रचक्षु २० पवित्र २१ वशी २२ स्थिर २३ दान्त २४ क्षमाशील २५ गम्भीर २६ धृतमान २७ सम २८ वदान्य २९ धार्म्मिक ३० शूर ३१ करुण ३२ मानदायक ३३ दक्षिण ३४ विनयी ३५ लज्जामान ३६ शरणागतपालक ३७ सुखी ३८ भक्तसुहृत ३९ प्रेमवश्य ४० सर्वशुभङ्कर ४१ प्रतापी ४२ कीर्त्तिमान ४३ लोकप्रिय ४२ साधुसमाश्रय ४५ नारीमनोहर ४६ सर्वाराध्य ४७ समृद्धिमान ४८ श्रेष्ठ ४९ ईश्वर ५० नित्य सुंदर ५१ सर्वज्ञ ५२ सच्चिदानंदघन ५३ सर्वसिद्धिसंयुक्त ५४ अविचिन्त्य ५५ महाशक्ति ५६ अनेककोटि ब्रह्माण्डविग्रह ५७ अवतारावलीबीज ५८ हतारिगतिदायक ५९ आत्माराम गुणाकर्षी ६० अत्यन्त अद्भुत और चमत्कार लीला कल्लोल के समुद्र ६१ अतुल्य मधुर प्रेम प्रिय मण्डल सों मण्डित ६२ मुरली वादन सों सर्वमानसाकर्षी ६३ अत्यन्त अलौकिक उज्वल अद्भुत तथा उन्नत रूपश्री सों चराचर को मोहन ॥ ६४ ॥

प्रथम पचास सहज गुण । ६० तक १० अद्भुत । और चार असाधारण गुण ।

२४ नित्य प्रिया सहचरी ।

चन्द्रावली १ विशाखा २ ललिता ३ श्यामा ५ पद्मा ५ शैव्या ६ भद्रिका ७ तारा ८ विचित्रा ९ गोपाली १० धनिष्टा ११ पालिका १२ पञ्चनाली १३ मनोरमा १४ मंगला १५ विमला १६ लीला १७ कृष्णा १८ शारिका १९ विशारदा २० तारावली २१ चकोराक्षी २२ शंकरी २३ कुंकुमा २४ ।

इन में विशाखा ललिता श्यामा पद्मा सखी और शेष यूथपति हैं ।

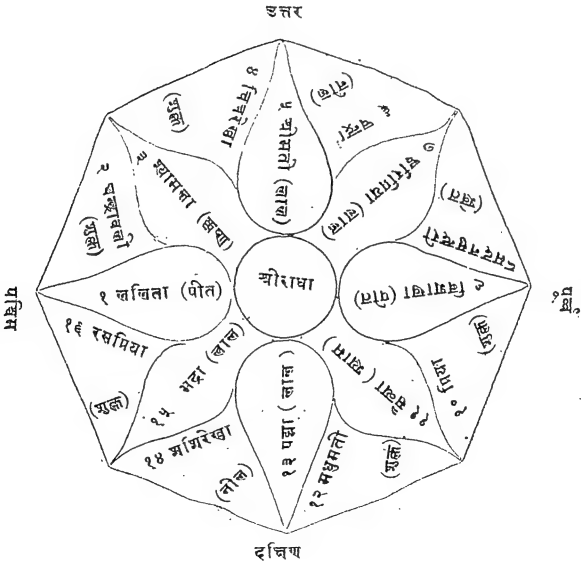
अथ यूथपति अपर ।

चन्द्रावली और सुशीला १६००० शशिकला १४००० चन्द्रमुखी १३००० माधवी ११००० कदम्बमाला १३००० कुन्ती १०००० यमुना १४००० जान्हवी ९००० पद्ममुखी ९००० सावित्री १५००० सुधामुखी १४००० शुभा १४००० पद्मा १४००० गौरी १४००० सर्व्वमंगली १६००० सरस्वती १३००० भारती

१०००० अपर्णा १४००० रति १०००० गङ्गा १४००० अम्बिका १६००० सती १३००० निन्दिनी १०००० सुन्दरी १३००० कृष्णप्रिया १६००० मधुमती १४००० चम्पा १३००० चन्दना १४००० ।

श्रीस्वामिनीजी के १६ नाम ।

राधा १ रासेश्वरी २ रासवासिनी ३ रसिकेश्वरी ४ कृष्णप्राणाधिका ५ कृष्णप्रिया ६ कृष्णस्वरूपिणी ७ कृष्णवामाङ्ग संभूता ८ परमानंदरूपिणी ९ कृष्णा १० वृन्दावनी ११ वृन्दा १२ वृन्दावनविनोदिनी १३ चन्द्रावली १४ चन्द्राकान्ता १५ शतचन्द्रनिभानना १६ ॥



अथ उत्सवन पर रागन को अंगीकार ।

जन्मोत्सव	सारङ्ग
दान	टोडी
सांझी	गौरी
विजयदशमी	मारू
रास	केदार कान्हरा तथा सर्व्व
कार्त्तिक	भैरो ईमन कल्यान
मार्गशीर्ष	पंचम
पूस	आसावरी
माघ	मालकोस वसन्त
फागुन	धनाश्री विहाग आदि सब राग
डोल	हमीर सारंग
चैत	पूर्व्वी
वैशाख	मधु सारङ्ग केदार
ज्येष्ट	सारंगशुद्ध
आषाढ़	सामन्तसारंग गौड़ सोरठ
श्रावण	मलार
जागने को समय	भैरव पंचम
शृङ्गार करतो समय	रामकली
अरोगतो समय	यथऋतु
दिन	टोड़ी आसावरी सारंग धनाश्री
तीसरे पहर	गौरी पूर्व्वी धनाश्री
सैन आरती वा कुंजविहार	केदार कान्हरा ईमन
एकान्त विहार	विहाग सोरठ परज कलिंग

अथ तंत्र मत सों सखीन को वर्णन ।

१ ललिता	स्वर्णवर्ण	रत्नाभरण	पीताम्बर
२ चन्द्रावती	”	श्वेतवस्त्र	मञ्जीर की सेवा
३ श्यामला	”	श्यामवस्त्र	मृदङ्गसेवा

४ चित्ररेखा	स्वर्णवर्ण	शुक्लाम्बर	डफ की सेवा
५ श्रीमती	”	रक्तवर्ण	दासी की सेवा
६ चन्द्रा	”	नीलवस्त्र	रवाव
७ हरिप्रिया	”	लालवस्त्र	उपङ्ग
८ मदनसुन्दरी	”	श्वेतवस्त्र	रवाव और गाना
९ विशाखा	”	पीतवस्त्र	वंशी
१० प्रिया	”	श्वेतवस्त्र	वंशी
११ शैव्या	”	श्यामवस्त्र	गाना
१२ मधुमती	”	शुद्धवस्त्र	चरन सेवा
१३ पद्मा	”	लालवस्त्र	सारंगी
१४ शशिरेखा	”	नीलवस्त्र	यन्त्र
१५ भद्रा	”	रेशमीलालवस्त्र	सुरमण्डल
१६ रसप्रिया	”	चीन शुक्लवस्त्र	तुमरी

एक एक की सात सात सखी ।

१ ललिता की इन्दुमुखी १ रसज्ञा २ शुभदा ३ सुमुखी ४ वल्लभी ५ चन्द्रिका ६ चतुरा ७ ।

२ चंद्रावती की चंचला १ मधुरा २ हस्तकमला ३ मधुर भाविनी ४ विलासिनी ५ रसवती ६ खंजन लोचना ७ ।

३ श्यामला की मुखदा १ चम्पकलिका २ रसदा ३ रसमंजरी ४ सुमञ्जरी ५ शीला ६ चारुमती ७ ।

४ चित्ररेखा की चन्द्रप्रभावती १ वासन्ती २ मालती ३ जाती ४ चन्द्रकान्ती ५ सुकुन्तला ६ रम्भा ७ ।

५ श्रीमति की भ्रमरगौरा १ सुशीला २ सुवेशिनी ३ श्यामलिकी ४ सुधाकण्ठी ५ श्रीया ६ रतिप्रिया ७

६ चन्द्रा की शुकप्रिया १ मधुकरी २ सुवेशा अम्रतोद्भवा ४ सुरली ५ वल्लभी ६ वृन्दा ७

७ हरिप्रिया की पारिजातप्रिया १ शुभा २ पंचस्वरा ३ रत्नमाला ४ मदिरा ५ रासवल्लवी ६ मातंगगमनी ७

८ मदनसुन्दरी की तारावती १ कुण्डलधारनी २ केशरी ३ मित्रवृन्दा ४ लक्षणा ५ अच्युतमालिका ६ चन्द्रा ७

९ विशाषा की मायावती १ कौशिकी २ कोमलाङ्गी ३ सुचन्दनी ४ पीयूषभाषिणी ५ सत्यवती ६ कुञ्जवासिनी ७

१० प्रियाकी कपोत मालिका १ लोपामुद्रा २ किंशुकप्रिया ३ इलावती ४ कुंकुमा ५ कामदा ६ मदालसा ७

११ शैव्या की साङ्गिनी १ वहुला २ प्रियावादिनी ३ मुक्तावली ४ चित्ररेषा ५ सुप्रिया ६ लोलकुण्डला ७

१२ मधुमती की अरुन्धती १ चित्रवती २ म्योरक्षा ३ पद्मगंधिनी ४ मेनका ५ कामिया ६ रङ्गकेतकी ७

१३ पद्मा की काममूर्च्छिनी १ कुसुदप्रिया २ तानप्रिया ३ नित्यविलासिनी ४ हीरावती ५ हारकंठा ६ सिंहमध्या ७

१४ शशिरेखा की सुलोचना १ नन्दव्या २ आनन्दकलिका ३ सुनन्दा ४ आनन्ददायिनी ५ कुरंगाची ६ सुश्रोणी ७

१५ भद्रा की केलिलोला १ प्रियम्वदा २ श्यामाराधा ३ श्यामसेव्या ४ कस्तूरी ५ मानभंजनी ६ विचित्रवसना ७

१६ रसप्रिया की मंजुकिंकिनी १ पिकास्वरा २ शृंगगाना ३ रासविहारिणी ४ रसमंजीरा ५ तिलोत्तमा ६ चारुमती ७

अथ अन्य प्रमाण के अनुसार अष्ट सखी को चक्र।

	पितानाम	मातानाम	रंग	वस्त्र रंग	मुख्य सेवा
श्रीललिता जी अनुराधा जी	सत्यभानु	सत्यकला	गोरोचनप्रभा	मयूर पिच्छ	पानकीबीड़ी
श्रीविशाखा जी	गुणभानु	गुणकला	दामिनीप्रभा	चांदतारा	वस्त्रादि
श्रीचम्पकलताजी	चन्द्रभानु	चन्द्रकला	चम्पकप्रभा	नील	व्यंजनादि
श्री इन्दुलेखा	वरभानु	वरकला	हरतालप्रभा	अनारके फूल	शय्या कहा-नी
श्री तुंगविद्या नान्दीसुखी	मुभानु	मृदुकला	गौर	पीला	गान
श्री रंगदेवी	धर्म्मभानु	धर्म्मकला	कमलकेसर-प्रभा	जड़हुलके फूल	आभरण
श्री सुदेवी	उदधिभानु	कमला	सलोना	सूआ	केशपाशरच-नादि आरसी
श्री चित्रा	सुचिभानु	रुचिरकला	कुंकुमप्रभा	सुनहला	जलादि पान-की

	चातुर्य	उन की सखियों के नाम	भाव
श्री ललिता जी अनुराधा जी	मध्यामुख्य स्नेहवर्द्धन	रत्नप्रभा, रतिकला, निपुणा, कलहंसी, कलापिनी, सुमुखी, मन्मथमोदा, सौरभा॰	सख्य
श्री विशाखाजी	सदा साथ रहना	माधवी, मालती, कुंजरी, हरिनी, चपला, गंधरेखा, शुभानना, सौरभी॰	सख्य
श्री चम्पकलताजी	यथारुचि मिष्ठ करना	कुरंगाक्षी, मिहिर कुंडला, चंद्रिका, सुचरिता, मंडिनी, चंद्रलता, रसऐनी, सुमंदिरा॰	इन पर श्री प्रिया जी का वात्सल्य है
श्री इन्दुलेखा	कोक	चित्रलेखा, मेदिनी, मंदालसा, रमतुंगा, भद्रतुंगा, गानकला, सुमंगला. चित्रांगी॰	परमान्तरंग
श्री तुंगविद्या नान्दीमुखी	वाद्यादि कला	मंजुमेधा, सुमेधिका, गुणचूड़ा. मधुरा, मधुस्यन्दा, मधुरेक्षणा, तनुमध्या, वारुणी॰	सुसाहित्य
श्री रंगदेवी	शृंगार माल्यनिर्माण	कलकण्ठी, शशिकला, कमला, सुन्दरी, कन्दर्पा, प्रेममंजरी, कामलता, मधुबिन्दा॰	सेवासख्य
श्री सुदेवी	शुकपाठ तिलक आदि	कावेरी, मनोहरा, मंजुकेशी, केशिका, हीरा, चारुकुमारी, हीरकंठा, महाहीरा॰	सुसाहित्य
श्री चित्रा "	कचिचवलोकन	रसालिका, तिलकिनी, सुगंधिका, सौरसेनी, नागरी, रामिलिका, नागवेनिका, अकना॰	सेवासख्य

अथ अन्य मत मों अष्ट सखीन को वर्णन ।

नाम	रंग	वस्त्र	माता	पिता	पति	चातुर्य	सेवा
ललिता सुन्दरी	गोरोचन	मयूरपिच्छ	शारदा	विशोक	वांलीक	मध्या वाक्य	तांबूल
विशाखा	विजली	चांदतारा	सुदक्षिणा	पावन	वल्लभ	मामादि भेदकाव्य	वस्त्र.
चम्पकलता	चंपा	नीला	वाटिका	राम	चंडाक्ष	दौत्य	पाक वस्तु संवारना
चित्रा	कुंकुम	काला	चर्चिका	चतुर	पीठर	आगम ज्योतिष पशुविद्या जल पान	जल केश
तुंगविद्या	केसर	पीले	मेधा	पौष्कर	वालिस	संगीत साहित्य मिलन	वीणा
इन्दुलेखा	हरिताल	लाल	सागर	वेला	दुर्वल	कोक वशीकरण दैन्य	चन्दन
रंगदेवी	पद्म किंजल्क	सफेद	करुणा	रंगसार	चक्रेशण	शृंगार	
सहचरी	गौर	नील	सुदेवी	देवबन्धु	कोपन खुलन्दु	अंजन अभ्यंग चरण सेवा	पीकदान

अथ अन्य मत सों सखीन को वर्णन चक्र ।

नाम	रंग	कौन की सखी	वस्त्र	वाद्य	सेवा	दल	स्थान
श्रीललिता	चन्द्रमा	श्रीस्वामिनीजीको	पीला	...	...	पीला	पश्चिम
चंद्रावती (लो)	सोना	श्रीललिताजीको	श्वेत	...	...	सफेद	उसके वाएं
श्यामला	सोना	श्रीस्वामिनीजीको	काला	मृदंग	...	काला	वायव्य
चित्रलेखा	तपाया सोना	श्रीठाकुरजीको	श्वेत	डफ	गाना	सफेद	उसके वाएं
श्रीमती	सोना	श्रीठाकुरजीको	लाल	...	दास	लाल	उत्तर
चन्द्रा		श्रीठाकुरजीको	लीला	रवाव	गाना	नील	उसके वाएं
हरिप्रिया	सोना	...	पीला	उपंग	...	लाल	ईशान
मदनसुन्दरी	चन्द्र	...	सपेद	रवाव	गाना	धूम्र	उसके वाएं
विशाखा	गौर	श्रीस्वामिनीजीको	पीत	वंशी	...	पीत	पूर्व
श्रीप्रिया	सोना	विशाखाजीकी	सपेद	वंशी	...	शुक्ल	उसकेवाएं
सैव्या	सोना	श्रीकृष्णकी	काला	मंजु मुखयंत्र	...	श्याम	अग्निकोण
मधुमती	सोना	युगल स्वरूप को	सपेद	...	गाना	शुक्ल	उसकेवाएं

अन्य मत सों अष्ट सखीन को चक्र ।

नाम	रंग	किसको सखी	वस्त्र	वाद्य	सेवा	दल	स्थान
पद्मा	फूल	...	लाल	सारंगी	...	लाल	दक्षिण
इन्दुलेखा वा शशिरेखा	चन्द्रमा	श्रीठाकुरजीको	पट्ट	मृदंग	गाना	नील	उस के बाए
भद्रा	सोना	श्रीयुगल	लाल	स्वरमंडल	...	लाल	नेऋत
रसप्रिया	सोना	युगल	लाल	...	...	शुक्ल	उस के बाए
वृन्दा (वन-प्रिया)	हरदी	...	सफेद साटन	तंबूरा	...	...	...
श्रीचन्द्रावली	लालसोना	...	चुनरी	...	जाहीके फूलकी माला	...	...

श्री रामचन्द्र के दक्षिण चरण के २४ चिन्ह क्रम सों ।

एड़ी में स्वस्ति चिन्ह । १ पीतरंग
मध्य तरवा में ऊर्द्ध रेखा । २ लाल रंग ।
ऊर्द्ध रेखा के वायें तरफ अष्टकोण ३ श्वेत अरुण ।
श्री । ४ । वालार्क सन्निभ ।
हल । ५ } श्वेत धूम्र ।
मुसल । ६ }
सर्प । ७ । सित ।
वाण ८ श्वेत । पीत अरुण हरित ।
आकाश । ९ । नील ।
अष्टदल कमल । १० । अरुण
स्यन्दन । ११ । विचित्र वर्ण जिसमें चारि घोड़े श्वेत ।
वज्र । १२ । बिजुरी वर्न ।

अंगूठे में जव । १३ । श्वेत रक्त ।
ऊर्द्ध रेखा के दक्षिण ओर कल्प वृक्ष । १४ । हरिद्वर्ण ।
अंकुश । १५ । श्याम ।
ध्वज । १६ । लोहित चित्रित ।
मुकुट । १७ । तप्त कांचन वर्न ।
चक्र । १८ ।
सिंहासन । १९ । रत्नमय ।
कामदण्ड । २० । कंसावत ।
चामर । २१ । अत्यंत धवल ।
छत्र । २२ । सितलाल ।
नृ । २३ ।
जपमाला (२४ चिन्ह) श्वेत पीत अरुण हरित । अरु वज्रवत ।

श्रीराघव के वायें पदाब्ज के २४ चिन्ह क्रम सों ।

पद मध्य में दक्षिण पद लों ऊर्द्ध रेख की जगह पै सरयू । १ । सित ।
एंड़ी में गो पद । २ । सितरक्त ।
सरजू के दक्षिण ओर भूमि । ३ । पीतरक्त सित ।
कुम्भ । ४ । स्वर्ण वर्ण कुछ श्वेत ।
पताका । ५ । चित्रवर्ण ।
जम्बू फल । ६ । श्याम ।
अर्द्ध चन्द्र । ७ । धवल ।
दर । ८ । सितकाकुलाभ ।

षट्कोण । ९ । महाश्वेत ।
त्रिकोण । १० । अरुण ।
गदा । ११ । श्यामल ।
जीवात्मा । १२ । दीप्तिरूप ।
अंगुष्ठ में विन्दु । १३ । पीत ।
गोपद की बांई ओर । शक्ती । १४ । रक्त श्याम सित ।
सुधाकुण्ड । १५ । सितरक्त ।
त्रिवली । १६ । त्रिवेणीवत ।
मकरी । १७ । रुपेवत ।

पूर्ण सिंधु । १८ । धवल ।
वीणा । १९ । पीतरक्त सित ।
वंसी । २० । चित्र विचित्र ।
धनु । २१ । हरित पीत अरुन ।
चोण । २२ । चित्र विचित्र ।
मराल । २३ । चरण चंचुलाल । सित ।
चन्द्रिका । २४ । सित पीत अरुण विचित्र रंग ।

जो चिन्ह श्री रामजी के दक्षिण पद में हैं सोई चिन्ह श्रीजानकी जी के बाम पद में हैं और जो श्रीराघव के बाम पद में सोई श्री लाडिलीजी के दच्छिन पद में।

उपसंहार ।

विदित हो कि सर्व्वसदार्य्यशिरोधार्य्यचरण आचार्य्यवर्य्य श्री महाप्रभू जी ने युगल स्वरूप की सेवा और भावना ही अपने सम्प्रदाय में मुख्य मानी है तथापि प्रचार बालसेवा और बाल भाव का किया है इस का कारण यही है कि संसार के स्वभाव दुष्ट जीव इस उत्तम रस के अधिकारी नहीं हैं उन की प्रवृत्ति सहज ही नीच है और चित सांसारिक विषयों से कलुषित है तो वे लोग यदि यह रहस्य कहैं सुनैं तो उलटे अपराधी हों । यह तो जल कमल की भांति जो भक्त संसार में रहते हैं उन्ही के कहने सुनने के योग्य है क्योंकि सिंगार भावना सिंहनी का दूध है जो या तो सिंह के बच्चे के मुंह में ठहरे या स्वर्ण के पात्र में और पात्र में रक्खो तो फट जाय वैसे ही यह उत्तम रस पात्र बिना नहीं ठहरता और बाल भाव तो गऊ का दूध है अनेक प्रकार के सत् पात्र में ठहर सकता है यद्यपि नास्तिक इत्यादि खटाई और वहिर्मुखं से पीतल के पात्र में इस को भी विकार होता है तथापि सर्व्व साधारण में इस के कहने सुनने वालों को कहना सुनना तो मानो अपने माता पिता का गुप्त रहस्य उद्घाटन करना है इस के तो जो अनन्य अधिकारी हों उन्ही से कहना सुनना योग्य है । इस मेरे लिखने का तात्पर्य्य यह कि जिन के पास यह ग्रन्थ रहे वे इस को किसी साधारण स्थान में वा साधारण लोगों के हाथ में न फेंक दें वरञ्च इस को बहुत यत्न पर्वक रक्खें ।

श्री

तदीयसर्वस्व

अर्थात्

श्री नारद कृत भक्ति सूत्र का वृत्ति समेत वृहत् भाष्य ।

प्रेमिजनों के दासानुदास प्रेमपथ के भिक्षुक तदीयनामांकितअनन्यवीरवैष्णव

हरिश्चन्द्र

द्वारा

'केनापिदेवेन हृदिस्थितेन'

लिखित

" भक्त्यात्वनन्यया लभ्यो हरिरन्यत् विडम्बनम् "

पटना—"खड्गविलास" प्रेस—बांकीपुर ।

साहब प्रसाद सिंह ने मुद्रित किया ।

१८८९.

उपक्रम ।

हम आर्य्य लोगों में धर्म तत्व के मूल ग्रन्थों का भाषा में प्रचार नहीं॰ यही कारण है कि भिन्नता स्थान २ पर फैली हुई है॰ अनेक कोटि देवी देवताओं का माहात्म्य, छोटी छोटी बातों में ब्रह्महत्या का पाप,. और तुच्छ तुच्छ बातों में बड़े बड़े यज्ञों का पुण्य, अहं ब्रह्म का ज्ञान, और मूल धर्म छोड़ कर उपधर्मों में आग्रह ने भारत वर्ष से वास्तविक धर्मों का लोप कर दिया॰ जिस जगत् कर्त्ता ने हमलोगों को उत्पन्न किया, संसार के सुख दिए, बुरे भले का ज्ञान दिया, और अपना सत् मार्ग दिखलाया उस से यहाँ की प्रजा विमुख हो कर धर्मान्तर में फंस गई॰ यदि प्रथम कर्त्तव्य उस की भक्ति के अनन्तर कर्मानुष्ठान में प्रवृत्त होते तो कुछ बाधा नहीं थी॰ यह न होकर गौण कर्म तो मुख्य हो गए और मुख्य वस्तु गौण हो गई॰ इसी से सारा भारतवर्ष भगवद्विमुख हो कर छिन्न भिन्न हो गया जो कि इस की अवनति का मूल कारण हुआ॰ कभी भगवद्विमुख कोई देश या जाति उन्नत हो सकती है ? धर्म हमारा ऐसा निर्बल और पतला हो गया है कि केवल स्पर्श से वा एक चुल्लू पानी से मर जाता है॰ कच्चे गले सड़े सूत वा चिउंटी की दशा हमारे धर्म की हो गई है॰ हाय ! ! !

इसी धर्म पथ को समुन्नत करने को एक ईश्वरवादी अनेक आचार्यों ने परिष्कृत और सहज धर्म प्रचलित किए हैं और अनेक लोग इन मार्गों में दीक्षित हैं॰ किन्तु इन लोगों में भी बाह्यवेष बाह्याडम्बर आचार विचार वा परनिन्दादि आग्रह ऐसे समा गए हैं कि उन का धर्म किसी काम नहीं आता॰ ये तो ईश्वरवादी हिन्दूसमाज से सम्पूर्ण बहिष्कृत हो जायंगे या कर्ममार्ग से ऐसे दब जायंगे कि नाम मात्र के भक्त रहैंगे॰

इसी विषमता को दूर करने को इस ग्रन्थ का आविर्भाव है॰ इस में मुक्त कण्ठ से कहा गया है कि केवल प्रेम परमेश्वर का दिव्य मार्ग है॰ यद्यपि यह ग्रन्थ वैष्णवों की शैली पर लिखा गया है किन्तु परमेश्वर के भक्तमात्र के हेतु यह उद्योग है॰ क्रिस्तान आदि विदेशी धर्म प्रेमी जन समझें कि कृष्ण उन के निर्गुण परमेश्वर का नाम है, वैष्णवों को तो कुछ बात ही नहीं है, शैव कहें कि विष्णु शिव ही का नामान्तर है, ब्राह्म समझें कि हरि ब्रह्म ही को कहते हैं, उपासना और आर्य समाज इसे अपना ही तत्व मानें, सिक्ख

इस में गुरू का पथ देखें और ऐसे ही भक्ति मार्ग वाले मात्र सब लोग इसको अपनी निज सम्पत्ति समझें। इस से कोरे कर्म मार्गी वा बहु भक्त वा स्वयं ब्रह्म लोग यदि मुझ को गाली भी देंगे तो मैं अपने को कृतार्थ समझूंगा॰

लोगों को उचित है कि इस ग्रन्थ को देखें॰ निश्चय रक्खें कि परमेश्वर को पाने का पथ केवल प्रेम है॰ और बातें चाहे धर्म की हों या लोक की दोनों बेड़ी ही हैं॰ बिना शुद्ध प्रेम न लोक है न परलोक॰ जिस संसार में परमेश्वर ने उत्पन्न किया है जिस जाति वा कुटुम्ब से तुम्हारा सम्बन्ध है और जिस देश में तुम हो उस से सहज सरल प्रेम करो और अपने परम पिता परम गुरु परम पूज्य परमात्मा प्रियतम को केवल प्रेम से ढूंढ़ो बस और कोई साधन नहीं है॰

हरिश्चन्द्र।

समर्पण।

नाथ!

आज बहुत दिन पर कुछ कहने चले हैं० कुछ कहते कहां से वैसा चित्त रहता तब न कहते। क्या आप से कुछ छिपो है। भला आप से क्या आप तो ०००००० हैं आप के लोगोंही से न छिपैगी। बोल चाल ही मे मालूम पड़ैगी। प्यारे! ऐसा क्यौं? हम हजार बुरे बुरे बुरे लाख दफे बुरे पर आप तो भले हौ न? फिर क्यौं? क्या हमारी करनी पर गए? तब तो हो चुको। भला ध्यान तो कीजिए हम से वा किसी से भी आप से तुलना क्या? हाय! तुलना क्या कुछ बात ही नहीं। हरे! हरे! जो आप अपनी बड़ाई देखिए तो हम क्या बड़े २ क्या हैं। पर ऐसी तो नाथ ने आज तक कभी की नहीं यह नई क्यौं होती है। नाथ! अपनाए की लाज तो हम पामरों को होती है तो बड़ों को क्यौं न हो, और फिर जो जितना बड़ा वैसी ही उस की दयालुता भी बड़ी तो फिर आप को कृपा का क्या पूछना है। पर हाय क्या हमारे अपराध उस दया से भी बड़े निकले। प्यारे! क्या इसीं दशा में रहैं? नाथ! क्या वे दिन अब दुर्लभ ही जायंगे। हाय! उन पवित्र आंसुओं से क्या अब हृदय नहीं सिंचित होगा। क्या वे सर्व चिन्ता विस्मारक प्रियालाप अब कर्ण रन्ध्रों को फिर न पूर्ण करेंगे। क्या वे दिन अब इस जीवन में निस्सन्देह दुर्लभ हो गए। तो फिर ऐसे जीवन ही से क्या? इस जीवन की आशा ही क्यौं करते हैं। केवल जनम भर पाप कमाने और आप को और अपने को झूठ बदनाम करने को। धिक! ऐसे जीवन पर। हम तो इस की आशा इसी से करते थे कि दिन दिन हमारी चित्त वृत्ति उज्वल होगी और दिन दिन प्रेमानन्द बढ़ेगा इस हेतु नहीं कि प्रवाह रज्जु में हम दिन दिन और जकड़ते जायंगे और केवल जीवन भार ढो कर संसार में लिप्त हो कर अन्त में आप के कहला कर भी वैसे ही डूबैंगे जैसे तुम्हारे बिना संसार डूबता है। जीवन का परम फल तुम्हारा अमृत मय प्रेम है यदि वही नहीं तो फिर यह क्यौं? क्या संसार में कोई ऐसा है जिससे प्रेम करैं। जो फूल आज सुन्दर कोमल हैं और जो फल आज सुस्वादु हैं, पर कल न इन में, रंग है न रूप न स्वाद, सूखे गले मारे मारे फिरते हैं भला उन से अनुराग ही क्या? प्रेम को तो हम चिरस्थाई किया चाहैं यहां प्रेम पात्र ही स्थाई नहीं। तो चलो बस हो चुको फिर इन से प्रीति का फल ही क्या? फल शब्द से आप कोई बांछा मत समझिएगा। प्रेम का यह सहज स्वभाव है कि वह प्रत्युत्तर चाहता है सो यहां दुर्लभ हैं। हम ने माना कि ऐसे भी सत् लोग हैं जो प्रेम का प्रत्युत्तर दें वह भी तो परिणाम दुःख स्वरूप ही है। "संयोगाविप्रयोगान्ता:"

कहा ही है। तो जिस के परिणाम में दुःख है वह बस्तु किस काम की। फिर उस दुःख में जीवन की कैसी बुरी दशा होगी। तो ऐसे प्रेम ही से क्या और जीवन ही से क्या इसी से न कहा है "जैसे उड़ि जहाज को पच्छी फिर जहाज पर आवै।" और जाय कहां। तो देखो संसार से वह कितना उदासीन है जिस को तुम्हारे प्रेम का लेश भी है। तो नाथ! जो फिर उस उत्तम जीव को इसी संसार के पंक में फंसाओ तो कैसे बने। हम ने माना कि हमारी करनी वैसी नहीं। हाय! भला यह किस मुंह से और कौन कह सकता है कि हम इस के योग्य हैं पर अपनी ओर देखो। नाथ! अब नहीं सही जाती। कृत्रिम प्रेम परायण और स्वार्थ पर संसार से जी अब बहुत ही घबड़ाता है। सब तुम्हारे स्नेह के बाधक ही हैं साधक कोई नहीं, और जो स्वार्थ पर नहीं है वे बिचारे भी क्या हैं कि कुछ सन्तोष देंगे, हाय! क्या करें। हार कर के स्नेह कर के जैसे हो वैसे तुम्हारे ही शरण जाते हैं और वहां से भी दुरदुराए जायं तो फिर क्या करें। अन्त हो गई नाकों में दम आ गई अब नहीं सही जाती। इस चर्ब्बित चर्व्वण को कब तक चबायं। सच कहते हैं अब किसी की बात भी नहीं सुहाती। यद्यपि चित्त परबस हो कर दिन २ उलटा फंसता जाता है और संसार का और अपने जीवन का मोह बढ़ता ही जाता है पर साथ हो जी भी ऐसा खिंचता जाता है जिस का कुछ कहना नहीं। धन के विषय में भी वैसा ही कीजिए। सारे संसार को दिखाइए कि हमारे यों डंका दे कर इस संसार रूपी शत्रु दुर्ग से निकलते हैं और मेरा भी मान रख लीजिए। हे नित्यनूतन घन नित्य नव प्रेम बरसाइए।

हाय! आज इसने आप को कितना कष्ट दिया और कितना बके। जमा भी तो कितने दिन से हो रहा था। और फिर बकें किस के आगे। बकने ही से तो कुछ सन्तोष होता है। जाने दीजिए। देखिये यह आप के लोगों का सर्व्वस्व है इसे अंगीकार कीजिए। भला कहां परम पवित्र अमृतमय प्रेम मार्ग कहां हमारी पामर बुद्धि। पर क्या हुआ। ऐसी उत्तम बातें जो मुंह से निकली हैं यह हमारी करतूत नहीं है तुम ने कही है। शिव वा नारद कौन हैं? आप ही। यद्यपि जब बुझ जाय तब काठ का काठ है पर जब तक अग्नि के संग से दहकता रहै काठ भी आग ही कहलाता है। शराबी की कोई जाति नहीं होती है। थोड़ी शराब पीयै तो शराबी बहुत पीयै तो शराबी। इसी नाते इतना बके हैं। इसे सुन कर प्रसन्न होना सुधारना इस का प्रचार करना यह सब तुम्हारा और तुम्हारे जनों का काम है हमारी तो कर्त्तव्यता इतनी ही थी कि निवेदन कर दिया।

चैत्र शुद्ध १ सं० १९३३। — आप का हरिश्चन्द्र।

श्री तदीयसर्व्वस्व।

भक्तिसूत्र का हिन्दीभाष्य।

दोहा।

भरित नेह नव नीर नित, बरसत सरस अथोर।
जयति अपूरव घन कोऊ, लखि नाचत मन मोर॥
करि करुना लखि जग विमुख, कियो प्रेम पथ चारु।
जय वल्लभ व्रज गोपिका, प्रीति कृष्ण अवतारु॥
जिहि लहि कछु लहन की, आस न चित मैं होय।
जयति जगत पावन करन, कृष्ण वरन यह दोय॥

१ ॐ अथातो भक्तिं व्याख्यास्यामः।

अब हम यहां से भक्ति की व्याख्या करते हैं। १।

अथ शब्द मङ्गल वाचक है। अतः शब्द से नारद जी अपने कहे हुए पूर्वोक्त वाक्यों को व्यावर्तन करते है।' और इन सूत्रों के द्वारा प्रतिज्ञा पूर्वक भक्ति शास्त्र का व्याख्यान आरंभ करते हैं।

२ ॐ सा कस्मै परमप्रेमरूपा।

वह ईश्वर में परम प्रेम रूपा है। २।

सा नाम पूर्वोक्त भक्ति कस्मैं नाम सदा प्रश्नार्ह ईश्वर में परम प्रेम रूपा अर्थात् साधनान्तर शून्या है कि शब्द से ईश्वर का ही बोध होता है क्योकि ईश्वर में सदा प्रश्न बनाही रहता है। " नैकः सर्वः सवः कः किं " विष्णु सहस्र नाम में भगवान के नाम है क्योकि वेद ईश्वर के विषय में ' नेतिनेति ' बोलते है।

३ ॐ अमृत रूपा च।

और अमृत स्वरूपा है। ३।

अमृत नाम मधुर है और मोक्ष स्वरूप है क्योंकि जो भक्ति रत हैं उनको मोक्षांतर की अपेक्षा नहीं होती ।

४ ॐ यल्लब्ध्वा पुमान् सिद्धो भवत्यमृती-भवति तृप्तोभवति ।

जिसको पाकर मनुष्य सिद्ध होता है और अमृत होता है और तृप्त होता है । ४ ।

यत् अर्थात् भक्ति स्वरूप अमृत को पाकर सिद्ध नाम साधनांतर निरपेक्ष और अमृती भवति नाम स्वयमानन्द रूप होता है मृत्यु से निडर हो जाता है तृप्त अर्थात् एतत् व्यतिरिक्त इस या परलोकगत सुखविषयक निरीच्छ होता है ।

५ ॐ यत्प्राप्य न किंचिद्वांछति न शोचाति न द्वेष्टि न रमते नोत्साहीभवति ।

जिसको पाकर (मनुष्य) फिर न किसी को चाहता वा (किसी हेतु) शोक करता, वा (किसी का) द्वेष करता वा (किसी में) रमता वा (किसी विषय का) उत्साह करता है ।५।*

क्योंकि पूर्वोक्त बातों का मुख्य कारण मन है परन्तु जब वह इसने भक्ति से किसी (परमेश्वर) को अर्पण किया है तो उसके अभाव से यें बातें आप न होंगी क्योंकि कार्य कारण के बिना नहीं हो सकता ।

६ ॐ यज्ज्ञानान्मत्तोभवति स्तब्धोभवत्या-त्मारामोभवति ।

जिसको जानकर पागल हो जाता है स्तब्ध हो जाता है और आत्माराम हो जाता है । ६ ।

---

* कोष्ट में दिये हुये शब्द पूर्व मुद्रित मूल वृत्ति में नहीं है ।

भक्ति का स्वरूप कह कर सूत्र में फल कहते हैं कि उस भक्ति का स्वरूप जान करके मनुष्य मत्त अर्थात् पागल होजाता है ' जड़ोन्मत्तपिशाचवत् ' निशम्य कर्माणि गुणानतुल्यान् वीर्याणि लीलातनुभिः कृतानि । यदातिहर्षोत्पुलकाश्रु गद्गदं प्रोत्कण्ठ उद्गायति रौति नृत्यति । यदा ग्रहग्रस्तइव क्वचिद्धसत्या क्रंदते ध्यायति वंदते जनं ॥ मुहुःश्वसन् वक्ति हरे जगत्पते नारायणेत्यात्मगति गतत्रपः । तदा पुमान् मुक्तसमस्तबंधनस्तद्भावभावानुकृताशयाकृतिः ॥ निदग्धबीजानुशयोमहीयसा भक्तिप्रयोगेण समेत्यधोक्षजम् ॥ श्रीमद्भागवत में परम भागवत श्री प्रह्लाद जी ने दैत्य पुत्रों को उपदेश करती समय भक्तों के वर्णन में ये तीन श्लोक कहे हैं। (यहां यह भी बात समझनी चाहिए कि ये असुर बालक उपदेशपात्र नहीं थे तथापि भक्त जनों के चित्त में जो प्रेम का उमङ्ग आता है तो पात्रापात्र का विचार नहीं करते) भक्त जन भगवान के अनेक लीलार्थ धारण किए हुए स्वरूपों के कर्म और अतुल्य गुण और वीर्यों को सुन कर जब अत्यन्त हर्ष से रोमांचित अश्रु से गद्गद कण्ठ हो जाते हैं तब बड़े ऊंचेस्वर से गाते रोते नाचते हैं कभी भूत लगे हुए मनुष्यों के समान हंसते हैं और चिल्लाते हैं कभी बारंबार लंबी सांस लेते हैं कभी तादात्म्य गति से ' हेहरे, नारायण, जगत्पते, ' आदि नाम कीर्तन लज्जा छोड़ के करते हैं। जब ऐसी गति हो जाती है तब मनुष्य सब बन्धनों से छुट कर भगवद्भाव ही के भाव, वही अनुकरण. वही चेष्टा, वही आशय, वैसी ही आकृत्यादि करने लगता है और अपने प्रेम से सुकर्म दुष्कर्मों के बीजों को जला कर अपने परम भक्ति से भगवान को प्राप्त होता है ।

तो परम भक्ति प्राप्त होने का यही लक्षण है कि मनुष्य पागल हो जाता है और स्तब्ध हो जाता है अर्थात् उसको लोक और वेदभूत प्रेत देवता इत्यादि किसी को मानना वा किसी को नमस्कार वा किसी का किसी रीति आदर करने की आवश्यकता नहीं रहती, और आत्माराम हो जाता है अथात् संसार के विषयों में प्रीति छोड़ आत्माराम अर्थात् ईश्वर ही में सदा रमण करता है।

पहिला अनुवाक समाप्त हुआ।

७ ॐ सा न कामयमाना निरोधरूपात् ।

वह (भक्ति) कामना के अर्थ नहीं होती क्योंकि (यह) निरोध रूपा है ७ ।

जो कामना के लिए की जाती है वह भक्ति नहीं वह लोक व्यापार है, जब श्री नृसिंह जीने श्रीप्रह्लाद जी को वर मांगने के हेतु कहा तब उन्हों ने भी यह उत्तर दिया कि हम ने आपसे व्यापार नहीं किया भक्ति किया। जो सेवक होकर सेवा के वदले में सेव्य से कुछ चाहे वह सेवक नहीं किन्तु व्यापारकारी वनिया है, और यदि आप वर देना चाहें तो यही दीजिए कि 'हमारे मनमें किसी वर वा राज्य भोगादि वांछा की उत्पत्ति ही न हो.' भगवान् ने श्री मुख से भी यही आज्ञा किया है " नमय्यावेशितधियां कामः कामाय कल्प्यते । भर्जिता क्वथिता धाना भूयो वीजाय नेष्यते " ॥ जिन लोगों का चित्त हमारे में शुद्ध रीति प्रतिष्ठित है उनके काम कामना के अर्थ नहीं होते क्योंकि भूने और कूटे वा पकाये धान फिर नहीं उगते ।

इस सूत्र से विषयजन्य प्रेम का भी निवारण किया, इससे लोग संसार के विषयियों के इन्द्रियजन्य सुख वा और किसी इच्छा से की हुई प्रीति को हम किसी पर प्रेम करते हैं यह कह कर इस प्रेम शब्द को लज्जित न करें, क्योंकि प्रेम तो सर्वदा कामनाशून्य है ॥

कामना ही के निवृत्ति के अर्थ कहते हैं कि वह भक्ति निरोध स्वरूपा है तो जब चित्त निरुद्ध होगा तो उस में कोई कामना आपही न होगी ।

भक्तिमार्गीय परमाचार्य श्रीश्रीवल्लभाचार्य महा प्रभु ने अपने ग्रंथ निरोध-लक्षण में लिखा है, 'अहं निरुद्धो रोधेन निरोधपदवी गतः । निरुद्धानां तु रोधाय निरोधं वर्णयामि ते ॥ हरिणा ये विनिर्मुक्तास्ते मग्नाभवसागरे । ये निरुद्धास्तएवात्र मोदमायांत्यहर्निशं' ॥ आप आज्ञा करते है मैं रोध से निरुद्ध हं और निरोध की पदवी को प्राप्त होचुका हूं तथापि निरोधाधिकारियो के निरोध के अर्थ निरोध का वर्णन करता हूं, फिर आप आज्ञा करते हैं कि जिन को भगवान ने छोड़ दिया है वे संसार में डूबे हुए हैं और जिनको उस ने निरुद्ध किया है वही अहर्निश परमानन्द प्राप्त करते हैं, इस वाक्य से यह दिखाया कि निरुद्ध होना स्वसाध्य नही है जिनको वह [ईश्वर] चाहता है निरुद्ध करता है, नहीं तो उसे

छोड़ देता है। मनुष्य का बल केवल उस मार्ग पर प्रवृत्त होना है परन्तु इससे ऐसा न होना चाहिये कि जब अंगीकार करना वा न करना उसी के आधीन हैं तो हम क्यों प्रयत्न करें हमारे क्लेश करने पर भी वह अंगीकार करे वा न करे ऐसी शंका कदापि न करना। क्योंकि आचार्य आज्ञा करते हैं कि " क्लिश्यमानान् जनान् दृष्ट्वा कृपायुक्तोयदा भवेत्। तदा सर्वं सदानन्दं हृदिस्थं निर्गच्छते बहिः ॥ सर्वानन्दमयस्यापि कृपानन्दः सुदुर्लभः। हृद्गतः स्वगुणान् श्रुत्वा पूर्णः प्लावयते जनान् तस्मात्सर्वं परित्यज्य निरुद्धैः सर्वदा गुणाः। सदानन्दपरैर्गेयाः सच्चिदानन्दता ततः।" जनों को क्लेशित देख करके जब वह कृपायुक्त होता है तब सर्व सदानन्द रूप बाहर और अन्तः प्रगट कर देता है सर्वानन्दमय को भी उस के कृपाकाआनन्द दुर्लभ है परंतु हृदय मे बैठा हुआ जब अपनें गुणों को सुनता है तो अपने कृपानन्द से लोगों को भिजो देता है इस हेतु और सब बखेड़ा छोड़ कर सदानन्द पर निरुद्ध लोगों को उसका गुण सदा गाना चाहिए। उसमे सच्चिदानन्द का आप से आप प्रागट्य होना है। अर्थात् नियम है कि जो सब परित्याग करके उसका भजन करेंगे उसको वह निरुद्ध करके परमानन्द दान करेहीगा। यही उस की प्रतिज्ञा भी है " कौंतेय प्रतिजानीहि न मे भक्तः प्रणश्यति। तेषामहं समुद्धर्ता मृत्युसंसारसागरात् " ॥ इस से उस के वाक्य पर विश्वास रख कर निरुद्ध होना चाहिए।

निरोध छः प्रकार का है अर्थात् छः प्रकार की भावना ईश्वर मे करने से मनुष्य निरुद्ध होता है यथा प्रथम ' भीतिभावनिरोध ' अर्थात् संसार के दुःखों से भय भीत होकर ईश्वर मे अवलम्ब करना. दूसरा "स्वामिभावनिरोध" अर्थात् ईश्वर को संसार का स्वामी मान कर दास भाव से निरुद्ध होना. तीसरा " सर्वभावनिरोध " अर्थात् ईश्वर को ' वासुदेवःसर्वमिति समहात्मा सुदुर्लभः ' इस वाक्य के अनुसार छोटे बड़े चेतन सब को ईश्वर मान कर नमस्कार करना और सब स्थान पर उसी को देखना. वा स्वामी माता पिता मित्र सब भाव से ईश्वर ही का भजन. चौथा " सख्यभाव निरोध " अर्थात् ईश्वर ही को सखा मान कर निरुद्ध होना. पांचवां " वात्सल्यभावनिरोध " अर्थात् श्री नन्द यशोदादिक व्रज के बड़े छोटे गोप गोपियो के वा इनके सदृश और किसी के भाव समान ईश्वर मे पुत्रवत् स्नेह करना. छठा " कान्तभावनिरुद्ध होना " इस छः निरोधो मे पूर्व पूर्व से उत्तर उत्तर अधिक है।

८ ॐ निरोधस्तु लोकवेदव्यापारसंन्यासः ।

निरोध तो लोक, वेद व्यापार का त्याग करना* है ।८।

इस सूत्र में निरुद्ध होने का स्वरूप कहते हैं कि लोक और वेद के व्यापार का छोड़ देना ही निरोध है ।

९ ॐ तस्मै अनन्यता तद्विरोधिषूदासीनता च ।

और उसमें अनन्यता और उसके विरोधियों पर उदासीनता भी निरोध है । ९ । *

अर्थात् विना अनन्यता हुए निरोध की सिद्धि नहीं होती ।

१० ॐ अन्याश्रयाणां त्यागोऽनन्यता ।

अन्य आश्रयों का त्याग करना अनन्यता है । १० ।

लोक में यह प्रत्यक्ष है कि स्वामी को सेवक, मित्र को मित्र, पुरुष को स्त्री वही प्रिय होगी जो अनन्य हो 'अनन्याश्चिन्तयन्तो मामित्यादि' श्रीमद्वाक्य भी है, व्यास सूत्र में भी 'अनन्याधिपतिः' ईश्वर का गुण लिखा है ।

११ ॐ लोके वेदषु तदनुकूलाचरणं तद्विरोधिषूदासीनता ।

लोक और वेद में श्रीमद्भगवदनुकूलाचरण करना यही 'तद्विरोधिषूदासीनता' है । *

---

* ८ पूर्व मुद्रित सूत्र वृत्तिमें संन्यास शब्दका अर्थ 'सकोडलेना' किया है ।

* ९ पूर्व मुद्रित सूत्रवृत्ति में इसका अर्थ यों है—'और भगवान में अनन्यता और उस अनन्यता के विरोधी कर्मों मे उदासीनता है ।'—

* ११ पूर्व मुद्रित सूत्रवृत्ति में यह अर्थ है—'और लोक वा वेद में केवल उन्हीं (प्रेमपात्र) के अनुकूल आचरण करने से उस अनन्यता के विरोधी कर्मों में उदासीनता भाव से भाव होती है ।'

अर्थात् जब हमने उनके अनुकूल ही सब आचरण किए तो तद्विरोधियों में उदासीनता आपही आ गई क्योंकि तदीय होनेही से जिनके सब पुरुषार्थ पूर्ण होगए हैं और सब मङ्गलामङ्गल नष्ट होगए हैं उनको कार्यान्तर करने की आवश्यकता ही नहीं तो उनके वैदिक वा लौकिक कार्य आपही निवृत्त होगए ।११।

१२ ॐ भवतु निश्चयदार्ढ्यादूर्ध्वं शास्त्ररक्षणं ।

निश्चय के दृढ़ होने के पहिले शास्त्र रक्षण * होय ।१२।

क्योंकि श्रीमुख से आप ने आज्ञा किया है " त्रैगुण्यविषयावेदा निस्त्रैगुण्यो भवार्जुन । निर्द्वन्द्वो नित्य सत्वस्थो निर्योगक्षेम आत्मवान् ॥ यावानर्थ उदपाने सर्व्वतः संप्लुतोदके । तावान् सर्व्वेषु वेदेषु ब्राह्मणस्य विजानतः ॥ कर्म्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन । माकर्मफलहेतुर्भूर्मातेसंगोस्त्वकर्मणि ॥" हे अर्जुन वेद त्रिगुण विषय हैं तू तो तीनों गुणों की प्रवृत्ति से अलग होकर निर्द्वन्द्व और अपने स्वरूप में स्थित हो और अपने योग क्षेम की चिन्ता मत कर । परन्तु जब तक तेरे हृदय में अर्थों की तरंग उठती है तब तक तेरा सब वेदों में ज्ञाता ब्राह्मण के (कहे) अनुसार कर्म में अधिकार है वहां भी कर्म के फल मे तेरा अधिकार नही इस्मे न तो तू फलों की इच्छा कर और न अकर्म्मी हो । तो जब तक कामना की तरंग चित्त में उठती हैं और जब तक अनन्या भक्ति दृढ़ नहीं हुई है तब तक वेद मानौ फिर छोड़ दे ।

१३ ॐ अन्यथा पातित्याशंकया ।

अन्यथा पतित होने की शंका है । १३ ।

अर्थात् जो सिद्ध होने के पहिले कर्मों को छोड़ दे और न यह सिद्ध हो न वह तो व्यर्थ पतित हो जाता है परंतु भगवत्कर्म करता हुआ अन्य कर्मों से च्युत जो सिद्ध न होगा तौ भी उस जीव का नाश नही हैं और जीव का कल्याण है. जड़भरतजी का उदाहरण इस में प्रमाण है. क्यौकि उन्हों ने अपने मुख से कहा है. " अहं पुरा भरतोनाम राजा विमुक्तदृष्टश्रुतसंगबंधः । आराधनं भगवत ईहमानो मृगोभवं मृगसंगाद्धतार्थः ॥ सा मां स्मृतिर्मृगदेहेपि वीरकृष्णार्चनप्रभवा नो जहाति । अतो ह्यहं जनसंगादसंगोविशंकमानो विवृतश्चरामि " श्रीमुख से भी

* १२ अर्थात् शास्त्र के कहे हुए कर्मों का अनुष्ठान ।

आप ने आज्ञा किया है " पार्थ नैवेह नामुत्र विनाशस्तस्यविद्यते । नहि कल्याण-कृत् कश्चिद्दुर्गतिं तात गच्छति " इत्यादि ।

१४ ॐ लोकोपि तावदेव किंतु भोजनादि व्यापारस्त्वाशरीरधारणावधि ।

लोक (लोकव्यवहार) भी तभी (अर्थात् निश्चय होने के पूर्व) तक है किन्तु भोजनादि व्यापार तो जब तक शरीर है तब तक है । १४ । *

इस में कितने लोग ऐसी शंका करते हैं, वरञ्च हंसते हैं कि जब खाना पीना आदि व्यवहार छूटना ही नहीं तो कर्म छोड़ देना यह अयुक्त है । परन्तु इसी शंका के निवारणार्थ यह सूत्र है, भोजनादि व्यापार शरीर रक्षार्थ हैं और जब तक शरीर है तब तक अवश्य कर्तव्य है । इनको जो छोड़ना हो तो विष खाके एक साथही न मर जाना । हां तदीयों को उन भोजनादि व्यापार की चिन्ता करनी अवश्यही नहीं चाहिए और जो कर्मोंका कहो तो कर्मों का त्याग अनन्यता की पुष्टि के हेतु है, क्योंकि विना निःसाधन हुए मनुष्य अनन्य नहीं होता । इस से यह सिद्ध हुआ कि जब तक निश्चय न हो तब तक लोक और वेद दोनो मानना परन्तु जब निश्चय दृढ़ हो जाय और कामनाओं की निवृत्ति हो जाय तब लोक और वेद दोनों छोड़ कर केवल "कृष्णएव गतिर्मम" यह उच्चारण करना । श्री विष्णुस्वामी मत के बीजधारक श्री बिल्व मंगलाचार्य ने भी यही कहा है ।

"संध्यावंदन भद्रमस्तु भवते भोस्नान तुभ्यं नमः । भोदेवाः पितरश्च तर्पण-विधौ नाहं क्षमः क्षम्यतां ॥ यत्र क्वापि निषद्य यादवकुलोत्तंसस्य कंसद्विषः । स्मारंस्मारमघं हरामि तदलं मन्ये किमन्येन मे " ॥

द्वितीय अनुवाक समाप्त हुआ ।

* १४ कोष्ठ में दिया हुआ विशेष सूत्रवृत्ति मे है ।

१५ ॐ तल्लक्षणानि वाच्यन्ते नानामतभेदात् ।

उस (भक्ति) के लक्षण विभिन्न मत भेद से वर्णन किए जाते हैं ॥ १५ ॥

इस सूत्र में एक शंका है कि सूत्र का लक्षण 'स्वल्पाक्षरमसंदिग्धम्' ऐसा है । सूत्रों में कोई बात व्यर्थ न होनी चाहिए यहां लक्षण तो आपही कहेंगे तो इस सूत्र की क्या आवश्यकता थी। ऐसा नही यह सूत्र इस अर्थ का प्रतिपादक नहीं है कि हम आगे उस के लक्षण कहेंगे वरन ऐसी प्रतिज्ञा है कि संसार में इस प्रेम को लोग अनेक मत से मानते हैं परंतु वास्तव मे वह प्रेम नहीं है, प्रेम वही है जो शास्त्र में कहा जायगा, जैसा स्त्री पुरुष का कामनार्थ प्रेम वा अन्य किसी प्रकार की त्रिगुणात्मिका देव भक्ति नहीं है । यद्यपि संसार में यह प्रेम कही जाती है और उनके अनेक प्रकार लोग लक्षण कहते है यही बात अग्रिम (इतऊर्ध्व) सूत्रों सिद्ध करेंगे ।

१६ ॐ पूजादिष्वनुरागइति पाराशर्य्यः ।

भगवत् पूजादिक में अनुराग रूपा भक्ति यह (पराशर्य) श्रीव्यासदेव का मत है ॥ १६ ॥ *

क्योंकि अनेक पुराणो में तथा जैमिनिसूत्र के भाष्य में बहुत कर्म वितानं की प्रशंसा की है और पूजनादि केवल प्रेम के साधन स्वरूप हैं फल रूप नहीं श्री महा प्रभु जी ने भी सेवा निर्णय में आज्ञा किया है ' कृष्णसेवा सदा कार्या मानसी सा परा मता' इत्यादि जीवों के आसुरावेश निवृत्यर्थ और मानसी सेवा सिद्ध्यर्थ वाह्य सेवा (पूजादि) हैं परंतु जब परम प्रेम होता है तब मानसी सेवा भी छूट जाती है ।

१७ ॐ कथादिष्विति गर्ग्गः ।

कथादि में अनुराग गर्गाचार्य का मत है । १७ ।

अर्थात् भगवत्कथा श्रवण को मुख्य मान कर कथा मे अनुराग करना यह नारद जी का मत नहीं है प्रेम की उत्कण्ठा से जो भगवत्कथा मे अनुराग हो वह ठीक है ।

१८ ॐ आत्मरत्यविरोधेनेति शाण्डिल्यः ।

आत्मरति के अविरोध से अनुराग शांडिल्य का मत है। १८ ।

शांडिल्य भक्तिसूत्र के तृतीयान्हिक के तृतीय सूत्र में मत दिखाते हैं ' तामैश्वर्यपदां काश्यपः परत्वात्' 'आत्मैकपरां बादरायणः' 'उभयपरां शांडिल्यः शब्दोपपत्तिभ्यां' । काश्यप का द्वैत और बादरायण का अद्वैत दिखाकर आप द्वैताद्वैत अवलम्बन करते हैं । परन्तु द्वैत वा अद्वैत या अद्वैत वा द्वैताद्वैत मत का अवलम्बन कर के भक्ति को अपने पूर्व मत के आग्रह से अपनी दीक्षा वा सम्प्रदाय के अनुसार बलात्कार से (भक्ति) चलाना नारद का मत नहीं। जब मत मतांतर के वाद में बुद्धि अभिनिविष्ट हो जायगी तो तीव्र प्रेमलक्षणा भक्ति में अन्यमनस्क होने से भेद पड़ जायगा इससे जिस भाव से निरोध हुआ हो उसी भाव से प्रेम में प्रवृत्त होनाही नारद का मत है । यदि हमारा यह भाव है कि ईश्वर एक हैं आनंदमय है हम उसके दासानुदास हैं हम से उससे कोई संबंध नहीं तो उसी भाव से भक्ति करनी. और जो सर्व भाव हो तो सर्व भाव से भक्ति करनी. द्वैताद्वैत भाव पर चित्त आरूढ़ हो तो उसी भाव से उपासना करनी अर्थात् जीव ईश्वर के भेदाभेद के झगड़े में बुद्धि फसा कर प्रेम में बाधा नहीं डालनी । वही बड़ी बात अगले सूत्र से सिद्ध करते हैं ।

१९ ॐ नारदस्तुतदर्पिताखिलाचारता तद्विस्मरणे परमव्याकुलतेति ।

नारद जी तो सर्व कर्म श्री हरि में अर्पण करना और श्री हरि की विस्मृति होने में परम व्याकुल होना यही भक्ति का लक्षण कहते हैं। १९ । *

* ' परन्तु नारद तो भगवान में सब आचारों का अर्पण करदेना और भगवद्वियोग वा पूर्व्व संयोग वा लीला के चण मात्र भी भूलने में परम व्याकुल होने को भक्ति कहते हैं ॥ १९ ॥ ' यह मूल हरिश्चन्द्र में अर्थ है ।

कर्म दो प्रकार के हैं, लौकिक, और पारलौकिक प्रेमियों के दोनों कर्म यहां लिखते हैं, पारलौकिक में भक्तोंको एतावन्मात्र कर्तव्य हैं कि अपने सब आचरणों को भगवान् में अर्पण करना. और लौकिक में इतना कर्तव्य है कि जब भगवद्वियोगजनित परमानन्द का हृदय से तनिक भी विस्मरण हो तब परम व्याकुलताहोनी. तो अलौकिक कर्म तो तत्समर्पण से निवृत्त हुए लौकिक में जब व्याकुलता का उदय होगा तो आपही सब काम छुट जांयगें इस से लौकिक और पारलौकिक-दोनो कर्मों की प्रवृत्ति से अलग होकर अनवच्छिन्न तैजसधारवत् सर्वक्षण भगवद्वृत्ति में मग्न रहना, सर्वदा लीला का अनुभव करना, सर्वदा वियोग का अनुभव करना. किसी काम में लगे हों परन्तु चित्त उधरही रखना, जो वह ध्यान तनिक भी भूले तो एक संग व्याकुल होजाना यही भक्ति का लक्षण है।

२० ॐ अस्त्येवमेवं।

ठीक ऐसाही है ॥ २० ॥ *

पूर्व कथित भक्ति लक्षण को इस सूत्र से अन्यस्थान में स्वकथित वा पर कथित अनेक विधियों के निरास पूर्वक मुक्त कण्ठ से प्रतिज्ञा स्वरूप स्थापन करते हैं। लोक में भी चाल है कि जो बात दो वेर कहते हैं उस पर अपनी पूर्ण दृढ़ता दिखाते हैं इस भाव से यहां भी यह सूत्र कहा है अथात् अब इसमें किसी शंका का अवकाश नहीं।

२१ ॐ यथाव्रजगोपिकानां।

जैसा व्रज की गोपियों का (प्रेम) है ॥ २१ ॥ *

लक्षण कहके उदाहरण में सब प्रेमियों की शिरोमणि स्वरूप श्री गोपीजन का नाम लेते है अथात् प्रेम का उदाहरण जैसा श्री गोपीजन ने दिखाया वैसा और कौन दिखावेगा। हई है लोक वेदकी कठिनलोह शृङ्खला कच्चे सूतसी और कौन तोड़ सकता है. जिन के भगवा भी सर्वदा ऋणी हैं उनकी महिमा कौन कह सकता है. श्रीमुखसे कहा है 'नपारयेऽहंनिरवद्य संयुजां स्वसाधुकृत्यं विबुधायुषा-

---

* २० है भी ऐसाही ॥

* २१ जैसा व्रज के श्रीगोपीजनों को है ॥

पि वः । यामाभजन्दुर्जरगेहशृङ्खलां संवृश्च्यतद्वः प्रतियातु साधुना"। भगवान् श्रीगोपी जन से गले में पी ांबर डाल कर और हाथ जोड़ कर निवेदन करते हैं हे श्री व्रजदेवियो मैं जो देवताओं की आयुष्य धारण करूं और उस अनेक कल्प की आयुष से आप लोगों में से एक का भी प्रत्युपकार किया चाहूं तो न कर सकूं-गा । क्योंकि महादुर्जर घर की शृङ्खला आप लोगों के सिवाय और कौन तोड़ सकता है । अतएव मैं आप लोंगो का सदा ऋणी हूं । तो भगवान् का यह श्रीमुख वाक्य उन श्रीगोपीजनके प्रति जिन नें भगवान् के श्रीमुख कहे हुए रास प्रसंग के दश श्लोकात्मक मर्यादा स्थापन के वाक्यों को तृण सा भी नहीं माना कुछ आश्चर्य नहीं है । एक तो साधारण शास्त्र के वाक्य माननीय हैं दूसरे उस में भी भगवद्वाक्य तीसरे जब भगवान् प्रत्यक्ष अपने मुखारविन्द से आज्ञा करै तो ऐसा कौन होगा जो न मानेगा । पर ऐसें श्री गोपी जन हीं हैं कि प्रेम मार्ग के विरुद्ध भगवद्वाक्य को भी न माना ।

भगवान् ने जब परम भागवत उद्धवजी को भक्ति का उपदेश किया है वहां कहा है "रामेण सार्धं मथुरां प्रणीते श्वाफल्कि मानय्यनुरक्तचित्ताः । विगाढ-भावेन नमे वियोगतीव्राधयोन्यं ददृशुः सुखाय ॥ तास्ताः क्षपाः प्रेष्ठतमेन नीता म-यैव वृन्दावनगोचरेण । क्षणार्द्धवृत्ताः पुनरंग तासां हीना मया कल्पसमा वभूवुः ॥ तानाविदन्मय्यनुषंगबद्धधियः स्वमात्मानमदस्तथेदं । यथासमाधौमुनयोब्धितोये नच-प्रविष्टाइव नामरूपे ॥" ब्रह्मा ने भी कहा है "षष्टिवर्षसहस्राणि तपस्तप्तं मयापुरा । नन्दगोप व्रजस्त्रीणां पादरेणूपलब्धये ॥ अहोभाग्यमहो भाग्यं नन्दगोपव्रजौकसां । यन्मित्रं परमानन्दं पूर्णं ब्रह्मसनातनं " ।

जब उद्धव जी को भगवान् व्रज विदा करने लगे हैं वहां भी श्री गोपीजन का स्वरूप अपने श्री मुख से उद्धव जी को समझाया है. "तामन्मनस्का मत्प्राणाः मदर्थे त्यक्तदैहिकाः । ये त्यक्तलोकधर्मश्च मदर्थेतान्बिभर्म्यहं ॥ मयि ताः प्रेयसां प्रेष्ठे दूरस्थेगोकुलस्त्रियः स्मरंत्योंग विमुह्यन्ति विरहौत्कंठ्यविह्वलाः॥ प्रधारयंति कृच्छ्रे-ण प्रायःप्राणान् कथंचन । प्रत्यागमनसंदेशैर्वल्लव्योमे मदात्मिकाः ।" हे उद्धव उन गोपीजन ने मेरे में मन लगाया है मैंही उनका प्राण हूं मेरे हेतु उनने अपने सब देह के व्यवहार छोड़ दिये हैं और जो लोग मेरे अर्थ लोक और

को छोड़ देते हैं उनको मैं धारण करता हूं वे गोपियां उन के परम प्यारों से प्यारे मेरे दूर रहने से जब मेरा स्मरण करती हैं तो विरह की उत्कण्ठा से व्याकुल होकर अपने शरीर की सुध भी भूल जाती हैं, बड़ी कठिनता से और बड़े दुःख से मेरे विना किसी रीति प्राण धारण करती हैं, मेरे आने के संदेसे सुन कर जीती हैं. उन गोपियों का आत्मा मैं हूं और वे मेरी हैं. इत्यादि ॥ जिन श्री गोपीजन से परम भागवत उद्धव जी ने भी कहा "अहो यूयं स्म पूर्णार्थाभवत्योलोकपूजिताः ॥ वासुदेवे भगवति यासामर्त्यापितं मनः ॥ दानव्रततपोयोग जपस्वाध्यायसंयमैः श्रेयोभि र्विविधैश्चान्यैः कृष्णेभक्तिर्हिसाध्यते । भगवत्युत्तमश्लोके भवतीभिरनुत्तमाः । भक्तिःप्रवर्तितादिष्ट्यामुनीनामपिदुर्लभा । दिष्ट्या पुत्रान् पतीन्देहान् स्वजनान् भवनानि च । हित्वावृणयुर्यूयंयत् कृष्णाख्यंपरमंपदम् । सर्वात्मभावोधिकृतोभवतीनामधोक्षजे । विरहेण महाभागा महान्मेनुग्रहःकृतः ॥" इत्यादि, और जब श्री उद्धव जी ने अपने ज्ञान कथनानंतर श्रीगोपीजन का स्वरूप जाना है तब यही मांगा है कि हम श्री वृन्दावन में गुल्मलता हों, यथा " नायं श्रियोंगंजनितांतरतेः प्रसादः स्वर्योपितां नलिनगंधरुचां कुतोन्यः । रासोत्सवेऽस्यभुजदंडगृहीतकण्ठलब्धाशिषां य उदगात् व्रजवल्लवीनाम् ॥ आसामहोचरणरेणुजुषामहं स्यां वृन्दावने किमपिगुल्मलतौषधीनां । यादुस्त्यजं स्वजनमार्यपथं च हित्वा भेजुर्मुकुन्दपदवीं श्रुतिभिर्विमृग्यां ॥ यावै श्रियार्चितमजादिभि राप्तकामैर्योगेश्वरैरपि यदात्मनिरासगोष्ठ्यां ॥ कृष्णस्य तद्भगवश्चरणारविंदं न्यस्तं स्तनेषु विजहुः परिरभ्यं तापं ॥" श्रीमहाप्रभु जी ने संन्यास निर्णय ग्रंथमें आज्ञा किया है कि श्री गोपीजन प्रेम मार्ग की गुरू हैं, तथाच निरोध लक्षण ग्रन्थ में आप ने श्रीगोपीजन तथा व्रज के गोपों का विरहानुभव प्राप्त होने की उत्कण्ठा दिखायी है । "यच्च दुःखं यशोदाया नन्दादीनां च गोकुले । गोपिकानां तु यद्दुःखंतद्दुःखस्यान्मम क्वचित् ॥ गोकुले गोपिकानां च सर्वेषां व्रजवासिनां । यत्सुखंसमभूत्तंन्मे भगवान् किं विधास्यति ॥ उद्धवागमने जातउत्सवः सुमहान्यथा । बृन्दावने गोकुले वा तथा मे मनसि क्वचित् ॥" इत्यादि । और "गोपी प्रेमकी ध्वजा । जिन घनश्याम किए अपने वस उरधरि श्यामभुजा " " गोपीपदपंकजपरागकीजै महाराजरजकीजै आपुनेईगोकुला नगर को । " " येहरिरसओपीगोपीसबतियतेंन्यारी । कमलनयन गोविन्दचंदकी प्राणपियारी । निर्मत्सरजेसन्ततिनकीचूडामनिगोपी । जेऐसेमर्यादमेटिमोहनगुनगांवें । क्योंनहिपरमानन्द प्रेमभक्तिसुखपावें ।" " अहोविधिनातोपैअचरापसारिमांगो जनम

जनमदीजोयाहीब्रजबासिबो । अहीरकीजातिसमीपनंदघर घरीघरीघनश्यामहेरिहेरि हंसिबो ।।" " बलिगुरुतज्योकंतत्रजबनितन भईजगमंगलकारी ।।" इत्यादि श्रीसूरदासादिक परम अनुरागियों ने भाषा में भी श्रीगोपीजन का पवित्र यश वर्णन किया है । परमअंतरंग श्री नागरीदास जी भी गाते हैं ।। जयतिललितादिदेवीय-ब्रजश्रुतिऋचा कृष्णापियकेलिआभीरअंगी । युगुलरसमत्तआनन्दमयरूपनिधि सकल-सुखसमयकी छांहसंगी ।। गौरमुखहिमकिरणकीजुकिरणावली श्रवतमधुगानहियपि-यतरंगी । नागरीसकलसंकेतआकारिणी गनतगुनगननिमतहोतिपंगी ।।" भवतु ! इन श्रीगोपीजन के अगणनीय गुण कहां तक लिखें रसिक लोग स्वतः अनुभवकरेंगे।

२२ ॐ न तत्रापि माहात्म्यज्ञानविस्मृत्यपवादः ।

यहां भी माहात्म्य ज्ञान विस्मृति का अपवाद नहीं ।२२। *

जहां प्रेम है वहां माहात्म्य ज्ञान नहीं जहां माहात्म्य ज्ञान है वहां प्रेम नहीं परन्तु श्री गोपीजन में दोनों बातें थीं क्योंकि उनको भगवत् स्वरूप का ज्ञान नहीं था यह शंका नहीं हो सकती । " अस्त्वेवमेतदुपदेशपदेत्वयीशेप्रेष्ठोभवांस्त-नुभृतांकिलबंधुरात्मा " ।। ' व्यक्तंभवान्व्रजभयार्तिहरोभिजातो ' " नखलुगोपि-कानंदनोभवानखिलदेहिनामंतरात्मदृक् " ।। इत्यादि श्री गोपीजन के वाक्यों से उनको माहात्म्य ज्ञान सिद्ध है ।

२३ ॐ तद्विहीनं जाराणामिव ।

उसके बिना जारों के समान है । २३ । *

अर्थात् जहां माहात्म्य ज्ञान नहीं है वहां की प्रीति जारों की सी होती है । यद्यपि भगवान में ज्ञान वा अज्ञान से की हुई प्रीति निष्फल नहीं जाती तत्रापि यह लीला जहां पूर्ण प्रादुर्भाव है वहीं हैं परन्तु माहात्म्य ज्ञान पूर्वक भक्ति में यह विशेषता है कि एक प्रस्तर में भी ईश्वर बुद्ध्या सत्य प्रेम करने से फल दायिनी होती है ।

---

* २२ क्योंकि इनके ऐसे कठिन प्रेम में भी महात्म ज्ञान भूलजाने का अपवाद नहीं है ।

* २३ क्योंकि बिना माहात्म्य ज्ञानके प्रेम जारों कासा होता है ।

२४ ॐ नास्त्येवतस्मिन्तत्सुखसुखित्वं ।

उस में प्यारे के सुख से सुखी होना नहीं ही है ।२४। *

क्योंकि जारों की प्रीति अपनी कामना के अर्थ है तो उस मे तत्सुखसुखित्व कहां से आवेगा । इति ।

तोसरा अनुवाक समाप्त हुआ ।

२५ ॐ सा तु कर्मज्ञानयोगेभ्योऽप्यधिकतरा ।

वह (भक्ति) तो कर्म, ज्ञान और योग से भी अधिक है ।

"तपस्विभ्योधिकोयोगी ज्ञानिभ्योपि मतोधिकः कर्मिभ्यश्चाधिकोयोगी तस्माद्योगी भवार्जुन ॥ योगिनामपि सर्वेषां मद्गतेनांतरात्मना । श्रद्धावान् भजते यो मां समे युक्ततमोमतः" ॥ इन वाक्यों से भगवान श्री मुख से ज्ञान और कर्म की अपेक्षा योग को अधिक कह कर अपने भक्त को उससे भी अधिक कहते हैं और भक्ति ऐसी है कि भगवान मुक्ति देते हैं परन्तु भक्ति नहीं तथाहि "मुक्तिंददातिकर्हिचित्स्मनभक्ति योगं" । तथा "न साधयति मां योगो नो सांख्यधर्मउद्धव । न स्वाध्यायस्तपस्त्यागो यथाभक्तिर्ममोर्जिता ॥ भक्त्याहमेकयाग्राह्यःश्रद्धयात्मप्रियःसताम् । भक्तिःपुनातिमन्निष्टा श्वपाकानपि संभवात्" ॥ और भक्ति में यह विशेष है कि कर्म ज्ञान और योग इन में अधिकारी अनधिकारी का बड़ा विचार रहता है परन्तु इसमें किसी अधिकारी का काम नहीं श्री मुख वाक्य प्रमाण है "केवलेन हि भावेन गोप्योगावः खगामृगाः येऽन्ये मूढधियो नागाः सिद्धा मामीयुरंजसा ॥

२६ ॐ फलरूपत्वात् ।

क्योंकि * (ये सब साधन और वह) फल रूप है ।

* २४—क्योंकि उस में अपने प्रियतम के सुख से सुखी होना नहीं है ।

ज्ञानाभिमानी लोग कहते हैं कि भक्ति का फल ज्ञान है ऐसा नहीं* क्योंकि श्री भगवद्गीता में कहा है "अहंकारं बलं दर्पं कामं क्रोधं परिग्रहं । विमुच्य निर्ममः शान्तोब्रह्मभूयायकल्पते ॥ ब्रह्मभूतः प्रसन्नात्मा नशोचति नकांक्षति । समः सर्वेषु भूतेषु मद्भक्तिंलभतेपरां" ॥ हाँ है संसार के सर्व प्रकार के साधन का फल केवल भगवत् कृपा है और वह विना भक्ति सिद्ध न होगी तो दोनों प्रकार से भक्ति के विना अन्य साधन व्यर्थ ही हुए।

२७ ॐ ईश्वरस्याप्यभिमानद्वेषित्वाद्दैन्यप्रियत्वाच्च ॥

ईश्वर को भी अभिमान से द्वेषित्व है और दैन्य प्रियत्व है ॥ २७ ॥

अर्थात् कर्म ज्ञान और योग में उनके साधकों को अपने अपने साधन का अभिमान होता है तो उन से भगवान प्रसन्न नहीं रहता, हाँ है वह तो निराश्रयों का आश्रय, निःसाधनों का साधन, दीनों का बन्धु, पतितों का प्यारा, और सर्व प्रकार से हीनोंका सर्वस्व है । जिन लोगों को अपने साधनों का बल है उनको क्यों वह पूछेगा । सच है, जो स्त्री अपने सौन्दर्य्य के और जारों के बल से धन कमा लेती है उसे पति क्यौं पूछेगा, जो बालक आप धनोंपार्जन में समर्थ है उसे माता पिता क्यौं भोजन देंगे, जो सेवक अपने गुण से अपना योग क्षेम चला लेता है उसके स्वामी को क्या शोच है । विशेष कर ईश्वर से स्वामी को जिसको सर्वदा दीन ही प्यारा है, उसके सामने तो जब अनन्य होकर सब साधन छोड़कर उससे कहोगे "सर्वसाधनहीनस्य पराधीनस्य सर्वथा । पापापीनस्य दीनस्य कृष्णएवगतिर्मम" "हे नाथ ! मैं सब साधन से हीन हूं और संसार के पचड़े में मग्न हूं पापों से लदा हुआ हूं और परम दीन हूं अतएव हे नाथ ! हमारी तो तुमही गति हो क्यौंकि मैं और किसी के सामने मुंह दिखाने के योग्य नहीं रहा, वेद को कैसे मुंह दिखाऊं, उनके वाक्यानुसार सर्वकर्मानर्ह और पतित हो रहा हूं, लोक को भी नहीं मुंह दिखा सकता क्यौंकि

* 'भक्ति ज्ञान से क्यों बड़ी है' लेख देखो

लोक में सब से मुख्य रक्षणीय लज्जाका त्याग कर चुका हूं और लोक के साधनों से विहीन हूं, हमारा तौ और कोई शरण नहीं, महा निरवलम्ब हूं, कोई हाथ पकड़ने वाला नहीं, अथाह समुद्र में डूवता हूं, अव इस समय तुम्हारे सिवाय और कोई गति नहीं, मेरी तो तुमही गति हौ" इत्यादि। तभी वह तुम्हारी ओर ध्यान करेगा, ऐसा श्रीमुख से भी कहा है "सर्वधर्मान्परित्यज मामेकंशरणंव्रज । अहंत्वां-सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामिमाशुचः" ॥ सव धर्मों को छोड़ कर एक मेरी शरण आव मैं तुझे सव पातकों से दूर करूंगा शोच मत कर, और यह वाक्य भी कव कहा है जव सव गीता का उपदेश कर चुके हैं तव इसको ठीक देने के भांति कहा है ।

और आप अपने मुख से अपने इस वाक्य का आग्रह दिखाते हैं "सर्व-गुह्यतमंभूयः श्रृणुमेपरमंवचः । इष्टोसिमेदृढमतिस्ततो वक्ष्यामि तेहितम् " और भी उद्धव जी प्राति श्री भगवद्वाक्य है "आकिंचनस्यदांतस्य शांतस्यसमचेतसः । मयासं-तुष्टमनसः सर्वाः सुखमयादिशः" ॥ "अज्ञायैवगुणान्दोषान् मयादिष्टानपिस्वकान् । धर्मान्संत्यज्ययःसर्वान् मांभजेत्सससत्तमः " ॥ तस्मात् त्वमुद्धवोत्सृज्य चोदनां प्रति-चोदनां । प्रवृत्तं च निवृत्तं च श्रोतव्यं श्रुतमेवच ॥ मामेकमेवशरणमात्मानंसर्व-देहिनां । याहिसर्वात्मभावेन मयास्याःह्यकुतोभयः ॥ नसाधयतिमांयोगो नसांख्यं धर्मउद्धव । नस्वाध्यायस्तपस्त्यागो यथाभक्तिर्ममोर्जिता ॥ भक्त्याहमेकयाग्राह्यः श्रद्ध-यात्माप्रियःसताम् । भक्तिःपुनातिमन्निष्ठा श्वपाकमपिसंभवात् ॥ धर्मःसत्यदयोपेतो विद्यावातपसान्विता । मद्भक्त्यापेतमात्मानं नसम्यक्प्रपुनातिहि । कथं विना-रोमहर्षं द्रवताचेतसाविना ॥ विनानन्दाश्रुकलया शुध्येद्भक्त्याविनाशयः । वाग्गद्गदा द्रवतेयस्यचित्तंरुदत्यभीक्ष्णंहसाति क्वचिद्वा ॥ विलज्जउद्गायतिनृत्यतेच मद्भक्तियुक्तो भुवनंपुनाति " ।

तथा—नाहंवेदैर्नतपसा नदानेननचेज्यया । शक्यएवंविधोद्रष्टुं दृष्टवानसिमांय-था ॥ भक्त्याहमेकयाग्राह्यः अहमेवंविधोर्जुन । ज्ञातुंद्रष्टुं चतत्वेन प्रवेष्टुं चपरंतप ॥ इत्यादि ॥ इन वाक्यों को छोड़ कर भक्तों के दोनों लोक साधन के लिए उस की दृढ़ प्रतिज्ञा है "कौंतेयप्रतिजानीहि नमेभक्तःप्रणश्यति " "नरकादुद्धराम्यहं" "तान्विभर्म्यहं" "सोयंमेव्रतआहितः" योग क्षेमंवहाम्यहं" "तेषामहंसमुद्धर्तामृत्युसंसा-रसागरात्" इत्यादि ।

२८ ॐ तस्याःज्ञानमेवसाधनमित्येके ।

उसका (भक्ति का) साधन ज्ञान ही है यह किन्ही (आचार्य) का मत है ।

ऐसा नहीं हो सकता । गृध्र, अजामिल, गजेंद्र इत्यादि को किसने ज्ञान दिया है "केवलेनहिभावेन गोप्योगावःखगाःमृगाः" येन्येमूढ़धियोनागाः सिद्धामामीयुरञ्जसा " भक्ति का साधन तो अपने चित्त का अंकुर और उनकी कृपाही है ज्ञान विचारा क्या साधेगा ।

२९ ॐ अन्योन्याश्रयत्वमित्यन्ये ।

दूसरोंका मत है कि भक्ति और ज्ञानसे परस्पर आश्रयत्व है ।

यह भी नही होसक्ता, जब मनुष्य किसी की भक्ति वा प्रीति कर लेगा तब उसके ज्ञान में क्या प्रवृत्त होगा पानी पीके जात नही पूछी जाती ।

३० ॐ स्वयंफलरूपतेतिब्रह्मकुमाराः ।

सनत्कुमारादि और नारद जी का मत है कि भक्ति स्वयं फल रूपा है ।

हई है, पहले भी कह आये हैं ।

३१ ॐ राजगृहभोजनादिषुदृष्टत्वात् ।

राजा का घर (दरबार) और भोजनादि में ऐसा ही देखा गया है ॥ ३१ ॥

पूर्व कथित फल रूपता का उदाहरण दिखाते हैं ।

३२ ॐ नतेनराजपरितोषःक्षुधाशान्तिर्वा ।

न उससे राजा का परितोष होगा न क्षुधा मिटेगी । *

ज्ञान के फल रूप होने में दोष दिखाते है कि एक मनुष्य को किसी

---

* ३२ क्योंकि केवल राजा के जान लेनेही से न राजा का परितोष होता है न केवल भोजन की वस्तुके ज्ञानसे भूख मिटती है (किन्तु उनके सेवन से)

राजा का स्वरूप ज्ञान बहुत अच्छा है पर इससे क्या ? वह राजा विना अपनी भक्ति कियेही उसे कुछ देगा वा कुछ भोजन रक्खा है हम को उसके स्वरूप का पूर्ण ज्ञान है कि इसमें पूरी है और वह आटा घी जल और अग्नि के संयोग से बनी है पर क्या इस ज्ञान ही से भूख मिट जायगी ? कदापि नहीं। वैसाही भगवान को केवल जानकर कभी सिद्ध नहीं हो सकता क्योंकि वह अपने स्वरूपज्ञों पर किस नाते दत्त चित्त होगा ? अतएव अगले सूत्र में फिर से आग्रह दिखाते हैं।

३३ ॐ तस्मात्सैवग्राह्यामुमुक्षुभिः।

इस कारण मोक्ष की इच्छा करनेवाले उसी (भक्ति) का ग्रहण करें।

जो अपना कल्याण करना चाहे तो इस सूत्र को कान खोल कर सुने और विश्वास करे।

चौथा अनुवाक समाप्त हुआ।

३४ ॐ तस्यास्साधनानिगायन्त्याचार्याः।

उस (भक्ति) के साधन आचार्य्य कहते हैं।

पूर्वोक्त सूत्रों में भक्तिही मुख्य है ऐसा कह अब उसके साधन दिखाते हैं।

३५ ॐ तत्तुविषयत्यागात्सङ्गत्यागाच्च।

वह (भक्तिसाधन) *तो विषय त्याग और संगत्यागसे होता है।

जो कहो कि हम विषय और संग में लगे हुए भी सिद्ध हो जांयगे तो यह नहीं हो सक्ता क्योंकि श्री महाप्रभु जी ने अपने ग्रंथ बालबोध में "जीवाः स्वभावतोदुष्टाः" इस वाक्य से जीव को स्वभावतः दुष्ट कहा है तो जीव को आसुरावेश होने में कुछ विलम्ब नहीं लगता। श्रीहरिराय जी ने अपने ग्रंथ काम दोष निरूपण में इस विषय की कैसी निन्दा की है, आप लिखते हैं "दोषेषु

---

* पूर्व मुद्रित सूत्र वृत्ति में तच्छब्द से भक्ति मानकर विषय त्याग वा संग त्याग से वह सिद्ध होती है लिखा है।

प्रथमः कामो विविच्य विनिरूप्यते । यस्मिन्नुत्पद्यते तस्य नाशकः सर्वथामतः ॥
विषयावेशहेतुत्वाद्विक्षेपोत्पत्तिकारणं । रजोगुणसमुत्पन्नो रजःप्रक्षेपकोमुखे ॥
ब्रह्मावेशविरोधी च सद्बुद्धेर्बाधकोमतः । सत्कर्मनाशकः सर्वप्राकृतासक्तिसाधकः ॥
चित्ताशुद्धिनिदानत्वाच्चिदुत्पत्तौचबाधकः । भक्तिमार्गमहाद्वेष्टा वैराग्याभावसाधनात् ॥
सर्वत्रापरितोपश्चानेन लोभसमुद्भवात् । यथाकर्पंचित्सांमुख्येंद्रियवैमुख्यकारकः ॥
कामलोभैहरिप्राप्तिप्रतिबंधकपर्वतौ । तावुल्लंघ्य नशक्नोति गंतुं कृष्णांतिकं जनः ॥
संसारमोहहेतुत्वान्मनोदूषणसाधनम् । अतः सेवाविरोधी च यतः सा मानसीमता ॥
निरोधस्यमहाञ्छत्रु रन्यत्स्फूर्तिकरो यतः । गुणगानसपन्नोपि नरोचंते गुणायतः ॥
वैराग्यसाधकाःसर्वेकामिनस्तेकथंप्रियाः । अतएवाहिदृश्यन्ते गुणश्रवणवैरिणः ॥
क्रोधःस्वकार्यकरणाल्लोभःप्राप्यापिशाम्याति । घृतहोमेवन्हिरिवकामोभोगेनवर्द्धते ॥
कामेननाशितमातिः प्रतिच्छिद्रे प्रवर्तते । अगम्यागमने चौर्य्ये तथैवाभक्ष्यभक्षणे ॥
यतउत्पद्यते क्रोधो महद्द्रोहसमुद्भवः । लोभोपिजायतेतस्मात्सचार्थविपर्यभवेत् ॥
सोर्थःपञ्चदशानर्थमूलंतत्रप्रवर्तते । कामेनैवहिकार्पण्यं कामिनीषु सतांमतं । प्रार्थय न्तियतस्तुच्छा प्रवेश्यवदनेकरं " इत्यादि काम दोष पर आपने एक ग्रंथही वनाया है तो काम मुख्य दोष है इसमें कोई संदेह नहीं वरञ्च श्री गीता जी में कामही के छुड़ाने के आग्रह से सुखपूर्वक भोजनादि का भी निषेध किया है श्रीमुख वाक्यं ' इन्द्रियाण्यनुशुष्यन्ति निराहारस्यदेहिनः । रसवर्जरसोप्यस्यपरंदृष्ट्वानिवर्तते ' । इससे भक्ति के सब साधनों में मुख्य विषयों का त्याग है संग त्याग के दोष ४३। ४४ । ४९ सूत्रों में दिखावेंगे ॥

३६ ॐ अव्यावृतभजनात् ।

सतत (निरंतर) भजन से

निरन्तर शब्द यहां इस हेतु दिया है कि क्षण क्षण में जीव को आसुरावेश होता है और रजोगुण सतोगुण की तरंगें उठा करती हैं तो उसकी निवृत्ति के हेतु निरन्तर भजन करै । जिस क्षण में नामोच्चारण का व्यवधान होगा उसी क्षण आसुरावेश होगा अतएव भगवान श्री श्रीबल्लभाचार्य ने आज्ञा किया है "तस्मात्सर्वात्मनानित्यं श्रीकृष्णः शरणं मम। वदद्भिरेवसततं स्थातव्यमिति मेमितिः" अपने भक्तिवर्द्धिनी ग्रंथ में भी श्रीआचार्यजी ने 'आव्यावृतोभजेत्कृष्णं पूजयाश्रवणादिभिः'

इत्यादि लिखा है, भोजनादिक व्यवहार की भांति कुछ नित्य भजन भी करलेना वा जहां सब काम करते है वहां एक घण्टा भर यह भी सही इत्यादि उपेक्षा वा साधारण व्यवहार पूर्वक भजन का निषेध इस सूत्र से किया, जो कहो कि संसार के और कोई काम न करें सो यह नहीं कन्ते वरञ्च जब तुम आवश्यक कार्यों से छूटो तब और कोई व्यर्थ काम करने के बदले निरन्तर भजन करो, जैसा जितने क्षण खाते हो उतनी देर तो निःसंदेह तुम कुछ नहीं कह सकते पर जैसे ही मुंह धो चुको भगवन्नामोच्चारण प्रारम्भ करो।

३७ ॐ लोकेपि भगवद्गुणश्रवणकीर्तनात्।

लोक में भी भगवान के गुणों के श्रवण और कीर्तन से ३७

"लोकेपि" अर्थात् जब तक अव्यावृत्त भजन की सिद्धि न हो और लोक के व्यवहार में चित्त निरा मग्न हो तब तक भगवान् के गुण कीर्तन करके और श्रवण करके निरन्तर भजन का अभ्यास करे क्योंकि कोरे नामोच्चारण से वा ध्यान करने से भजन सुनने या गाने में सर्वसाधारण का चित्त विशेष लग सकता है। श्रीमहा प्रभुजी लिखते हैं "यथाभक्ति:प्रवृद्धास्यात्तथोपायोनिरूप्यते। वीजभावेदृढेतस्यात्त्यागाच्छ्रवणकीर्तनत् ॥ वीजदार्ढ्यप्रकारस्तु गृहेस्थित्वा स्वधर्मत:। अव्यावृतोभजेत्कृष्णं पूजयाश्रवणादिभि: ॥ व्यावृत्तोपिहरौचित्तं श्रवणादौयतेत्सदा। ततःप्रेमतथासक्ति र्व्यसनञ्चयदा भवेत्" अर्थात् जो चित्त भक्ति में न रंगा हो तो श्रवणादिक में लगावे और जब उस में कुछ प्रेम और आसक्ति होगी और श्रवणादिक का व्यसन हो जायगा तब आपही भक्ति का वीज दृढ हो जायगा यद्यपि भक्ति के अधिकारी सब लोग नहीं हैं पर श्रवण कीर्तनादिक के अभ्यास से सब हो जाते हैं क्योंकि कीर्तन के अधिकारी मुक्त मुमुक्षु और विषयी तीनो हैं। यही श्रीपरमभागवत श्रवणाधिकारी राजा परीक्षीत ने कहा है "निवृत्ततर्षैरुपगीयमानाद्भवौषधाच्छ्रोत्रमनोभिरामात्। क उत्तमश्लोकगुणानुवादात् पुमान्विरज्येत विना पशुघ्नात्।"

३८ ॐ मुख्यतस्तु महत्कृपयैव भगवत्कृपालेशाद्वा।

(उस भक्ति का) मुख्य साधन तो महानुभावों की कृपा है, वा भगवान की कृपा का लेश ॥ ३८ ॥ *

ऐसाही है परम भागवत जड़भरतजी ने रहूगण को उपदेश किया है " रहूगणैतत्तपसानयाति नचेज्ययानिर्वपणाद्गृहाद्वा । नच्छन्दसानैवजलाग्निसूर्यैविंनामहत्पादरजोभिषेकात् ॥ " हे रहूगण यह (सिद्धि) तप से नहीं होती और न यागादि कर्मो से न घर छोड़ के जोगी बनने से न वेदों से न जल से अर्थात् स्नान संध्या तर्पणादि से न अग्नि से अर्थात् पञ्चाग्नि साधन वा अग्निहोत्र से न सूर्य से अर्थात् सूर्योपस्थान वा गीष्मताप सेवनादि से। बिना महानुभावो के पदरज में नहाये और किसी से यह नहीं हो सकता यही श्री मुख से भी कहा है "नह्यम्मयानितीर्थानि नदेवामृच्छिलामया: । तेपुनंत्युरुकालेनदर्शनादेवसाधव: ॥" हे अक्रूर ! जिस को जल मय तीर्थ (गङ्गादि) और मृनय और शिलामय देव पवित्र नहीं करते या बहुत काल से करते हैं उसको साधु लोग केवल दर्शन हीं से तत्काल पुनीत करते हैं ।

बरञ्च श्रीमद्भागवत पञ्चमस्कन्ध में श्रीमत्परम भागवत प्रह्लाद जी ने कहा है "मागारदारात्मजावित्तबंधुषु संगोयदिस्याद्भगवत्प्रियेषुन: य: प्राणवृत्त्यापरितुष्टआत्मवान् सिद्ध्यत्यदूरान्नतथेंद्रियाप्रिय: ॥ यत्संगलब्धंनिजवीर्यवैभवं तीर्थमुहु:संस्पृशतांहि मानसं । हरत्यजोंत: श्रुतिभिर्गतोंगजं कोवै नसेवेतमुकुन्द - "

देवीपुराण † नवमस्कन्ध के षष्ठाध्याय में गङ्गा जी से भगवान का वाक्य है " मन्मंत्रोपासकानांच सतांस्नानावगाहनात् । युष्माकंमोक्षणं पापात् दर्शनात्स्पर्शनात्तथा ॥ पृथिव्यांयानितीर्थानि संत्यसंख्यानिसुन्दरि । भविष्यन्तिचपूतानिमद्भक्तस्पर्शदर्शनात् ॥ मन्मन्त्रोपासकाभक्ताविश्रमन्तिचभारते । पूतांकर्तुंतारितुञ्च सुपवित्रांवसुन्धरां ॥ मद्भक्तायत्रतिष्ठन्तिपादंप्रक्षालयन्तिच । तत्स्थानन्तुमहातीर्थं सुपवित्रंभवेद्ध्रुवं ॥ स्त्रीघ्नोगोघ्न:कृतघ्नश्चब्रह्मघ्नोगुरुतल्पग: । जीवन्मुक्तोभवेत्पूतो मद्भक्तस्पर्शदर्शनात् ॥ एकादशीविहीनश्चसंध्याहीनोतिनास्तिक: । नरघातीभवेत् पूतोमद्भक्तस्पर्श-

---

* ३८ परन्तु मुख्य करके तो महात्मा लोगों की कृपा ही से होती है वा भगवान के कृपा लेश से।

† देवी पुराणही को देवी भागवत कहते हैं क्योंकि पुराणों में जहां उपपुराणों को गिना है वहां कहीं "भागवत" वा "देवीपुराण" ऐसा शब्द है।

दर्शनात् ॥ असिजीवीमसीजीवीपाचकोग्रामयाचकः । वृषवाहोभवेत्पूतो मद्भक्तस्पर्श० ॥ विश्वासघातीमित्रघ्नो मिथ्यासाक्ष्यस्यदायकः । स्थाप्यहारीभवेत्पूतो मद्भक्तस्पर्शदर्श० ॥ अत्युग्रवाग्दूषकश्च जारकःपुंश्चलीपतिः । पूतश्चपुंश्चलीपुत्रो मद्भक्त० ॥ शूद्राणांसूपकारश्चदेवलोग्रामयाचकः । अदीक्षितोभवेत्पूतो मद्भक्त० ॥ पितरंमातरम्भार्यां भ्रातरंतनयंसुतां । गुरोःकुलंचभगिनीं चक्षुर्हीनंचबान्धवं ॥ श्वश्रूंचश्वशुरंश्चापियानपुष्णातिसुन्दरि । समहापातकीपूतोमद्भक्तस्पर्श दर्शनात् ॥ अश्वत्थनाशकश्चैव मद्भक्तनिन्दकस्तथा । शूद्रान्नभोजीविप्रश्च पूतोमद्भक्तदर्शनात् ॥ देवद्रव्यापहारीच विप्रद्रव्यापहारकः । लाक्षालोहरसानांच विक्रेतादुहितुस्तथा ॥ महापातकिनश्चैव शूद्राणांशवदाहकः । भवेयुरेतेपूताश्च मद्भक्तस्पर्शदर्शनात् ॥" तथा देवी का वाक्य " पुनन्तिसर्वतीर्थानि येषांस्नानावगाहनात् । येषांचपादरजसा पूतापादोदकान्मही ॥ येषांसंदर्शनंस्पर्शंयेवावांछन्तिभारते । सर्वेषांपरमोलाभो वैष्णवानां समागमः ॥ नह्यम्मयानितीर्थानि नदेवामृच्छिलामयाः । तेपुनंत्यपिकालेन विष्णुभक्ताःक्षणादहो " फिर भगवद्वाक्य " पुरुषाणांशतंपूर्वं तथातज्जन्ममात्रतः । स्वर्गस्थंनरकस्थंवा मुक्तिमाप्नोतितत्क्षणात् ॥ यैःकैश्चिद्यत्रवाजन्म लब्धंयेपुचजन्तुषु । जीवन्मुक्तास्तुतेपूता यान्तिकालेहरेःपदं ॥ मद्भक्तियुक्तोमर्त्यश्चसमुक्तःसद्गुणान्वितः । मद्गुणाधीनवृत्तिर्यः कथाविष्टश्चसन्ततं ॥ मद्गुणश्रुतमात्रेणसानन्दः पुलकान्वितः । सगद्गदःसाश्रुनेत्रः स्वात्मविस्मृतएवच ॥ नवाञ्छतिसुखंमुक्तिं सालोक्यादिचतुष्टयं ॥ ब्रह्मत्वममरत्वंवा तद्वाञ्छाममसेवने ॥ इंद्रत्वंचमनुत्वंच ब्रह्मत्वंचसुदुर्लभं ॥ स्वर्गराज्यादिभोगश्च स्वप्नेपिचनवाञ्छति ॥ भ्रमन्तिभारतेभक्ता स्तादृग्जन्मसुदुर्लभं । मद्गुणश्रवणश्राव्यगानैर्नित्यंमुदान्विताः ॥ तेयांतिचमहींपूत्वा नराःश [illegible] । इत्येवं कथितंसर्वं पद्मेकुरुयथोचितं तदाज्ञयातास्तचक्रु र्हरिस्तस्थौ सुखासने ।" तथाच सारसंग्रह में पराशर स्मृति "सहस्रवार्षिकीपूजा विष्णोर्भगवतो हरेः ॥ सद्भक्तभगवतार्चायाः कलांनार्हतिषोडशीं ॥" इत्यादि । वृहन्नारदीयपुराण "पूजनाद्विष्णुभक्तानां पुरुषार्थोस्तिनेतरः । तेपुतद्द्वेषतः किंचिन्नास्तिनाशनमात्मनः ॥" पद्मपुराण में महादेव जी का वाक्य "आराधनानांसर्वेषां विष्णोराराधनंपरं । तस्मात्परतरंदेवि तदीयानांच पूजनं ॥" श्रीमद्भागवत में श्री महादेव जी का वाक्य " नमेभागवतानांचप्रेयानन्योस्तिकर्हिचित् " इत्यादि पूर्वोक्त श्लोकों से तदीय जनों का माहात्म्य सिद्ध हुआ तो ऐसे तदीयों की कृपा से भक्ति मिले इसमें क्या आश्चर्य है वा भगवान की कृपा से होय क्योंकि

आप कभी २ भक्तिदान देते हैं " ददामिबुद्धियोगंतं येनमामुपयांतिते " परन्तु भगवान की कृपा से भक्तों की कृपा सुलभ है क्योंकि भगवान् भक्तिदान विशेष नहीं करते "मुक्तिंददामिकर्हिचित्स्मनभक्तियोगं ॥" इत्यादि। अतएव इस सूत्र में महत्कृपा मुख्य करके भगवत्कृपा गौण किया है ॥

३९ ॐ महत्सङ्गस्तुदुर्लभोऽगम्योऽमोघश्च।

और महत्सङ्ग दुर्लभ, अगम्य, और अमोघ (सफल) है ॥३९॥*

ऐसाही है " क्षणार्द्धेनापितुलये न स्वर्गंनापुनर्भवं। भगवत्सङ्गिसंगस्य मर्त्यानां किमुताशिषः " ॥ इत्यादि श्रीमद्भागवत में श्रीमहादेवजी का वाक्य है "अमोघंसिद्धदर्शनं " इत्यादि स्मृति तथा श्रीमुख वाक्य "नरोधयति मां योगो नसांख्यंधर्मएवच। नस्वाध्यायस्तपस्त्यागो नेष्टापूर्तंनदक्षिणा॥ व्रतानियज्ञश्छन्दांसि तीर्थानि नियमायमाः। यथावरुन्धेसत्सङ्गः सर्वसंगापहोहिमां॥" और लोक में भी प्रसिद्ध है " सत्संगतिः कथय किंनकरोतिपुंसां " इत्यादि।

४० ॐ लभ्यतेपितत्कृपयैव।

महत्सङ्ग उसकी (भगवान्की) कृपा से ही मिलता है ॥४०॥

" यस्य भगवता प्रीता स्तस्यप्रीतोहरिःस्वयं।" इत्यादि वाक्यों से सिद्ध है। तथा श्री महादेव जी ने भी कहा है " अथानघांघ्रेस्तवकीर्तितीर्थे योर्न्तर्हिःस्नातिविधूतपाप्मना। भूतेष्वनुक्रोशसुसत्वशीलिनां स्यात्सङ्गमोनुग्रहएवमस्तुच " ॥

४१ ॐ तस्मिंस्तज्जने भेदाभावात्।

उसके और उसके जन में भेद के अभाव से ॥४१॥*

श्रुति भी है। "यस्यदेवेपराभक्तिर्यथादेवेतथागुरौ" इत्यादि। "नमेभागवतानांच भुक्तिभेदोस्तिकर्हिचित् " इत्यादि, श्री मुख से कहा है। तथाच श्रीगोपीजन

---

* ३९ महात्माओं का संग दुर्लभ है क्योंकि उस संग में कोई जा नहीं सकता और जब उस संग में प्राप्त होता है तो खाली नहीं फिरता अर्थात् सत्संग का फल अवश्य होता है।

* ४१ क्योंकि भगवान में और उनके भक्तों में कुछ भेद नहीं है।

को " ता.मन्मनस्कामत्प्राणाः वल्हव्योमेमदात्मिका; " इत्यादि, श्रीमहादेवजी को " यस्त्वांद्वेष्टिसमांद्वेष्टियस्त्वामनुसमामनु । त्वदुपासाजगन्नाथ सैवास्तुममगोपते " तथा उद्योग पर्व में दुर्योधन से पांडवों के हेतु भी कहा है "यस्तान्द्वेष्टि समांद्वेष्टि यस्ताननुसमामनु । ऐकात्म्यंमांगतंविद्धि पांडवैर्धर्मचारिभिः " ॥ इत्यादि तथा श्री प्रह्लादादिक भक्तों से भगवान ने यही कहा है " जिसने तुमसे द्वेष किया उस ने मुझ से द्वेष किया " इसका उदाहरण अंबरीष का प्रकरण प्रत्यक्ष है और यहां भी श्रीमुख से कहा है " अहं भक्तपराधीनो ह्यस्वतंत्र इव द्विज । साधुभिर्ग्रस्तहृदयो भक्तैर्भक्तजनप्रियः ॥" महा भारत में भी कहा है " तुल्सीदलमात्रेण जलस्यचुलकेनच । विक्रीणीते स्वमात्मानं भक्तेभ्योभक्तवत्सलः ॥" उद्धव जी से* भी ऐसाही कहा है " नतथामेप्रियतम आत्मयोनिर्नशङ्करः नचसङ्कर्षणोनश्रीर्नैवात्माचयथा भवान् ॥ निरपेक्षंमुनिं शांतं निर्वैरंसमदर्शिनं । अनुव्रजाम्यहं नित्यं पूयेयेत्यंघ्रिरेणुभिः" इत्यादि श्रीमुख से अपने भक्तों से अपनी एकता स्वाधीनता इत्यादि वर्णन किया तो इस से भगवान और उनके भक्तों की एकात्मता ही सिद्ध हुई ॥ " त्रिधाप्येकं सदागम्यंगम्यमेकप्रभेदनैः । प्रेमप्रेमीप्रेमपात्रत्रितयंप्रणतोस्म्यहं" ॥

४२ ॐ तदेवसाध्यतां तदेवसाध्यताम् ।

उसी का साधन करो, उसी का साधन करो ॥ ४२ ॥

हम लोग भी मुक्त कण्ठ से यही कहते हैं ।

इति पञ्चम अनुवाक समाप्त हुआ ।

४३ ॐ दुःसङ्गस्सर्वथैव त्याज्यः ॥

दुःसंग का सब रीति से त्याग करना ॥ ४३ ॥

उसके त्याग में कारण कहते हैं ।

४४ ॐ कामक्रोधमोहस्मृतिभ्रंशबुद्धिनाश-

* चारो नाम चार संप्रदाय के आचार्यों ही के लिए. ब्रह्मा माधव, महादेव, विष्णुस्वामी, संकर्षण निम्बार्क और श्री रामानुज, इन मर्यादा मार्ग के भक्तों की उत्कर्षता के हेतु उद्धव को सबसे बड़ा कहा ।

सर्वनाशकारणत्वात् ।

(क्योंकि वह) काम, क्रोध, मोह, स्मृतिभ्रंश, बुद्धिनाश और सर्वनाश का कारण है ॥ ४४ ॥

ऐसाही श्रीमुख से भी कहा है "ध्यायतोविषयान्पुंसःसंगस्तेषूपजायते । संगात्संजायतेकामः कामात्क्रोधोभिजायते ॥ क्रोधाद्भवति संमोहः संमोहात्स्मृतिविभ्रमः । स्मृतिभ्रंशाद्बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात्प्रणश्यति ॥" विषयों के सुख सोचते सोचते विषय संग होता है और विषय संग से अनेक प्रकार की कामना उत्पन्न होती है, और जब उस कामना के पूर्ण होने में कोई बाधक होता है तब क्रोध उत्पन्न होता है और जब उस क्रोध से अनिवार्य बाधकों का प्रलय नहीं कर सकता तब मोह हो जाता है और निराश होके रोने लगता है । फिर इस दुःख से सब स्मृति भूल जाती है और जब स्मृति भूल जाती है तब इस की बुद्धि ठिकाने नहीं रहती और अन्यथा करने पर प्रवृत्त हुआ तहां उस का लोक परलोक सब नाश होता है" इस से यह दिखाया कि सब बिगाड़ का कारण विषय और उसका संगही है ॥

४५ ॐ तरङ्गायितापीमे सङ्गात्समुद्रायन्ति ।

ये (काम क्रोधादिक) तरंगों की भांति होकर भी (दुःसंगसे) समुद्र से हो जाते हैं ॥ ४५ ॥

दुःसंग में और भी दोष दिखाते हैं—यद्यपि जो लोग सन्मार्ग पर प्रवृत्त हैं उनको अहर्निश भगवदाराधन करते २ काम क्रोधादिक की केवल तरंग आती है, जैसे नित्य विषयों की सुरतान्त, तीर्थ गमन, कथा, श्रवण, वा स्मशान दर्शन से ज्ञान की तरङ्ग आती है, जितनी देर स्मशान पर बैठते हैं संसार नश्वर है, पुत्रादिकों में मोह अच्छा नहीं इत्यादि ज्ञान छांटते हैं पर जहां घर आ तहां फिर संसार काम में मग्न होगये, वैसेही अच्छे लोगों को प्रारब्ध वशात् संग से जो कुछ काम क्रोधादिक की तरंग आती भी हैं । तो वह उतनी ही काल रहती है जब तक कि वे अपना स्वरूप भूले रहते हैं। तथापि यदि वेही सज्जन लोग दुःसंग में पड़ जांय तो ये ही काम क्रोध उनको डुबा दें ।

४६ ॐ कस्तरतिकस्तरतिमायां ? यः संगांस्त्यजति योमहानुभा॑ सेवते योनिर्ममोभवति ।

कौन तरता है ? माया को कौन तरता है ? जो (संसारी) संगों को छोड़ता है, जो महानुभाव की सेवा करता है, जो निर्मोह होता है ॥ ४६ ॥

यद्यपि महात्मा की कृपा, और संग त्याग मुख्य साधन हैं, तथापि, कुटुंबादिक का मोह भी एक बड़ी भारी बेड़ी है इस से इसका त्याग भी मुख्यही है ।

४७ ॐ योविविक्तस्थानं सेवते योलोकबंधमुन्मूलयति निस्त्रैगुण्योभवति योगक्षेमंत्यजति ।

जो एकांत स्थान सेवन करता है जो लोक बंध की जड़ निकाल देता है, निस्त्रैगुण्य होता है, और योग क्षेम छोड़ देता है ॥ ४७ ॥

क्रमशः उसके साधन कहते हैं—यदि जन समाज मे रहेगा तो पहले तो उसके अनवाच्छिन्न भगवच्चिन्तन मे कोलाहलादि से अनेक वाधा पड़ेगी दूसरे अनेक प्रकार के लोगों से मिलने से उनके व्यवहार में व्यापृत होने और उनके संग पड़ जाने का डर है अतएव श्रीमुख से कहा है " विविक्तजनसेवित्वमरतिर्जनसंसदि " ॥ और महात्माओ की भी आज्ञा है " विमुक्तवन्धो विचरेदसंगः ॥ " इत्यादि तथा लोक का वन्धन छोड़ना भी एक वड़ा कठिन साधन है कोई हसे न, कोई नाम न धरे, धोती इतनी ही नीचे पहिने ँ एड़ी न दिखाय, न-निर्लज्ज कहावेंगे, मार्ग में जिस चाल से निकलते है वैसेही निकलना चाहिए, इत्यादि लोक काल्पित व्यवहार और भी महा वन्धन के कारण होते है इस हेतु सव लोक वन्धन की मूल लज्जा को चौपट कर डालना " एकां लज्जां परित्यज्य त्रैलोक्यविजयी भवेत् " क्योकि भ‍ि के साधन मे श्री मुख से आप ने आज्ञा किया है " विलज्जउद्गायति रौतिनृत्यति मद्भक्तियुक्तो भुवनंपुनाति " तो सव के सामने कौन गावेगा कौन रोवैगा कौन नाचेगा ? जो मेरा सा निपट वेहाया

होगा, तथा जब लोक छूटा तब उस से भी बड़ा बन्धन वेद बचा उसके मिटाने के हेतु कहते हैं " निस्त्रैगुण्योभवति " अर्थात् सत्व, रज, तम, इन तीनों गुण की प्रवृत्ति से अलग हो जाता है श्रीमुख से भी कहा है " त्रैगुण्यविषयावेदा निस्त्रैगुण्योभवार्जुन ॥"

परन्तु जो कहो कि लोक वेद छोड़ के केवल अपना भला करना तो चार्वाक का मत है तो इसका खण्डन करते हुए कहते हैं " योगक्षेमंत्यजति " अर्थात् केवल लोक वेद नहीं छोड़ता वरंच अपने भी खाने पीने पहरिने रहने ओढ़ने बिछाने सोने इत्यादि का शोक छोड़ देता है " भोजनाच्छादनेचिन्तां वृथाकुर्वन्ति वैष्णवाः । विश्वम्भरोगुरुर्येषां किं दासान् समुपेक्षते" और उसकी प्रतिज्ञा भी है "अनन्याश्चिन्तयन्तो मां येजनाः पर्युपासते। तेषांनित्याभियुक्तानां योगक्षेमंवहाम्यहं" इत्यादि । क्यौंकि जब सब छोड़ा फिर अपनी हाय हाय न छूटी तो उस छोडने पर धिक्कार है ।

४८ ॐ यः कर्मफलंत्यजते कर्माणि संन्यसति ततो निर्द्वंद्वोभवति ॥

जो कर्म फल छोड़ता है कर्मों का त्याग करके निर्द्वंद्व होता है । ४८ ॥

निस्त्रैगुण्य होने का क्रमशः साधन कहते जब तक चित्त में अर्थों की तरंग उठैं तब तक कर्म्मो को नही छोड़ना उसका फल छोड़ना और जब कामनाओं की निवृत्ति होजाय तब उन कर्म्मों को भी छोड़ के निर्द्वंद हो जाना । क्योंकि श्री मुख से भी कहा है " निर्द्वंद्वोनित्यसत्वस्थोनिर्योगक्षेमआत्मवान् । यावानर्थउदपाने " इत्यादि ऊपर लिख आए हैं ।

४९ ॐ वेदानपिसंन्यसतिकेवलमविच्छिन्नानुरागंलभते ।

वेदों को भी छोड़ देता है और केवल अविछिन्न अनुराग (प्रीति) को पाता है ॥ ४९ ॥

अब साधन दिखाकर उसकी सिद्ध दशा लिखते है जब सिद्ध हो जाता है तब वेदों का त्याग कर देता है और केवल अविच्छिन्न प्रेम पाता है।

५० ॐ सतरतिस तरतिसलोकान्तारयतीति ।

वह तरता है वह तरता है वह लोगों को तारता है ॥५०॥

नारद जी अपनी प्रतिज्ञा दृढ़ करने के हेतु दो बेर कहते हैं और निश्चय कराते है, वरंच यह कहते हैं कि वह आपही नही तरता किन्तु संसार को तारता है " पुनातिभुवनत्रयं" "तीर्थीकुर्वन्तितीर्थानि स्वान्तस्थेनगदाभृता " "तेपुनन्त्युरुकालेन " " मद्भक्तियुक्तोभुवनंपुनाति " "स्वयं समुत्तीर्य सुदुस्तरं" इत्यादि, वाक्यों से उनका संसार में पवित्र करके तारना सिद्ध है।

इति षष्ट अनुवाक समाप्त हुआ।

---

५१ ॐ अनिर्वचनीयं प्रेम स्वरूपं ।

प्रेम का स्वरूप कहा नहीं जा सकता ॥ ५१ ॥

तो हम लोग क्या कहे।

५२ ॐ मूकास्वादनवत् ।

गूंगे के स्वाद की भांति ॥ ५२ ॥

अर्थात् केवल अनुभव सिद्ध है क्योंकि मीठे और सलौने में जो भेद वा स्वाद है वह कहा नहीं जा सकता इतनाही वह सकते हैं कि खाके अनुभव करलो उसमें भी गूंगे के स्वाद का क्या पूछना है। यहां वही कहावत है "बिन अपने मरे स्वर्ग नही सूझता "।

५३ ॐ प्रकाश्यतेक्वापिपात्रे । *

---

* जिस पुस्तक में " प्रकाशते " ऐसा पाठ है वहां अर्थ है कि प्रेम स्वरूप कभी किसी पात्र (अधिकारी) में स्वयं प्रकाश पाता है।

(तथापि) कभी किसी पात्र (अधिकारी) से प्रकाश किया जाता है ॥ ५३ ॥ †

" ब्रूयु:स्निग्धस्यशिष्यस्यगुरवोगुह्यमप्युत " इत्यादि वाक्य से सिद्ध है तो इसमें यह शंका हुई कि श्री नारद जी ने संसार में कोई पात्र पाए बिनाही इन सूत्रों का प्रकाश क्यौं किया ? इसके उत्तर में हम इतनाही कहा चाहते हैं कि यह किसी पात्र का उद्देश्य करके नहीं कहा बरञ्च स्वतः मुंह से प्रेम के आवेश से निकल गया क्योंकि जब पात्र भर जाता है तब आप से आप ऊपर बह निकलता है उस समय यह विचार नहीं रहता कि नीचे पत्रांतर आधारभूत है वा नहीं। वही दशा इस की भी है जब उस परमानन्द का उच्छ्वास होता है तब यहां भी पात्रापात्र विचार नहीं होता पागल की भांति गूढ़ तत्व भी अपने आप बकने लगता है।

५४ ॐ गुणरहितं कामनारहितं प्रतिक्षणवर्द्धमानमविच्छिन्नं सूक्ष्मतरमनुभवरूपं ।

(प्रेमस्वरूप) गुणों से रहित, कामनाओं से रहित, प्रतिक्षण में वृद्धिंगत अविच्छिन्न (एकरस मिला हुआ), सूक्ष्मतर केवल अनुभवरूप है ॥ ५४ ॥

कामना रहित, क्योंकि कामना से यह भक्ति व्यवहार हो जायगी इससे स्वर्गादि कामना के अर्थ यजन स्वरूप भक्ति वा काम पूरणार्थ दंपति के प्रेम का नाम प्रेम है इस का निराकरण किया, श्री मुख से भी कहा है, " न मय्यावेशितधियांकामः कमाय कल्पते भर्जिताकथिताधानाभूयोबीजायनेष्यते " इत्यादि और सांसारिक प्रेम से इस शुद्ध प्रेम में आधिक्य दिखाने के हेतु " प्रतिक्षणवर्द्धमान " यह कहा क्योंकि संसार में प्रेम पहले तो बड़े चाव से होता है फिर प्रतिदिन अवस्था बल वा रूप गुण धन के घटने से वह प्रेम दिन दिन घटता जाता है और उस अशेष गुण संपन्न नित्य नव किशोर असीमगुणमण्डित अतुल बल सीम परमानन्दमय में जो प्रेम होगा वह प्रतिक्षण बढ़ता जायगा क्योंकि उत्तम सौन्दर्य्य और

† ५३ पर पात्र मिलने से कहीं और कभी महात्मा लोग प्रकाश करते हैं ।

गुण का धर्म है कि जितना २ उसको देखते वा विचारते जाओगे उतनीही उत्तम सूक्ष्मता प्रकट होती जायगी, और जैसा इस प्रेम को संसार के दुःखादि वाधा कर देते हैं वैसी उसमें कोई वाधा नही होती क्योंकि भगवद्वियोग के महा दुःख सागर में ये सब संसार के क्षुद्र दुःख डूव जाते हैं "सर्वपदंहस्तिपदे निमग्नं" और सूक्ष्म इतना है कि उसका उदाहरण नहीं दिया जा सकता इसी हेतु अनुभव रूप कहा है पुराणांतर में कथा है कि सती ने किसी कल्प में श्रीजानकी जी का वेष धर के भगवान की परीक्षा किया था इससे हम सब प्रेमियों के शिरोरत्न श्री महादेव जी ने फिर सती के उस देह का स्पर्श न किया। वोधा ने भाषा कवित्त में कहा है "अतिछीन मृनाल ते तारहु ते तेहि ऊपर पांव दै आवनो है। मंचिवेध ते नाको सकीर्न तहां परतीत को टांड़ो लदावनो है॥ कवि वोधा अनी घनी नेजहु ते चढ़ि तापै न चित्त डगावनो है। यह प्रेम को पंथ कराल महा तरवार की धार पै धावनो है॥"

५५ ॐ तत्प्राप्यतदेवावलोकयति तदेवशृणोति तदेवभाषयति तदेवचिन्तयति।

उसको पाकर उसी को देखता है उसी को सुनता है उसी को बोलता है और उसी का चिन्तन करता है ॥५५॥ *

क्योंकि फिर इसको कहने, सुनने, और देखने को अवशिष्ट नहीं रहता और जहां "तत्प्राप्यतमेवअवलोकयति" इत्यादि पाठ है वहां यह अर्थ है कि उसको अर्थात् भगवान को प्रेम द्वारा पाकर उसी को देखता है क्योंकि उस अनिर्वचनीय रूप को देख कर और देखने की इच्छा नहीं होती॥

५६ ॐ गौणीत्रिधागुणभेदादार्तादिभेदाद्वा।

गौणी (भक्ति) तीन प्रकार की, गुण भेद वा आर्तादि भेद से ॥ ५६ ॥

---

*५५ जिसे पाकर फिर प्रेमी लोग उसी को देखते हैं वही सुनते हैं और उसी को चिन्तन करते हैं।

मुख्या भक्तिका स्वरूप दिखाकर गौणी का स्वरूप कह ते हैं सत्व, रज, तम गुणों के भेद से सात्त्विकी, राजसी, तामसी तीन प्रकार की भक्ति वा श्रद्धा होती है। गुणत्रय विभाग वर्णन में श्रीभगवान ने इसका विस्तार कहा है, वा आर्त, जिज्ञासु और अर्थार्थी इन तीनोंके भजन के भेद से भी गौणी भक्ति तीन प्रकार की होजाती है॥

५७ ॐ उत्तरस्मादुत्तरस्मात्पूर्वपूर्वा श्रेयाय भवति॥

पिछले पिछले (भेद) से पहला कल्याण हेतु होता है।५७

अर्थात् तमोगुणी से रजोगुणी और रजोगुणी से सत्वगुणी अच्छी होती है वैसेही अर्थार्थी से जिज्ञासु और जिज्ञासु से आर्त अच्छा होता है क्योंकि सतोगुणी भक्ति से वा आर्त के भजन से शुद्ध भक्ति मिलने की संभावना है।

इति सप्तम अनुवाक समाप्त हुआ।

---

५८ ॐ अन्यस्मात्सौलभ्यंभक्तौ।

अन्य से भक्ति में सुगमता है॥ ५८॥

पूर्व में भक्ति का अनिर्वचनीय स्वरूप कहा है तो इस से जीवों को शंका हो कि ऐसी सूक्ष्म वस्तु के अधिकारी हम कैसे होंगे तो उस शंका मिटाने के हेतु और जीवों को उस मार्ग पर आरूढ़ करने के हेतु कहते हैं कि-और जितने साधन हैं सबसे भक्ति (साधन) सुलभ है क्योंकि न इस में विद्या का काम है न धन का न वेद का न आचार का न उत्तमता का न वर्ण का। क्योंकि गनिका को क्या विद्या थी, शवरी को क्या धन था, श्री गोपीजन ने कौन वेद पढ़ा था, गृध्र का कौन आचार था, गज की क्या उत्तमता थी और केवट का कौन वर्ण था। और सबसे बड़ी सुलभता यह है कि इस में कोई वादविवाद नही रहता। क्योंकि—

५९ ॐ प्रमाणान्तरस्यानपेक्षत्वात्स्वयंप्रमाणत्वात्।

(यहां) अन्य प्रमाणकी अपेक्षा नहीं स्वयमेवप्रमाण है ॥५६॥

क्योंकि वाद की और प्रमाण की इस में आवश्यकता नहीं जब अपने चित्त में प्रेम का उदय हुआ तब उससे बढ़ कर और प्रमाण क्या चाहिए। प्रमाणान्तर की अनपेक्षता दिखाकर भक्ति में और भी उत्तमता दिखाते हैं।

६० ॐ शान्तिरूपात्परमानन्दरूपाच्च ।

शान्ति रूप और परमानन्द रूप है ॥ ६० ॥ *

अर्थात् इस के शान्ति रूप होने से रजोमय तमोमय नाना प्रकार के वाद और विकल्प चित्त में आपही नहीं होते और परम शांति रूप है इसी से परमानन्द रूप है क्योंकि परमानन्द वहांही है जहां वादादि से प्रतिबन्ध नहीं। और "परमानन्द" शब्द कहने से भगवान की और भक्ति की एकता दिखाई क्योंकि ईश्वर का भी परमानन्द स्वरूप "आनन्दमयोऽभ्यासात्" "आनन्दमात्रकरपादमुखोदरादि" "आनन्दं ब्रह्म" "आनन्दं ब्रम्हणोविद्वान्" इत्यादि श्रुति से भगवान् का आनन्द स्वरूप सिद्ध है, और जीव में आनन्द का तिरोभाव है तो पुनः आनन्द उत्पन्न के साधन ज्ञानादि कर के परमानन्दमयी भक्ति के आविर्भाव विना जीव के ताप की निवृत्ति नहीं होती। और वेदांतियों ने ज्ञान का फल आनन्द कहा है ज्ञान को स्वतः आनन्द स्वरूप नहीं कहा है। और भक्ति का स्वरूप आनन्द तो सूत्र में कहतेही है।

अब जो जीव को शंका हो कि हम ने तुह्यारे कहने अनुसार योग क्षेमादिक सब छोड़ा परन्तु उस लोक की गति क्या होगी इस शंका के मिटाने के हेतु कहते हैं।

६१ ॐ लोकहानौचिंतानकार्य्यानिवेदितात्मलोकवेदशीलत्वात् ।

लोक हानि में चिंता नहीं करना क्योंकि (भक्तों ने) आत्मा, लोक, वेद, शील सब ईश्वर में अर्पण किये हैं ॥६१॥

---

* ६० क्योंकि इसमें शांति मिलती है और परमानन्द का अनुभव होता है।

अर्थात् जो वस्तु कोई किसी को दे देता है फिर उसकी हानि का शोच देने वाले को नहीं होता जिसको देता है उसी को होता हैं। हम लोगों को लोकादि हानि का शोच क्यों करना चाहिये उसका सोच वह (भगवान्) आप करेगा अतएव श्री महाप्रभुजी ने आज्ञा किया है " चिंताकापिनकार्या निवेदितात्मभिः कदापि भगवानपिपुष्टिस्थो न करिष्यति लौकिकींचगतिं । निवेदनंतुस्मर्तव्यं सर्वदा तादृशैर्जनैः। सर्वेश्वरश्चसर्वात्मानिजेच्छातः करिष्यति। सर्वेषां प्रभुसम्बन्धोनप्रत्येक मितिस्थितिः ॥ अतोन्यविनियोगेपि चिन्ताकास्वस्य सोपिचेत् । अज्ञानादथवा ज्ञानात्कृतमात्मनिवेदनं ॥ यैःकृष्णस्तत्कृतप्राणैस्तेषांका परिदेवना " इत्यादि अथवा चतुश्लोकी में फिर आप आज्ञा करते हैं कि † 'एवंसदास्वकर्तव्यं स्वयमेव करिष्यति प्रभुः सर्वसमर्थोहि ततोनिश्चिन्ततांव्रजेत् ॥ यदि श्रीगोकुलाधीशोधृतःसर्वात्मनाहृदि ततःकिमपरंब्रूहि लौकिकैर्वैदिकैरपि ॥'

अब जो वैसा दृढ़ नियम न सिद्ध हुआ हो तो क्या करना इस का साधन लिखते हैं।

६२ ॐ तदसिद्धौ लोकव्यवहारोहेयः किंतुफलत्यागस्तत्साधनंचकार्यमेव ।

उस (निश्चय) के असिद्धि में लोक व्यवहार को नहीं छोड़ना, किन्तु फल छोड़ना, वरञ्च उस (फल) का साधन अवश्यही करना ॥ ६२ ॥ *

क्योंकि विश्वास दृढ़ भए विना लोक व्यवहार छोड़ने में वही कहावत होगी "नघरकेहुएनघाटके" परन्तु उस का फल छोड़ देना अर्थात् लोक व्यवहार को असार समझना और विश्वास के सिद्धि के साधन में प्रवृत्त होना. उसके कौन २ साधन हैं सो आगे दिखाते है ।

---

† एवं सर्वैःस्व कर्तव्य मिति पाठ भेदः ।

* ६२ और जो वह प्रेम न सिद्ध होय तो लोक व्यवहार तो न छोड़ दे किन्तु कर्मों के फल का त्याग करके उसी परम प्रेम का साधन करे ।

६३ ॐ स्त्रीधननास्तिकवैरिचरित्रंनश्रवणीयं।

स्त्री, धन, नास्तिक, और वैरीका चरित्र नहीं सुनना ॥६३॥

स्त्रियों के चरित्र सुनने से विषयों में वासना होती है, धन का चरित्र से लोभ की वृद्धि होती है, नास्तिकों का चरित्र सुनने से विश्वास में हानि होती है तथा वैरियों का चरित्र सुनने से उन पर क्रोध की वृद्धि होती है तो ये सब तमोगुणादिक के कारण " इस से इनको सुननाही नहीं।

६४ ॐ अभिमानदंभादिकंत्याज्यं।

अभिमान, दम्भ आदि को छोड़ना।

भक्तिमार्ग के मुख्य विरोधी यही दो हैं क्योंकि भक्ति सिद्धि होजाने पर भी इनके फिर उदय होने का भय रहता है। हम वड़े भक्त हैं हम लोगों के उपदेष्टा हैं इत्यादिक अभिमान और वाह्याचरण वा पूजा के आडंबर मे मेद न पड़े यन्- दंभ और आदि शब्द से काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मत्सर इत्यादि लिये जाते हैं। जो कहो कि दुस्त्यज है तो वहते हैं।

६५ ॐ तदर्पिताखिलाचारस्सन्कामक्रोधाभिमानादिकंतस्मिन्नेवकरणीयं।

सब आचार उसी (भगवान) को अर्पण कर काम क्रोध अभिमान आदि सब उसी पर करना॥ ६५॥

अर्थात् काम करना तो यही कि वह परम श्रेष्ठ हमें मिले, क्रोध करना तो उसी पर कि क्यौं नहीं मिलता? अभिमान भी उसी का कि हमारा स्वामी सर्वेश्वर है हमारा प्यारा सब से सुन्दर है इत्यादि।

६६ ॐ त्रि-रूपभंगपूर्वकंनित्यदासनित्यकान्ताभजनात्मकं वा प्रेमएवकार्य्यंप्रेमएवकार्यमिति।

तीनो रूपभंग पूर्वक (भगवान का) नित्य दास्य और

नित्यदासा की भांति भजन रूपी प्रेम ही करना प्रेमही करना ॥ ६६ ॥

त्रिरूप शब्द का क्या अभिप्राय है यह कौन जाने यदि हम स्मार्त होते तो ब्रह्मा विष्णु शिव को एक करते व वेदान्ती होते तो त्रिपुटीभंग वा जीव ईश्वर और ब्रह्म की एकता करते परन्तु यह भक्ति शास्त्र है यहां इनका प्रयोजन नही यहां तीनों गुणों को मिटा कर वा भक्ति स्वरूप आनन्दांश के आविर्भाव से तीनों (सत् , चित् , और आनन्द) का परस्पर पृथक्त्व का भंग करना वा गुरु ईश्वर और उसके भक्तों के भेद का भंग इत्यादि । अब हम अपना सिद्धान्त दिखाते हैं। युगुल स्वरूप में और उनको पृथक् मानना अर्थात् यह वह और यह दोनों अलग हैं यह जो तीन प्रकार की भावना है इसका भंग वा प्रेमी प्रेम और प्रेमपात्र इनके भेद के भंग पूर्वक दास भाव से वा कान्ता भाव से प्रेमही करना प्रेमही करना ० इति शब्द से इन साधनों के कहने के पीछे और कुछ शेष वक्तव्य नहीं यह बोधन किया ।

इति अष्टम अनुवाक समाप्त हुआ ।

---

६७ ॐ भक्ताएकान्तिनोमुख्याः ।

भक्त एकान्ती (अभ्यन्तरचारी) (और सब से) मुख्य होते हैं ।

पहिले सूत्रों में साधारण भक्तों की महिमा दिखाकर अब एकान्ती भक्तों की महिमा दिखाते हैं । भक्तो में भी अनन्य और एकान्ती (अपनी भक्ति को गूढ़ रखने वाले) मुख्य हैं । इस एकान्ती शब्द से भक्ति भी सब संसार के दिखावे की भांति एक संसारी आचरण है इस का निषेध किया ।

६८ ॐ कण्ठावरोधरोमांचाश्रुभिःपरस्परंलपमानाःपावयन्तिकुलानिपृथिवींच ।

(जो भक्त लोग) कण्ठ का अवरोध, रोमांच और अश्रु आदि से युक्त होकर परस्परभाषण करते हुए कुल और पृथिवी को पवित्र करते हैं ॥ ६८ ॥ *

स्मरन्तःस्मारयन्तश्चमिथोघौघहरंहरिं । भक्त्यासंजातयाभक्ता बिभ्रत्युत्पुलकांतनुं ॥ क्वचिद्रुदंत्यच्युतचिन्तयाक्वचित् हसन्तिनन्दन्तिवदंत्यलौकिकाः । नृत्यन्तिगायंत्यनुशीलयन्त्यजं भवन्तितूष्णीम्परमेत्यनिर्वृताः ॥ इत्यादि प्रबुद्ध का वाक्य है ।

परम भागवत प्रल्हाद जी ने कहा है " निशम्य कर्माणि गुणानतुल्यान्वीर्याणिलीलातनुभिःकृतानि । यदातिहर्षोत्पुलकाश्रुगद्गदं प्रोत्कण्ठउद्गायतिरौतिनृत्यति ॥ यदाग्रहग्रस्तइवक्वचिद्धसंत्याक्रन्दतेध्यायतिवन्दतेजनं । मुहुःश्वसन्वक्तिहरेजगत्पते नारायणेत्यात्मगतिर्गतत्रपः ॥" श्रीमुखवाक्य भी है " एवं हरौभगवतिप्रतिलब्धभावोभक्त्याद्रवद्धृदयउत्पुलकःप्रमोदात् । औत्कण्ठ्यबाष्पकलयामुहुरर्द्यमानस्तच्चापिचित्तवडिशंशनकैर्वियुंक्ते ॥ " एकादश में भी " शृण्वन्सुभद्राणिरथांगपाणे र्जन्मानिकर्माणिचयानिलोके । गीतानिनामानितदर्थकानि गायन्विलज्जोविचरेदसंगः ॥ एवंव्रतःस्वप्रियनामकीर्त्या जातानुरागोद्रुतचित्तउच्चैः । हसत्यथोरोदितिरौतिगायत्युन्मादवन्नृत्यतिलोकबाह्यः " तृतीय में भी " देहञ्चतत्वपरमः स्थितमुत्थितं वा सिद्धोविपश्यतियतोऽध्यवसेत्स्वरूपं । दैवादुपेतमथ दैववशादुपेतं वासोयथापरिवृतंमदिरामदान्धः ॥ " इत्यादि और सब भक्तों का आचरण ऐसाही सुनने में आया है यथा श्री गोपीजन का " विचिक्युरुन्मत्तकवद्वनाद्वनं " " रुरुदुःसुस्वरंराजन् " " कृष्णोहंपश्यतगति " " ललितामितितन्मनाः " " विक्षिप्तमतसोनृप " इत्यादि और श्रीमहादेव जी की जडोन्मत्त पिशाचचर्या लोक में प्रसिद्ध ही है " स्मशानेष्वाक्रीडा स्मरहरपिशाचाःसहचराः । चिताभस्मालेपः स्रगपि नृकरोटीपरिकरः । अमङ्गल्यंशीलं भवतुतवनामैवमखिलं । तथापिस्मर्तॄणां वरदपरमंमङ्गलमसि ॥" * "स्मशानचक्रानिलधूलिधूम्रोविकीर्णविद्योत जटाकलापः । भस्मावगुण्ठामलरुक्मदेहो देव-

---

* ६८ वे परस्पर प्रेम की बात करते हुए प्रेम दशा में गद्गद कंठ होने से रोमांच होने से और अपने प्रेम के आंसुओं से अपने कुलको वरन पृथिवी को पवित्र करते हैं।

* दिति से कश्यप जी का वाक्य तृतीय स्कन्ध में अध्याय ॥ १४ ॥

स्त्रिभिःपश्यतिदेवरस्ते ॥ नयस्यलोकेस्वजनःपरोत्रा नात्याद्दतोनोतकाश्विद्विगर्ह्यः । घयंन्नतैर्यच्चरणापाविद्धा माशास्महेजांवतमुक्तमोगां ॥ यस्यानवद्याचरितंमनीषिणो गृणन्त्यविद्यापटलंविभित्सवः। निरस्तसाम्यातिशयोपियस्स्वयं पिशाचचर्य्यामचरद्गतिस्सतां ॥ हसन्तियस्याचरितंहिदुर्भगा स्स्वात्मन्नतस्याविदुपस्समीहितं । यैर्वस्त्रमाल्याभरणानुलेपनैः श्वभोजनंस्वात्मतयोपलालितं ॥ ब्रह्मादयोयत्कृतमेतुपालायत्कारणंविश्वमिदंच्चमाया । आज्ञाकरीतस्यपिशाचचर्य्याअहोविभूम्नश्चरितंविडम्बनम् ” ॥

अहो जब भगवान शिवजी ने जो कि इस मार्ग के परम गुरु और परम रहस्यवेत्ता “ ईशानःसर्वविद्याना मीश्वरःसर्वदेहिनां । ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणोधिपतिः” “ अहंकलानांऋपभो ” “ विद्याकामस्तुगिरिशं ” “ योदेवानांप्रथमंपुरस्ताद्विश्वाधियोरुद्रोमहर्षी ” “ हिरण्यगर्भपश्यतजायमानोसनोदेवः शुभयास्मृत्यासंयुनक्ति ” “कस्तञ्चराचरगुरुन्निर्वैरंशानूतविग्रहं । आत्मारामंकथंद्वेष्टिजगतो दैवतंमहत् ॥ ” “त्र्यम्बकंयजामहे सुगंधिंपुष्टिवर्द्धनं । उर्वारुकमिववंधनान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतात् ॥ ” “तस्मिन्महायोगमये मुमुक्षुशरणंसुराः । ददृशुःशिवमासीनं त्यक्तामर्पमिवांतकं ” ॥ “विद्यातपोयोगपथ मास्थितंजगदीश्वरं । चरंतंविश्वसुहृदं वात्सल्याल्लोकमंगलं ॥ उपविष्टंदर्भमय्यांवृस्यां ब्रह्मसनातनं । नारदायप्रवोचंतं पृच्छतेशृण्वतांसतां ॥ कृत्वोरौदक्षिणेसव्ये पादपद्मञ्चजानुनी । वाहुप्रकोष्ठेक्षमाला मासीनंयोगमुद्रया ॥ तंत्रह्मनिर्वाणसमाधिमास्थितं व्युपाश्रितंगिरिशंयोगकक्षां । सलोकपालामुनयोमनूना माद्यंमनुंप्रांजल्यःप्रणेमुः ॥ ” इत्यादि श्रुतिपुराणादिवाक्यों से प्रतिपाद्य श्रीमहादेव जीने यह मत्त चर्या अवलम्बन किया तव और भक्तों का क्या पूछना है। ऐसेही ऋपभदेव जीकी भी चर्या है यथा “ जड़ान्धमूकवधिरपिशाचोन्मादकवदवधूतवेपोऽभिभाष्यमाणोऽपिजनानांगृहीत मौनव्रतस्तूर्ष्णींबभूव ॥ ” तथा जड़भरत जी की भी ऐसी ही चर्या है “ तयेत्थमविरतपुरुषपरिच्चर्ययाभगवतेपारिवर्द्धमानानुरागभरद्रुतहृदयशैथिल्यः प्रहर्षवेगेनात्मन्यवधीयमानरोमपुलककुलकऔत्कण्ठ्यप्रवृत्तप्रणयवाष्पनिरुद्धावलोकनयन एवं निजरमणारुणचरणारविंदानुध्यानपरिचितभक्तियोगेन परिप्लुत परमाल्हाद गम्भीरहृदयहृदावगाढधिषणस्तामपि क्रियमाणांभगवत्सपर्यांनसस्मार ॥ ” उद्धव जी ने भी ऐसाही किया है “ मुक्तकण्ठोरुरोदह ” श्रुतदेवजी ने भी ऐसाही किया है “ धुन्वन्वासोननर्तह ” राजा चित्रकेतु की भी यही दशा है “ सउत्तमश्लोकपदाब्जंविष्टरंप्रेमाश्रुवर्षैरुपमेहयन्मुहुः ॥ प्रेमोपरुद्धाखिलवर्णनिर्गमोनैवाशकत्तं प्रस-

गीक्षितुंचिरम् " (श्रीमद्भागवत) ध्रुवजी का भी ऐसाही चरित्र है। 'यत्तद्विष्णुपद-माह यत्रह्वाववीरव्रतऔत्तानपादिः परमभागवतो अस्मत्कुलदेवताचरणारविन्दोदक-मिति यान्नुसवनमुत्कृष्यमाण भगवद्भक्तियोगेन दृढंक्लिद्यमानांतर्हृदय औत्कण्ठ्य-विवशामीलितलोचनयुगलकुड्मलविगलितामलबाष्पकलयाभिव्यज्यमानरोमपुलकोऽद्यु-नापि परमादरेणशिरसाविभर्त्ति ॥' इत्यादि। श्री अक्रूर की भी ऐसी दशा हुई " तद्दर्शनाल्हादविवृद्धसंभ्रमप्रेम्णोर्द्ध्वरोमाश्रुकलाकुलेक्षणः। रथादवस्कंद्यसतेष्वचेष्ट-तप्रभोरमून्यंघ्रिरजांस्यहो इति ॥" इत्यादि कहां तक कहें सब भक्तों के ऐसेही चरित्र हैं क्यौंकि प्रेम भी एक मदिरा है जो पीएगा आपही नाचेगा, रोएगा, हंसेगा, बकेगा, श्रीमहाप्रभु जी का भी 'तत्कथाक्षिप्तचित्तस्तत्विस्मृतान्यो व्रज-प्रियः' नाम है।

६९ ॐ तीर्थीकुर्वन्तितीर्थाणिसुकर्मीकर्माणि सच्छास्त्रीशास्त्राणि।

जो तीर्थों को तीर्थ करते हैं कर्मों को सुकर्म करते हैं, शास्त्रों को सच्छास्त्र करते हैं।

" तीर्थीकुर्वन्तितीर्थाणि " " तीर्थपुनानामुनयोभियन्ति " " स्वयंहितीर्था-णिपुनंतिसंतः " इत्यादि वाक्यों से तथा श्रीगङ्गा जी के प्रति भगवान के वाक्यों से सिद्ध है और संत का कर्मों को सुकर्म करना राजा युधिष्ठिर के यज्ञ के प्रसङ्ग से और व्यास जी के सम्वाद से सिद्ध है संतों की महिमा विशेष कर के ३६। ३९। ४०। ४१। सूत्रों में लिख आए हैं।

७० ॐ तन्मयाः।

(क्योंकि वे) तन्मय (भगवत्स्वरूप) हैं।

तीर्थादि के पवित्र करने में कारण देते हैं कि " पवित्राणांपवित्रंयो मङ्गला-नांचमङ्गलं " इत्यादि वाक्य से संसार में जो कुछ पवित्रता है भगवान की है तो तन्मय जो भक्त हैं उन के दर्शन स्पर्श से क्यौं न पवित्र होंगे "तीर्थपाद" भग वान का नाम है और उनके भक्त उनका चरित्र सर्वदा गान करते है और

भगवान के चरित्रही से, तीर्थ, कर्म, और शास्त्र इन सब को सत्तीर्थ, सत्कर्म, और सच्छास्त्रता होती है यह क्रम से दिखाते हैं " तत्रैवगङ्गायमुनाचतत्रगोदावरीसिंधुसरस्वतीच । सर्वाणितीर्थाणिवसंतितत्रयत्राच्युतोदारकथाप्रसंगः " इत्यादि वाक्यों से तीर्थों का " तत्कर्महरितोषंयत्साविद्यातन्मतिर्यया " " धर्मःस्वनुष्टितः-पुंसां वि- सेनकथासुयः । नोत्पादयेद्यदिरति श्रमएवहिकेवलं " ॥ " दानव्रततपोहोमजपस्वाध्यायसंयमैः श्रेयोभिर्विविधैश्चान्यैः कृष्णेभक्तिर्हिसाध्यते " ॥ धिग्जन्मनस्त्रिवृद्विद्यां धिग्व्रतंधिग्बहुज्ञतां । धिक्कुलंधिक्क्रियादाक्ष्यंविमुखायेत्वधोक्षजे " ॥ " देशः कालः पृथग्द्रव्यं मन्त्रतन्त्रर्त्विजोऽग्नयः । देवतायजमानश्चक्रतुधर्मश्चयन्मयः " ॥ " नैष्कर्म्यमप्यच्युतभाववर्जितं नशोभतेज्ञानमलंनिरंजनं । कुतः पुनः-शश्वदभद्रमीश्वरे नचार्पितंकर्मयदप्यकारणं ॥" इत्यादि से भगवान का कर्म को भी पवित्र करना और एकादश स्कन्ध के ९ अध्याय में " कर्मण्यकोविदाःस्तब्धा " इत्यादि परम भगवान चमस जी के वाक्य में भगवत्तोष विना कर्मांतर की प्रवृत्ति की निन्दा से कर्मों का सुकर्म होना तथा " नयद्वचश्चित्रपदंहरेर्यशोजगत्पवित्रंप्रगृणीतकर्हिचित् । तद्वायसंतीर्थमुशंतिमानसा नयत्रहंसानिरमंत्युशिक्षयाः ॥ तद्वाग्विसर्गोजनताघविप्लवो यस्मिन्प्रतिश्लोकमबद्धवत्यपि । नामान्यनंतस्ययशोंकितानियच्छृण्वन्तिगायन्तिगृणंतिसाधवः ॥" इत्यादि से शास्त्रों का सच्छास्त्र करना सिद्ध है तो तन्मय, तत्स्वरूप, तत्समानादरणीय परम भक्त जन तीर्थादिकों को तीर्थ बनावेंगे इसमें कौन आश्चर्य है ।

७१ ॐ मोदंतिपितरो नृत्यंतिदेवताः सनाथाचेयंभूर्भवति ।

(जिनके चरित्र देख) पितर आनन्द युत होते हैं, देवता लोग नाचते हैं और यह पृथ्वी सनाथ होती है ।

" कुलंपवित्रंजननीचधन्या वसुन्धराभागवतीचधन्या । स्वर्गेपितेपांपितरश्चधन्या येषांकुलेवैष्णवनामधेयं " ॥ " सवैपुण्यतमोदेशः सत्पात्रंयत्र लभ्यते ॥" " सङ्कीर्तनध्वनिं श्रुत्वा येच नृत्यंति वैष्णवाः । तेषांपादरजःस्पर्शात्सद्यःपूतावसुन्धरा ॥ तद्दिनंमङ्गलंधन्यं यशस्यंसर्वमंगलं । श्रीकृष्णकीर्तनंयत्र यतनैवायुषोव्ययः ॥ तत्कीर्तनंभवेद्यत्र कृष्णस्यपरमात्मनः । स्थानंतच्चभवेत्तीर्थंमृतानांतत्रमुक्तिदं ॥ नात्रपापानि-

तिष्टंति पुण्यानिसुस्थिराणिच । तपस्विनाञ्चव्रतिनां व्रतामांतपसांफलं ॥ ” इत्यादि शास्त्र में महिमा कही है तथा श्रीमुख से भी आज्ञा करते हैं (वाराहपुराण) “ जान्हव्यादीनितीर्थाणि पापनिष्कृति हेतवे । कांक्षंति हरिदासानां दर्शनं हरिदासवत् ॥ मद्भक्तजनसम्मर्द पादपांसुविसर्जनात् । चतुःसागरपर्यंतं पावनंस्याद्वसुन्धरे॥” तथा प्रह्लाद जी से भी भगवान ने कहा है “ त्रिःसप्तभिःपितापूतः पितृभिःसह तेनघ । यत्साधोऽस्यगृहेजातो भवान्वैकुलपावनः । यत्रयत्रचमद्भक्ताः प्रशांताःसमदर्शि ः । साधवः समुदाचाराःतेपूयंत्यपिकीकटाः ॥ ” इत्यादि ।

७२ ॐ नास्तितेषुजातिविद्यारूपकुलधनक्रियादिभेदः ।

उन (भक्तों) में जाति, विद्या, रूप, कुल, धन, और क्रिया आदि का भेद नहीं ।

“ नालंद्विजत्वंदेवत्वं ऋषित्वंवासुरात्मजाः । प्रीणनायमुकुन्दस्यनदत्तंनबहुज्ञता ॥” “ विप्राद्विपट्गुणयुतादरविंदनाभपादारविंदविमुखाच्छपचं वरिष्टं । मन्ये” “ अहोवतश्वपचोतो गरीयान्यज्जिह्वाग्रेवर्ततेनामतुभ्यं ॥” “ ब्राह्मणःक्षत्रियोवैश्यः शूद्रोवायदिवेतरः । विष्णुभक्तिसमायुक्तो ज्ञेयःसर्वोत्तमोत्तमः ॥” “ दैतेयायक्षरक्षांसि स्त्रियः शूद्राव्रजौकसः ।” “ विद्याधरामनुष्येपुवैश्याःशूद्राःस्त्रियोंत्यजाः । सर्वेधिकारिणोह्यत्र विष्णुभक्तौयथानृप ॥” “ किरातहूणांध्रपुलिंदपुल्कस आभीरकंकायवनाःखसादयः । येन्येचपापायदुपाश्रयाश्रयाः शुध्यन्तितस्मै प्रभविष्णवेनमः ॥” पञ्चम स्कन्ध में श्रीहनुमद्वाक्य “ नजन्मनूनंमहतोनसौभगं नवाङ्नबुद्धिर्नाकृतिस्तोषहेतुः । तैर्यद्विशिष्टानपिगोवनौकसां चकारसख्येवतलक्ष्मणाग्रजः ”इक्ष्वाकुरैलमुचकुन्दविदेहगाधीरघ्वम्बरीपसगरागयनाहुपार्द्याः । मांधात्वलर्कशतधन्वनु तिदेवदेवव्रतोवलि रमूर्तरयोदिलीपः ॥ सौभर्युतंकशिविदेवलपिप्पलादसारस्वतोद्धवपराशरभूरिषेणाः । येन्ये विभीपणहनूमदुपेन्द्रदत्तपार्थार्ष्टिषेणविदुरश्रुतदेववर्याः । तेवैविदंत्यतितरंतिचदेवमायां स्त्रीशूद्रहूणशबराअपिपापजीवाः । यद्यद्भुतक्रमपरायणशीलशिक्षास्तिर्यक्जनाअपिकिमुश्रुतधारणाये ॥ ” इत्यादि वाक्यों से तदीयों को समता स्पष्ट है और वैष्णवे जातिबुद्धि अर्थात् वैष्णवमें जाति भेद करना यह १४ महा अप-

राध * में से एक गिना है और भागवतों के लक्षण में भी कहा है " नयस्यजन्मकर्माभ्यांन वर्णाश्रमजातिभिः । सज्जतेस्मिन्नहंभावो देहेवै सहरेः प्रियः । ' और श्री हरिराय जी ने अपने ग्रन्थ शिक्षा पत्र में भी ऐसा ही लिखा है इसी से

* (१) भगवान् में देव विशेष या तत्व विशेष बुद्धि (२) शास्त्रों में ग्रन्थ अर्थात् पौरुषेय बुद्धि (३) वैष्णव में जाति बुद्धि (४) गुरु में साधारण मनुष्य बुद्धि (५) प्रतिमा में शिला बुद्धि (६) प्रसाद में खाद्य बुद्धि (७) चरणोदक में जल बुद्धि (८) तुलसी में वृक्ष साधारण बुद्धि (९) गऊ में पशु साधारण बुद्धि (१०) भागवत और गीता में ग्रन्थ साधारण बुद्धि (११) भगवद् लीला में मनुष्य कृत्य बुद्धि (१२) सांसारिक प्रेम वा स्त्री सुख में लीला मान वा स्मरण (१३) श्रीगोपीजन में परकीया भावना (१४) रासलीला में काम बुद्धि (१५) महोत्सव में स्पर्शास्पर्श बुद्धि (१६) नास्तिक वादावलंम्बन (१७) सन्देह पूर्वक धर्माचरण (१८) अश्रद्धा पूर्वक धर्माचरण वा धर्म में आलस्य करना (१९) वैष्णव का बाह्य चरित्र देखना (२०) महात्माओं के चरित्र पर गुण दोष विचारना (२१) अपने को उत्तम समझना (२२) किसी देवता या शास्त्र की निन्दा (२३) भगवत् विग्रह के सामने पीठ लगाकर बैठना (२४) जूता पहने, (२५) माला पहने, (२६) छड़ी लिए, (२७) नील वस्त्र पहने [रेशम में नील शुद्ध है], (२८) बिना दंत धावन किए, (२९) मलत्याग मैथुनादि के पीछे बिना वस्त्र बदले मन्दिर में जाना, (३०) भगवद्विग्रह के सामने हाथ पैर हिलाना, (३१) ताम्बूलादि खाना, (३२) ऊंचे हंसना, (३३) कुचेष्टा करना, (३४) स्त्री को घूरना (३५) क्रोध करना (३६) दूसरे को आदर के हेतु अभिवादन करना, (३७) दुर्गन्ध वस्तु खाकर या पहनकर, बिना गन्ध दूर भए वा अजीर्ण भए पर जाना, (३८) मत्त होना अर्थात् नशा सेवन करके जाना, (३९) किसी का अपमान करना वा मारना, (४०) काम क्रोधादि चेष्टा करना (४१) घर आए मनुष्य की विशेष करके सन्त की अभ्यर्थना न करना (४२) सेवा वा धर्म वा पांडित्य अपने में मानना वा सुकृत को अपना किया समझना [४३] नास्तिकों का, लंपटों का, हिंसकों का, लोभियों का, मिथ्याचारियों का संग करना [४४] विपत्ति परमेश्वर ने दिया यह बुद्धि करना [४५] धर्म के बल पाप करना [४६] किसी को क्षण मात्र भी कष्ट देकर अपने को

वैष्णवों को परस्पर जाति, विद्या, रूप, कुल, धन, और क्रिया आदि का भेद कदापि नहीं करना चाहिये क्योंकि जिस समय वह तदीय हुआ उसी समय सब गुण पूर्ण हो गया " यस्यास्तिभक्तिर्भगवत्यकिंचना, सर्वैर्गुणैस्तत्रसमासतेसुराः " इत्यादि वाक्यों से सिद्ध है ॥

७३ ॐ यतस्तदीयाः ।

क्योंकि (ये) उसके हैं ॥ ७३ ॥

पूर्वोक्त अभेद मानने का हेतु देते हैं कि जब तुम तदीय हो और वे भी तदीय हैं तब परस्परन्यूनाधिक भेद कहां रहा सब एक से भाई हुए और जब सब विद्या, जाति, क्रिया इत्यादिकों का मूल पवित्र करनेवाला भगवान इन के हृदय में बैठा है तो वे आपही सर्वोत्तमोत्तम हो गए।

इति नवम अनुवाक समाप्त हुआ।

धार्मिक समझना [४७] स्त्री पुत्र भृत्य परिवार आश्रित दीन संत की उपेक्षा [४८] वस्तु को अपने उपयोगी समझ कर सेवा में देना वा असमर्पित वस्तु ग्रहण करना [४९] इष्टदेव की शपथ खाना [५०] भगवत् धर्म वा नाम बेंचकर द्रव्य कमाना [५१] अन्य देवता से आशा करना [५२] धर्मशास्त्र की मर्यादा का उल्लंघन [५३] वह दशा भए बिना ध्यान झांकना वा वैसा आचरण करना [५४] देव चरित्र की भांति आचरण करना [५५] सम्प्रदाय भेद से वैष्णवों को ऊंचा नीचा समझना [५६] अवतार की तारतम्य दृष्टि से निन्दा करना [५७] हंसी में भी किसी को तुम परमेश्वर हो यह कहना [५८] परमेश्वर को कदापि किसी कारण से भी अणुमात्र भी परतन्त्र समझना [५९] लोभ से किसी को चरणामृत वा प्रसाद देना [६०] भगवत् चित्र मूर्त्ति नाम आदि की अवज्ञा करना या कहना [६१] किसी जीव को किसी प्रकार भी तापदेना वा उद्वेजन करना [६२] तर्कवितर्क से आस्तिकता से मन डिगाना [६३] भगवदवतार में जन्म कर्म मानना [६४] युगुल स्वरूप में भेद बुद्धि।

७४ ॐ वादोनावलम्ब्यः ।

वाद का अवलम्ब नहीं करना ॥ ७४ ॥

श्रीमुख से निषेध किया है " वादवादांस्त्यजेत्तर्कान् पक्षंकञ्चननाश्रयेत् । वेदवादरतोनस्यान्नपाखण्डीनहैतुकः ॥" इत्यादि क्योंकि वाद से मनुष्य के चित्त में आग्रह की गांठ पड़ जाती है और जहां आग्रह होता है वहां तत्व नहीं प्रगट होता और बहुत वाद करने से तमोगुण उदय होने की भी संभावना है। अब उस में हेतु देते हैं।

७५ ॐ बाहुल्यावकाशत्वादनियतत्वात् ।

(क्योंकि वाद में) बहुत अवकाश है और अनियत है ।७५ *

व्यासजी ने भी कहा है " तर्काप्रतिष्टानात् " तथा श्रुति भी है " नैषामंतीरोपणीयादुःप्रतर्क्यैः " क्योंकि जितने वाद हैं वे भगवान के तत्व जानने के हेतु हैं सो वादों से कभी नहीं जाना जायगा क्योंकि वहां तक बुद्धि जाती नहीं " यतोवाचोनिवर्तंते अप्राप्यमनसासह " "यद्वाचानाम्युदितं" सनत्सुजात में भी "तन्नविदुर्वेदविदोनवेदाः " नेदंयदिदमुपासते " " वेदान्तकृद्देदविदेवचाहं " "शब्दब्रह्मसुदुर्बोधं प्राणेन्द्रियमनोमयं । अनन्तपारगम्भीरं दुर्विगाह्यंसमुद्रवत्" "नैतन्मनोविशतिवागपिचक्षुरात्मा प्राणेन्द्रियाणिच " इत्यादि से ईश्वर की वादों से दूरता स्पष्ट है और वेद भी उसके विषय में नेति नेति कहते हैं तब व्यर्थ बाद क्यों करना क्योंकि उस की प्रतिज्ञा है " भक्त्याहमेकयाग्राह्यः " इस्से वादों को छोड़ कर केवल उस पर विश्वास करना ।

७६ ॐ भक्तिशास्त्राणि मननीयानितदुद्बोधककर्म्माण्यपिकरणीयानि ।

भक्ति शास्त्रों को मनन करना और उस (भक्ति) को बढ़ाने वाले कर्मों को करना ।

---

* ७५ क्योंकि वाद में बाहुल्य का बड़ा अवकाश है और उस में कोई नियम नहीं है ।

बाद छोड़कर केवल सिद्धान्त स्वरूप भक्ति शास्त्रों को देखना और उनका चिन्तन करना, आचार्य और भगवज्जन और सिद्धान्तों के रहस्य को जानना और भक्ति बढ़ानेवाले उत्सव, सत्संग, तीर्थाटन, कथा श्रवण, तदीयों से आलाप, भगवत्सेवा और गुरुशुश्रुषा इत्यादि कर्म्म करना। इससे भक्ति प्रतिक्षण वर्द्धमान रहेगी।

७७ ॐ सुखदुःखेच्छालाभादित्यक्ते काले प्रतीक्ष्यमाणे क्षणार्द्धमपि व्यर्थं न नेयं ।

सुख दुःख इच्छा, लाभादि (का अभिमान) छोड़ कर काल की प्रतीक्षा करते हुए भी आधा क्षण भी व्यर्थ न बिताना ॥ ७७ ॥

यद्यपि इच्छादि के परित्याग से पूर्ण काम हो गए हैं और कुछ कर्तव्य है नहीं तथापि भगवद्भजन विना क्षणभर भी नहीं विताना क्योंकि यह तो नित्य कार्य है देखो मरने के समय करोड़ उपाय करो क्षण भर भी विशेष मनुष्य नहीं रह सकता ऐसे अनमोल क्षण को व्यर्थ विताना कैसी मूर्खता की बात है।

७८ ॐ अहिंसासत्यशौचदयाऽस्तिक्यतादिचारित्र्याणि पालनीयानि ।

अहिंसा, सचाई, शुद्धि, दया, आस्तिक्यता आदि सब, चारित्रों का पालन करना ॥ ७८ ॥

क्योंकि सत्व गुण के ये सब कृत्य हैं इन के न करने से वा इनसे विरुद्ध करने से तमोगुण की प्रवृत्ति होती है और भक्ति में बाधा होती है।

७९ ॐ सर्वदासर्वभावेन निश्चिन्तितैर्भगवानेव भजनीयः ।

सर्वदा सब प्रकार से निश्चिन्त होकर भगवान ही का भजन करना ॥ ७९ ॥

साधारण शिक्षा देकर सिद्धान्त की शिक्षा देते हैं कि सर्व्वदा सब काल में दुःख में सुख में अनेक कर्मों में प्रवृत रहने के समय भी सर्व भाव से अर्थात् उसको अपनां सर्वस्व मान करं केवल उसीही का भजन करना और भजन भी निश्चिन्त होकार करना क्यों जो किसी प्रकार का खटका रहता है तब भजन भली भांति नहीं होता।

८० ॐ सकीर्त्यमानश्शीघ्रमेवाविर्भवत्यनुभावयति भक्तान्।

वह गाए जाने से शीघ्रही प्रगट होता है और अपने भक्तों को अनुभव कराता है ॥८०॥ *

सो तो उसकी प्रतिज्ञाही है "नाहंवसामि वैकुण्ठे योगिनांहृदयेनच। मद्भक्तायत्रगायन्ति तत्रतिष्ठामिनारद॥" और नारद जी ने भी कहा है "प्रगायतः स्ववीर्याणि तीर्थपादः प्रियश्रवाः। आहूतइवमेशीघ्रं दर्शनंयातिचेतसि॥" श्रीमहाप्रभु जी ने भी कहा हैं "क्लिश्यमानान्जनान्दृष्ट्वा कृपायुक्तोयदाभवेत्। तदासर्वं सदानन्दं हृदिस्थं निर्गतंवहिः॥ सदानन्दमयस्यापि कृपानन्दःसुदुर्लभः। हृद्गतः स्वगुणान्श्रुत्वा पूर्णःप्लावयतेजनान्॥" और श्रीमहाप्रभु जीका "स्वयशो गानसंहृष्टहृदयांभोजविष्टरः। यशःपीयूषलहरी प्लावितोन्यरसःपरः॥" वाक्य है।

८१ ॐ त्रिसत्यस्यभक्तिरेव गरीयसी भक्तिरेव गरीयसी।

त्रि (काल में) सत्य (भगवान) की भक्ति ही सब से (साधनों से) बड़ी है भक्ति ही बड़ी है ॥८१॥

"भक्त्यैवतुष्टिमभ्येति विष्णुर्नान्येनकेनचित्। प्रीयतेमलयाभक्त्या हरिरन्यद्विडम्वनं, भक्त्यातुतोष भगवान् गजयूथपाय" भक्त्याहमेकयाग्राह्यः" भक्तिःपुनातिमन्निष्ठा" भक्त्यामामभिजानाति" भक्त्यैकलभ्यः पुरुषोत्तमोहि" भक्तिमान्यःसमेप्रियः" "भक्तियोगेनसेवते" भक्त्यैकलभ्येपुरुषेपुराणे मुक्तौ किमर्थं क्रि-

---

* ८० वह प्रेम मूर्ति भगवान भजन करने से शीघ्रही हृदय में वा प्रत्यक्ष प्रगट होकर भक्तों को प्रेमानन्द का अनुभव कराता है।

यतेप्रयत्नः " "धर्मार्थकामैःकितस्यमुक्तिस्तस्यकरे स्थिता । समस्तजागतांमूर्ध्न्येयस्यभक्तिःस्थिराकरे ॥" "ब्रह्मसंस्थोमृतत्वमेति" "मयिभक्तिर्हि भूतानाममृतत्वायकल्पते" "तन्निष्ठस्यमोक्षोपदेशात्" "तत्संस्थस्यामृतोपदेशात्" "सकृदेवप्रपन्नाय तवास्मीतिप्रयाचते । अभयंसर्वभूतेभ्यो ददाम्येतद्व्रतंमम ॥" "भक्त्यात्वनन्ययाशक्यः" "भक्त्यालभ्यस्त्वनन्यया" "श्रद्धावान्भजतेयोमांसमेयुक्ततमोमतः" "भक्तिप्रियोमाधवः" "मयिसंजायते भक्तिः कोन्योस्यार्थोवशिष्यते" "योमेभक्त्याप्रयच्छति ।" "तदहंभक्त्युपहृतं" " अण्वप्युपाहृतंभक्तैःप्रेम्णाभूर्येवमेभवेत् " " श्रेयोभिर्विविधैश्चान्यैः कृष्णेभक्तिर्हि साध्यते" " अपिचेत् सुदुराचारो भजतेमामनन्यभाक् " " अहंभक्तपराधीनो " इत्यादि वेद, उपनिषत्, श्रीमुखवाक्य, रामायण, भारत, स्मृति, व्याससूत्र, शांडिल्यसूत्र, पुराण, और तन्त्रों से सिद्ध है कि सब साधनों में मुख्य साधन केवल भक्ति ही है विस्तर भयात् विशेष प्रमाण नहीं दिया ।

८२ ॐ गुणमाहात्म्यासक्ति १ रूपासक्ति २ पूजासक्ति ३ स्मरणासक्ति ४ दासासक्ति ५ सख्यासक्ति ६ कान्तासक्ति ७ वात्सल्यासक्ति ८ आत्मनिवेदनासक्ति ९ तन्मयतासक्ति १० परमविरहासक्ति ११ रूपा एकधाप्येकादशधा भवति ॥

(यह भक्ति) एक रूपही होकर गुणमाहात्म्यासक्ति, रूपासक्ति, पूजासक्ति, स्मरणासक्ति, दासासक्ति, सख्यासक्ति, कान्तासक्ति, वात्सल्यासक्ति, आत्मनिवेदनासक्ति, तन्मयतासक्ति, और परमविरहासक्ति रूप से एकादश प्रकार की होती है ॥ ८२ ॥ *

* ८२ जो भक्ति गुण वा महात्म के सुनने में रूप में पूजा में स्मरण करने में दास्य करने में सखा भाव में वात्सल्य भाव में कान्ता भाव में आत्म निवेदन में तन्मय में और परम विरह में अलग अलग वा कुछ वा सब आसक्तियों के होने से एक भी एकादस भांति की सी होती है ।

इस से श्रवणादि नवधा भक्ति गौण है इसका निषेध किया क्योंकि नारद जी का मत है कि भक्ति बीज के हृदय में उत्पन्न होने के पूर्व जो श्रवणादिक है उसको श्रवण भक्ति नहीं पुकार सक्ते और यह पूर्वोक्त जो श्रवणादिक है वे शुद्धा भक्ति से भिन्न नहीं हैं अतएव प्रति शब्द के साथ आसक्ति का शब्द दिया है। जो यह शंका करो कि जिनको प्रेम सिद्ध है उनको तो पूर्वोक्त आसक्तियां होंगी सो नहीं यह विशेष आसक्ति परत्व है। जैसे प्रेमियों को अपने प्रेम पात्र का सब ही अंग सुन्दर लगता है तथापि प्रति प्रेमी को अपने प्रेम पात्रों में कोई अंग वा चेष्टा विशेष मोह के विषय होते हैं, वैसेही पूर्ण प्रेमियों को यद्यपि सबही आसक्तियां सिद्ध हैं तथापि किसी की किसी में विशेष रुचि है किसी को किसी में है। श्रवणादिकों को गौणी भक्ति मानने में एक बड़ा दोष यह है कि जैसे अर्जुन सख्य के वा श्री हनुमान जी दास्य के अधिकारी हैं तो जिनके मत में यह भक्तियां गौणी हैं उन के मत से ये भक्त भी गौण हुए। तो इस सूत्र से शुक, प्रल्हाद, अर्जुन, बलि, बिभीषण आदि एक एक भक्ति के विशेष अधिकारी महानुभावों को गौणभक्त कहनेवालों का मत परास्त हुआ और सिद्ध हुआ कि प्रेम एक ही वस्तु है जो केवल रुचि की विचित्रता से अलग अलग छलावे दिखता है। इन में तन्मयतासक्ति तथा परम विरहासक्ति वियोगी भक्तों को सिद्ध है। शेष आसक्तियां संयोगी वियोगी दोनों को सिद्ध हैं। और किसी२ भक्त को एक एक आसक्ति सिद्ध है परन्तु किसी को दो तीन भी सिद्ध हैं और श्री गोपीजन को तो सभी सिद्ध हैं।

१ "गुणमाहात्म्यासक्ति"—जैसा परीक्षित् को नारद को, तथा हनुमान जी को और श्रीपृथुराजा को जिसने केवल हरि गुण श्रवण के अर्थ दस हजार कान मांगे थे। परीक्षित ने कहा है " नैषातिदुःसहाक्षुन्मां त्यक्तोदमपिवाधते। पिवंतं त्वन्मुखांभोजच्युतं हरिकथामृतं ॥" नारद जी का वाक्य " देवदत्तामिमांवीणां स्वरब्रह्मविभूषितां। मूर्छयित्वा हरिकथां गायमानश्चराम्यहं " "प्रगायतःस्ववीर्याणि तीर्थपादप्रियश्रवाः। आहूतइवमे शीघ्रं दर्शनंयातिचेतसि ॥" हनुमान जी का तो ध्यानही है " यत्रयत्ररघुनाथकीर्तनं तत्रतत्रकृतमस्तकांजलिं। बाष्पवारिपरिपूरितलोचनं मारुतिंनमतराक्षसांतकं ॥" तथा अपने मुंह से कहा है [रामायण उत्तरकाण्ड १०७ सर्ग ३१ श्लोक] " यावत्तवकथालोके विचरिष्यतिपावनी। तावत्

स्थास्यामिमेदिन्यां तवाज्ञामनुपालयन् ॥" तथा [श्रीमद्भागवत पंचम स्कन्ध १९ अध्याय ८ इलोक] "सुरोऽसुरोवाप्यथवानरोनरः सर्वात्मनायःसुकृतज्ञमुत्तमं । भजेतरामंमनुजाकृतिंहरिं यउत्तरामनयत्कौसलान्दिवं " ।

२ "रूपासक्ति"—दो प्रकार की एक किशोर रूप में एक बाल रूप में । बाल रूप में श्री मातृचरण श्री नन्दोपनन्दादिक वृद्ध व्रज वासियों को, तथा किशोर रूप में व्रज की स्त्री पुरुष पशु पाक्षि मात्र को जैसा " अहोअमीदेववरामरार्चितं" इत्यादि श्लोकों में, श्री मुख से भी कहा है और "अक्षण्वतांफलमिदंनपरंविदामः" इत्यादि वेणु गीत के श्लोकों से तथा " वामबाहुकृतवामकपोलो " इत्यादि युगल गीत के श्लोकों से सिद्ध है ।

३ " पूजासक्ति "—महाराज पृथु को, जैसा उन्होंने कहा है " यत्पादसेवाभिरुचिस्तपखिनामशेपजन्मोपचितंमलंधिः । सद्यःक्षिणोत्यन्वहमेधतीसती यथापदांगुष्ठविनिःसृतासरित् ॥" इत्यादि ।

४ " स्मरणासक्ति "—परम भागवत प्रह्लाद को, जैसा "सोहंप्रियस्यसुहृदः परदेवताया लीलाकथास्तवनृसिंहविरंच्यगीताः । अंजस्तितर्म्यनुगृणन्गुणविप्रमुक्तो दुर्गाणितेपदयुगालयहंससंगः ॥" इत्यादि ।

५ " दासासक्ति"—परम भागवत प्रह्लाद और हनुमान आदि को, जैसा प्रह्लाद जी का वाक्य " आयुःश्रियंविभवमैंद्रियमाविरिंच्यात् । नेच्छामितेविलुलितानुरुविक्रमेण कालात्मनोपनयमांनिजभृत्यपार्श्वं ॥ " तथा हनुमान् जी का वाक्य " दासोहंकोसलेन्द्रस्य रामस्याक्लिष्टकर्मणः ।" इत्यादि और यथा अक्रूर जी का वाक्य " अहंहिनारायणदासदासो दासानुदासस्यच दासदासः." ॥ विदुर जी का वाक्य " वासुदेवस्ययेभक्ता शान्तास्तद्गतमानसाः । तेषांदासस्यदासोहंभवेयंजन्मजन्मनि ॥" इत्यादि । तथा उद्धव जी और युधिष्ठिर को तो हरिदास नाम ही मिला है ।

६ "सख्यासक्ति"—जैसा अर्जुन, सुग्रीव, उद्धव, कुबेर, सुदामा, देव, मुद्गल श्रीदामादि, गरुड़ इत्यादि और कभी कभी हनुमान जी को भी हो सक्ती है । अर्जुन को श्रीमुख से कहा है " भक्तोसिमेसखाचेति " तथा अर्जुन का वाक्य " सखेतिमत्वाप्रसभंयदुक्तं हेकृष्णहेयादवहेसखेति " तथा श्रीमद्भागवत " नर्माण्युदाररुचिरस्मितशोभितानि हेपार्थहेऽर्जुनसखेकुरुनन्दनेति संजल्पितानिनरदेवहृदिस्पृ-

शानिःस्मर्तुर्लुठन्तिहृदयंममामाधवस्य ॥ शय्यासनाटनविकत्थनभोजनादिष्वैक्याद्वयं-स्यऋतवानितिविप्रलब्धः । सख्युःसखेवपितृवत्तनयस्यसर्वं सोहेमहान्महितहाकुमते-रघंमे॥" तथा "याप्रीतिरविवेकानां विषयेष्वनपायिनी। त्वामनुस्मरतःसामेहृदयान्नाप-सर्पतु ॥" उद्धव जी की " वृष्णीनांप्रवरोमंत्री कृष्णस्यदयितःसखा ॥" श्रीमुख वाक्य भी " नोद्धवोण्वपिमन्न्यूनो यद्गुणैर्नार्दितःप्रभुः " "नतथामेप्रियतमोआत्मयो-निर्नशंकरः । नचसंकर्षणोनश्रीर्नैवात्माचयथाभवान् " उद्धव जी का वाक्य " शय्यासनाटनस्थान स्नानक्रीड़ाशनादिषु । कथंत्वांप्रियमात्मानंवयंभक्तास्त्यजे-महि ॥" तथा " मंत्रेषुमांवाउपहूययत्त्वमकुण्ठिताखण्डसदात्मबोधः । पृच्छेःप्रभो मुग्धइवाप्रमत्तस्तन्नोमनोमोहयतीवदेव " कुबेर की श्रीशिव जी में, यथा मनुजी का वाक्य " हेलनंगिरिशभ्रातुर्धनदस्यत्वयाकृतं ।" तथा श्रीशुकदेव जी का वाक्य " उपास्यमानंसख्याच भर्त्रागुह्यकरक्षसां ।" कोश में भी " कुबेरःत्र्यम्बकसखा " इत्यादि । सुवल श्रीदामादि की यथा " श्रीदामानामगोपालो रामकेशवयोःसखा । सुवलस्तोककृष्णाद्या गोपाःप्रेम्णेदमब्रुवन् ।" एवंसुहृद्वचः श्रुत्वा सुहृत्प्रियचिकीर्षया ।" इत्यादि दशम के १८ अध्याय में सब इनही लोगों के सख्यत्व की सीमा लिखी है । श्रीसुदामा जी की यथा " कृष्णस्यासीत्सखाकश्चिद्ब्राह्मणोब्रह्मवित्तमः । ननुब्र-ह्मन्भगवतःसखासाक्षाच्छ्रियःपतेः ॥" जिसका भगवान ने ऐसा आदर किया " तंविलोक्याच्युतोदूरात्प्रियापर्यंकमास्थितः । सहसोत्थायचाभ्येत्य दोर्भ्यांपर्यग्रही-न्मुदा ॥ सख्युःप्रियस्यविप्रर्षे रंगसंगातिनिर्वृतः । प्रीतोव्यमुंचदब्बिंदून्नेत्राभ्यांपुष्करे-क्षणः ॥ अथोपवेश्यपर्यंके स्वयंसख्युःसमर्हणं । उपहृत्यावनिज्यास्यपादौपादावने-जनीः ॥ अग्रहीच्छिरसाराजन् भगवांल्लोकपावनः । कुचैलंमलिनंक्षामं द्विजंधमनि-संततं ॥ देवीपर्यचरच्छैब्याचामरव्यजनेनवै ॥ योसौ त्रिलोकगुरुणा श्रीनिवासेन संभृतः । पर्यंकस्थां श्रियं हित्वा परिष्वक्तोऽग्रजो यथा ॥" जिसके चावल भगवान ने आपही छीन कर खाए और " सख्युः प्रियचिकीर्षया " " परमप्रीणनं सखेः " " पर्यंकेभ्रातरौयथा " " दाशार्हकाणामृषभः सखामे " " सुहृत्कृतं फल्ग्वपिभूरिकारि " " तस्यैवमेसौहृदसख्यमैत्री " " एवंसविप्रोभगवत्सुहृत्तदा " इत्यादि । गरुड़ की जैसी " भगवान्भगवत्प्रियः " " विनतासुतांसे विन्यस्त-हस्तमपरेणधुनानमब्जं । " तथा हनुमान जी की " नजन्मनूनंमहतोनसौभगंनवा-

ङ्नबुद्धि र्नाकृतिस्तोपहेतुः । तैर्यद्विसृष्टानपिनोवनौकसश्चकारसख्येवतलक्ष्मणाग्रजः ॥"
तथा सुग्रीव की वाल्मीकि रा० किष्किन्धा षष्ठ सर्ग श्लोक १२ " तमब्रवीत्ततो-रामः सुग्रोवं प्रियवादिनं । आनयस्व सखे शीघ्रं किमर्थंप्रविलम्बसे ॥" तथा सुग्रीव का वाक्य ७ सर्ग श्लोक १३ " हितंवयस्यभावेन ब्रुवे नोपदिशामि ते । वयस्यतां पूजयन्मे नत्वंशोचितुमर्हसि " तथा श्रीरामजी का वाक्य ७ सर्ग श्लोक १६ "कर्तव्यंयद्वयस्येन स्निग्धेनचहितेनच । अनुरूपंचयुक्तञ्च कृतंसुग्रीवतत्त्वया ॥ एपचप्रकृतिस्थोहमनुनीतस्त्वयासखे । दुर्लभोहीदृशोवंधुरस्मिन्काले विशेपतः ॥" इत्यादि ।

७ " कान्तासक्ति "—यथा श्री गोपीजन को । यद्यपि श्रीगोपीजन को सभी आसक्तियां सिद्ध हैं यह पहले लिख आए हैं और विरहासक्ति में निरूपण भी करेंगे तथापि श्री गोपीजन की आसक्तियों में कांतासक्ति अङ्गी भाव से है जो "कृष्णंविदुःपरंकान्तं " इत्यादि वाक्यों से सर्वत्र सिद्ध है ।

८ "वात्सल्यासक्ति"— श्रीनन्द, यशोदा, कौशल्या, दशरथ, सुमित्रा, कश्यप, अदिति, धनिष्टा, श्री वृषभानु, कीर्तिदा, पूर्णमासी इत्यादि को ।

९ "आत्मनिवेदनासक्ति"—यथा वलि को, सर्वस्वात्मनिवेदनेवलिरभूत् ।

१० "तन्मयतासक्ति"—यथा श्री शिव जी को, जिनका अभेद पुराणों से सिद्ध है ।

११ "परमविरहासक्ति"—यथा श्री उद्धवादिको, "येगेन्नकस्तद्विरहंसहेत" इत्यादि । तथा श्री गोपीजन को ।

अब श्री गोपीजन में सभी आसक्तियां सिद्ध हैं यह दिखाते हैं ।

१ "गुणमाहात्म्यासक्ति"—श्री गोपीगीत, वेणुगीत, युगुलगीत, भ्रमरगीत, आदि से सिद्ध है, २ "रूपासक्ति"—गोपीनांपरमानन्द आसीद्गोविन्ददर्शने । क्षणंयुगशतमिव यासां येनविनाभवत् ॥ अपरानिमिपद्दृग्भ्यां जुषाणातन्मुखांबुजं आपीतमपिनातृप्यत्संतस्तच्चरणंयथा ॥" इत्यादि से, ३ "पूजासक्ति" फल फूलादि दान से, ४ "स्मरणासक्ति"—"स्मरंत्यः कृष्णचेष्टितं" इत्यादि से, ५ "दासासक्ति" "भवामदास्यः" " श्यामसुन्दरतेदास्यः " " शिरस्सुचकिंकरीणां " इत्यादि, ६ "सख्यासक्ति"—"सखउदेयिवान्" "भजसखेभवत्" "कितवयोषितः " इत्यादि से ७ "कान्तासक्ति"—"कान्तकामदं" "प्रेष्ठोभवान्" "दयितदृश्यतां" "सुरतनाथते" इत्यादि वाक्यों से । ८ वात्सल्यासक्ति—"गोप्यः सुमृष्टमणिकुण्डल" से

दामोदर लीला आदि में स्पष्ट है। ९ "आत्मनिवेदनासक्ति"—"यःपत्यपत्य" इत्यादि श्लोकों से, १० "तन्मयतासक्ति"—"कृष्णोहं" इत्यादि वाक्यों से, ११ "परमविरहासक्ति" "क्षणंयुगशतमिव" इत्यादि से। और इन श्री गोपीजन को नित्यलीला में श्री मुख का दर्शन होते भी केवल पलक की ओट में जिनको परमवियोग होता है और कहती हैं कि हे निर्दई विधाता इस मुखचन्द्र देखने के हेतु तुझको रोम रोम में आंखें बनानी थीं उसके बदले यह उलटा अन्धेर किया कि बिना बात की पलक बना दी। तो जिनका प्रेम और विरह इतना सीमा के बाहर है उनको ये सब आसक्तियां सिद्ध हों इस में क्या आश्चर्य है। जिन की चरणारविन्द की रेणु के प्रसाद से लोग प्रेम पद के अधिकारी हो सकते हैं उन के प्रेम का क्या पूछना है। भक्तिमार्ग के उद्धार कर्ता श्रीआचार्य्य जी ने जिनकी स्पृहा की है यथा 'गोपिकानांचयत्दुःखं तत्दुःखंस्यान्ममक्कचिन्॥' और जिन को अपने मार्ग का गुरू लिखा है यथा " गोपिकाप्रोक्तागुरवःसाधनेमताः " तो अब इस से बढ़ कर उनके आदर के हेतु वा प्रमाण के हेतु हम क्या कहैं।

ये प्रेम के ग्यारह अलग २ भेद नहीं हैं किन्तु स्वरूप हैं। क्योंकि जो अलग होती तो जिस को एक सिद्ध हो उस को दूसरी न होती और यदि दो सिद्ध होंगी तो एक से जिस को दो सिद्ध हो उस की विशेषता होगी और प्रेमियों में कोई छोटा बड़ा नहीं इस से भक्ति एकही है केवल प्रेमियों की रुचि भेद से अलग दिखाती है।

८३ ॐ इत्येवंवदन्तिजनजल्पनिर्भया एकमताःकुमारव्यासशुकशाण्डिल्यगर्गविष्णुकौण्डिन्यशेषोद्धवारुणिबलिहनुमद्विभीषणादयो भक्त्याचार्याः

कुमार (सनकादिक) व्यासजी, शुकदेवजी, शाण्डिल्य, गर्गाचार्य, विष्णु, कौण्डिन्य, शेष, उद्धवजी, आरुणि, बलि, हनुमानजी, विभीषण, आदि भक्ति के आचार्य, लोक के उपहास से निर्भय होकर पूर्वोक्त मार्ग कहते हैं॥ ८३॥

* ८३ लोगों की बकवाद से निर्भय होकर एक मत से कुमार व्यास शुक शाण्डिल्य गर्ग विष्णु कौंडिन्य शेष उद्धव आरुणि बलि हनुमान और विभीषणादिक भक्ति के आचार्य यही कहते हैं।

कुमार—सनकादिक, इन का प्रेम मार्ग निम्बार्क मत के नाम से प्रसिद्ध है. भगवान ने इन लोगों से अपना तत्व हंस का स्वरूप लेकर कहा हैं और इनकी वंश परम्परा मन्वन्तर वर्णन में श्रीमद्भागवत में लिखी है " महर्षयः सप्तपूर्वे चत्वारोमनवस्तथा । मद्भावामानसाजाता येषांलोकइमाःप्रजाः ॥" और प्रमाणिक स्मार्तों के निबंधों में भी एकादशी के प्रसङ्ग में ४९ दंड का वेध मानने वालों का इन का मत " कपालवेधमित्याहु राचार्यायेहरिप्रियाः " " निम्बार्को भगवान्येषां " "मित्याहुः सनकादयः ॥" इत्यादि वाक्यों से प्रमाण करके लिखते हैं और निम्बार्काचार्य ने अपना परमाचार्य इनही लोगों को माना भी है जैसा उन्हों ने दशश्लोकी में कहा है " उपासनीयं नितरांजनैःसह प्रहाणयेऽज्ञानतमोनिवृत्तये । सनंदनाद्यैर्मुनिभिर्यथोक्तं श्रीनारदायाखिलतत्वसाक्षिणे ॥" इत्यादि और लोग तो भक्ति साधनार्थ ही प्रगट हुए हैं क्यौंकि यद्यपि उन्हों ने अपना शिष्य रूपी वंश तो स्थापन किया पर पिता की आज्ञा भी न मान कर मोह करने वाली और सृष्टि न किया यथा " तेनैच्छन्मोक्षधर्माणो वासुदेवपरायणाः " इत्यादि वरंच भक्ति स्थापनार्थ यह भगवानही का अवतार है "तप्तुन्तपोविविधलोकसिसृक्षया मे आदौ सनात्स्वतपसः सचतुःसनोभूत् । प्राक्कल्पसंप्लवविनष्टमिहात्मतत्वं सम्यग्जगादमुनयोयदचक्षतात्मन् ॥" इति ।

व्यास—व्यास जीने तो मुक्तकण्ठ होकर कहाही है कि " आलोड्यसर्वशास्त्राणि विचार्यचपुनःपुनः । इदमेकं सुनिष्पन्नं ध्येयोनारायणः सदा ॥" इत्यादि जो कहो कि अनेक पुराणों में व्यास जी ने अनेक मत और उपासना कही है तो उस में भक्ति की विशेषता कहां आई यह शंका मत करना क्यौंकि व्यास जी की तो दृढ़ प्रतिज्ञा है " वेदेरामायणेचैवपुराणेभारतेतथा । आदावन्तेचमध्येच हरिःसर्वत्रगीयते ॥" इत्यादि इन को भक्ति मिलने का विशेष वर्णन भक्त वंश परंपरा में मिलेगा ।

शुकदेवजी—शुकदेवजी ने राजा से पहिले ही सिद्धान्त स्वरूप कहा है "देहापत्यकलत्रादिष्वात्मसैन्येष्वसत्स्वपि । तेषांप्रमत्तोनिधनं पश्यन्नपि नपश्यति ॥ तस्माद्भारतसर्वात्माभगवान्हरिरीश्वरः । श्रोतव्यःकीर्तितव्यश्च स्मर्तव्यश्चेच्छताभयं ॥ एतावान्सांख्ययोगाभ्यां स्वधर्मपरिनिष्टया । जन्मलाभःपरःपुंसामंतेनारायणस्मृतिः ॥ प्रायेणमुनयोराजन् निवृताविधिनिषेधतः । नैर्गुण्यस्थारमन्तेस्म गुणानुकथने हरेः ॥" इत्यादि

क्यौ न कहे वेद जिनको मुक्त लिखता है "शुको मुक्तो वामदेवोवा" और भगवान की माया जिनको कभी व्यापीही नहीं, जिनको देख कर स्त्रियों ने भी लज्जा न की, जिन्हों ने पिताको वृक्षों में से उत्तर दिया और प्रेममार्ग का सिद्धान्त स्वरूप श्रीमद्भागवत प्रगट करके राजा परीक्षित को मोक्ष दिया तथा सप्ताह में भी बीच २ में जब लीला स्मरण आती थी तब वेसुध हो जाते थे उन के प्रेम का निरूपण यहां क्या हो सकता है ॥

शाण्डिल्य—शाण्डिल्य जीने तो स्वतन्त्र भक्तिशास्त्र ही रचा है जिसमें ज्ञान योगादि से भक्ति साधन ही उत्तम कहा है।

गर्ग—गर्गाचार्य ने अपनी गर्गसंहिता में अनेक प्रकार के भक्ति के रहस्य तथा यादव आदि के नष्ट होने पर जब भगवत्तत्व का जानने वाला कोई नहीं रहा तब वज्रनाभ से अनेक प्रकार का रहस्य, जो व्रजमें तथा उद्धव नारदादिकों के मुख से सुना था, कह कर फिर से भक्ति- मार्ग का स्थापन किया । इनको वात्सल्य और दास्य दोनों भक्ति सिद्ध थी ।

विष्णु—लोक में जिनका नाम विष्णु स्वामी प्रसिद्ध है । विशेष वर्णन परम्परा में देखो ।

कौण्डिन्य—कौण्डिन्य के विषय में हम इतनाही जानते हैं कि हमारे आचार्य ने अपनी गुरु परम्परा में श्री गोपीजन के समान इनको भी माना है यथा " कौण्डिन्योगोपिकाःप्रोक्ता गुरवः " इति और जिन को तन्मयतासक्ति थी जिनको इस आसक्ति से बृक्षों में भी सर्वत्र श्री अनन्तका प्रत्यक्ष दर्शन हुआ था ।

शेप—शेप जी ने केवल दास्य भक्ति की शिक्षा के हेतु श्री लक्ष्मण जी का स्वरूप लेकर संसार को दिखाया कि दास्य इसका नाम है और इस रीति करना होता है और आप ने भी पञ्चवटी में अपने सब गुप्त सिद्धान्त उपदेश किए तथा श्री लक्ष्मी जी और गरुड़ जी से नारायणीय सिद्धान्त पाकर उन्हों ने चित्रकेतु इत्यादि को उपदेश किया जो मत अब तक रामानुजीय नाम से प्रसिद्ध है। और जिस में यामुन शठकोप इत्यादि महात्मा और अग्रस्वामी इत्यादि प्रेमी हुए ।

उद्धव—उद्धव जी का क्या पूछना है जिनको प्रेमपात्र और प्रेमी अर्थात् श्रीभगवान तथा श्री गोपीजन ने आप अपने मुख से प्रेममार्ग का उपदेश किया है उनकी क्या बात है । ये वही उद्धव जी हैं जिनको छोटेपन से खेलहीं में

भगवत्पूजा का व्यसन था। और जिनको भगवान ने अपना तत्व संसार में स्थापन करने के हेतु ब्रह्मशाप उल्लंघन करके पृथ्वी में छोड़ा उन का क्या पूछना है।

आरुणि— इनही का नामांतर निम्बार्क है और ये सनकादिकों के मत के प्रवर्तक हैं और इन के दश श्लोक जो मिलते हैं उनमें युगल स्वरूप की भक्ति का सिद्धान्त किया है।

"व्यूहांगिनंब्रह्मपरंवरेण्यंध्यायेमकृष्णंकमलेक्षणंहरिं। अंगेतुवामेवृषभानुजामुदा विराजमानामनुरूपसौभगां॥ सखीसहस्रैःपरिसेवितांसदास्मरेमदेवींसकलेष्टकामदाम्।" ये बड़े प्राचीन हैं क्योंकि श्रीमद्भागवत में वेद स्तुति में इनका मत कहा है और जहां परीक्षित् राजा को मिलने के हेतु ऋषिगण आये हैं वहां भी इनका नाम है यथा "राजर्षिवर्याअरुणादयश्च" ये श्रीस्वामिनी जी के कंकण के पूर्णावतार हैं अतएव इन को लोग सुदर्शन तत्व कहते हैं और किसी समय इन्हों ने यतियों का निमन्त्रण किया था उनके आने में विलम्ब हुआ और जब भोजन करने बैठे सांझ हो गई इस से उन यतियों ने कहा कि अब हम नहीं खांयगे तब इन्हों ने कहा कि आप लोग खाइये अभी सूर्य है और आप नीम पर चढ़कर सूर्य बन के दर्शन दिया अतएव निम्बार्क नाम पड़ा। इन के सेव्य श्री स्वरूप श्रीगोपीजन वल्लभजी और शालिग्राम सर्वेश्वर जी अभी विद्यामान हैं तथा श्रीनिवासाचार्य पुरुषोत्तमाचार्य इत्यादि धुरंधर पण्डित और हरिवंश जी, व्यासजी, स्वामी हरिदास जी इत्यादि प्रेमी इन्हीं के सम्प्रदाय में हुए हैं।

बलि—इनको सर्वस्वात्मनिवेदन भक्ति सिद्ध थी अपने पितामह साक्षात् प्रल्हाद जी से उपदेष्टा और भगवान से पात्र पावें तो फिर इनका क्या पूछना है। कहते हैं कि यतीन्द्र, बलि अंबरीप और विष्वक्सेन नाम के किसी काल में प्राचीन चार वैष्णव सम्प्रदाय थे परन्तु अब सब लुप्त हुए।

हनुमान्—श्रीहनुमान् जी की दास्य भक्ति का वर्णन ऊपर दास्यासक्ति निरूपण में कह आये हैं और क्या कहैं केवल भगवान की कथा श्रवण के हेतु जिनका जीव धारण है उनके प्रेम का महात्म्य कौन कह सकता है? क्योंकि उन्हों ने भगवान से यही बर मांगा है कि "यावत्तवकथालोकेविचरिष्यतिपावनी। तावत्स्थास्यामिमेदिन्यांतवाज्ञामनुपालयन्॥" और जिनका मत अद्यापि श्रीभगवान के

मुखारविन्द से सुने हुए विष्णुतत्व के अनुसार " मध्वमत " नाम से प्रसिद्ध है।

विभीषण—इन्हों ने कुसंगति में रह कर भी भगवद्भक्ति लोगों को सिखाई, वरञ्च " सकृदेवप्रपन्नाय तवास्मिइतियाचते। अभयं सर्वभूतेभ्योददाम्येतद्व्रतं मम॥" यह जगदुपकारिणी प्रतिज्ञा इन्ही के हेतु हुई है।

८४ ॐ यइदं नारदप्रोक्तं शिवानुशासनं विश्वसति श्रद्धधते सभक्तिमान् भवति सप्रेष्ठंलभते सप्रेष्ठंलभत इति।

इस नारद जी के कहे हुए शिवानुशासन पर जो विश्वास और श्रद्धा करता है वह भक्तिमान् होता है, वह प्यारे को पाता है वह प्यारे को पाता है॥ ८४॥ इति

उपदेश करके उसका फल कहते हैं। विशेष करके प्रेष्ट शब्द से यह दिखाया कि भगवान इत्यादि को ब्रह्म, विष्णु, नारायण, भगवान इत्यादि भावों से तो और लोग भी पावेंगे परन्तु प्रियतम भाव से वही पावेगा जो इस प्रेम सूत्र पर विश्वास करेगा और प्रेम मार्ग पर चलेगा।

इति नारदीये भक्तिशास्त्रे दशमअनुवाक समाप्त हुआ।

यह श्रीनारद जी का कहा हुआ भक्तिशास्त्र दस अनुवाक में "तदीयसर्वस्व" नामक, तदीय नामांकित अनन्य वीरवैष्णव हरिश्चन्द्र कृत भाषा भाष्य सहित समाप्त हुआ। इति।

सूचना।

श्रीनारदसूत्रभाष्य—तदीयसर्वस्व।

प्रथम यह सूत्र केवल वृत्ति समेत हरिश्चंद्रास म्यागझीन में छपा है. उसी-पर से पृथक पुस्तकाकार भी यह चतुःश्लोकी सहित छपा है। बाबू हरिश्चंद्र जीने जो भाष्य (तदीयसर्वस्व) लिखा वह 'कविवचनसुधा' में क्रमशः छपता गया और तदनंतर पुनरपि स्थान स्थान पर न्यूनाधिक संशोधन करके बाबू साहब ने यह पृथक् पुस्तकाकार क० व० सु० पर से छपवाया। अबकी ग्रंथावली में तीनो पुस्तक मिलाकर छपवाया गया है। और नारदसूत्रवृत्ति में जहां कुछ भिन्नता जानी गई उसको उसी सूत्र का अंक देकर टिप्पणी (नोट) में निवेश किया है। क्योंकि एकही पुस्तक से सर्व काम चल जाय। अतएव पाठक वर्ग भक्ति मर्म जिज्ञासु इस बात को उचित जान कर भगवत्प्रेम में अनुरागी हों—

कलाप्रकाशक—

भक्तिसूत्र वैजयन्ती

अर्थात्

श्रीशांडिल्य ऋषि के भक्ति के सौ सूत्रों पर

भाषा भाष्य

पटना।

"खड्गविलास" प्रेस—बांकीपुर।

साहब प्रसाद सिंह ने छापकर प्रकाशित किया।

१८८८

प्रान प्यारे !

देखो आज बसन्त पंचमी है इस से बहुत लोग आम के मौर वा फूलों के गुच्छे लेकर तुमको मिलने आवैंगे तो मैं भी यह एक फूलों की वैजयन्ती माला बनाकर लाया हूं अंगीकार करो; वैजयन्ती माला बनाने का यह हेतु है कि बनमाला होगी तो होली के खेल में अंकभैंगी और इस के सिवाय इस वैजयन्ती से निश्चय करके ज्ञानादिक को जय करना है. पर प्यारे ! बहुत सम्हाल के यह माला पहरना टूट न जाय क्योंकि सूत कच्चा है और कलियां ताजी और कोमल हैं इस से कुम्हिलाने का भी भय है ; जो हो इस बसन्त पंचमी को त्यौहारी मुझे यही दो कि इस सत्यानाशी 'अहं ब्रह्म वाद' को पूर्ण रूप से नाश करके और भी सब बातों में इस नव बसन्त में भारतवर्ष की सब आपत्तियों का बसअंत करो और अपने भक्तों के चित्त में प्रेम के नव पल्लव फिर से लहलहे करो जो सदा एक रस रहैं।

माघ शु॰ ५ सं॰ १९३० }
काशी } तुम्हारा हरिश्चन्द्र

॥ शाण्डिल्य शत सूत्री भाषा भाष्य सहित ॥

ॐ नमश्शाण्डिल्याय तन्मतप्रवर्त्तकाचार्य्येभ्य:

श्री वल्लभेश्वराय नमः

जेहि नहि फिर कछु लहन को , आस न चित में होय ।
जयति जगत पावन करन , प्रेम बरन यह दोय ॥

ॐ अथातोभक्तिजिज्ञासा ॥ १ ॥

जीवों को कर्म्म ज्ञानादिक अनेक साधनों से खिन्न होकर भी शान्ति न पाते देख कर भगवान शांडिल्य ने भक्ति शास्त्र प्रगट करने की इच्छा से यह भक्ति के सौ सूत्र कहते हुए इस प्रेम मार्ग को प्रवर्त्त किया इस में पहिले पूर्वोक्त सूत्र कहा। अब भक्ति की जिज्ञासा अर्थात् विचार आरंभ करते हैं ॥ १ ॥ यद्यपि ज्ञान कर्म्मादिकों की भांति भक्ति भी सुसाध्य नहीं है तथापि जो भक्ति मार्ग पर प्रवर्त्त होते हैं उन को भगवान भक्ति देता है इस आशा से भक्ति मीमांसा आरंभ करते हैं।

सा परानुरक्तिरीश्वरे ॥ २ ॥

सो भक्ति ईश्वर में पूरे अनुराग को कहते हैं ॥२॥ यहां परा शब्द कामनाओं की निवृत्त के हेतु और अनुरक्ति शब्द हृदय के सच्चे प्रेम के अर्थ दिया है और ईश्वर शब्द महात्म ज्ञान के हेतु है जैसा श्रीगोपीजन को ।

तत्संस्थस्यामृतत्वोपदेशात् ॥ ३ ॥

क्योंकि उस में जो चित्त लगाता है वह अमृत फल पाता है यह महात्माओं ने कहा है ॥ ३ ॥

ज्ञानमितिचेन्नद्विषतोऽपिज्ञानस्यतदसंस्थितेः ॥ ४ ॥

वह भक्ति ईश्वर विषयक ज्ञान मात्र है यह संदेह मत करो क्योंकि ज्ञान तो द्वेषियों को भी होता है पर उस ज्ञान से प्रीति नहीं होती ॥ ४ ॥ जैसे कोई किसी मनुष्य को जानता है कि वह अमुक है और उस को अमुक अधिकार है पर इतना जानने ही से उस मनुष्य की उस में प्रीति हो यह नियम नहीं।

तयोपक्षयाच्च ॥ ५ ॥

क्योंकि पूरी भक्ति से ज्ञान का क्षय होता है ॥ ५ ॥ जैसे श्री गोपी जन को महात्म ज्ञान पूर्ण था तथापि प्रीयतम कितव इत्यादि नाम से भगवान को पुकारती थीं । अथवा भक्ति से ज्ञान अर्थात् मुक्ति वासना क्षय हो जाती है जैसा आपने श्रीमुख से कहा है कि यद्यपि मैं चारों प्रकार की मुक्ति देता हूं तथापि मेरे भक्त मेरी सेवा छोड़ कर नहीं लेते ।

द्वेषप्रतिपक्षभावाद्रसशब्दाच्चरागः ॥ ६ ॥

द्वेष से प्रतिकूल होने से और रस शब्द प्रतिपाद्य होने से उस भक्ति का नाम अनुराग है ॥ ६ ॥ क्योंकि स्नेह और विरोध दो वस्तु अलग हैं और भी किसी के द्वेषी से विरोध वही करेगा जिस का उस में पूर्ण अनुराग होगा और ज्ञान में यह बात नहीं क्योंकि स्वरूपज्ञान द्वेषियों को भी होताही है और रस परम आनंद रूप है वह रस जिस को पाकर मनुष्य आनंदी होता है वह भक्ति स्वरूप ही है (इस कहने से पूजाविडंबन को उपेक्षा किया) चकार से अश्रु पात रोमांच और वाणी स्तंभादिक भक्ति का स्वरूप कहा।

न क्रियाकृत्यनपेक्षणाज्ज्ञानवत् ॥ ७ ॥

और वह भक्ति ज्ञान की भांति कृपा करने वाले के आधीन नहीं है ॥ ७ ॥ अर्थात् भक्ति अपने साधन की नहीं है केवल उस की कृपा से मिलती है इस से भक्ति की बहुमूल्यता दिखाई ।

अतएव फलानन्त्यं ॥ ८ ॥

इसी से इस के फलों का अन्त नहीं है ॥ ८ ॥ क्योंकि मनुष्यके सब साधन क्षीयमाण और ईश्वर की कृपा अक्षया है।

तद्वतः प्रपत्तिशब्दाच्च न ज्ञानमितरप्रपत्तिवत् ॥ ९ ॥

क्योंकि ज्ञान वालों को शरणागत है और विना ज्ञान भी इतर प्रपत्ति होती है ॥ ९ ॥ क्योंकि श्रीमुख मे कहा है कि बहुत जन्मों के पीछे ज्ञानी मेरे शरण आता है तो इस्से ज्ञान का साधन भक्ति फलरूप है यह प्रगट किया और विना ज्ञान भी भक्ति मिलती है इस से उस को विशेषता दिखाई।

इति प्रथमाह्निक ।

सा मुख्येतरापेक्षितत्वात् ॥ १० ॥

सो भक्ति मुख्य है क्योंकि इतर ज्ञान योगादिकों में भी इस की अपेक्षा रहती है ॥ १० ॥ तो इस से कोरे ज्ञान से मोक्ष मिलता है इस का खंडन किया क्योंकि जब भक्ति की उस में अपेक्षा रही तो वह स्वतः मुक्ति दाता न ठहरा इस से भक्ति ही मुख्य ठहरी।

प्रकरणाच्च ॥ ११ ॥

प्रकरण से भी ॥ ११ ॥ अर्थात् भक्ति अंगी है और ज्ञानादिक अंग हैं तो काम पूरा कोई अंग विशेष नहीं कर सकता और अंग अंगी के आधीन है इस से भक्ति ही अमृत देनेवाली है ज्ञान उस का साधन मात्र है।

दर्शनफलमिति चेन्न तेन व्यवधानात् ॥ १२ ॥

दर्शन मात्र फल रूप है यह नहीं क्योंकि उस से व्यवधान है ॥ १२ ॥ अर्थात् ज्ञान मात्र ही फल है यह नहीं है क्योंकि छान्दोग्य श्रुति में पहिले ज्ञानियों का नाम लेकर फिर कहा है कि वह अर्थात् भक्तिमान स्वराड् होता है तो पहिले ज्ञान को गौण करके भक्ति की मुख्यता वेद ने कही इस से भक्ति ही परम साधन है।

दृष्टत्वाच्च ॥ १३ ॥

और ऐसाही देखा भी जाता है ॥ १३ ॥ क्योंकि यदि किसी स्त्री पर कोई मनुष्य रीझ कर प्रीति करेगा तो पहिले जब वह जानेगा कि यह स्त्री सुन्दर है तब प्रीति करेगा प्रीति करके न जानेगा अर्थात् जानने का फल प्रीति है प्रीति का फल जानना नहीं है। इस से अनेक मत जो ईश्वर विषयक ज्ञान मात्र ही को परम पुरुषार्थ कहते हैं इसका निराकरण किया।

अतएव तदभावाद्बल्लवीनां ॥ १४ ॥

इसी से व्रज के श्री गोपीजनों का विज्ञान के बिना भी मुक्ति पाना प्रत्यक्ष है ॥ १४ ॥ इस सूत्र से भक्ति की परम श्रेष्ठता दिखलाई क्योंकि श्री गोपीजन को यद्यपि ब्रह्म विषयक कुछ भी ज्ञान न था तथापि जो गति केवल प्रेम से श्री गोपीजन को मिली सो किसी को न मिली।

भक्त्या जानातीति चेन्नाभिज्ञप्त्या साहाय्यात् ॥ १५ ॥

जो कहो भक्ति से ज्ञान होता है सो नहीं क्योंकि ज्ञान तो भक्ति का

सहायक है ॥ १५॥ क्योंकि जो मनुष्य की ईश्वर विषयक महात्मज्ञान होगा तभी भक्ति में प्रवृत्ति होगी ।

प्रागुक्तं च ॥१६ ॥

पहिले कहा भी है ॥ १६ ॥ अर्थात् श्री गीता जी में अठारवें अध्याय के चौवन श्लोक में आप ने श्रीमुख से कहा है ब्रह्म भाव पाकर प्रसन्न आत्मा न कुछ सोचता है न कुछ चाहता है तब लोगों को समान दृष्टि से देखता हुआ मेरी भक्ति पाता है ।

एतेन विकल्पोऽपि प्रत्युक्तः ॥ १७ ॥

इस से विकल्प भी निरस्त हुआ ॥ १७॥ अर्थात् ज्ञान के अङ्गत्व निर्णय में जो कुछ संदेह था वह ऊपर के भगवत् वाक्य से मिट गया और भक्ति का अंगित्व निश्चय हुआ ॥

देवभक्तिरितरस्मिन् साहचर्य्यात् ॥ १८ ॥

ईश्वर के अतिरिक्त देवताओं की भक्ति भी उस परा भक्ति के समान नहीं क्योंकि जगत में उसके समान और भी भक्तियां हैं ॥ १८ ॥ जैसा लिखा है जैसी देवता में भक्ति करनी वैसी गुरु में करनी तो इस सूत्र से अनन्य भक्ति स्थापन किया ।

योगस्तूभयार्थमपेक्षणात् प्रयाजवत् ॥ १९ ॥

और योग तो वाजपेय यज्ञ में प्रयाज की भांति भक्ति और ज्ञान दोनों का अंग है ॥ १९ इससे योग की अंगाङ्गता दिखलायी ।

गौण्या तु समाधिसिद्धिः ॥ २० ॥

गौणी भक्ति से तो समाधि की सिद्धि होती है ॥ २० ॥ इस से परा भक्ति की अपेक्षा इसकी महा गौणता सिद्धि हुई ।

हेयारागत्वादितिचेन्नोत्तमास्पदत्वात् सङ्गवत् ॥ २१ ॥

भक्ति राग है इस से (राग को कोई ऋषि दुःख स्वरूप मानते हैं यह समझ कर) त्याग करने के योग्य है यह नहीं क्योंकि इसका आश्रय उत्तम है सङ्ग की भांति ॥२१ ॥ जैसा साधारण स्त्री पुरुष के अनुराग में परस्पर वियोग का और संयोग छूटजाने का दुःख होता है वैसा ईश्वर के अनुराग में नहीं होता क्योंकि संग दुखदाई है यह नियम नहीं है सत्संग से अनेक सुख होते हैं वैसेही ईश्वर का अनुराग परम सुख स्वरूप है ॥

तदेव कर्म्मिज्ञानियोगिभ्य अधिकशब्दात् ॥ २२ ॥

इस से भक्ति ही मुख्य है क्योंकि कर्म्मी ज्ञानी और योगियों से उस को अधिक कहा है ॥२२॥ श्रीगीता जी के छठवें अध्याय के ४६ और ४७ वें श्लोक में आपने श्रीमुख से कहा है कि तपस्वी ज्ञानी और कर्म्मी से योगी अधिक है और योगियों में हमारे भक्त अधिक हैं ।

प्रश्ननिरूपणाभ्यामाधिक्यसिद्धेः । २३ ।

यह अधिकता प्रश्नोत्तर से सिद्ध है ॥ २३ ॥ श्री गीताजी में १२ वें अध्याय में अर्जुन ने पूछा है कि जो अक्षर की उपासना करते हैं और जो आप की भक्ति करते हैं उन में मुख्य कौन है इसके उत्तर में आपने कहा है कि जो मेरे भक्त हैं वे अधिक हैं । इस से बिना किसी अर्थवाद से भक्ति की परमोत्तमता सिद्ध हुई ।

नैवश्रद्धातु साधारण्यात् ॥ २४ ॥

श्रद्धा ही भक्ति नहीं है क्योंकि उस को साधारणता है ॥ २४ ॥ क्योंकि श्रद्धा कर्म्मादिकों में भी होती है ।

तस्यांतत्त्वेचानवस्थानात् ॥ २५ ॥

क्योंकि श्रद्धा से भक्ति तत्व की एकता करने से अनवस्था होती है ॥ २५ ॥ अर्थात् श्रद्धावान भजन करता है ऐसा लोग कहते हैं तो यदि श्रद्धा भक्ति एक ही होती तो अङ्ग भाव से प्रयोग न होता ।

ब्रह्मकाण्डं तु भक्तौतस्यानुज्ञानाय सामान्यात् ॥ २६ ॥

अतएव भक्ति प्रतिपादन के अर्थ उत्तरकांड की संज्ञा ब्रह्मकांड से ज्ञानकांड की सामान्यता है ॥ २६ ॥ अर्थात जो ज्ञान की मुख्यता होती तो अथातो ब्रह्मजिज्ञासा यह न कहते इस से कंठरव से ज्ञान की अपेक्षा भक्ति की उत्तमता से सिद्ध किया । इति २ अां: । इति १ अध्याय ॥

बुद्धिहेतुप्रवृत्तिराविशुद्धेरवघातवत् ॥ २७ ॥

बुद्धि के हेतुओं की प्रवृत्ति धान कूटने की भांति विशुद्धि तक है ॥ २७ ॥ बुद्धि अर्थात् ब्रह्म साक्षात्कार यद्यपि कृत्यनिष्पाद्य नहीं अर्थात् अपने किए हुए उपायों से बाहर है तौभी उस के हेतु श्रवण मननादिकों का अनुष्ठान आवश्यक है जैसे जब तक सब छिलके बराबर न निकल जांय धान शुद्ध नहोंगा

तदङ्गानाञ्च ॥ २८ ॥

उस के अंगों की भी ॥ २८ ॥ अर्थात् जैसे श्रवण मननादिक की आवश्यकता है वैसे ही गुरु की सेवा आदि उस के उपायों की भी है।

तामैश्वर्य्यपरां काश्यपः परत्वात् ॥ २९ ॥

उस को काश्यपाचार्य्य ऐश्वर्य्यपरा कहते हैं अलग होने से ॥ २९ ॥ अर्थात् सर्वैश्वर्य्यमय ईश्वर को मान कर उस को सेवा करना यही पुरुषार्थ कहते हैं इन के मत में जीव और ईश्वर का नित्य भेद प्रगट हुआ।

आत्मैकपरां बादरायणः ॥ ३० ॥

बादरायण आचार्य इस को आत्मपर कहते हैं ॥ ३० ॥ वेदान्त सूत्र में व्यास जी का मत है कि आत्मज्ञान ही से सिद्धि मिलती है।

उभयपरां शांडिल्यः शब्दोपपत्तिभ्यां । ३१ ।

शाण्डिल्याचार्य्य शब्द और उपपत्ति से उभय पर कहते हैं ॥ ३१ ॥ युक्तियों से और वाक्यों से जीव का ईश्वरांश होना सिद्ध है और ईश्वर में सर्व सामर्थ्य इत्यादि दिव्यगुण उसकी विलक्षणता भी प्रकाश करते हैं इस से शाण्डिल्य दोनों मत मानते हैं अर्थात् अपने को ईश्वरांश मान करके भी उस की उपासना करना।

वैषम्यादसिद्धमितिचेन्नाभिज्ञानवदवैशिष्ट्यात् । ३२ ।

वैषम्य से असिद्ध होगी ऐसा नहीं है क्योंकि ज्ञान की भांति अवैशिष्ट्य है ॥ ३२ ॥ अर्थात् जिस रीति "यह वह है" यह भूत वर्तमान और काल की प्रतीति एक ही समय होती है क्योंकि दोनों काल का विषय (यह और वह शब्दों से प्रतिपाद्य) एक ही है वैसे ही ईश्वर में भी वैषम्य दोष नहीं आ सकता।

न च क्लिष्टः परःस्यादनन्तरं विशेषात् । ३३ ।

पर (परमात्मा) को कभी इस वैषम्य से क्लेश नहीं होता क्योंकि (ज्ञान के) अनन्तर विशेष होता है ॥ ३३ ॥ अर्थात् जीव और ईश्वर में जो विशेषता है वह ज्ञान से प्रतीत होती है।

ऐश्वर्य्यं तथेति चेन्न स्वाभाव्यात् ॥ ३४ ॥

ऐश्वर्य भी क्लिष्ट नहीं हो सकता क्योंकि यह स्वाभाविक है ॥ ३४ ॥ ईश्वर

ईश्वर का ऐश्वर्य कुछ उपाधि भूत वा उपाधिजन्य नहीं किन्तु नैसर्गिक है इसी हेतु इस में भी क्लेश नहीं होसक्ता।

अप्रतिषिद्धं परैश्वर्यं तद्भावाच्चनैवमितरेषाम् ॥ ३५ ॥

(ईश्वर का) परमैश्वर्य्य कहीं भी प्रतिषिद्ध नहीं होता वरंच उसका नैसर्गिक पन प्रगट होता है, इतरों का (जीवों का) ऐसा नहीं ॥ ३५ ॥ यह शंका न हो कि ईश्वर का जब ऐश्वर्य ऐसा है तो जीवों का भी ऐसाही होगा ईश्वर का यह सर्व स्वाभाविक है और जीवों का नहीं।

सर्वान्मृतेकिमितिचेन्नैवं बुद्ध्यानन्त्यात् ॥ ३६ ॥

सब के बिना (उस का) क्या प्रयोजन है ? ऐसा नहीं क्योंकि बुद्धि का अनन्त्य है ॥ ३६ ॥ अर्थात् यदि सब जीव क्रमशः मुक्त होंगे तो ईश्वर का क्या प्रयोजन है तो उसका भी क्यों नहीं लय मानें ऐसा कहोगे तो यह असंभव है क्योंकि बुद्धि का अन्त नहीं हो सक्ता इस हेतु यह कल्पना मात्र है और ऐसा कालही नहीं कि जिसमें सब जीव एक बार मुक्त होजांय और महाप्रलय में जो जीव मुक्त होते हैं वे वासना सहित होते हैं।

प्रकृत्यन्तरालादवैकार्यं चित्सत्वेनानुवर्तमानत्वात् ॥ ३७ ॥

प्रकृत्यन्तराल से और चित्सत्व के अनुवर्तमान होने से (ईश्वर को) अविकारिता है ॥ ३७ ॥ यदि ईश्वर में उत्पत्ति कर्तृत्वादि ऐश्वर्य साहजिक है तो यह भी एक प्रकार का विकार हुआ उसका निवारण करते हैं कि प्रकृति को ईश्वर विकृत करके उत्पत्ति आदि करता है जैसे मायावी अपनी माया से अन्य वस्तुओं में विकार कर देता है परन्तु आप नहीं विकार पाता अर्थात् ईश्वर दुग्ध के कार्य की भांति विकृत नहीं होता वरंच सुवर्ण के विकार की भांति और उसमें जीव सत्व जो वर्तमान रहता है वह माया से पर है।

तत्प्रतिष्ठा गृहपीठवत् ॥ ३८ ॥

उसकी प्रतिष्ठा का व्यवहार घर में पीढे पर प्रतिष्ठा की भांति है ॥३८॥ अर्थात् प्रकृति के विकार से जगत् माया में प्रतिष्ठित है ? यह शंका न हो जैसे किसी के घर में पीढे पर कोई बैठा है तो ऐसा कहने में आवेगो कि अमुक पीढ़े पर बैठा है पर वास्तव में वह पीढ़ा और मनुष्य दोनों घर में हैं; वैसेही माया और संसार दोनों ईश्वर में हैं।

मिथोपेक्षणादुभयं ॥ ३८ ॥

परस्पर की अपेक्षा से दोनो कारण हैं ॥३८॥ अर्थात् संसार की उत्पत्ति में माया और ईश्वर दोनोंही आवश्यक हैं।

चेत्याचितोर्नतृतीयं ॥ ४० ॥

प्रकृति और ब्रह्म में भेद नहीं है ॥ ४० ॥ अर्थात् इनमें तृतीय भाव नहीं है दोनो एक हैं इस से प्रकृति स्वतंत्र कोई अलग है इसका निषेध किया।

युक्तौच संपरायात् ॥ ४१ ॥

वियोग के पूर्व दोनो एक हैं ॥ ४१ ॥ अर्थात् सृष्टि होने के समय ब्रह्म और प्रकृति अलग२ होती हैं परन्तु जड़ाजड़ के भेद से नित्य में इनका अनन्य संबंध है।

शक्तित्वान्नानृतं वेद्यं ॥ ४२ ॥

शक्ति के कार्य होने से यह जगत् मिथ्या नहीं है ॥ ४२ ॥ अर्थात् जगत् माया का कार्य है इस से उसको झूठा नहीं मानना क्योंकि ब्रह्म सत्य है तो उसकी शक्ति भी सत्य है प्रकृति केवल जड़मात्र तो है पर मिथ्या नहीं।

तत्परिशुद्धिश्चगस्यालोकवल्लिंगेभ्यः ॥ ४३ ॥

उस (भक्ति) की परिशुद्धि लोक के (प्रेम के) चिन्हों से जानना ॥ ४३ ॥ अर्थात् अश्रु, रोमांच, गद्गद इत्यादि स्थायी भावों से किस को कितना प्रेम है यह प्रगट होता है।

सम्मान बहुमान प्रीति विरहेतरविचिकित्सा महिमख्याति तदर्थप्राणस्थान तदीयतासर्वतद्भावाप्रातिकूल्यादीनिच स्मरणेभ्यो बाहुल्यात् ॥ ४४ ॥

सम्मान, बहुमान, प्रीति, विरह, इतरविचिकित्सा अर्थात् आग्रह पूर्वक दूसरे की अनपेक्षा, महिमा का कथन, प्रियतमही के हेतु प्राण रक्षण, तदीयता, सब उस के भावों से देखना, अप्रातिकूल्य अर्थात् अनुकूलता, इत्यादि, प्रीति के लक्षण हैं ॥४४॥

सम्मान जैसा अर्जुन का, बहुमान इक्ष्वाकु का कि भगवान के नाम वा वर्णों से जिन वस्तुवों में संबंध था उन का भी आदर करता था, प्रीति विदुर की, विरह श्रीगोपीजन का, इतरविचिकित्सा उपमन्युकी और श्वेतद्वीपवासी

की तथा चित्रकेतु की. महिमख्याति यम भीष्म और व्यास की. तदर्थ प्राण· स्थिति व्रज के लोग तथा हनुमानजी को, तदीयता वलि की और उपरिचर वसु की, तद्भाव श्रीप्रह्लादजी का, अप्रातिकूल्यभीष्म तथा धर्मराज का, आदि शब्द से नारद उद्धवादि भक्तों की प्रीति की चेष्टा और लक्षण जानना।

द्वेषाद्यास्तुनैवं ॥ ४५ ॥

द्वेषादिक से ऐसी नहीं होगी ॥ ४५ ॥ शिशुपाल इत्यादि के प्रकरण में भक्ति से इन को मुक्ति नहीं हुई किन्तु भगवान के महिमा बल से, भक्तों को तो द्वेषादिक होते ही नहीं।

तद्वाक्यशेषात् प्रादुर्भावेष्वपिसा ॥ ४६ ॥

उस के वाक्य शेष से अवतारों में भी वह है ॥ ४६ ॥ मत्स्यादिक अवतारों में शिवादि गुण स्वरूपों में संकर्षणादि व्यूहों में तथा आचार्य्यादि प्रादुर्भावों में भी परा भक्ति योग्य है।

जन्मकर्मविदश्चाजन्मशब्दात् ॥ ४७ ॥

जन्मकर्मों के जानने की सिद्धि भी अजन्म शब्द से है ॥ ४७ ॥ अर्थात् जो उस के जन्म कर्मों को जानता है वह फिर जन्म नहीं पाता किन्तु उसको पाता है। यह श्री गीता के ४ अध्याय के ९ श्लोक में कहा है।

तच्चदिव्यं स्वशक्तिमात्रोद्भवात् । ४८ ।

उस के जन्म कर्मादिक दिव्य हैं क्योंकि केवल उस की शक्तिमात्र से अनेक प्रकार के दिखाई पड़े हैं ॥ ४८ ॥ यह ९ श्लोक और उसी अध्याय के छठें श्लोक से सिद्ध है।

मुख्यं तस्यहिकारुण्यं ॥ ४९ ॥

उस के जन्मादिकों में उसी की करुणा मुख्य है ॥ ४९ ॥ अर्थात् ईश्वर बाधित हो के नहीं जन्म लेता केवल अपनी अपार कृपा से जीवों के उद्धार के हेतु अनेक प्रकार के रूप धारण करता है।

प्राणित्वान्नविभूतिषु ॥ ५० ॥

प्राणी होने से ब्राह्मण राजादि भगवद्विभूति में भक्ति सिद्धि देने वाली नहीं होती ॥ ५० ॥

द्यूतराजसेवयोः प्रतिषेधात् ॥ ५१ ॥

द्यूत और राजसेवा के निषेध से ॥ ५१ ॥ क्योंकि गीता जी में आप ने श्रीमुख से राजा और जूए को विभूति कहा है और शास्त्र में उस का निषेध है। इस से विभूतियों में भक्ति नहीं करनी।

वासुदेवेपीतिचेन्न आकारमात्रत्वात् ॥ ५२ ॥

श्रीवासुदेव में भी विभूति की शंका नहीं करनी क्योंकि वहां तो चीनी की पुतली की भांति कर पाद मुख उदर आदि सब आकार आनन्दमय हैं ॥ ५२ ॥

प्रत्यभिज्ञानाच्च ॥ ५३ ॥

(श्रीगोपालतापनी, महाभारत, श्रीभागवत आदि पुराण तथा वैष्णव-निबंधों में) भगवान की परब्रह्मता ज्ञापित है ॥ ५३ ॥

वृष्णिषुश्रैष्ट्येनैतत् ॥ ५४ ॥

विभूति में श्रीवासुदेव का कथन केवल यादवों में श्रेष्टता के हेतु है ॥ ५४ ॥

एवं प्रसिद्धेषु ॥ ५५ ॥

इसी प्रकार श्रीरामादि प्रसिद्ध भगवदवतारों का भी विभूति में कथन केवल उस प्रकार की विभूति में श्रेष्टता दिखाने के हेतु है। अर्थात् जो प्रसिद्ध भगवत्स्वरूप हैं उन में विभूति बुद्धि न करनी ॥ ५५ ॥

दूसरे अध्याय का पहिला आन्हिक समाप्त हुआ।

भक्त्या भजनोपसंहाराद्गौण्यापरायैतद्धेतुत्वात् ॥ ५६ ॥

भक्ति से यहां गौण भक्ति लेनी क्योंकि उस का अर्थ भजन अर्थात् सेवा है और यह भक्ति परा में हेतु है ॥ ५६ ॥ क्योंकि गौण भक्ति से मुख्य भक्ति के साधन के बाधक दूर होते हैं और परा भक्ति सिद्ध होती है।

रागार्थप्रकीर्तिसाहचर्याच्चेतरेषाम् ॥ ५७ ॥

गीता अ० ९. श्लोक १४ में कीर्त्तन के साथ कहे हुए नमस्कारादि कर्मों का फल केवल राग अर्थात् परा भक्ति है क्योंकि "स्थाने हृषीकेश" इस श्लोक में कीर्त्तन का फल अनुराग कहा है और पूर्व्वोक्त १४ श्लोक में कीर्त्तन के साथ नमनादिक का कथन है इस से नमनादिक का भी वही फल है ॥५७॥

अन्तराले तु शेषाः स्युरुपास्यादौ च काण्डत्वात् ॥ ५८ ॥

गीता जी के ९ अध्याय में १२ वें श्लोक से २९ श्लोक तक और जितनी

भक्तियां कही हैं वह बीच की हैं क्योंकि उपासनादि परा भक्ति की साधक हैं ॥ ५८ ॥

ताभ्यः पावित्र्यमुपक्रमात् ॥ ५९ ॥

इन गौणी भक्तियों से पवित्रता अर्थात् मन की शुद्धता होती है क्योंकि उसी अध्याय के दूसरे श्लोक में इन को पवित्र कहा है ॥ ५९ ॥

तासु प्रधानयोगात् फलाधिक्यमेके ॥ ६० ॥

कोई कोई आचार्य कहते हैं कि इन गौण भक्तियों ही में प्रधानता के कारण फल अधिक है ॥ ६० ॥

नाम्नेति जैमिनिः सम्भवात् ॥ ६१ ॥

जैमिनि आचार्य्य का मत है कि उन को मुख्यता नहीं है यहां उन का नाम मात्र कथन है ॥ ६१ ॥ अर्थात् पूर्व्वोक्त श्रीगीता जी के श्लोकों में उन का मुख्यता करके नहीं कथन है वरंच गिनती मात्र गिनायी है।

अत्राङ्गप्रयोगानां यथाकालसम्भवो गृहादिवत् ॥ ६२ ॥

यहां अंग के प्रयोगों का घर के अंगों को भांति यथा काल सम्भव है ॥ ६२ ॥ अर्थात् जैसे घर में पहिले नेव तब द्वार तब छत इत्यादि अंगों का प्रयोग एक के बनने पर यथा काल होता है वैसे ही परा भक्तियों को साधनं अंग भक्ति का यथा समय प्रयोग होता है क्योंकि पहिले गुण श्रवण करैगा तब श्रद्धा होगी तब भजैगा सेवैगा इत्यादि अनेक भक्तियों के पीछे परा भक्ति पावैगा।

ईश्वरतुष्टेरेकोपि बली ॥ ६३ ॥

ईश्वर की तुष्टि के हेतु एक साधन करने वाला भी बली है ॥ ६३ ॥ अर्थात् भजन वा कीर्त्तन कोई एक साधन भी दृढ़ करके जो करैगा तो उसको उस एक साधन पर दृढ़ता ईश्वर के तुष्टि को कारण होगी अर्थात् परा भक्ति को कारण होगी क्योंकि परा भक्ति स्वसाध्या नहीं है केवल ईश्वर के प्रसन्न होने से मिलती है।

अबन्धोऽर्प्पणस्यमुखम् ॥ ६४ ॥

अर्पण का मुख अबंध है ॥ ६४ ॥ भगवान में शुभाशुभ कर्मों का अर्पण अबंध का द्वार है यह कित्तंनादिक गौणी भक्तियों के अतिरिक्त परा भक्ति सिद्धि का उपायांतर कहते हैं क्योंकि यज्ञादिक में से बहुत काल में अनेक

लोक प्राप्ति द्वारा क्रमशः ईश्वर लोक प्राप्ति के कष्ट निवारण के हेतु सब कर्मों का समर्पण सयत्न उपाय है।

ध्याननियमस्तु दृष्टसौकर्यात् ॥ ६५ ॥

जिस का दर्शन अपने नेत्रों को जंचे उसी भाव से. चिंतन करना यही ध्यान का नियम है ॥ ६५ ॥ भक्ति यदि स्वभाविक होती है तो उत्तमा होती है क्योंकि हठ से की हुई भक्ति चिरकाल में सिद्ध होती है इसी हेतु कहते हैं कि भगवान के स्वरूप के ध्यान में हठ कर के कोई नियम न मानना जो स्वरूप अपने नेत्रों को स्वभावतः जंचे उसी का ध्यान करना।

तद्यजिः पूजायामितरेषां नैवम् ॥ ६६ ॥

"यान्तिमद्याजिनोपि मां" इस वाक्य में यजन शब्द भगवत्पूजन के अर्थ है इतरयागादिकों के लिये नहीं ॥ ६६ ॥

अर्थात् यज्ञादिक में कामना और हिंसादि अनेक दोष हैं इस से भगवान को यजन किसी और कर्म मार्ग के उपायों से न करना किन्तु केवल भगवत्स्वरूप की सेवा करनी।

पादोदकं तु पाद्यमव्याप्ते ॥ ७ ॥

भगवन्मूर्तियों के स्नान का जल ही पादोदक है अव्याप्ति से ॥६७॥ अर्थात् साक्षाद्भगवान् वा अन्य किसी अवतार के चरण का जल ही चरणामृत है यह हठ न करना क्योंकि इस समय उस की प्राप्ति कहां और पादोदक में चरण ही को मुख्यता न माननी क्योंकि श्रीशालग्राम का स्नान जल भी पादोदक कहावेगा।

स्वयमर्पितं ग्राह्यमविशेषात् ॥ ६८ ॥

अपनी समर्पण की हुई वस्तु को आप लेना क्योंकि विशेषता नहीं है ॥ ६८ ॥ अपनी समर्पण की हुई वस्तु है इस भ्रम से प्रसाद लेने में संकोच न करना क्योंकि वैष्णवों को भगवत्प्रसाद लेने की आज्ञा है और उस समर्पण करने वाले में कोई विशेष नहीं अर्थात् वह भी वैष्णवान्तः पाती है ॥

निमित्तगुणाव्यपेक्षणादपराधेषु व्यवस्था ॥ ६९ ॥

निमित्त, गुण और अनपेक्षा से अपराधों की व्यवस्था है ॥ ६९ ॥ भगवत्सेवा में जो ३२ अपराध कहे हैं वे तीन भांति के हैं एक तो वे कि जैसे

किसी कारण से हो जांय दूसरे वे जिनके करने का नित्य स्वभाव है और तीसरे वे जो भूले से हों इन तीनों की व्यवस्था अलग है जैसे अनिच्छापराध से निमित्तापराध और निमित्तापराध से नित्यापराध बढ़कर है ॥

पत्रादेर्दानमन्यथाहि वैशिष्ट्यम् ॥ ७० ॥

पत्रपुष्पादि का दान सर्व समान (समान फल रूप) है ॥ ७० ॥ क्योंकि भगवान को पत्र का दान और स्वर्ण कोटि का दान दोनों समान संतोष करने वाला है ॥

सूक्ततत्त्वात्परहेतुश्च भावाच्च क्रियासुश्रेयस्यः ॥ ७१ ॥

ये भक्तियां पराभक्ति की कारण और मुख्यरूप हैं इससे सब क्रियाओं में श्रेयस्कर हैं ॥ ७१ ॥

गौणंत्रैविध्यमितरेण स्तुत्यर्थत्वात् साहचर्य्यम् ॥ ७२ ॥

(गीताजी के, अ० श्लो० ६ में आर्त, जिज्ञासु, आर्थार्थी और ज्ञानी चारो प्रकार के भक्त कहे हैं उन चारों की समता नहीं) गौणी भक्ति उसमें तीन ही हैं और स्तुति के अर्थ इनको ज्ञानी की भक्ति के साथ लिखा है ॥ ७२ ॥ क्योंकि आर्त की भक्ति अपनी विपत्ति मिटाने के हेतु है, जिज्ञासु की जानने के हेतु और अर्थार्थी की भक्ति अपने काम के हेतु है और ज्ञानी की भक्ति केवल प्रेम से है ।

बहिरन्तरस्थमुभयमवेष्टिसववत् ॥ ७३ ॥

(यद्यपि कीर्तनादिक भक्तियां परा भक्ति की अंग हैं परन्तु यदि कीर्तनादि किसी में विशेष रुचि होय तो उस भक्ति में उस भक्ति की मुख्यता होगी क्योंकि) पराभक्ति के भीतर की भक्ति भी कहीं कहीं बाहर अर्थात् स्वतंत्र गिनी जाती है जैसे यज्ञ की अवेष्टि यज्ञ के अन्तर्गत और बहिर्गत भी है जैसे वाजपेय यज्ञ के अंग में बृहस्पतिसव आजाता है परन्तु बृहस्पतिसव को विशेष महिमा वेद में अलग भी लिखी है ॥ ७३ ॥

स्मृतिकीर्त्योः कथादेश्चार्तौ प्रायश्चित्तभावात् ॥ ७४ ॥

कथादिकों का स्मरण और कीर्तन आर्त भजन में प्रायश्चित्त भाव से है ॥ ७४ ॥ अर्थात् आर्तलोग अपने पाप वा आपत्ति मिटाने के हेतु कीर्तनादि करते हैं इससे यहां कीर्तनादि में विशेषता नहीं है ॥

भूयसामननुष्ठितिरितिचेदाप्रयाणमुपसंहारान्महत्स्वपि॥ ७५ ॥

जो कहो कि भक्ति करने वाले बहुत कर्मों का अनुष्ठान नहीं करते सो नहीं क्योंकि बहुत कर्म करने वालों को भी अंत समय इसी का विधान है ॥ ७५ ॥ अर्थात् चाहे कितना ही कर्म करो जब भगवान की भक्ति बिना गति नहीं तो इस भक्ति बिना के बहुत विधिपूर्वक किए हुए भी अनेक कर्म व्यर्थ ही है ॥

लघ्वपि भक्ताधिकारे महत्क्षेपकमपरसर्वहानात् ॥ ७६ ॥

(क्योंकि) थोड़ा भी भक्ताधिकार बड़े पापों का नाशक होता है क्योंकि भगवान की अपने शरणागतों की वा नामस्मरण करने वालों के सर्व पापहानि की प्रतिज्ञा है ॥ ७६ ॥

तत्स्थानत्वादनन्यधर्मः खले वालीवत् ॥ ७ ॥

(क्योंकि) भगवदाश्रय होने से (छोटे भी) भगवद्धर्म अनन्य धर्म्म ही हैं (और इन से सब बड़े पापों का क्षय हो जाता है) जैसा ओखली में बालों का (अर्थात् ओखली में कितनी भी बाल पड़े सब कुट पिस जायंगी वैसे ही भगवद्धर्म से कैसे भी पाप हों सब नाश हो जाते हैं)

आनिन्द्ययोन्यधिक्रियते पारम्पर्यात्सामान्यवत् ॥७८ ॥

चांडालयोनि को भी भगवद्भक्ति का अधिकार है क्योंकि परम्परा से भक्तों की समानता है ॥८८॥ और गज गृध्र बानर इत्यादि मनुष्य छोड़ कर और योनि के जीवों को भी भक्ति से सिद्धि मिली है तथा एक विशेषता यह भी है कि भारतखंड छोड़ कर खंडांतर-वासियों को तो केवल भक्ति ही का आश्रय है क्योंकि वे कर्म भूमि नहीं हैं कि वहांके लोग कर्म से सिद्ध हों।

अतोह्यविपक्वभावानामपि तल्लोके ॥ ७९ ॥

इसी हेतु परा भक्ति में जो पक्के नहीं हैं वे भी भगवल्लोक में वास करते हैं ॥ ७९ अर्थात् ब्राह्मण, शूद्र, चण्डाल इत्यादि संज्ञा से अपने २ जाति की पूर्ण क्रिया करो तौ भी सिद्धि नहीं कितना भी पुण्य करो अन्त में क्षीण होने पर मृत्युलोक में आना पड़ता है और भक्ति करने वालों का नाश नहीं। जो पक्के नहीं हैं वे श्वेतद्वीप में रह कर भगवद्भक्ति में पक्व होकर अन्त में

भगवत्पद पाते हैं और भक्तों को कर्मवश से उपजी हुईं कामनाओं को भी भक्ति अंत में भस्म कर देती है इसमें जड़भरत जी का उपाख्यान प्रमाण है।

क्रमैकगत्युपपत्तेस्तु ॥ ८० ॥

केवल क्रममात्र से गति तो क्रिया की है ॥ ८० ॥ अर्थात् "बहूनां जन्मनामन्ते ज्ञानवान्मां प्रपद्यते" "अनेकजन्मसंसिद्धस्ततो याति परां गतिं" इत्यादि वाक्य में क्रम से जो सिद्धि पानी कही है वह सुकर्म करने वालों को है भक्तों को तो एक भक्ति ही से सद्यः गति होती है।

उत्क्रान्तिस्मृतिवाक्यशेषात् ॥ ८१ ॥

क्योंकि भगवद्वाक्य में भक्तों को एक साथ सब क्रमों का उल्लंघन करके सिद्धि मिलना कहा है ॥ ८१ ॥ अर्थात् "सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज" इस वाक्य से भगवान् ने अपने भक्त के अन्य धर्मों की और क्रम प्राप्त उनके गतियों को श्रीमुख से आप ही उपेक्षा की है और ९ अध्याय में अनेक प्रकार के सत्कर्म इत्यादि कह कर भी ३० । ३१ । ३२ । ३३ । ३४ श्लोकों में "हमारा भक्त कैसा भी दुराचारी हो उस को साधु ही समझना" कहा है और अनेक जन्म तथा कर्मादिकों को उल्लंघन करके उस की सद्यःगति को और उस गति के फिर कभी न नाश होने की "क्षिप्र, शश्वत्," इत्यादि शब्द कथनपूर्वक प्रतिज्ञा की हैं।

महापातकिनां त्वार्तौ ॥ ८२ ॥

(जो कहो कि बड़े २ पापी लोग हैं वे भी क्रम को उल्लंघन करके परम पद पावेंगे इस पर कहते हैं कि) महापातकियों की भक्ति तो आर्तों की भक्ति में हैं ॥ ८२ ॥ अर्थात् पापी लोग अपने पाप की निवृत्ति के हेतु भक्ति करते हैं उन की भक्ति सहजा नहीं जिन की भक्ति सहज है उन के पापों के हेतु तो 'अपिचेत्सुदुराचारो" इत्यादि वाक्य जागरूक ही हैं।

सैकान्तभावोगीतार्थप्रत्यभिज्ञानात् ॥ ८३ ॥

परा भक्ति ही का नाम एकान्त भाव है क्योंकि गीता में ऐसा ही कहा है ८३ ॥ यथा "अनन्याश्चिन्तयन्तो मां" "यो मांपश्यति सर्वत्र" "मन्मनाभवमद्भक्तो" "मत्कर्मकृन्मत्परमोमद्भक्तः" "ये तु सर्वाणि कर्माणि मयि सन्यस्य मत्पराः" "तमेव शरणं गच्छ" "सर्वधर्मान्परित्यज्य" इत्यादि वाक्यों से और उनके उपक्रमोपसंहार से सिद्ध है।

परां क्कत्वैव सर्वेषां तथाह्याह ॥ ८४ ॥

(जो कहो की गीता जी के वाक्यों की प्रवृत्ति तो ज्ञान, योग, सत्कर्म कीर्तनादि गौणी भक्ति इत्यादि अनेक विषयों पर है इस पर कहते हैं) कि श्रीमद्भगवद्गीता के वाक्यों की प्रवृति तो परा भक्ति ही को मुख्य कर के है ऐसा ही आप ने कहा भी है ॥ ८४ ॥ क्योंकि जब आप ने "मन्मनाभवमद्भक्तो मद्याजीमांनमस्कुरु ॥ मामेवैष्यसि कौन्तेय प्रतिजाने प्रियोसि मे ॥ सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज ॥ अहं त्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि माशुच." ये दो वाक्य साधन, सिद्धा परा भक्ति ही के मुख्यता के हेतु कहे तो उस की श्रेष्टता के हेतु पहिले आग्रह.पूर्वक " सर्वगुह्यतमं भूय: शृणु मे परमं वच:" इससे अगले दोनों वाक्यों की महिमा कही और लोक में भी प्रसिद्ध है कि मनुष्य किसी को सौ उपदेश करे परन्तु अन्त में जो निचोड़ कर कहे वही बात मुख्य होती है परंच गीता जी के कहने का तो फल परा भक्ति ही है यह आप ने "यइदं परमं गुह्यं मद्भक्तेष्वभिधास्यति ॥ भक्तिं मयि परां क्कत्वा मामेवैष्यत्यसंशय:" इस वाक्यमें कहा है इस से और "अहं" "त्वां" इन दो पदों के चलग होने से श्रीमद्गीता की प्रवृत्ति केवल भक्ति ही के हेतु है न ज्ञानकर्मादिकों के यही सिद्ध हुआ।

॥ द्वितीयाध्याय का द्वितीयाह्निक समाप्त हुआ ॥

भजनीयेनाद्वितीयमिदं क्कत्स्नस्य तत्स्वरूपत्वात् ॥ ८५ ॥

(भक्ति की उत्कर्षता और जीवों के साधन कह कर अब सच्चिदानन्दमय परमेश्वर और उस के सदंश से जगत् और चिदंश से जीव और आनन्दमय श्री विग्रह इन का परस्पर संबंध दिखाते हैं) यह सब ईश्वर स्वरूप ही है इस से भजनीय अर्थात् भगवान से यह अलग नहीं है ॥ ८५ ॥ इस सूत्र से मिथ्यावाद निरस्त करते हैं क्योंकि मिथ्यावादियों के मत से संसार असत्य है परन्तु यहां पर सूत्रकार भगवान् शाण्डिल्य मुक्त कण्ठ से जगत् की सतत्रता प्रतिपादन करते हैं और इस जगत् का विस्तार इस प्रकार से है कि सच्चितानन्दमय ईश्वर को जब संसार की इच्छा हुई तो अपने सदंश से जड़ प्रपंच किया और चिदंश से चैतन्य प्रपंच (जीव सृष्टि) किया जीव में आनन्दांश का तिरोभाव है क्योंकि बहुत काल से आनन्दराशि भगवान से इन का वियोग है उस वियोग का न इन को स्मरण है न वियोगजन्य दु:ख

है सो भगवान की कृपा से वा उस के भक्तों की कृपा से उस के वियोग का स्मरण आना ही मानो उस के आनन्दांश के आविर्भाव का कारण है और इसी से उस की एक अंश में स्थित यह सब नित्य सत्य है ।

तच्छक्तिर्माया जडसामान्यात् ॥ ८६ ॥

(मिथ्यावादि का निराकरण कर के अब मायावादी का निराकरण करते हैं) कि माया स्वतंत्र कोई वस्त्वंतर नहीं है किन्तु भगवान के शक्ति ही का नाम माया है और वह भी जड़ अर्थात् अपनी सहज चेतन्यता शून्य अन्य चिदंश के समान है ॥ ८६ ॥ इस से मायावादियों का ईश्वर का माया के फंद में फसना और शाक्तों का स्वतंत्र शक्तिवाद निरस्त हुआ ।

व्यापकत्वाद्व्याप्यानाम् ॥ ८७ ॥

(सदंश में चिदंश और चिदंश में आनन्दांश व्याप्त है इस से परस्पर इन में व्याप्य व्यापक भाव हुए तो अब संसार की व्याप्य और ईश्वर को व्यापक संज्ञा हुई तो फिर से उस की सत्यता और शुद्धाद्वैतता दिखाने के हेतु कहते हैं) कि व्यापक के सत्य होने से उस का व्याप्य भी सत्य ही है ॥ ८७ ॥

न प्राणिबुद्धिभ्योऽसंभवात् ॥ ८८ ॥

(मायावाद निराकरण करके उस के समान ही नास्तिकवाद का भी निराकरण करते हैं) यह किसी प्राणी की बुद्धि से नहीं बना है, क्योंकि इस की सूक्ष्मता प्राणियों की बुद्धि के बाहर है इस से यह प्राणियों की बुद्धि से बना है यह बात असंभव है ॥ ८८ ॥

निर्मायोच्चावचं श्रुतीश्च निर्मिमीते पितृवत् ॥ ८९ ॥

यह सब भूत समूह बना कर वेदों को बनाता है पिता की भांति ॥ ८९ ॥ जैसे पिता पुत्रों को उत्पन्न करके फिर उन को शिक्षा देता है वैसे ही भगवान अपने एकांश से जीवों को प्रगट कर के फिर उन की शिक्षा के हेतु वेद कहता है ।

मिश्रोपदेशान्नेति चेन्न स्वल्पत्वात् ॥ ९० ॥

जो कहो कि वेद के उपदेश मिश्र हैं अर्थात् अग्निष्टोमादिक यज्ञ में हिंसा का विधान है इस से ये वेद ईश्वर के बनाये नहीं ऐसा नहीं क्योंकि वह भाग उस में बहुत ही थोड़ा अर्थात् उपेक्षित है ॥ ९० ॥

फलमस्माद्बादरायणो दृष्टत्वात् ॥ ९१ ॥

(अब कर्मवादियों का मत निराकरण करते हैं) कि ये कर्म स्वतः फल दाता नहीं फल देनेवाला ईश्वर ही है यह व्यास जी कहते हैं क्योंकि ऐसा ही देखा भी जाता है ॥ ९१ ॥ जैसे राजा के तोष के हेतु अनेक कर्म करो परन्तु उसका प्रतिफल देना राजा ही के अधिकार में है और बिना कुछ सेवा किये भी राजा फल दे सकता है वैसे ही ईश्वर का प्रसन्न होना कर्म के आधीन नहीं कर्म केवल साधक है ।

व्युत्क्रमादप्ययस्तथाहृष्टम् ॥ ९२ ॥

लय उलटी चाल से होता है ऐसा ही देखा गया है ॥९२॥ जैसे गोरखधंधे की डिबियों को फैलाते जाओ तो कई डिबियां हो जाती है और जब बंद करो तब सब से छोटी अपने से बड़ी डिबिया में और वह अपने से बड़ी में इसी प्रकार अन्त वाली बड़ी डिबिया में सब डिबिया छिप जाती हैं,वैसे ही जिस क्रम से उत्पत्ति होती है (अर्थात् ब्रह्म से प्रकृति, प्रकृति से महत्तत्व इत्यादि एक से एक उत्पन्न होते हैं) वैसे ही लयहोने के समय सब भगवान में लय पाते हैं इस से फिर भी संसार की नित्यता सिद्ध किया ।

तीसरे अध्याय का प्रथमाह्निक समाप्त हुआ ।

तदैक्यं नानात्वैकत्वमुपाधियोगहानादादित्यवत् ॥ ९३ ॥

उसकी एकता है क्योंकि उपाधि के योगों के मिटने से नानात्व का एकत्व हो जाता है आदित्य की भांति ॥ ९३ ॥ जैसे "ध्येय सदा सवितृमंडल मध्यवर्ती" इत्यादि वाक्यों से भगवान का स्वरूप और आदित्य मंडल यह दो पृथक् प्रतित होते हैं नहीं क्योंकि जब मंडलरूपी उपाधि को भगवान् अपनेमें लय कर लेता है तब केवल नारायण संज्ञा रह जाती है वैसे ही जब संसारको अपने में लय कर के उस के संयोग वियोगात्मक "संसार" इस नाम को भी अपने में लय कर लेता है तब केवल आपही रह जाता है ।

पृथगितिचेन्न परेणासम्बन्धात्प्रकाशानां ॥ ९४ ॥

अलग कहो सो नहीं ऐसा कहने से पर अर्थात् भगवान से असम्बन्ध होगा जैसे प्रकाशों का ॥ ९४ ॥ प्रकाशों का अर्थात् सूर्य मंडल को और नारायण

को जैसी एकता है वैसे ही भगवान से इस से एकता है इन दोनों का सम्बन्ध नहीं हो सकता ।

नविकारिणस्तु करण विकारात् ॥ ८५ ॥

ये आत्मा विकारी नहीं हैं क्योंकि ऐसा मानने से इनके कारण अर्थात् भगवान को भी विकार मानना पड़ेगा ।

अनन्यभक्त्या तद्बुद्धिर्बुद्धिलयादत्यन्तं ॥ ८६ ॥

(भजनीय का और भजन करने वाले का स्वरूप दिखा कर उनके वियोग स्मृति का स्मारक फिर से कहते हैं) कि उस परमानन्दमय भगवान में अनन्य भक्ति करते करते भृंगी कीट की भांति तद्बुद्धि हो जाती है और उस बुद्धि के भी लय होने से अर्थात् वियोग जन्य असह्य दुःख से सब सुध बुध छूट जाने से अत्यन्त अर्थात् सब वासनाओं के मोच होने से परमानन्द अर्थात् आनन्द मात्र कर पाद मुखोदरादि भगवान श्रीकृष्णचन्द्र से नित्य लीला में संयोग होता है ॥ ८६ ॥

आयुश्चिरमितरेषांतुहानिरनास्पदत्वात् ॥ ८७ ॥

(जो कहो कि संचित प्रारब्ध का भोग तो हुआ ही नहीं आनन्द प्राप्ति कैसे हुई इस पर कहते हैं) कि साधारण जीवों की आयु ही प्रारब्ध की भोग कराने वाली है परन्तु भगवद्भक्तों को तो उन संचित प्रारब्धों की आप ही हानि हो जाती है क्योंकि उसको आश्रय आयु का भोग नहीं रहता ॥८७॥ अर्थात् जिनको भगवद्वियोग स्मरण में एक एक चण कोटि कोटि कल्प तुल्य असह्य यंत्रणा सहते हुए बीतते हैं वा संयोगलीला स्मरण से एक एक चण लाख लाख बरस तक स्वर्ग के सुख भोग के समान बीतते हैं उनके सब भले बुरे प्रारब्ध इस वियोग संयोग के अनुभव में भस्म हो जाते हैं ।

संसृतिरेषामभक्तिः स्यान्नाज्ञानात्कारणासिद्धेः ॥ ८८ ॥

और जीवों को संसार की कारण अभक्ति है, अज्ञान नहीं; कारण की असिद्ध से ॥ ८८ ॥ अर्थात् संसार के कारण भगवान् में अभक्ति ही बंधन की हेतु होती है क्योंकि बंध मोच का दाता ही जिस से रूठा रहेगा उसे मोच कहां ।

जीवयेषां नेत्राणि शब्दलिंगाक्षिभेदाद्रुद्रवत् ॥ ९९ ॥

(जो कहो कि जीव कैसे जाने इस पर कहते हैं) कि इन जीवों को श्रीमहादेव जी की भांति तीन नेत्र हैं अर्थात् तीन प्रकार से ये जानें कुछ तो शब्द अर्थात् वेदादिकों से, कुछ लिंग अर्थात् अनुमान से और कुछ अक्ष अर्थात् प्रत्यक्ष से जानें ॥ ९९ ॥

आविस्तिरोभावाविकाराः स्युः क्रियाफलसंयोगात् ॥ १०० ॥

लय और उत्पत्ति क्रियाफल के संयोग से विकार हैं ॥ १०० ॥ अर्थात् वास्तविक निर्विकार भावों में क्रिया फल के संयोग से विकार प्रतीत होता है भगवत्स्वरूप ज्ञानानन्तर भक्ति पाने से मनुष्य वास्तविक स्वरूप जानेगा इस से भक्ति ही मुख्य है ॥ इति ॥

व्याकुल लखि सब जीवगन , ज्ञान करम बहु मानि ।
कियो सूत्र शांडिल्य ऋषि , परम भक्ति की खानि ॥ २ ॥
सुमिरि राधिका प्रानपति , व्रज जुवती मन फन्द ।
यह ताको भाषा तिलक , किय तदीय हरिचन्द ॥ ३ ॥

शांडिल्य सूत्र और उस का भाषा भाष्य समाप्त हुआ ।

अथ पाठान्तर ॥

१५ सूत्र. अभिज्ञायाः साहाय्यात् इति श्री उपासना सर्वस्व तथा श्री काष्ठजिह्वस्वामि कृत पाठ ।

२६ सूत्र. तस्यानुज्ञानाय सामर्थ्यात् इति पूर्वोक्त पाठ ।

३० सूत्र. आत्मैकपरां इति पूर्वोक्त पाठ ।

३१ सूत्र. उभयपरां इति पूर्वोक्त पाठ ।

३२ सूत्र. प्रत्यभिज्ञानवत् इति पूर्वोक्त पाठ ।

३४ सूत्र. यहां से स्वप्नेश्वर के पाठ से पूर्वोक्त ग्रन्थों के पाठ से बड़ा भेद है । यथा जन्मकर्मविदश्चाजन्मने शब्दात् ३४ तच्च दिव्य स्वशक्ति मात्रोद्भावात् ३५ मुख्यं तस्य हि कारुण्यं ३६ प्राणित्वान्नविभूतिषु ३७ द्यूत राजसेवयोः प्रतिषेधाच्च ३८ वासुदेवेपीतिचेन्नाकारमात्रत्वात् ३९ प्रत्यभिज्ञानाच्च ४० वृष्णिषु श्रेष्ठेनतत् ४१ एवं सिद्धेषु च ४२ भक्त्या भजनोपसंहारात् परार्थैं हेतुत्वात् ४३ रागार्थप्रकीर्त्तितसाहचर्याच्चेतरेषाम् ४४ अन्त-

रात्रे च शेषाः स्तुतपास्याद्दौ च कांडत्वात् ४५ ताभ्यः पावित्र्य सुपक्रमात् ४६ तासुप्रधानयोगात् फलाधिकारमेवे ४७ नाम्नेति जैमिनिः सम्भावात् ४८ अंग प्रयोगाणां यथा कालं सम्बन्धो व्रीह्यादिवत् ४९ ईश्वरतुष्टेरेकोपिबलो ५० अबन्धोऽर्पणस्य मुखम् ५१ ध्याननियमस्तु दृष्टि सौकर्यात् ५२ तद्यज्ञिः पूजायामेव प्रयुक्तः ५३ पादोदकं तु पाद्यमव्याप्तेः ५४ स्वयमप्यर्पितं ग्राह्यमविशेषात् ५५ निमित्तगुणव्यपेक्षणादपराधेषु व्यवस्था ५६ पत्रादेर्दानमन्यथाहि वैशिष्ठ्यम् ५७ सुकृतत्वात् परहेतु भावाच्च क्रियासु श्रेयस्यः ५८ गौणत्रैविध्यमितरेण स्तुत्यर्थत्वात् साहचर्यम् ५९ बहिरंतःस्थमुभयमेवेष्टि संबंधवत् ६० प्रमादसत्वामत्वाभ्यां विशेषात् ६१ स्मृतिकीर्त्योः कथादेश्चार्तौ प्रायश्चित्त भावात् ६२ भूयसामननुष्ठितिरिति चेदाप्रायणमुपसंहारान्महत्स्वपि ६३ लघ्वपि भक्ताधिकारे महत् क्षेपकमपरसर्वहारात् ६४ तत्स्थानत्वदन्यधर्माः खले वालीवत् ६५ आनिंद्य योनिधिक्रियते पारम्पर्यात् सामान्यवत् ६६ अतोह्यविपक्वभावानामपितल्लोके ६७ क्रमैकगत्युपपत्तेस्तु ६८ उत्क्रान्ति वाक्यशेषात् ६९ महापातकिनां त्वार्तौ ७० सैकांत भावो गीतार्थं प्रत्यभिज्ञानात् ७१ परां कृत्यैव सर्वेषां तथा ह्याह ७२ भजनीयसद्वितीय मिदम् कृतस्नस्य तत्स्वरूपत्वात् ७३ तच्छक्तिर्माया जड़सामान्यात्७४व्यापकत्वात्व्याप्यानां७५ नप्राणिबुद्धिभ्योऽसम्भवात्७६निर्मायोच्चावचं श्रुतीश्चनिर्मिमीतेपितृवत्७७मिश्रोपदेशान्नेतिचेन्न स्वल्पत्वात् ७८ फलमस्माद् बादरायणो दृष्टत्वात् ७९ व्युत्क्रमादप्ययस्तथा दृष्टं ८० तदैक्यं नानात्वमुपाधितः ८१ पृथगेव चेन्न परेनासंबंधात् ८२ अविकारिणस्तु कारण विकारात् ८३ अनन्य भक्त्या तद्बुद्धिलयादत्यतं८४ ग्रामादिवत् विशिष्टतया पुमर्थत्वात् ८५ आयुश्चिरमित्यरेषां तु हानिरनास्पदत्वात् ८६ संसृति रेषामभक्तेः स्यान्नाज्ञानात् कारणासिद्धेः ८७ चीन्येषां नेत्राणि शब्दलिंगाच्चभेदाद्रुद्रवत्८८ आविस्तिरोभावा विकाराः क्रियाफलसंयोगात् क्रिया फल संयोगात् ८९ इस क्रम से सूत्रों के पाठ ग्रन्थ समाप्ति तक हैं। इति।

अथ उपसंहार।

हम लोगों के आर्य शास्त्रों में श्रुतियों के पीछे मूल सूत्रों का बड़ा आदर है। ये सूत्र भिन्न २ ऋषियों ने भिन्न २ शास्त्रों के प्रतिपादन को बनाए हैं और पीछे उन्ही पर भाष्य व्याख्या टिपनी टीका बना बना कर लोगों ने उन शास्त्रोंकोचौड़ाया है। यथा जैमिनि ने पूर्व मिमांसा,व्यासने उत्तरमीमांसा,

गौतम ने न्याय, कणाद ने वैशेषिक, कपिल ने सांख्य और पतंजलि ने योग सूत्र बनाए हैं। इन्ही छ शास्त्रों की संख्या षड् दर्शन है। इन में पूर्व मीमांसा सब से प्राचीन बोध होता है। इन सूत्रों को छोड़ कर और भी अनेक सूत्र हैं यथा पाणिनि के व्याकरण सूत्र, वात्स्यायन के काम सूत्र, वामन और भरत के अलंकार शास्त्र पर सूत्र, पिंगल के छन्दःशास्त्र पर और दूसरे दूसरे ऋषियों के अन्य अन्य शास्त्रों पर। वैसे ही भक्ति शास्त्र पर शांडिल्य ऋषि के और नारद जी के सूत्र हैं। कहते हैं कि संकर्षण सूत्र और उस का प्राचीन भाष्य उपासना पर आगे प्रचलित था किंतु अब उस की पुस्तक स्मरण शेष रह गई है।

इस शांडिल्य सूत्र के भाष्यकारों ने सूत्रों के आरम्भ करने के पूर्व उपासना रहस्य नामक अथर्व वेद की श्रुति का एक प्रकरण लिखा है। उस का आशय यह है कि ब्रह्मा ने श्री शिवजी से भक्ति का भेद पूछा है उस पर थोड़े से में शिवजी ने ब्रह्मा से भक्ति स्वरूप कथन किया है। ब्रह्माजी ने वह रहस्य नारद वशिष्ठ असित देवल और शांडिल्य से कहा है।

इस प्रकार हम आर्य लोगों का मूल शास्त्र वेद त्रिकांड कहलाता है अर्थात् कर्म ज्ञान और उपासना। पहले शास्त्र जीवों को कर्म का उपदेश करता है, उन कर्मों से शुद्ध अधिकारी जीव को ब्रह्मज्ञान करता है, फिर जब ज्ञान हो लेता है तो उसको उपासना का उपदेश देता हुआ परम सिद्धि को पहुंचता है।

आज कल काल के प्रभाव से उपासनाकांड का प्रचार विरल हो गया है इसी हेतु इस सूत्र का भाषा में अर्थ प्रचार किया गया इस से जगत् का परमोपास्य तुष्ट हो। इति।

अथ दैन्यप्रलाप।

जग में काको कीजै तोस। जासों तनकहु विरत कीजिए सोई धारत रोस। इन्द्रिय सब अपुनी दिसि खीचत चाहि चाहि निज भोग। मन अल्पस्थ वस्तुन हू भोगत मानत तनिक न सोग॥ कहति प्रतिष्ठा हमहि बढ़ाओ चहति कामना काम। ईर्षा कहति तुमहि इक जीअहु करि औरन बेकाम॥ जागत सपन काय वाचा सों मन सों भोगत धाय। घिसि गईं इन्द्री प्रान सिथिल भे तौहू नाहिं अघाय॥ जौन मिलत कै तन बल नहिं तौ दूरहि सों ललचाय। जिमि सतृष्ण ह्वै लखत मिठान श्वान लार टपकाय॥ सबसों

थकि के करत स्वर्ग के अमृतादिक में चाह । धिक धिक धिक हरिचन्द सतत धिक यह जग कास अथाह ॥ १ ॥

पूरबी २

तन पौरुष सब थाका मन नहिं थाका हो माधो ।
केस पके तन पक्यौ रोग सों मनुआ तबहु न पाका ॥
अर्जुन भीम सरिस चाहत यह करन विषय रन साका ।
बीती रैन तबौ मतवारा घोर नींद में छाका ॥
हारि गयो पै झूठहि गाड़े अबहूं विजय पताका ।
हरीचन्द तुम बिनु को रोकै ऐते ठग को नाका ॥ १ ॥

३

नर तन सब अवगुन को खान। सहज कुटिल गति जीवहु तामें यामें स्रुति परमान ॥ स्वारथपन अग्रह मलिनता लोभ काम अरु क्रोध॥ कामादिक सब नित्य धरम हैं तन मन के निरबोध ॥ तापैं सह धरमिन सों पूर्यौ भो संसार सहाय। अन्ध आसरे चल्यौ अन्ध के कहो कहा लौं जाय ॥ करि करुना करुना निधि केसव जोपै पकरौ हाथ। तौ सब विधि हरिचन्द बचे नतु डूबत होइ अनाथ ॥ १ ॥

४

नर तन कहो सुद्धता कैसी। कितनहुं धोओ पोछौ बाहर भीतर सब छिन पैसी। कारन जाको मूत रहो मल ही में लिपटि अनैसी। ताकों जल सों सुद्ध करत तिनको ऐसी की तैसी ॥ देहिक करमन सों न बनै कछु ता गति सहज मलै सी। हरीचन्द हरि नाम भजन बिनु सब वैसी की वैसी ॥ १ ॥

५

बिरद सब कहां भुलाए नाथ। पावन पतित दीन जन रच्छन जो गाई स्रुति गाथ ॥ जानहु सब कछु अन्तरजामी धाइ गहो अब हाथ। हरीचन्द मेटहु निज जन को बिधिहु लिखी जो माथ ॥ १ ॥

६

तुम सों कहा छिपी करुनानिधि जानहु सब अन्तर गति। सहज मलिन

या देह जीव की सहजहि नीच गामिनी जो मति ।। तन मन सपनहुं सो लोभी की दीन बिपतं गन मैं रति। निरलज जितनो होत पराजित तितनो ही लपटत अति ।। तापैं जौ तुमहूं बिसराओ तजि निज सहज बिरद तति। तौ हरिचन्द बचै किमि बोलहु अहो दीन जन के पति ॥ १ ॥

७

देखहु निज करनी की ओर। लखहु न करनी जीवन की कछु ऐहो नन्द-किसोर। अपनाए की लाज करहु प्रभु लखहु न जन के दोस। निज बानैं की बिरद निबाहो तजहु हीन पर रोस ॥ दीना नाथ दयाल जगत पति पतित उधारन नाथ। सब बिधि हीन अधम हरिचन्दहि देहु आपुनो हाथ ॥ १ ॥

८

करहु उन बातन की प्रभु याद। जो अरजुन सों भारत रन सैं कही थापि मरजाद। कैसहु होय दुराचारी पै सेवै सोहि अनन्य। ताहो कहं तुम साधु गुनहु या जग मैं सोई धन्य। सीघ्र धरममति शान्ति पाइहैं जो राखत मम आस। अरजुन मम परतिज्ञा जानहु नहि मम भक्त बिनास ॥ छाड़ि धरम सब लोक वेद के मम सरनहिं इक आउ। सब पापन सों तोहि छुड़ैहों कछुन सोच जिय लाउ। कही विभीषन सरन समय मैं सोऊ सुमिरहु नाथ। लछिमन हनूमान आदिक सब याके साखी नाथ ।। हम तुमरे हैं कहै एकहू बार सरन जो आइ। ताहि जगत सों अभय करत हम सबहि भांति अपनाइ। यहूं कह्यौ मम जनहि बासना उपजै और न होय। जिमि कूटे चुरए धानन मैं उपजै नाहीं बीय ।। यहू कह्यौ तुम मोकहं प्यारे निहकिंचन अरु दीन। यहू कह्यौ तुम हमहिं जीव के प्रेरक अंतर लीन ॥ कहं लौं कहौं सुनौ इतनो अब सतासंध महाराज। हरीचन्द की बार भुलाईं क्यौं वै बातैं आज ।।

तिनकौं रोग सोग नहिं व्यापै जे हरिचरन उपासी ।
सपनहुं मलिन न होइ सदा जे कलप तरोवत बासी ।।
हरि के प्रबल प्रताप सामुहें जगत्त दीनता नासो ।
हरीचंद निरभय बिहरहिं नित क्रष्णदास अरु दासी ।।

अथ सर्वोत्तमस्तोत्र भाषा ।

श्रीकृष्णायनमः ।

अथश्रीसर्वोत्तमस्तोत्र (भाषा)।

जयति आनंदरूप परमानंद कृष्णमुख कृपानिधि दैविउद्धारकारी । स्मृतिमात्रसकलआरतिहरन गूढगुन भागवतअर्थ लीनो विचारी ॥ १ ॥

एकसाकारपरब्रह्मस्थापनकरन चारहू वेद के पारगामी । हरनमायावाद वहुवाद नाशकरि भक्ति पथ कमल को दिवसस्वामी ॥ २ ॥

शूद्रललनालोकउद्धरन सामर्थ गोपिकाधीश कृत अंगिकारी । वल्लभीकृलमनुजअंगीकृतजननं पै धरनमर्य्याद बहुकरुणधारी ॥ ३ ॥

जगतव्यापक दानकरत सब वस्तु को चरित जाके सकल अतिउदारा । आसुरीजननमोहनकरनहेत यह व्याज सों प्रकृति इव रूप धारा ॥ ४ ॥

अगिनिअवतारवल्लभनाम शभरूप सदा सज्जनन हितकरत जानी । लोकशिक्षाकरन कृष्ण की भक्ति करि निखिलजग इष्ट के आपु दानी ॥ ५ ॥

सर्वलक्षनानिसम्पन्नश्रीकृष्णको ज्ञान प्रभु देत गुरुरूपधारी । सदा स्वानंदतुंदिल पद्मदलसरिसनयन जुग जगतसंतापहारी ॥ ६ ॥

कृपाकरि दृष्टि की दृष्टि वर्धिताकिए दासिकादासपति परमप्यारे । शेषदृगकरनमुरछितभक्तिद्वेषिगन भक्तजनचरनसेवितदुलारे ॥ ७ ॥

भक्तजनसुखसेव्य अतिदुराराध्य दुरलभकंजपद उग्रतेजधारी । वाक्य सकरन पूरनसकलजननमन भाग तपर्यासिंधुनथनकारी ॥ ८ ॥

सारताके जानि रासवर्तिान के भाव सों सकल पूरित सुभेसा । होत सनमुख देत प्रेम श्रीकृष्ण को अविमुक्ति देत लखि वहतदेस। ॥ ९ ॥

रासलीलैकतात्पर्य्यमयरूपसुनि देत करि कृपा वहु कथा ताकी त्यागि सव एक अनुभव करहु विरह को यहै उपदेसवानी सु जाकी ॥ १० ॥

भक्तिआचारउपदेस नित करत पुनि कर्ममारगप्रवर्त्तन सु कीनो । सदा यागादि मैं भक्तिमारग एक करहु साधनहि उपदेसदीनो ॥ ११ ॥

पूर्णआनंदमय सदापूरनकाम वाक्यपति निखिलजगविबुधभूपा । कृष्ण के सहस शुभनाम निजमुख कहे भक्तिपर एक जाको सुरूपा ॥ १२ ॥

भक्तिआचारउपदेसहित शास्त्र के वाक्यनानानिरू-

पन सु कीने । भक्तजन सदा घेरेरहत जिनन निज प्रेम हित प्रानप्रन त्यागिदीने ॥ १३ ॥

निजदासअर्थसाधन अनेकनकिए जदपि प्रभु आपसबशक्तिकारी । एक भुवलोकप्रचलितकरन भक्ति पथ कियो निजवंश पितुरूपधारी ॥ १४ ॥

निजविमलवंसमैं परममाहात्म्यप्रभु धर्‌यो सबजगतसंदेहहारी । पतिव्रतापतिपारलौकिकैहिकदान करत अधिकार जन को विचारी ॥ १५ ॥

गूढमति हृदयानिज अन्य अनभक्त कौं सकलआशय आपु कहत प्यारे । जगउपासनआदिमारग्गादीनमैंमुग्धजन मोह के हरनवारे ॥ १६ ॥

सकलमारगन सों भक्तिमारगबीच अतिविलक्षण सु अनुभवहि मानै । पृथककहि शरण को मार्गउपदेस करि कृष्ण के हृदय की बात जानै ॥ १७ ॥

प्रतिक्षणगुप्तलीला नवनिकुंज की भरिरही चित्तमैं सदा जाके । सोई कथा स्मरणकरि चित्तआक्षिप्तवत भूलिगई सकल सुधिआए ताके ॥ १८ ॥

ब्रजाप्रिय ब्रजवास अतिहिप्रियपुष्टिलीलाकरन सदा एकांतचारी । भक्तजनसकलइच्छासुपूरनकरन अतिहिअज्ञातलीलाविहारी ॥ १९ ॥

अतिहिमोहन निरासक्तजग भक्तमात्रा सक्त पतित पावन कहाई। जसगान करत जे भक्त तिनके हृदय कमल मैं वास जाको सदाई ॥ २० ॥

स्वच्छपीयूषलहरीसदृश निजजसनि तुच्छकरिअ-न्यरस दिये वहाई। पररूपकृष्णलीलाअमृतरस अखिलजन सींचि प्रेममैं दिये भिँजाई ॥ २१ ॥

सदाउत्साह गिरिराज के वास में सोई लीला प्रेम-पूरगाता। यज्ञहवि हरत पुनि यज्ञआपुहि करत अतिविसद चारहूफल के दाता ॥ २२ ॥

शुभप्रतिज्ञा सत्य जगतउद्धार की प्रकृति सों दूरि बहु नीतिज्ञाता। कीर्त्तिवर्द्धन करी सूत्र को भाष्य करिकृष्ण इकतत्व के ज्ञानदाता ॥ २३ ॥

तूलमायावाददहनाहित अग्निवपु ब्रह्म को वादजग प्रगटकीनो। निखिलप्राकृतरहित गुननभूषित सदा मंदमुसुकानि मन चोरिलीनो ॥ २४ ॥

तीनहूंलोकभूषनभूमिभाग्यवर सहजसुंदररूप-वेदसारं। सदा सबभक्तप्रार्थितचरनकमलरज धन रूप नौमि लक्ष्मणकुमारं ॥ २५ ॥

एकसतआठ ए नाम अभिराम नित प्रेमसों जे

जगत मांहि गावैं। परमदुलरभ कृष्णअधरअमृत पानस्वाद करिसुलभ ते सदापावैं॥ २६ ॥

नामआनंदनिधि वल्लभाधीश को विट्ठलेश्वर प्रगट करि दिखायो। छोडि साधन सकल एक यह गाइकै परम संतोष हरिचंद पायो ॥ २७ ॥

इतिश्रीमद्विट्ठलनाथचरणपंकजपरागलेपनापसारितनिखिलकल्मषहरिश्चन्द्रकृतभाषान्तारितकीर्तन स्वरूपश्रीसर्वोत्तमस्तोत्रंसमाप्तिमगमत् ॥

उत्तरार्द्ध-भक्तमाल।

अर्थात्

नाभा जी के भक्तमाल के लिखे पश्चाद् जो जो भक्त हुए हैं,

उन के जीवन चरित।



श्री हरिश्चन्द्र लिखित।



उत्तरार्द्ध भक्तमाल ।

दोहा ।

राधा वल्लभ वल्लभी , वल्लभ वल्लभ ताइ ।
चार नाम वपु एक पद , बन्दत सीस नवाइ ॥ १ ॥
ह्वै प्रतच्छ बसि गृह निकट , दियो प्रेम को दान ।
जय जय जय हरि मधुर वपु , गुरु रस रीति निधान ॥ २ ॥
जग के विषय छुड़ाइ सब , सुद्ध प्रेम दिखराइ ।
बसे दूर ह्वै सहज पुनि , जै जै जादवराइ ॥ ३ ॥
धन जन हरि निहचिन्त करि , फिर डाखौ भव जाल ।
सोचि जुगति काछु मोहि जिन , जै जै सो नंदलाल ॥ ४ ॥
काछु गीता मैं भाखि कै , शुक ह्वै करुना धारि ।
कही भागवत मैं प्रगट , प्रेम रीति निरुवारि ॥ ५ ॥
पुनिवल्लभ ह्वै सो कही , कबहूं कही जु नाहिं ।
शुद्ध प्रेम रस रीति सब , निज ग्रन्थन के मांहिं ॥ ६ ॥
वंश रूप करि कै द्विविध , थापि पुनि जग सोय ।
अब लौं जाके लेस सौं , पामर प्रेमी होय ॥ ७ ॥
व्यास कृष्ण चैतन्य हरि , दास सु हित हरिवंस ।
विविध गुप्त रस पुनि कहे , धरि वपु परम प्रसंस ॥ ८ ॥
भांति भांति अनुभव सरस , जिन दिखरायो आप ।
अधमहुं को सो नित जयति , समन समन पुर दाप ॥ ९ ॥
अतिहि अघी अति हीन निज , अपराधी लखि दीन ।
जदपि छमा के जोग नहिं , तऊ दया अति कीन ॥ १० ॥
छत्रानी सौं यौं कह्यौ , या कहं जानहु सन्त ।
अहो कृपाल कृपालुता , तुमरी को नहिं अन्त ॥ ११ ॥
ज्वर तापित हिय में प्रगट , जुगल हंसत आसीन ।
स्वर्ण सिंहासन पर लिए , कर जुग कंज नवीन ॥ १२ ॥
अगिनि बरत चारहुं दिसा , पै मधि सीतल नीर ।

ताहि उछारत चरन सों , देत दाम कहं धीर ॥ १३ ॥
बहु नट बपु ह्वै आपुही , कसरत करत अनेक ।
कबहूं पौढ़े महल में , तानि भीन पट एक ॥ १४ ॥
कबहुं सेत पांखान की , कोंच जुगलछबिधाम ।
बैठे बाग बहार में , गल भुज दिए ललाम ॥ १५ ॥
सांझ समै आरति करत , सब मिली गोपी ग्वाल ।
कबहुं अकेलेही मिलत , पिय नन्दलाल दयाल ॥ १६ ॥
कबहुं गौर दुति बाल वपु , रजत अभूपन अंग ।
पंच नदी पोसाक तन , धरे किए सोइ ढंग ॥ १७ ॥
कबहुं जुगल आवत चले , सांझ समय बरसात ।
कै बसन्त जहं हरित धर , चारहु ओर दिखात ॥ १८ ॥
देखि दीन भुव में लुठत , फूल छरी सिर मारि ।
हंसत परसपर रस भरे , जिय अति दया बिचारि ॥ १९ ॥
कबहुं प्रगट कबहुं सुपन , कबहुं अचेतन माहिं ।
निज जन दृढ़ता हेत जो , बारम्बार दिखाहिं ॥ २० ॥
होत बिमुख रोकत तुरत , करत बिबिध उपदेस ।
जै जै जै हरि राधिका , बितरन नेह बिसेस ॥ २१ ॥
मायावाद मतंग मद , हरत गरजि हरि नाम ।
जयति कोऊ सो केसरी , वृन्दावन बन धाम ॥ २२ ॥
तम पाखण्डहि हरत करि , जन मनजलज बिकास ।
जयति अलौकिक रवि कोऊ , स्रुतिपथकरनप्रकास ॥ २३ ॥

अथ परम्परा ।

तन्नमामि निज परमगुरु , कृष्ण कमल दल नैन ।
जाको मत श्री राधिका , नाम जपन दिन रैन ॥ २४ ॥
श्री गोपीजन पद जुगल , बंदत करि पुनि नेम ।
जिन जग में प्रगटित कियो , परम गुप्त रस प्रेम ॥ २५ ॥
श्रीशिव पद निज जानि गुरु , बन्दत प्रेम प्रमान ।
परम गुप्त निज प्रगट किय , भक्तिपन्थ अभिधान ॥ २६ ॥
बन्दों श्री नारद चरन , भव पारद अभि राम ।
परम बिसारद कृष्ण गुन , गान सदा गत काम ॥ २७ ॥

पुनि वंदत श्री व्यास पद , वेद भाग जिन कीन ।
कृष्ण तत्व को ज्ञान सब , सूत्र बिरचि कहि दीन ॥ २८ ॥
बन्दत श्री शुकदेव जिन , सोध प्रेम को पन्थ ।
हम से कलिमल ग्रसितहित , कह्यौ भागवत ग्रन्थ ॥ २९ ॥
विष्णुस्वामि पद जुगल पुनि , प्रनवत वारंवार ।
जिन प्रगटायो प्रेमु पथ , बहत जानि संसार ॥ ३० ॥
गोपीनाथ अरंभि जे , देवादिक मध धामि ।
विल्वमंगल लौं समसत , गुरु अवली प्रनमामि ॥ ३१ ॥
नमो विल्वमङ्गल चरन , भक्ति बीज उत्कर्ष ।
सूक्ष्म रूप सों तरु रहे , जो अनेक सत वर्ष ॥ ३२ ॥
यह मारग डूबत निरखि , जिन प्रगटायो रूप ।
नमो नमो गुरुवर चरन , श्री वल्लभ द्विज भूप ॥ ३३ ॥
जुगल सुअन तिनके तनय , जिनहिं आठ निरधारि ।
भक्ति रूप दसधा प्रगट , वंदत तिनहिं विचारि ॥ ३४ ॥
एक भक्ति के दान हित , थापित परम प्रसंस ।
भयो अहै अरु होइगा , जे श्री वल्लभ वंस ॥ ३५ ॥
प्रगटन प्रेम प्रभाव नित , नासन सोग कुरोग ।
जै जै जग आरति हरन , विदित वल्लभी लोग ॥ ३६ ॥
जे प्रेमी जन कोउ पथ , हरि पद नित अनुरक्त ।
वंदत तिनके चरन हम , करहु कृपा सब भक्त ॥ ३७ ॥

अथ उपक्रम ।

नाभाजी महाराज ने , भक्तमाल रस जाल ।
आल बाल हरि प्रेम की , विरचि होइ दयाल ॥ ३८ ॥
ता पाछें अबलौं भए , जे हरि पद रत सन्त ।
तिनके जस बरनन करत , सोइ हरि कहं अति कंत ॥ ३९ ॥
कबहूं कबहुं प्रसङ्ग बस , फिर सों प्रेमी नाम ।
ऐहैं या नवग्रन्थ में , पूरब कतिथ ललाम ॥ ४० ॥
भक्त माल जो ग्रन्थ है , नाभा रचित विचित्र ।
ताही को एहि जानियो ; उत्तर भाग पवित्र ॥ ४१ ॥
भक्तमाल उत्तर अरध ; याही सों सुभ नाम ।

गुथी प्रेम की डोर में , सन्त रतन अभिराम ॥ ४२ ॥
नव माला हरि-गल दई , नाभाजी रचि जौन ।
दुगुन आशु करि कृष्ण कौं , पहिरावत हौं तौन ॥ ४३ ॥
लिखे कृष्ण हिय में सदा , जदपि नवल कोउ नाहिं ।
नाम धाम हरि भक्त के , आदि समय हू मांहि ॥ ४४ ॥
तदपि सदा निज प्रेम पथ , दीपक प्रगटन काज
समय समय पठवत अवनि , निज भक्तन ब्रजराज ॥ ४५ ॥
ताही सों जब आवहीं , भुव तब जानहिं लोग ।
भक्त नाम गुन आदि सब , नासन भव भय रोग ॥ ४६ ॥
तिनहीं भक्त दयाल की , परम दया बल पाइ ।
तिनको चरित पवित्र यह , कहत चहौं कछु गाइ ॥ ४७ ॥
वैश्य अग्र कुल में प्रगट , बाल कृष्ण कुल पाल ।
तासुत गिरिधर चरन रत , वर गिरधारी लाल ॥ ४८ ॥
अमीचंद तिनके तनय , फते चंद ता नंद ।
हरखचंद जिन के भए , जिन कुल सागर चंद ॥ ४९ ॥
श्री गिरिधर गुरुदेव जी , घर सेवा पधराइ ।
तारे निज कुल जीव सब , हरि पद भक्ति दृढ़ाइ ॥ ५० ॥
तिन के सुत गोपाल ससि , प्रगटित गिरिधरदास ।
कठिनकरम गति मेटि जिन , कीनो भक्ति प्रकास ॥ ५१ ॥
मेटि देव देवी सकल , छोड़ि कठिनकुल रीति ।
थाप्यो गृह में प्रेम जिन , प्रगटि कृष्ण पद प्रीति ॥ ५२ ॥
पारबती की कूख सों , तिनसों प्रगट अमन्द ।
गोकुलचन्द्राग्रज भयो , भक्त दास हरिचन्द ॥ ५३ ॥
तिन श्री वल्लभ वर कृपा , विरची माल बनाइ ।
रही जौन हरिकंठ में , नित नव छवि लपटाइ ॥ ५४ ॥
लहिहैं भक्त अनन्द अति , ह्वै हैं पतित पवित्र ।
पढ़ि पढ़ि कै हरिभक्त को , चित्र विचित्र चरित्र ॥ ५५ ॥

श्री विष्णुस्वामि संसार में प्रगट राजसेवा करी ।
श्रीमुक्त सों लहि ज्ञान आन्ध्र भुव पावन कीनी ॥

नृप प्रधानता जगत जान गुनि कै तजि दीनी ।
हठ करि हरि कौं अपुने कर नित भोग लगायो ॥
भक्ति प्रचारन द्विविध वंश भुव माहिं चलायो ।
जग में अनेक सतवंस बसि नाम दान भुव उद्धरी ॥ श्रीविष्णु स्वामि—

श्रीनिम्बादित्य सरूप धरि आपु तुङ्ग विद्या भई ।
द्राविड़ भुव में अरुण गौड़ द्विज ह्वै प्रगटाए ॥
तम पाखण्ड दलमलन सुदर्सन वपु कहवाए ।
सकल वेद को सार काढ़्यो दसही छन्दन मई ॥
सुक मुख सों भागवत सुनी नृप देवरात जहं ।
बनि अरक वृच्छ चढ़ि दरस दै अतिथि संक सब हरिलई ॥ श्रीनिम्बादित्य—

मायाबादी घननाद मद्द रामानुज मर्द्दन कियो ।
अगिनित तम पाखण्ड प्रगट ह्वै धूरि मिलायो ॥
बीर बनक सों सुदृढ़ भक्ति को पंथ चलायो ।
बादी गनन प्रतच्छ सेस बनि दरसन दीनो ॥
गुरु को चार मनोरथ पन करि पूरन कीनो ।
जा सरन आइ निरदुन्द ह्वै जीवन रवा भय तजि जियो ॥ मायाबादीघन—

दृढ़ भेद भगति जग में करन मध्व अचारज भुव प्रगट ।
प्रथम शास्त्र पढ़ि सकल परंभन खंडन ठान्यौ ॥
द्वैतवाद प्रगटाइ दासभावहि दृढ़ मान्यौ ।
थापि देव गोपाल धरनि निज विजय प्रचार्यौ ॥
मति मण्डित पण्डित गन बल खण्डित करि डार्यौ ।
दै सङ्ख चक्र की छाप भुज दई मुक्ति सारूप्य झट ॥ दृढ़भेद भक्ति—

श्री विष्णुस्वामि पथ उद्धरन जै जै वल्लभ राजवर ।
तिलंगवंस द्विजराज उदित पावन वसुधा तल ॥
भारद्वाज सुगोत्र यजुर साखा तैत्तिर कल ।
यज्ञनरायन कुलमनि लछमनभट्ट तनूभव ॥
इल्लमगारू गर्भ रत्नसम श्री लछ्मी धव ।
गोसीपनाथि विट्ठल पिता भाष्यादिक बहु ग्रन्थकर ॥ श्रीविष्णुस्वामि—

निज प्रेम पंथसिद्धान्त हरि विट्ठल बपु धरि कै कह्यौ ।
श्री श्री वल्लभ सुअन विप्रकुल तिलक जगत वर ॥
मायामत तमतोम विमर्द्दन ग्रीषम दिवाकर ।
जन चकोर हित चन्द भक्ति पथ भुव प्रगटावन ॥
अंतरंग सखि भाव स्वामिनी दास्य दृढ़ावन ।
दैवीजनमिलिब्रजबल्लभहितइकजापद दृढ़करिगह्यौ । निजप्रेमपंथसिद्धान्तहरि—

निज फलित प्रफुल्लित जगत मैं जय वल्लभ कुल कलपतरु ।
गुरुवर गोपीनाथ प्रगट पुरुषोत्तम प्यारे ॥
श्रीगिरिधर गोविन्दराय रुक्मिनी दुलारे ।
बालकृष्ण श्रीवल्लभ साखा विजय प्रकासन ॥
श्री रघुपति जदुनाथ स्याम घन भव भय नासन ।
मुरलीधर दामोदर सुकल्यानराय आदिक कुंवर ॥ नितफलि—

जग कठिन शृङ्खला सिथिल कर प्रगट प्रेम चैतन्य को ।
श्री गौरद्विज ।सम हरि हित सब सौं सुख मोख्यो ॥
लोकलाज भवजाल कमल तिनुका सो तोख्यो ।
वेदसार हरिनाम दान करि प्रगट चलायो ॥
अनुदिन हरि रस निरतत जुग दृग नीर बहायो ।
नित मत्त कृष्ण मधुपान करिसपनेहु ध्यान न अन्यको ॥ जग कठिन शृङ्खला—

ये मध्व संप्रदा के परम प्रेमी पण्डित जग बिदित ।
विजयध्वज अति निपुन बहुत वादी जिन जीते ।
माधवेन्द्र नरसिंह भारती हरि पद प्रीते ॥
ईश्वरपुरी प्रकाश भट्ट रघुनाथ अचारज ।
त्रिपुर गङ्ग श्रीजीव प्रबोधानन्द सु आरज ॥
अद्वैत सु नित्यानन्द प्रभु प्रेम मूर ससि से उदित ॥ ये मध्व संप्रदा के परम—

जान्यौ वृन्दावन रूप हरिदास व्यास हरिवंस मिलि ।
निम्बारक मत बिदित प्रेम को सारहि जान्यौ ।
जुगल केलि रस रीति भलें करि इन पहिचान्यौ ॥
सखी भाव अति चाव महल के नित अधिकारी ।

पिय हूं सों बढि हेत करत जिन पें निज प्यारी ॥
जग दान चलायो भक्ति को व्रज सरवर जल जलज खिलि ॥ जान्यौवृन्दावन—

ये वृन्दावन के सन्त सब जुगल भाव के रंग रंगे ।
मौनीदास गुविन्ददास निम्बार्क सरन जू ।
ललित मोहनी चतुर मोहनी आसकरन जू ॥
सखीचरन राधाप्रसाद गोवर्द्धन देवा ।
कंवलललित गरीबदास भीमा सखि सेवा ॥
श्री वल्लभदास अनन्य लघु विट्ठल मोहन रस पगे ॥ ये वृन्दावन के सन्त सब—

रघुनाथ सुअन पंडित रतन श्रीदेवकिनन्दन प्रगट ।
किय रसाब्धि नव काव्य कृष्ण रस रास मनोहर ।
श्रीगोकुलससि सेइ लहे अनुभव बहु सुन्दर ॥
पिता पितामह प्रपितामह को पंडितताई ।
भक्ति रीति हरि प्रीति भलें करि आपु निभाई ॥
जानकी उदर अंबुधि रतन पितुगुन जिन में विदित खट ॥ रघुनाथ सुअन—

पीताम्बर सुत विद्या निपुन पुरुषोत्तम वादीन्द्र जित ।
श्रीवल्लभ पाछें बुधिबल आचार्ज कहाए ।
निरनय वाद बिवाद अनेकन ग्रन्थ बनाए ॥
गाड़ा पैं धुज रोपि जयति वल्लभ लिखि तापर ।
ग्रन्थ साथ सब लिए फिरे जीतत चहुं दिसि धर ॥
श्रीबालकृष्ण सेवा निरत निज बल प्रगटायो अमित ॥ पीताम्बरसुत—

श्रीद्वारकेश व्रजपति व्रजाधीश भए निज कुल कमल ।
सेवा भाव अनेक गुप्त इन प्रगट दिखाए ।
श्री युगल नित्य रसरास कीरतन बहुत बनाए ॥
शुद्ध पुष्टि अनुभव उच्छलित रस हिय मांही ।
सपनेहु जिन को वृत्ति कबहुं लौकिक मय नांही ॥
श्रीवल्लभ को सिद्धांत सब थित जिन के चित नित विमल ॥ श्रीद्वारकेश—

श्रीश्री हरिराय स्वभक्ति बल नाथहि फिर बोलवाइयो ।

रसिक नाम सों ग्रन्थ रचे भाषा के भारे ।
नाम राखि हरिदास तथा संस्कृत के न्यारे ॥
परम गुप्त रस प्रगट बिरह अनुभव जिन कीनो ।
सेवा महं सब त्यागि सदा हरि के चित दीनो ॥
हरि इच्छा लखि बिनु समयंहू मन्दिर इन खुलवाइयो ॥ श्रीश्री हरिराय—

जो अनुभव श्रीबिट्ठल कियो सोइ दाऊ जी में उघट ।
सात सरूपहि फिर श्री जी पासहिं पधराये ।
पहिले ही की भांति अन्नकूट भोग लगाये ॥
सब रित उच्छव प्रगट एक रितु माहिं दिखाये ।
छून परस करि सो कर फिर नहिं प्रभुहि छुवाये ॥
करि लाखन व्यय सेवा करी किय गोकुल मेवाड़ अट ॥ जो अनुभव—

लखि कठिन काल फिर आपु ही आचारज गिरिधर भए ।
बालकपन खेलत ही में पाखान तरायो ।
बादी दच्छिण जीति पंथ निज सुदृढ़ दृढ़ायो ॥
श्रीमुकुन्द भव दुन्द हरन काशी पधराये ।
थापि कुल मरजादा अनुभाव प्रगट दिखाये ।
पूरे करि ग्रन्थ अनेक पुनि आपहु बहुबिरचे नए ॥ लखि कठिनकाल—

बारानसि प्रगट प्रभाव श्रीस्यामा बेटी को भयो ।
श्री गिरिधर की सुता सतोगुन मय सब अंगा ।
हरि सेवा में चतुर पतित पावनि जिमि गंगा ॥
खट ऋतु छप्पन भोग मनोरथ करि मन भायो ॥
वृन्दावन को अनुभव कासी प्रगटि दिखायो ।
थिर थापी करि सब रीति निज सुजस दसहु दिसि में छयो ॥ बारानसि में—

ये बल्लभ कुल के रत्न मनि बालक सब भुव में भए ।
सोमचिरैया रचि कै श्री रनछोर उड़ाई ।
पुरुषोत्त प्रभु पद रचि लीला ललित सुनाई ॥
बिट्ठलनाथ दयाल सतोगुन मय बपु धारे ।

तैसेहि गोविंदनाल गोकुलाधीस पियारे ॥
जीवन जो जन जीवन करन विविध ग्रन्थ बिरचे नए । ये वल्लभ कुल के—

अघ निकार सूर कर सूर पथ सूर सूर जग में उयो ।
वल्लभ सागर विट्ठल जाहि जहाज बखान्यो ॥
जग कवि कुल मद हत्यो प्रेम नीकें पहिचान्यो ।
एक वृत्ति नित नवाल्लाद हरि पद रचि गाए ॥
श्रीवल्लभ वल्लभ अभेद करि प्रगट जनाए ।
आपद बस अवलों नर सकल गाइ गाइ हरि गुनि जियो ॥ अघ निकार—

श्री कुंभनदास कृपाल अति मूरति धारें प्रेम मनु ।
राधा माधव बिनु कोउ पद जिन कबहुं न गायो ॥
विरह प्रीति हरि प्रति पंथ करि प्रगट दिखायो ।
सुनत कृष्ण को नाम स्रवन हियरो भरि आवत ॥
प्रेम मगन नित नव पद रचि हरि सनमुख गावत ।
श्रीवल्लभ गुरुपद जुग पदुम प्रगट सरस मकरन्द जनु ॥ श्रीकुंभनदास—

परमानंद दास उदार अति परमानंद ब्रज बसि लह्यो ।
हिय हरि रस उच्छलित निरखि गुरु कर धरि रोक्यो ।
जिन के दृग जुग जुगल रूप रसिकन अवलोक्यो ॥
लालन पद रचि कहे विरह व्यापी अनुछिन गति ।
सखी सखा वात्सल्य महातम भाव सिद्ध स्रुति ॥
श्रीवल्लभ प्रभु पद प्रेम सों जागरूक जग जस लह्यो ॥ परमानंद दास—

श्रीकृष्णदास अधिकार करि कृष्णदास्य अधिकार लह ।
अन्तरंग हरि सखा स्वामिनी के एकंगी ।
जासु गान सुनि नचत मुदित है ललित त्रिभंगी ॥
जगत प्रीति अभिमान द्वेष हरि को अपनावन ।
इन के गुन औगुन प्रगटे तनहू तजि पावन ॥
नव बार बधू हरि भेंट करि वल्लभ पद कर सुदृढ़ गह ॥ श्रीकृष्णदास—

गोविंदस्वामी श्रीदाम वपु सखा अंतरंगी भए ।
हरि संग खेलत फिरत तुरग बनि कबहूं धावत ॥

भूख लगत बन छाक लेन तब इनहिं पठावत ।
अनुछिन साथहि रहत केलि परतच्छ निहारत ।
गाइ रिझावत हरिहि प्रेम जग में बिस्तारत ॥
ऐसे बावन पद जुगल रस केलि मए बिरचे नए ॥ गोबिंद स्वामी—
श्रीनन्ददास रस रास रत प्रान तज्यौ सुधि सो करत ।
तुलसिदास के अनुज सदा बिट्ठल पद चारी ।
अन्तरंग हरि सखा नित्य जेहि प्रिय गिरिधारी ॥
भाषा में भागवत रची अति सरस सुहाई ।
गुरु आगें द्विज कथन सुनत जल मांहि डुबाई ।
पंचाध्यायी हठ करि रखी तब गुरुवर द्विज भय हरत ॥ श्रीनंददास—
श्री दास चतुर्भुज तोक बपु सख्य दास्य दोऊ निरत ।
निज सुख कुम्भनदास पुत्र पूरो जेहि भाख्यौ ॥
गाइ गाइ पद नवल छापारस नित जिन चाख्यौ ।
बिछुरि बिरह अनुभयो संग रहि जुगल केलि रस ॥
सब छिन सोइ रंग रंगे बल्लभी जन के सरवस ।
भयो श्रीबिट्ठल भाव करि जगत बासना सों बिरत ॥ श्री दास चतुर्भुज—
श्री छीत स्वामि हरि और गुरु प्रगट एक करि कै लखे ।
गुरुहि परिच्छन हेत प्रथम सनमुख जब आए ॥
पोलो नरियर खोटो रुपया भेंट चढ़ाए ।
श्रीबिट्ठल तेहि सांचो किय लखि अचरज धारो ।
शरन गए कहि छमहु नाथ यह चूक हमारी ।
पद बिरचि सेइ श्रीनाथ कहं बिबिध गुप्त अनुभव चखे ॥ श्रीछीत स्वामि—
चौरासी परसङ्ग में मम आयसु धरि सीस ।
छंद रचे ब्रजचंद कछु सुमरि गोकुलाधीस ॥

अथ चौरासी वैष्णव प्रसंग ।

दामोदरदास दयाल भे मूल रूप यह माल के ।
जिन कहं श्रीप्रभु * कह्यौ कियो तेरे हित मारग ॥

---

* चौरासी वार्त्ता प्रसंग में प्रभु शब्द से श्रीमहाप्रभु श्री बल्लभाचार्य्यजी का नाम जानना ।

एक मात्र ये रहे रहस्यन के नित पारग ।
बल्लभ पथ के खम्भ समर्पन प्रथम किये जिन ।
अनुदिन छाया सरिस संग रहि भेद लहे इन ॥
रहि हैं जबलौं भुव पंथ यह अन्तरङ्ग नंदलाल के । दामोदरदास—

दृढ़ दास्य परम विस्वास के कृष्णदास मेघन भये ॥
जब गुरु बल्लभ विट्ठ्यास ढिग मिलन पधारे ।
तीनि दिवस लौं जल बिनु ठाढ़े रहे दुआरे ।
निसि में गंगा तरि गुरु के हित चूड़ा लाये ।
करि प्रसन्न श्रीप्रभुहि परम उत्तम बर पाये ॥
गिरि सिला हाथ रोकी गिरत भूमि परिक्रम संग गये । दृढ़दास्य—

दामोदरदास कनौज के संभलवार खत्री रहे ।
हरि सेयो तजि लाज सबै भय लीक मिटाई ॥
नारी सिर घट धारि प्रगट गागरी भराई ।
तन मन धन के मोह तजे सेवा हित धारी ।
अन्याश्रय को त्याग सदा भक्तन हितकारी ।
नित सेवत मथुरानाथ कौं प्रकट संप्रदा फल लहे ॥ दामोदरदास—

पद्मनाभदास कन्नौज कौं श्री मथुरानाथ न तजे ।
नाम दान नै व्यास हत्त प्रभु रुप लै त्यागो ॥
भीखौ अनुचित जानि पुष्टि मारग अनुरागो ।
कौड़ो लकड़ो वेंचि भागवत कृत निरवाहे ॥
छोला ही तें तोषि इष्ट ऐश्वर्ज न चाहे ।
सर्वज्ञ भक्त अरु दीन हित जानि एक कृष्णहि भजे ॥ पद्मनाभदास—

तनया पद्मनाभदास को तुलसा वैष्णव रुचि रची ।
सषड़ी महाप्रसाद जाति भय भगत न लीनो ।
जिय में यहो विचारि वैष्णवो पूगी कीनी ॥
पै दोउन कौं श्री मथुरापति कही सपन में ।
सषड़िहि महाप्रसाद जाति भय करौ न मन में ॥
श्री गोस्वामी हूं मुदित भे सानुभावता अति लषी ॥ तनया—

पद्मनाभदास कीं बहू को ग्लानि गई सब जीय की ।
लिख्यौ कुष्ट बिरतांत महाप्रभु निकट पठायो ।
सेवक दुख सुनि कै प्रभु हू कछु जिय दुख पायो ॥
दृढ़ बिस्वास सुहेत दई आज्ञा प्रभु सेवहु ।
वर पुरुषोत्तम दास कथा को समझ्यौ भेवहु ॥
सेवतही चारहि मास के भई पूर्व गति पीय की । पद्मनाभदास की—

नाती पद्मनाभ दास के रघुनाथ दास साखी रहे ।
श्री गोस्वामी चरन कमल बन्दे गोकुल में ॥
पाई सुगम सुराह तिगुनमय या द्रुप कुल में ।
श्री मथुरापति प्रगट भाव बस बिहरत भूले ॥
या कुल की मरजाद जान जापैं अनुकूले ।
परमानन्द सोनी सङ्गतें परम भागवत पद लहे ॥ नाती पद्मनाभ—

छत्रानौ रजो अडेल को परम भागवत रूपही ।
आइ लछमन भट्ट सरपि कछु थोरी हो तहं ॥
महाप्रभुन छूत हेत पठाए सेवक तेहि पहं ।
दिए नहीं बहु भांति मांगि थकि पारपि कीने ॥
इन ठाकुर घी देनी अति अनुचित दृढ़ कीने ।
साधहु दिन प्रभुहि जिवांइकै लोकमेटि हरि गतिलही । छत्रानौरजो—

पुरुषोत्तमदास सुसेठवर हतो श्री कासी रहे ।
नाम दान मनमान जासु गिरजापति कीनें ॥
निसिदिन भैरो द्वारपाल सिवसासन दीने ।
अन्याश्रय गत बिरज मदन मोहन अनुरागी ॥
महाप्रभुन की कृपापात्रता जिन सिर जागी ।
जिन घर नंदादिक रूप सों प्रगटि जनम उत्सव लहे ॥ सेठ पुरुषोत्तम·

जाई पुरुषोत्तमदास की रुक्मिनि मोहन मदन रत ।
गंगास्नानहु सों बढ़ि जिन सेवा गुनि कीनी ॥
श्री गोस्वामी श्री सुख जासु बड़ाई कीनी ।
गहन नहानी एक बार चौबीस बरष

सेठौ सुनि भे मगन भजन सुख सिन्धु हरष मैं ।
सेवक स्वामी एकै अहैं यातें नित एकतै रहत ॥ जाई पुरुषोत्तम दासकी—

गोपालदास तिन तनय कौं सुमिरत श्री मोहनमदन ।
भगवद नाम स्मरन हुंकारी प्रगट आप भर ॥
श्री गोस्वामी श्री सुख जिनहिं सराहत निरभर ।
भगवद लीला सदा नित्त नव अनुभव करते ॥
तिलक सुबोधनि पाठ कीरतन चित हित धरते ।
पुरुषोत्तम दास सुबंस मैं अति अनुपम अवतंस मन ॥ गोपालदास—

सारस्वत ब्राह्मण रामदास ठाकुर हित चाकर भये ।
देनो दियो चुकाइ जासु नवनीत पियारे ।
श्री आचारज महाप्रभुन धनि धन्य उचारे ॥
बाल भाव निज इष्टहि सेवत बाकल पावे ।
सेवा मैं बसुजाम लीन तन धन बिसरावे ॥
नित सकल काम पूरन परम दृढ़ बिस्वास सरूप ये। सारस्वतब्राह्मण—

गदाधरदास द्विज सारस्वत अतिहि कठिन पन चित धरे ।
जजमानाश्रय भोग मदनमोहन के राखे ॥
जो आवै सो सकल तुरत अपनै अभिलाषे ।
जादिन नहिं कछु मिलै छानि जल अर्पन करतै ॥
भूषेही रहि आप वैष्णवनि हित अनुसरतै ।
सागौ स्वादित अति जासु घर भक्त भाव सो नहिं टरे ॥ गदाधरदास—

वैनदास माधवदास दोउ श्री नवनीत प्रिया निरत ।
वेनिदास महान भागवत बड़े भ्रात हे ॥
विषई माधवदास अनुज पैं नहि रिसात हे ।
बांटि सकल धन भए बिलग कामिनि अनुकूले ॥
मुक्तामाल लिय मोल इष्ट हित आपुहि भूले ।
प्रगटे ठाकुर बोरन लगे भये विषयतें तब विरत ॥ वैनीदास—

हरबंस पाठक सारस्वत ब्राह्मण श्री कासी निवस ।
हे दिन पटनै रहे तहां हाकिम चित ऐसी ॥

अनुसरिहैं हम तुरत करैं ये आज्ञा जैसी ।
सपने ठाकुर कही डोल झूलन हम चाहत ॥
हाकिम तें ह्वै बिदा तयारी करी बचन रत ।
श्री काशी में आये तुरत डोल झुलाए प्रेम बस ॥ हरिवंसपाठक—

गोबिन्ददास भल्ला तज्यो प्रानहु प्रिय निज इष्ट हित ।
चारि भाग निज द्रव्य प्रभुन आज्ञा तें कीने ।
एक भाग श्री नाथै इक निज गुरु कहं दीने ॥
एक भाग दै तजो नारि एक आपुहि लीने ।
सोऊ बैष्णवनि हेत कियो सब व्यय भय हीने ॥
तजि देव अंस गुरु अंस लहि सेवा केसवराय नित । गोबिन्ददास—

अम्मा पैं नित अनुकूल श्रीबालकृष्ण ठाकुर प्रगट ।
अम्मा बालक दोय ताहि करि प्यार पुकारैं ॥
मरे एक के ता रोवत हरि दुख जिय धारैं ।
रोवत रोवत मरो सोऊ सुत बहु बिलाप कर ॥
श्रीगोस्वामी समुझावन हित आये तिहि घर ।
मंदिर को टेरा खोलि कै देषे पय पीवत निकट ॥ अम्मा पैं—

गज्जन धावन छली हुते श्री नवनीत प्रिया सुषद ।
जिन बिन ठाकुर महाप्रभू अरहू नहि रहते ।
जे ठाकुर बिन अतिहि दुसह दुष सहत न कहते ॥
छन बिछुरत इन देह दहत जर वे न अरोगत ।
इन दोउन की प्रीति परसपर कौन कहि सकत ॥
सब भावहि बस नित हो रहे दिये जिनहिं निज परमपद ॥ गज्जन—

ब्रह्मचारि नरायनदास जू बसत सहावन भजनरत ।
धन कहं गुन्यो बिगार देखि निज सेज चहूंकित ॥
दिय बोहारि फेकवाइ बहुरि लिपवायो हंसि हित ।
श्री गोकुल चन्दमा षीर खाईं जिन के घर ।
आरोगाई प्रभुन कही मति डरो जाति डर ॥
तबहीं ते सषड़ी खीर नहिं यहै रीति या पुष्टि मत ॥ नरायन दास—

छत्रानी एक महावनहि सेवत नित नवनीत प्रिय ।
पृथी परिक्रम करत महाप्रभु तहां पधारे ।
पाये स्मृति सरवस्व आपने प्रान अधारे ॥
चार वेद के सार चार हरि विग्रह करे ।
आस पास हो बसन मनोरथ निज जन पूरे ॥
तिन में यह प्रेम सुरंग रंगि रही धरे अति भक्ति हिय ॥ छत्रानी–

जियदास भजन रत जास चहुं श्रीलाड़िले सुजान के ।
उभय तनय पुरुषोत्तम दास छबील दास जिन ।
सेवा कोनो कछुक दिवस इन पै संतति बिन ॥
तिन के मामा कृष्णदास पुनि सेवा कोनो ।
तिन पीछे तिन मित्र सोई सेवा सिर लीनो ॥
तहं डेढ़ बरस रहि पुनि गये मन्दिर निज प्रिय प्रान के ॥ जियदास—

श्री ललित त्रिभङ्गी लाल की सेवा देवा सिर रही ।
देवा पत्नी सहित सरस सेवा चित दीन्ही ।
तिनहीं लों तहं रहे ठाकुरा भावहि चीन्हो ॥
रहे तनय तिन चारि लई नहिं तिनतें सेवा ।
भाव बस्य भगवान जासु कर्मादि कलेवा ॥
अंतरध्यान भे सु भौन तें निज इच्छा विचरन मही ॥श्रीललितत्रिभंगी—

रसिकाई दिनकरदास की कथा सुननि में अकथ ही ।
तुरतहि धावत सुनत महाप्रभु कथा कहत अब ।
काचिहि लोटी पाइ लेत सुधि रहति न तन तब ॥
जानि वाही प्रभु अति अनुचित तुम करी कथा हित ।
भोग लगाइ प्रसाद पाइ अब तें ऐहो नित ॥
येई श्रोता अब आजुतें श्रीमुख यह आपे कही ॥ रसिकाई—

मुकुन्ददास कायस्थ हे जिन मुकुन्द सागर किये ।
श्री आचारज महाप्रभुन पद प्रीति जिनहिं अति ।
याही तें प्रभु तिलक सुबोधनि भे तिन की मति ॥
निज सुख श्रीभागवत कहें नहिं सुनैंसु अपर सुष ।

कर्म सुभासुभ जनित पण्डितनि सुलभन वह सुष ।
बरनाश्रम धर्मनि बंचकनि सहजहि मैं इन ठगि लिये । मुकुन्ददास—

छत्री प्रभुदास जलोटिया टका मुक्ति दै टधि लई ।
यह मारग अति विषम कृष्ण चइतन्य सुनत ही ।।
मुक्ति है है जाहिं सु जिन कहं सुलभ सुघट ही ।
वृन्दावन प्रति वृच्छ पत्र व्रज प्रगट दिखाये ।
अवगाहन नहिं टोन प्रभुन परसाद पवाये ॥
सेवा श्री मोहन मदन की जिनहिं सावधानी दई । जलोटा छत्री—

प्रभुदास भाट सिंहनन्द के तीर्थ प्रथोदिक निन्दियो ।
सेवत मीको भांति ठाकुरहिं वृद्ध भये अति ।
तीर्थ प्रथोदिक पहुंचाये सब अन्याश्रित मति ।।
अन्याश्रय लषि सावधान आये निज घर कहं ।
करि सेवा निज सेव्य ललन की तजी देह तहं ॥
निन्दा करि कीरति चौधरी सार पाइ पद वंदियो । प्रभुदास—

पुरुषोत्तमदास जु आगरे राजघाट पै रहत है ।
श्री गोस्वामी एक समै आये तिन के घर ।
भई रसोई भोग समर्प्यो किये अनोंसर ॥
पुनि सादर निज सैव्य ठाकुरै के भाजन में ।
आरोगाये जस आरोगै नन्द भवन में ॥
श्री ठाकुर ही की सेज पै पौढ़ाये सेवत रहे ॥ पुरुषोत्तमदास—

बर तिपुर दास को सेरगढ़ हुते सुकायथ जात के ।
श्री हरि के रंग रंगे प्रभुन पद पदुम प्रीति अति ॥
सही कैद दइ जिनहिं तुरुक बहुमार मन्दमति ।
बिन चरनोदक महाप्रसाद लिये न पियत जल ॥
इन कहं खेदित जानि ठाकुरहु परत न कल कल ।
गज्जी की फरगुल इनहिं की हरे सीत श्रीनाथ के ॥ बर तिपुरदास—

पूरनमल छत्री प्रभुन के कृपापात्र अतिही रहे ।
आयसु लहि श्रीनाथ हेतु मन्दिर समरांये ।

सुभ मुहूर्त में जहं श्रीनाथहि प्रभु पधराये ॥
अति सुगन्ध अरगजा समर्पे जिन अपने कर ।
दिय ओढ़ाय आपने उपरना गोस्वामी वर ॥
गहन परसादी नाथ के बरस बरस पावत रहे । पूरनमल छत्री—

यादवेन्द्र दास कुम्हार श्री गोस्वामी आयसु निरत ॥
श्री गोस्वामी संग कहूं परदेस चलत जब ।
एक दिवस की सामग्री के भार बहत सब ॥
सेवा करहिं रसोई निसि में पहरो देते ।
मास दिवस के काम एकही दिन करि लेते ॥
जे कूप खोदि निजकर कमल खारो जल मीठो करत । यादवेन्द्रदास—

गोसांईदास सारस्वत देह तजी बदरी बनैं ॥
ठाकुर सेवा महाप्रभुन इन सिर पधराये ।
सेये नीकी भांति ठाकुरहि अतिहि रिझाये ॥
ठाकुर आयसु पाइ बदरिकासमहि पधारे ।
ठाकुर सेवा काढ़ भागवत माथे धारे ॥
जिन यह इनसों निरधार किय ठाकुर देवन इहि तनैं । गोसांईदास—

माधवभट कसमीर के मरे बालकहि ज्याइयो ॥
अतिहि दीन ह्वै लियो सुबोधनि महाप्रभुन पैं ।
सेवा में अपराध पर्यो अनजाने उनपैं ॥
लघु बाधा में तजी देह चोरनि सर लागे ।
श्री आचारज महाप्रभुन पद रति रस पागे ॥
श्री नाथो जिनकी कानितें निज पासहि पधराइयो । माधव-

गोपालदास पै सदन बंड़ु पथिकनि के विस्राम हित ॥
आवत श्रीद्वारिका पञ्चरावल निवसे जहं ।
सुनिगोपालदास सेवा सो पहुंचि गये तहं ।
पूछि कुसल लखि द्वारिकेस दरसन अभिलाषी ।
कही प्रगट रनछोर अडेल लखो निज आंखी ॥
सुनि बिरजो माव पटेल लै आइ दरस लहि भे मुदित । गोपालदास—

द्विज सांचोरे रावल पदुम श्रीरनछोर कही करी ॥
परमारथी गुपालदास सिषये ये आये ।
महाप्रभुन दरसन करि निज अभिमत फल पाये ॥
लै प्रभु पद चन्दन चरनामृत मे विद्याधर ।
श्री ठाकुर आयसु तें गये कोऊ सेवक घर ।
पय बहु रोटी अरपन करी घी चुपरी न रुषी धरी ॥ द्विज सांचोरे—

पुरुषोत्तम जोसी द्विज हुते कृष्ण भट्टपें अति मुदित ।
आये ये उज्जैन पद्मरावल के सुत घर ॥
रहे तहां पै तिन सब इन को कीन अनादर ।
बड़े पुत्र तिन कृष्ण भट्ट निज घर पधराये ॥
राषे तहं दिन चारि प्रसादहु भले लिवाये ।
सुनि सत संगी हरिवंस के गोस्वामी सुष भगत हित ।पुरुषोत्तमजोसी—

ऐसे भूले रजपूत कों जगन्नाथ लीने सरन ॥
श्रीठाकुर अर्पित असुद्ध गुनि अति दुख पाये ।
ताती षीर समर्पि सिषे लो प्रभुन सिषाये ॥
ज्वार भोग अनकुट पैं पेट कुपीर उपाई ।
इरषा सों दुरजन इन पैं तरवारि चलाई ॥
तेहि श्रीकर सों गहि कैं कही सारै मति ये महत जन । ऐसो—

जननी नरहर जगनाथ को महा प्रभुन छवि छकिरहीं ॥
इक इक सुहर भेंट हित दै पठये दोउ भाइन ।
नाम निवेदन हेतु प्रभुन पैं अति चित चाइन ।
मिले कृपा करि दियो दरस पुरुषोत्तम नगरी ॥
भई स्वरूपासक्ति तुरत भूली सुधि सगरी ।
पुनि मांगि भेट की सुहर प्रभु लिये सरन दोउन तहीं ॥ जननी नरहर—

नरहर जोसी जगनाथ के भाई बड़े महान है ।
भोग अरोगन आये सिसु ह्वै अपन बिसारी ॥
पै इन प्रभु की कानि रंच को चितन बिचारी ।
सावधान मे सुनत अनुज सों प्रभु की करनी ॥

गोस्वामी के सरन किये जजमान सघरनी ।
तेहि जरत बचाये आगि तें ऐसे ये सुघदानहे । नरहर जोसी—

सांचोरा राना व्यास दुज सिद्ध पूर निवसत रहे ॥
जगन्नाथ जोसी गर सुदगर तपिन लाइके ।
हाकिम पें अविकारी इनकों किये जाइके ॥
जिनकी मति लहि राजपुतानी सती भई नहिं ।
सुइ होइ आई ताकों तिन दिये नाम तहिं ॥
पुनि सरनागत करि प्रभुन के पर उपकारी पद लहे । सांचोरा राना—

धनि राज नगर वासी हुते रामदास दुज सारस्वत ॥
श्रीनटवर गोपाल पादुका गुरु सेयौ इन ।
श्रीरनछोर सु कहे ग्रहन किय निज नारिहु जिन ।
ठाकुरहो आयसु तें तिय कों नामहु दीने ॥
तब ताके कर महाप्रसाद मुदित मन लीने ।
पुनि नाम निवेदन प्रभुन पें करवाये कहि कानि सत ॥ धनि-

गोविंद दूबे सांचोर द्विज नव रत्नहि नित पाठ किय ।
श्रीगोस्वामी पत्र पाइ मीरहि द्रुत त्यागी ॥
श्रीठाकुर रनछोर बारता रस अनुरागी ।
प्रभुन थार के महा प्रसाद दिये नहिं इक दिन ॥
सकल वैष्णवनि सहित उपास किये तिहि दिन तिन ।
सुनि भूपि श्रीरनछोर सो थार महा परसाद दिय । गोविंद दूबे—

राजा माधो दूबे हुते दोउ भाई सांचोर दुज ।
राम कृष्ण हरि कृष्ण बड़े छोटे दोउ भाई ॥
बड़े पढ़े बहु कथा कहैं लघु मूढ़ सदाई ।
भावज की कटु सुनि दूबे के सरनहिं आये ॥
अष्टोत्तर सत नाम बार द्वै जपि सब पाये ।
पुनि पाइ नाम श्रीप्रभुन पें भे निज कुल के कलस धुज ॥ राजा माधो— —

जननी लोकोत्तम दास कों नाथ सेवकनि मिलि कह्यौ ।
करैं रसोई प्रीति समेत परोसि जिवावैं

याही तें श्रीनाथ सेवकनि कौं अति भावैं ।
श्रीगोस्वामी रीझि रहे लखि सुद्ध प्रेम पन ।
रसवात्सल्य अलौकिक जानि सिहाहिं मनहिं मन ॥
मन सुद्धाद्वैत सरूप मति कृष्ण भक्ति तजि तन लह्यो ॥ जननी—

ईश्वर दूबे सांचोर के सुखिया से श्रीनाथ के ।
श्लोकोत्तम जन नाम धन्य येऊ पुनि पाये ।
नाथ सेवकनि अधिक बीय है मातु कहाये ॥
अविरल भक्ति विद्धल गुसांई सौं इन लीन्ही ।
महाप्रभुन पथ प्रीति रीति इन दृढ़ करि चीन्ही ॥
पाई सेवा श्री अङ्ग की सरन अनाथनि नाथ के ॥ ईश्वर दूबे—

वासुदेव जन जन्मखलो काजी मद मरदन किये ।
श्रीगोपीपति सुहृद गुसांई पैं पहुंचाई ।
करी दण्डवत लाइ पहुंच पत्रिका सुहाई ॥
मथुरा तें आगरे गये आये जुग जामैं ।
श्रीहनन्द वैष्णवनि उछाहनि मैं अभिरामैं ॥
मन डेढ़ नित्त ये खात हे ढाल गुरज इक बार लिये ॥ वासुदेव जन—

बाबा वेनू के अनुजवर कृष्णदास चचरी रहे ।
श्रीकेसव के कीर्तनिया ये अरु जादव जन ।
कृष्णदास तहं गिरिवरधर ध्यावत त्यागे तन ॥
नाथ दरस करि गिरि नीचे वेनू तन त्यागे ।
जादव दासी सर रचि नाथ धुजा के आगे ॥
कहि नाथ देह तजि आगि धरि वायु वहे तिन तन दहे ॥ बाबा वेनू के—

जगतानन्द दुज सारस्वत थानेसर निवसत रहे ।
एक श्लोक के अर्थ प्रभुन त्रैमास बिताये ।
कही मास द्वै तीनि बीति है सुनि सिर नाये ॥
देहु नाम इन बिनय करी तब प्रभु अपनाये ।
पुनि श्रीमहाप्रभुन कौं तिन निज घर पधराये ॥
तहं नित सेवा बिधि तिनहिं कहि सावधान सेवन कहे ॥ जगतानन्द दुज—

दोऊ भाई छबी हुते महाप्रभुन रस रंग रये ।
आनंददास बड़े भाई नित बैठि अनुज संग ।
महाप्रभुन के चरित कथा गुन कहत पुलकि अंग ॥
सोइ भ्रात जब दास विसम्भर भरत हुंकारी ।
भरत आप तब श्रीहरिजू निज जन हितकारी ॥
कहि कथा पूंछि अनुजहिं मुदित जानि ठाकुरहि ठगि गये ॥ दोऊभाई—

इक निपट अकिंचन ब्राह्मनी जिन हरि कहं निज कर लहे ।
माटी के सब पात्र सदन सांकरो सुहायो ।
वृद्धि भई निज ठाकुर रत अपरस बिसरायो ।
लखि वैष्णव श्री महाप्रभुन पधराये तेहि घर ।
प्रीति भाव लखि भे प्रसन्न अतिही जिय प्रभुवर ॥
सेवकन कह्यो मरजाद तजि इन प्रभु पद दृढ़ करि गहे ॥ इक निपट—

छबानी इक हरि नेह रत वत्सलता की खानि ही ।
दिन दस के लडुआ इकही दिन करि कै राखे ।
सो प्रभु आपु उठाइ अङ्क लै तुरतहि चाखे ॥
यह मरजादा भंग देखि रोई भय छोई ।
आरति के हित कियो कह्यो तब प्रभु दुख जोई ।
तब नित सामग्री नव करति ऐसी चतुर सुजानि ही ॥ छबानीइकहरि |

समराई हठ करि प्रभुन कों निज कर भोग लगाइयो ।
सास गोरजा महा प्रभुन के दरस पधारी ॥
तब यह हरि सनमुख लाई रचि रुचि कै थारी ।
जब न अरोगी तब इन कछु आपहु नहिं खायो ॥
ऐसेही हठ करि जल बिनु दिन कछुक बितायो ।
तब आपु प्रगट ह्वै प्रेम सों जल लै याहि पिवाइयो ॥ समराईहठकरि—

दासी कृष्णा मति रुचि भरी गुरु सेवा में अति निरत ।
जब गोस्वामी कहं चतुर्थ बालक प्रगटाए ॥
तब श्री वल्लभ गोस्वामी वर नाम धराए ।
कृष्णा भाख्यौ इन कों गोकुल नाथ पुकारो ॥

ता ध। जग में यहै नाम सब लेत हंकारी ।
गोस्वामी हू जा कानि सों यहै नाम भाखि तुरत ॥ दासी अनि-

श्रीवृन्दामिश्र उदार अति बिनु गितुहू बालक दियो ।
जिजमानहि हरिबंस एकही छन्द सुनाई ॥
करम लिखोहू उलटन पतनी गोद भराई ॥
छत्री को इन सकल मनोरथ पूरन कीनो ।
करुना चित में धारि दान बालक को दीनो ॥
हरि गुरु बल जो सुख सो कह्यो सोई हठ करि कै कियो । श्री वृन्दामिश्र—

मीरा बाई की प्रोहिती रास दास जू तजि दई ।
हरि गुरु परम अभेद भाव हिय रहत सदाई ॥
याही तें गुरु कीरति इन हरि सनमुख गाई ।
मीरा भाख्यौ हरि चरित्र गाओ हिजराई ॥
सुनि अति कोपे इन जानें नहिं बल्लभराई ।
लखि द्वैध भाव तजि गांव सो दूर बसे मति गुरु मई ॥ मीरा बाई को—

सेवक गोवर्द्धननाथ के रामदास चौहान हैं ।
जब प्रगटे प्रभु प्रथम गोवरधन गिरि के ऊपर ॥
नाम नवल गोपाललाल लय दमन मनोहर ।
तब श्रीवल्लभ इनकों सेवा हरि को दीनी ॥
रहे मड़ैया छाइ परम रति मैं मति भीनी ॥
नित व्रज को गोरस अरपि कै सेवत हरि सुख खान हैं ॥ सेवक गोवर्द्धन—

द्विज रामानन्द विक्षिप्त बनि जगहि सिखाई प्रेम बिधि ।
गुरु रिसि करि कै तज्यो तऊ हरि जेहि नहिं त्याग्यो ।
दरसायो सिद्धान्त यहै पथ को अनुराग्यो ॥
बिकल पथहि पथ फिरत खात तन की सुधि नाहीं ।
निरखि जलेबी हरिहि समर्पी अति चित चाही ॥
ताको रस हरि के बसन में देख्यौ गुरुवर भाव निधि ॥ द्विज रामानन्द—
छीपा कुल पावन भे प्रगट बिष्णु दासवादीन्द्र जित ।
हरि सेवक जिन लेत न जलहू प्रेम बढ़ावन ।

भट्टनहू के परम लेत नहिं जानि अपावन ॥
श्रीगोस्वामी चरन कमल मधुकर ये ऐसे ।
स्वाती सम्बर कों चातक चाहत है जैसे ॥
धनि धनि जिन के प्रेम पन अन्याश्रय गत धीर चित ॥ क्षोपाकल पावन—

जन जीवन प्रभु की आनि दै मेघनि नहिं बरसन दये ।
एक समै श्रीमहाप्रभू दरसन करिवे हित ।
आवत है सब सोहनन्द के वैष्णव इक चित ॥
लागे करन रसोई मगमें घन घिरि आये ।
निहचै जानि अकाज अनन्यनि अति अकुलाये ॥
चढ़ि आई गुर की कानि चित मघवा मद जिन हरि लये ॥ जन जीवन—

भगवानदास सारस्वतै दई प्रभुन श्रीपांवरी ।
श्रीआचारज जाइ विराजे इन के घर जहं ।
नित उठि प्रातहि करहिं दण्डवत ये सादर तहं ॥
तातें कोउ नहिं धरत पाव तेहि पूजित ठौरहि ।
ठाकुर जिन सों सानुभाव कहिये का औरहि ॥
कैये जिन अपन बिसारि कै भरी निरन्तर भांवरी ॥ भगवानदास—

भगवानदास श्रीनाथ के हुते भितरिया सुखद अति ।
कछु सामग्री दाझि गई इक दिन अनजाने ।
गोस्वामी सेवा तें बाहिर किये रिसाने ॥
सुनि जन अच्युत गोस्वामी सों रोइ विनय की ।
नाथ हाथ गति प्रभु सम्बन्धी जीव निचय की ॥
सुनि कर गहि लै गिरिराज पै कही सेइ अबतें सुमति ॥ भगवानदास—

द्विज अच्युतदास सनोढ़िया चक्रतीर्थ पै रहत हे ।
आवें नित सिंगार समैं श्रीनाथ दरस हित ।
पुनि निज थल कों जात हुते ऐसो साहस चित ॥
नाथ परिक्रम दण्डवती इन तीन करी जब ।
श्रीगोस्वामी श्रीमुख करी बढ़ाई बहु तब ॥
है गुनातीत ये भगवदी प्रभुन भगति रस बहत हे ॥ द्विज अच्युतदास—

दुज गौड़दासअच्युत तहीं प्रभु विरहानल तन दहै ।
सेवा पधराई श्रीमोहन मदन लाल की ।
आपहु बैठे पाट प्रगटि तन छवि रसाल की ॥
सेये नीकी भांति मदनमोहन रिझवारे ।
श्रीगोस्वामी जिनहिं नमत लषि चपन बिसारे ॥
प्रभु असुर बिमोहन चरित लषि बद्रिनाथ दरसन लहै ॥ दुज गौड़ दास—

श्रीप्रभुन सरूप सुजान सुभ अच्युत अच्युत दास द्विज ।
प्रभु संग पृथी परिक्रम करि पद पांवरि पूजत ।
प्रभु के लौकिक वरस धरस तिन कहुं नहिं सूझत ॥
जिन लषि नर सुर असुर बिमोहि परत भवसागर ।
गुनातीत प्रभु चरित मगन मन जन नय नागर ॥
मोहित जन लषि प्रभु दरस दै कहे सगुन प्रागव्यनिज ॥ श्रीप्रभुन सरूप—

नरायनदास प्रभु पद निरत अस्थानय में बसत है ।
न्टप नौकर अवसर न पावते प्रभु दरसन कौं ।
उत्कण्ठित दिन राति धन्य धनि जिनके मन कौं ॥
कब जैहौ मैया श्रीवल्लभ के दरसन हित ।
चाकर राषे सुरति दैन कौं यौं छन छन नित ।
बहु भेंट पठावत है प्रभुहि एसे ये भागवत है ॥ नरायनदास—

नरायनदास भाट जाति मथुरा में निवसत रहै ।
जिनकौं आयसु दई मदनमोहन गुनि प्रभुजन ॥
बाहिर सुहि पधराउ काढ़िहौं गुप्त इतै बन ।
मथुरा तें निकसाइ तुरत बाहिर पधराये ॥
पुनि श्री गोपीनाथ सिंहासन पै बैठाये ।
तातें दरसन करि सबै के सहजहि अभिमत फललहै ॥ नारायन दास—

नरिया नारायनदास से सरन प्रभुन के अनुसरे ।
पातसाह ठट्टा के ये दीवान हेत है ॥
दुसह दण्ड में परि नित पांच हजार देत है ।
रुपए लाख पचास भरन कौं कैद किये तिन ॥

इया दिनकै है गुर भाइन को देइ दिये जिन ।
छुटि पातसाइसों सांच कहि सहस सुइर प्रभु पद धरे ॥ नरिया नारायण—

छत्रानी एक अकेलिये मोहनन्द में बसतही ।
श्री नवनीत प्रिया की करति अकिंचन सेवा ॥
तरकारी हित सिमुलौं भगरत जासों देवा ।
माया विद्या अनसपड़ी सपड़ी लौं त्यागी ॥
भावहि भूषे घी चुपरी रोटिहि अनुरागी ।
माया विसिष्ट प्रगटत सदा प्रेमहितें प्रभु तुरतही ॥ छत्रानी एक—

कायथ दामोदरदास जिन श्री कपूर रायहि भज्यौ ।
जिनकी जुवती हुती बीरबाई प्रभूतिका ॥
श्री ठाकुर सेवा की सोई सुचि विभूतिका ।
लई सूतकौ में सेवा जासों प्रभु पावन ॥
सेवक प्रभुन सरूप होत नहि कबहुं अपावन ।
नहि आतम सुद्धासुद्ध कहुं सोइ प्रभु सोइ सेवक सज्यो ॥ कायथदामोदर—

छत्री दोऊ स्त्री पुरुष हे रहे अड़ई सिहनन्द में ।
निपटै लघु घर हुतो मेड़ ठाकुर पौढ़ाए ॥
जिनकै डर सों सोवत निसि आंगन सचुपाए ।
पावसरितु में भींजत जानि पुकारि कही सुनि ॥
घर में सोवहु भीजौ मति न करौं ऐसो पुनि ।
तौऊ सांसन पावै बजन सोये या आनन्द में ॥ छत्री दोऊ—

श्री महाप्रभु सूतार घर श्रम पिछानि पधारे ।
प्रभुन दरस बिन किये रहे नहिं जे एको दिन ॥
छुटे सकल गृह काज भये घर के सब सुष बिन ।
याहीतें प्रभु आपै आवत हुते सदन जिन ॥
बहुत बारता करत हुते धनि जिनसों अनुदिन ।
पै दिन चौथे पचयें न कछु जननी रिस जिय धारते ॥ श्रीमहा प्रभुन—

अन्यमारगी सिव इक छत्री सेवक अति विमल ।
अन्यमारगी भवन नेह बस गए एक दिन ॥

किये पाक तेहि ठाकुर आगे नाथ अरपि तिन ।
भोगसराये ताहि जिवाये जिय आपो पुनि ॥
भूषे ठाकुर ताहि जगाइ कही सब सो सुनि ।
परभाव जानि या पंथ को भयो सरन सोज विलक ॥ अन्यमारगी—

चित लघु पुरुषोत्तमदास वे गुरु ठाकुर में भेद नहिं ।
श्री आचारज महाप्रभुन पद रति रस भीने ॥
आपै के गुन श्रवन कीरतन सुमिरन कीने ।
आपै कहं आतम अरपे सेये पूजे जन ॥
सषा दास आपहि के बन्दे आपहि कों छन ।
आपहु जिनकों अतिही चहै भक्ति भावधरि जीय महिं ॥ चित लघु पुरुषो—

कविराज भाट श्रीनाथ कों नित नव कवित सुनावते ।
तीनों भाई नाम पाइकें किये निवेदन ॥
नाथ निकट बहु कवित्त पढ़े प्रभु भये सुदित मन ॥
धनि धनि धनि वे कवित धन्य वे धन्य भगति जिन ।
धनि धनि धनि श्री प्रभुन नाम उधारन अगतिन ॥
किय कवित अनेकनि प्रभुन के सदा प्रभुन मन भावते । कविराज भाट—

गोपाल दास टोरा हुते अति आसक्त प्रभुन पे ।
मार्कण्डे पूजत हे प्रभु निज जन्मोत्सव दिन ॥
इक दिन आगे आये हे गाये पद तेहि छिन ॥
सुनि माधव में बल्लभ हरि अवतरे दास सुष ।
कृष्ण भगति सुद मगन भये तजि ज्ञानादिक सुष ॥
बहु छन्द प्रबंध प्रवीन ये बारे रसिक दुहून पे । गोपाल दास—

जनार्दन दास छत्री भये सरन पूर्न बिस्वासतें ॥
दरसन करत प्रभुन पूरन पुरुषोत्तम जाने ।
करो विनय कर जोरि सरन मोहि लेहु सुजाने ॥
आपो आज्ञा दई न्हाइ आवो ते आये ।
पाइ नाम पुनि किये समर्पन अति चित चाये ॥
ये सन्निधान श्रीनाथ के न्यारे ह्वै भव पास तें । जनार्दन दास—

गडुस्वामीब्रह्म सनोडिया प्रभुन सरन मे प्रभु कहे ॥
गये प्रभुन पैं न्हाइ दण्डवत करी विनय कै ।
कही सरन मोहि लेहु नाथ अब देहु अभय कै ॥
कही आप मुसिकाय कही स्वामी किमि सेवक ।
पुनि तिन वन्दन करी कही आज्ञा सुहि देवक ॥
लहि नाम सेवकनि सहित निज किये निवेदनमुदलहे । गडुस्वामीब्रह्म—

कन्हैया लाल छत्री जिन्हैं प्रभुन पढ़ाये ग्रन्थ निज ।
श्रीमहोस्वामी जू जिन सों पढ़े ग्रन्थ बहु ॥
इनको कहा बड़ाई करिये सुख अतिही लहु ।
प्रेमदास्य विस्वास रूप ये नीके जानत ॥
श्रीहरिगुरु को भगति भाव करि कै पहिचानत ।
निज गमन समय राख्यो इन्हे थापन को भुव पन्य निज ॥ कन्हैया लाल—

गौडिया सु नरहर दास जू प्रभुन क्षपा पाये सुपद ।
जिन घर बैठे पाट मदनमोहन पिये प्यारे ॥
सोये सहित सनेह जानि प्रेमहिं पर वारे ।
पुनि पधराये श्रीगोस्वामी पैं यह गुनि जिय ॥
ये सुष पै हैं यहीं लाल हैं इनहीं के प्रिय ।
पुनि गोस्वामी पधराइयो श्रीरघुनाथ सदन सुपद ॥ गौडिया सु नर—

वादा श्रीप्रभु की क्षपा तें दास वादरायन भये ।
आछे भंट तें सुने भागवत नाम पाइ कैं ।
जाते श्रीनर छोर प्रभुन तहं टिके आइ कैं ॥
पाये प्रभु पैं नाम समर्पन किये गये संग ।
दरसन करि पुनि आईं मोरवी रंगे प्रभुन रंग ।
पुनि रहे तहैं आयसु प्रभुन आपुन श्रीगोकुल गये ॥ वादा श्रीप्रभु—

नरी सुता तिय आदि सब सहू मानिकचंद की ।
देवदमन जिन सदन पियत पय नरी पियावति ॥
जात कटोरी भूलि ताहि सुषियहि दे आवति ।
मांगि प्रभुन सों गाय नाम गोपाल धराये ।

निजप्रगत्य जनाइ प्रभुन तिन गृह पधराये ।
प्रभु कृपा पात्र सुचि भगवदी मूरति ब्रह्मानन्द को ॥ नरी सुता तिय—

सन्यासी नरहर दास पैं सुगुरु कृपा अतिसय हुती ।
एक समैं श्रीमहाप्रभु द्वारिका पधारे ॥
वेना कोठारिहु लैएक संग सिधारे ।
तहां विनय करि किये सुसेवक सरन प्रभुन के ॥
जिनके सरनागत पै बस नहिं चलत तिगुन के ।
सेवा अपराधी तिगुन सिर भेट भगति यह दृढ़ मती ॥ सन्यासी नर—

गोपाल दास जटाधारी नाथ पवासी करत हे ।
ग्रीषम भोग अरोगि जामिनी जग मोहन में ॥
पौढ़त जहं श्रीनाथ स्वामिनी के गोहन में ।
आंखि मीचि चहुं लाम करत बीजन तहं ठाढ़े ॥
प्रभु आयसु तें आरसगत अति आनंद बाढ़े ।
ठाकुर सेवक कहं दण्ड दै बादि बिरह मैं तन दहे ॥ गोपाल दास—

सति धर्म मूल तिय बनिक गृह कृष्णदास पहुंचाइयौ ।
वैष्णव धर्म अकिंचनता तेहि प्रगटि दिखाई ॥
जिनकी तिय करि कौल वनिक सों सीधो लाई ।
करी रसोई भोग अरपि पुनि भोग सराये ॥
बहुरि अनौसर करिकैं सब वैष्णवनि जिंवाये ।
लखि ध्यान चन्द पै प्रभु कृपा आपुहि कौल चिताइयो ॥ सतिधर्म मूल—

श्रीगोस्वामी के प्रानप्रिय सन्तदास कवी रहे ।
श्रीहरि पद अरबिंद मरन्द मत्त मिलिन्द ये ॥
गावन मैं हरिचरित मौन मैं अति अमन्द ये ।
अनआश्रय अरु वैष्णव धन विष जिनहिं विषहु तें ॥
याही तें ये हुते नियारे द्वन्द दुषहु तें ।
कौड़ी वेचत हे टाइये पैसनि हित अधिक न चहे ॥ श्री गोस्वामीके—

सुन्दरदास हि के सङ्ग तें वैष्णव माधवदास भे ।
माधवदास कृष्ण चैतन्य सुसेवक दृढ़मति ॥

जाको भोग समर्पित पावत प्रेत दुष्ट अति ।
पै तिहि दृढ़ विस्वास जु श्रीठाकुरै अरोगत ।
श्री आचारज प्रभुन निन्दि सो लह्यौ दण्ड द्रुत ॥
अपराध अपनो जानिकैं सदा प्रभुन की आस से । सुन्दरदासहिके—
विरजो सावजो पटेल दोउ वैष्णवही हित अवतरे ॥
श्रीगोकुल है थिर साम्म में सदा धावते ।
गाड़ा गाड़ा गुड़ घृत सौंजनि सहित लावते ॥
एक पार्श श्रीगोकुल इक श्रीनाथ द्वार रह ।
खिरक जिवावत भोग समर्पित सब स्वामिनि कहं ॥
पुरुषोत्तम पेतहि वैष्णवनि सबै जिवाये मुद भरे । विरजो सावजो—
गोपाल दास रोड़ा दिये नाम दान प्रभु के कहे ।
एक समै गोपाल दास श्रीनाथहिं आये ॥
आयो ज्वर है चारि भये लंघन दुष पाये ।
लागी प्यास कही सेवक सों सोइ गयो सो ॥
आपुहि झारि लै प्याये जल दुप बिसरो सो ।
श्रीगोस्वामी को सीप सों प्रभुता मद रंच न रहे ॥ गोपाल दास—
काका हरिवंस प्रसंस मति धरम परम के हंस से ।
श्रीविट्ठल सुत जेहि काका सम आदर करहीं ॥
वैष्णव पर अति नेह सुपन सम नित अनुसरहीं ।
नाम दान दै जगत जीव फिरि फिरि के तारे ।
ठौर ठौर हरि सुजस भक्ति हित बहु विस्तारे ॥
प्रिय कंसधंस के होइ कै रुचिहु वल्लभ बंस से । काका हरिवंस—
गंगाबाई श्रीनाथ को अतिहि अन्तरङ्गिनि भई ॥
जवन उपद्रव जब श्रीप्रभु मेवाड़ पधारे ।
मारग मैं यह साथ रहीं हिये भगति विचारे ॥
जब रथ कहुं अड़िजात तबै सब इनहिं बुलावैं ।
श्री जी के ढिग सेजि नाथ इच्छा पुछवावैं ॥
श्रीविट्ठल गिरिधर नाम सों पद रचि हरि लीला गई । गंगाबाई श्री—
श्रीतुलसीदास प्रताप तें नीच ऊंच सब हरि भजे ॥

नन्ददास अग्रज हिज कुल मति गुन गन मंडित ॥
कवि हरिजस गायक प्रेमी परमारथ पंडित ।
रामायन रचि राम भक्ति जग थिर करि राखी ॥
थोरे में बहु कह्यो जगत सब याको साखी ।
जग लीन दीनहू जा कृपा बलन राम चरितहि तजे ॥ श्रीतुलसीदास—

गोस्वामी बिट्ठल नाथ के ये सेवक जग में प्रगट ।
भट्टनागजी कृष्णभट्ट पद्मारावलसुत ॥
माधोदास हिसारबास कायथ निज पितु जुत ।
बिठ्ठलदास निहालचन्द श्रीरूपमुरारी ।
रूपचंन्द नन्दाखती भाइलाकुठारी ॥
राजा लाखा हरिदास भाई जलौट हरि नाम रट । गोस्वामीबिट्ठल—

गोस्वामी बिट्ठल नाथ के ये सेवक हरि चरन रत ।
कृष्णदास कायस्थ नरायन दास निहाला ॥
ज्ञानचन्द्र ब्राह्मणी सहारनपुर के लाला ।
जनअर्दनपरसाद गोपाल दास पाथो गनि ।
मानिकचन्द मधुसूदनदास गनेस व्यास पुनि ॥
जदुनाथदास कान्हो अजब गोपीनाथ गुसाल सत । गोस्वामीबिट्ठल—

हित राम राय भगवान बलि छठो अलो जगनाथ जन ॥
कही जुगल रसकेलि माधुरीदास मनोहर ।
बिट्ठलविपुलविनोदबिहारीनि तिमि अति सुन्दर ॥
रसिकबिहारी त्योंही पद बहु सरस बनाए ।
तिमि श्रीभट्टहु कृष्ण चरित गुप्तहु बहु गाए ।
कल्यान देव हित कमलट्टग नरवाहन आनन्दघन । हित रामराय—

श्रीललित किशोरी भाव सों नित नव गायो कृष्ण जस ॥
भट्टगदाधर मिस्र गदाधर गंग गुआला ।
कृष्ण जिवन हरि लछी राम पद रचत रसाला ॥
जन हरिया घनस्याम गोबिन्दा प्रभु कल्याना ।
बिचित्र बिहारी प्रेमसखी हरि सुजस बखाना ॥
रस रसिक बिहारी गिरिधरन प्रभु मुकुन्द माधव सरस । श्रीललित —

श्रीवल्लभ आचारज अनुज रामकृष्ण कवि मुकुट मनि ।
वसत अजुध्या नगर कृष्ण सों नेह बढ़ावत ॥
कृष्ण कुतूहल कहि गुपाल लीला नित गावत ।
दोऊ कुल की वृत्ति तिनूका सी तजि दीनी ॥
व्याह कियो नहिं जानि दुखद हरि पद मति भीनी ।
करि वाद पन्थ थापन कियो ग्रन्थ रचे नव तीन गनि ॥ श्रीवल्लभ—
हरि प्रेममाल रसजाल के नागरिदास सुमेर से ।
वल्लभ पथहि दृढ़ाइ कृष्ण गढ़ राजहि छोड़्यौ ॥
धन जन मान कुटुम्बहि बाधक लखि मुख मोड़्यौ ।
केवल अनुभव सिद्ध गुप्त रस चरित बखाने ।
हिय संजोग उच्छलित और सपनेहु नहि जाने ॥
करि कुटी रमन रेती वसत संपद भक्ति कुबेर से । हरि प्रेममाल—
हिय गुप्त वियोगहि अनुभवत बड़े नागरीदास है ॥
बारवधू ढिग वसत सबै कछु पीयो खायो ।
पै छनहूं हिय सों नहिं सो अनुभव बिसरायो ॥
सुनतहि विट्ठल नाम भक्त सुख श्रवन मझारी ।
मान तज्यो कहि अहो तिनहिं सुधि अजहुं हमारी ॥
दरसन ही दै हरिभक्त अपराध कुष्ट जन दुख दहे । हियगुप्तवियोग—
श्रीवृन्दावन के सूर ससि उभय नागरीदास जन ॥
निज गुरु हित हरिवंस कृष्ण चैतन्य चरनरत ।
हरि सेवा में सुदृढ़ काम क्रोधादि दोषगत ॥
अद्भुत पद बहु किये दीन जन दै रस पोषे ।
प्रभु पद रति विस्तारि भक्तजन मन सन्तोषे ॥
दृढ़ सखीभाव जिय में वसत सपनेहुं नहिं कहुं और मन । श्रीवृन्दावन के—
इन मुसलमान हरिजनन पै कोटिन हिन्दुन वारिये ॥
अलीखान पाठान सुता सह ब्रज रखवारे ।
सेख नबी रसखान मीर अहमद हरि प्यारे ॥
निरमलदास कबीर ताजखां बेगम बारी ।
तानसेन कृष्णदास बिजापुर नृपति दुलारी ॥

पिरजादि बीबीरास्ती पद रज नित सिर धारिये । इन मुसलमान—
बाबा नानक हरिनाम दै पंचनदहि उद्धार किय ॥
बार बार निज सौंज साधुजन लखत लुटाई ।
वेदी बंस प्रसंस प्रगटि रस रीति दृढ़ाई ॥
गुप्त भाव हरि पियतम को निज हिये दुरायो ।
गाइ गाइ प्रभु सुजस जगत अघ दूरि बहायो ॥
जग ऊंच नीच जन करि कृपा एक भाव अपनाइ लिय । बाबा नानक—
कविकरनपूर हरि गुरु चरित करनपूर सब को कियो ॥
सेन बंस श्रीशिवानंद सुत बंग उजागर ॥
सुर बानी में निपुन सकल रस के मनु सागर ।
अति छोटे तन गुरु महिमा करि छंद बखानी ॥
जननि गोद सों किलकि हंसे निज गुरु पहिचानी ।
परमानंद सों चैतन्यससि नाम पलटि दूजो दियो ॥ कवि करनपूर—
बन माली के माली भए नाभा जी गुन गन गथित ।
नाम नरायन दास विदित हनुमत कुल जायो ॥
अग्र कील्ह गुरु कृपा नयन खोयोहू पायो ।
गुरु आयसु धरि सीस भक्त कीरति जिन गाई ।
भक्तमाल रस जाल प्रेम सों गूथि बनाई ॥
नितही नवरूप सुबासमय सुमनमन्त कारनी कथित । बनमाली—
ये भक्तमाल रस जाल के टीकाकार उदार मति ॥
कृष्णदास बङ्गाल कृष्ण पद पदुम परम रत ।
प्रियादास सुखरास प्रिया जुग चरन कुमुद नत ।
ललित लालजीदास एक औरहु कोउ लाला ।
लाल गुमानी तुलसिराम पुनि अग्गरवाला ।
परतापसिंह सिधुआपती भूपति जेहि हरि चरन रति ॥ ये भक्तमालरस—
लाला बाबू बङ्गाल के वृन्दावन निवसत रहे ॥
छोड़ि सकल धन धाम वास ब्रज को जिन लीनो ।
मांगि मांगि मधुकरी उदर पूरन नित कीनो ।
हरि मन्दिर अति रुचिर बहुत धन दै बनवायो ।

साधु सन्त के हेत अन्न की सत्र चलायो ।
जिन की न्हत देहडु सब लखत व्रज रजलोटन फल लहे ॥ लाला साबू—
कुल अग्रवाल पावन करन कुन्दनलाल प्रगट भए ॥
प्रथम लखनऊ बसि श्री वन सों नेह बढ़ायो ।
तहं श्री युगल सरूप थापि मन्दिर बनवायो ।
द्वापर को सुखराम राम कलियुग में कीनो ।
मोद भजन आनन्द भाव भहर्निसि रंग भीनो ।
लाखन पद ललितकिशोरिका नाम प्रगटि बिरचे नए ॥ कुल अग्रवाल—
गिरिधरनदास कविकुलकमल वैश्यवंशभूषन प्रगट ॥
रामायन भागवत गरगसंहिता कथामृत ।
भाषा करि करि रचे बहुत हरि चरित सुभाषित ।
दान मान करि साधु भक्त मन मोद बढ़ायो ।
सब कुलदेवन मेटि एक हरि पंथ दृढ़ायो ।
लच्चावधि ग्रन्थन निरमयो श्री बल्लभ विश्वास अट ॥ गिरिधरनदास—
यह चार भक्त पंजाब में चार वेद पावन भए ॥
श्रीरामानुज हृद हरि चरन बिनु सब त्यागी ।
भाईसिंह दयाल भजन में अति अनुरागी ।
कविवर दास अमीर कृष्ण पद में मति पागी ।
मयाराम रसराम ललित प्रेमी बैरागी ।
श्रीहरि के प्रेम प्रचार हित जिन उपदेस बहुत दये ॥ यह चार भक्त—
श्रीभक्त रत्न हरि दास जू पावन अमृतसर कियो ॥
क्षत्रिय बंश गुलाब सिंह सुत मत रामानुज ।
राम कुमारी गर्भ रत्न त्यागी मंडल भुज ।
सुवसु वेद बसुचंद आठ कातिक प्रगटाए ।
श्रीहरि महिमा ग्रन्थ ललित बत्तीस * बनाए ।
रणजीत सिंह न्हप बहु कह्यो तदपि नाहिं दरसन दियो ॥ श्रीभक्त रत्न—

---

* श्रीरघुनाथ के परमभक्त अति रसिक विद्वज्जन मान्य महानुभाव श्री रत्नहरिदास जी ने ३२ ग्रन्थ नवीन बनाये हैं। तिन ग्रन्थों में प्रतिपद जमक अनुप्रासादि अलंकार भरे हैं और वर्णमयिची की तो प्रतिज्ञा है कि एक पद

त्रेता में जो लछिमन करी सो इनकलियुग माहि किय ।
अग्रज कुन्दन लाल सदा दैवत सम मान्यौ ॥
परम गुप्त हरि विरह अमृत सों हियरों सान्यौ ।
अन्तरंग सखि भाव कबहु काहू न लखायो ॥
करम जाल विध्वंसि प्रेम पथ सुदृढ़ चलायो ।
श्रीकुन्दन लालउदार मतिबन्धु भगतिअतिधारि हिय ॥ त्रेता में—
नित श्यामसखी समनेहनव श्यामसखाहरिसुजस कवि ।

वर्णमयिनी बिना नहीं होगा। तथा उन के पढ़ने से अत्यानन्द प्रकट होता है कि कथन में नहीं आता। जो पुरुष सुनते हैं वह्री मोहित हो जाते हैं ।

१ रामरहस्य। चौपाई दोहादि छंदोंमें बाल्यलीला रघुनाथजीकी श्लोक ५000 ।
२ प्रश्नोत्तरी । दोहा ४० शुकप्रोक्त प्रश्नोत्तरी कि भाषा है ।
३ रामललाम। ललित पद छंदोंमें रामायण है श्लोक६००० रासकलेवा ग्रन्थवत्।
४ सारसंगीत। उक्त छंदों में श्लोक ६००० भागवत की कथा ।
५ नानकचंद्रचंद्रिका। चौपाई दोहादि छंदोंमें श्रीनानकशाह का चरित्र वर्णन।
६ दाशरथी दोहावली। दोहा ११०० रामायण है अति चमत्कारयुक्त ।
७ जमक दमक दोहावली। दोहा १२५ प्रति दोहा में ४ जमक हैं ।
८ गूढ़ागूढ़ार्थ दोहावली। दोहा १०० फुटकर हैं ।
९ एकादशस्कंध। भागवत का चौपाई दोहा में ।
१० कौशलेशकवितावली। कवित्त १०८ रामायण क्रम से ।
११ गुरु कीरति कवितावली। १०८ नानकशाह का चरित्र है ।
१२ कुसुमक्यारी । कवित्त ३६ दशमस्कंध का समास से ।
१३ दशमस्कन्ध कवितावली। कवित्त १६७ अति विचित्र है ।
१४ महिम्न कवितावली । कवित्त ४० ।
१५ नानक नवक । कवित्त ९ नानकशाह की स्तुती है ।
१६ रास पंचाध्यायी । कवित्त ६० ।
१७ व्रजयात्रा । कवित्त १५० व्रज के यात्रा का वर्णन है ।
१८ कवित्त कादंबिनी। भागवत क्रम से कवित्त १५० ।
१९ रघूत्तम सहस्रनाम। श्लोक २५ वाल्मीकि रामायण की कथा भीक्रम से।
२० पदरत्नावली। विष्णुपदों में रामायण। इसी प्रकार और भी उत्तमग्रंथ हैं ।

नित्य पांच पद विरचि कृष्ण अरचन तब ठानत ।।
गान तान बन्धान बांधि हरि सुजस बखानत ।
देस देस प्रति घूमि घूमि नर पावन कीनो ।।
निज नयनन के प्रेमवारि हियरो नित भीनो ।
घर त्यागि फिरत इतउत भ्रमत भक्त बनजवन प्रगट रवि ।। निम—

दच्छिण के ये सब भक्त वर सन्त मामलेदार मह ।
तुकाराम चोखामहार सावन्ता माली ।।
नामदेव गोरा कुम्हार पंढरी सुचाली ।
रामदास पुनि एकनाथ मायूर कान्हाई ।।
कृष्णा साबू और कृष्ण अर्पन रत बाई ।
दामा जी दत्तवधूत ज्ञानेश्वर अमृतराव कह । दच्छिण के ये—

नारायन शालग्राम हरिभक्त प्रगट एहि काल के ।
भट्टू जी महाराज काठजिभ कृष्णदास धरि ।।
तुलाराम रघुनाथ दास बिसुनाथ सिंह हरि ।
युगुलानन्य सुप्रियादास राधिकादास कहि ।।
हरिविलास नव नीत गोप जै श्रीकृष्णा लहि ।
मथुरा समिहरख अजीतहरि रामगुलाम गुपाल के ।। नारायन शाल—

द्विज ब्रह्मदत्त सह प्रगट एहि समय भक्त हरि के भए ।
राममखा हरिहर प्रसाद लछमी नारायन ।।
अवध दास चौपई उमादत जन रामायन ।
रामचरन सुक लोटा भट्टू रामप्रसादा ।।
सेवक सीताराम पौहरी गम्मू दादा ।
बलि रामनिरंजन जुगल जुगराज परम हंसादिऐ ।। द्विज ब्रह्मत—

ये चार भक्त एहि काल के औरहु हरि पद कंज रत ।
राम नाम रत रामदास हापड़ के बासी ।।
त्यागि [illegible] सम्पदा भए सुनत समाह उदासी ।
जागो भट्ट प्रसिद्ध भजन प्रिय सेवत कांसी ।।
राम नाम रत माजी नागर बंस प्रकासी ।
श्री हरि भाऊ हरि भाव रत गूलटंक सिव ढिग बसत ।। ये चार भक्त—

उनइस सै तैंतीस बर , सम्बत भादों मास ।
पूनो सुभ ससि दिन कियो , भक्त चरित्र प्रकास ॥
जे या सम्बत लौं भए , जिन को सुन्यौ चरित्र ।
ते राखे या ग्रन्थ में , हरि जन परम पवित्र ॥
प्रान नाथ आरति हरन , सुमिरि पिया नंद नन्द ।
भक्तमाल उत्तर अरध , लिखी दास हरिचंद ॥
जो जग नर ह्वै अवतस्यो , प्रेम प्रगट जिन कीन ।
तिनहीं उत्तर अरध यह , भक्तमाल रचि दीन ॥
जय वल्लभ विट्ठल जयति , जै जै पिय नंदलाल ।
जिन विरचो यह प्रेम गुन , गुथी भक्ति की माल ॥
नहिं तो समरथ यह कहां , हरि जन गुन सक गाय ।
ताहू में हरिचन्द सो , पामर है केहि भाय ॥
जगत जाल में नित बंध्यो , पस्यो नारि के फंद ।
मिथ्या अभिमानी पतित , झूठो कवि हरिचंद ।
धोबी बच सों सिय तजन , ब्रज तजि मथुरागौन ।
यह है संका जा हिये , कारत सदाहीं भौन ॥
दुखी जगत गति नरन कहं , देखि क्रूर अन्याय ।
हरि दयालता में उठत , संका जा जिय आय ॥
ऐसे संकित जीव सों , हरि हरिभक्त चरित्र ।
कबहूं गायो जाइ नहिं , यह बिनु संक पवित्र ॥
हरि चरित्र हरिही कह्यौ , हरिहि सुनत चित लाय ।
हरिहि बड़ाई करत हरि , हो ससुझत मन भाय ॥
हम तो श्रीवल्लभ कृपा , इतनो जान्यो सार ।
सत्य एक नंदनंद है , झूठो सब संसार ॥
तासों सब सों बिनय करि , कहत पुकार पुकार ।
कान खोलि सबही सुनो , जो चाहो निस्तार ॥
मोरौ मुख घर ओर सों , तोरौ भव के जाल ।
छोरौ जग साधन सबै , भजौ एक नंदलाल ॥

हरिश्चन्द्रोमालोहरिपदगतानांसुमनसां सदाऽम्लानानांभक्तिप्रकटतरगंधांचसुगुणां ।
अगुंफत्सन्मालांकुरुतहृदयस्थांरसपदा यतोन्चे पांखस्युमणसुखदानीयमतुला ॥

श्रीहरि:

उत्सवावली

अर्थात्

वर्ष भर के उत्सवों का सङ्ग्रह

और

संक्षेप सेवा शृङ्गार वर्णन।

श्री हरिश्चन्द्र लिखित।

"तत्कर्म हरितोषं यत्"

"कर्माप्येकं तस्य देवस्य सेवा"

"कृष्णसेवा सदा कार्या"

उत्सवावली ।

चैत्रशुक्ल ।

चैत्र शुक्ल प्रतिपदा—नवरात्रारम्भ, अभङ्ग, शृङ्गारभारी, हो सके तो गुलाब की फूल मंडली ।

चैत्र शुक्ल ५—श्रीरामानुजस्वामी का जन्मोत्सव ।

चैत्र शुक्ल ६—श्रीयदुनाथजी का जन्मोत्सव ।

चैत्र शुक्ल ९—श्रीरामनवमी, केशरियावस्त्र, उत्सव का शृङ्गार पंचामृत (दो पहर को) ।

चैत्र शुक्ल ११—मुकुट का शृङ्गार ।

चैत्र शुक्ल १२—दमनक (दौना) समर्पण करना ।

चैत्र शुक्ल १५—महारास की समाप्ति का उत्सव, मुकुट का शृङ्गार ।

किसी के मत से चैत्र शुक्ल द्वितीया को श्री जानकी जन्म । जिस दिन मेष संक्रान्ति पड़े उस दिन सत्तू के लड्डू भोग धरना ।

वैशाख कृष्ण पक्ष ।

वैशाख कृष्ण ११—श्रीवल्लभाचार्य महाप्रभु का जन्म केसरी बागा ।

वैशाख शुक्ल पक्ष ।

वैशाख शुक्ल ३—अक्षयतृतीया (निकुंज में प्रथम सेज का उत्सव) केसरी किनारा रंगा हलका वस्त्र मोती पोत के आभरण । गरमी की सेवा आज से चली । खसखाना पंखा, मट्ट की भारी, छिरकाव, फुंहारा जो बन जाय । परशुराम अवतार ।

वैशाख शुक्ला ७—श्री रामराज्य ।

वैशाख शुक्ला ९—श्रीजानकी जन्म दिन । श्रीस्वामिनी जी से विवाहोत्सव सेहरे का शृङ्गार ।

वैशाख शुक्ला ११—श्रीहरिवंश जी का जन्म ।

वैशाख शुक्ला १४—नृसिंहजयन्ती गरमी की जो सेवा बाकी हो सो सब और भी इस दिन से चले, केशरिया वस्त्र । सन्ध्या को पंचामृत स्नान ।

वैशाखशुक्ल पूर्णिमा—श्रीराधारमण जी का प्राकट्य ।

जेष्टकृष्णा पक्ष * ।

जेष्टकृष्णा पक्ष ५—कूर्मावतार ।

ज्येष्ट शुक्ल पक्ष ।

ज्येष्ट शुक्ला १०—दशहरा । जमुनाजी गंगाजी का पूजन † ।

ज्येष्ट शुक्ला ११—जल बिहार । पानी भरकर उस में सिंहासन रखकर श्रीठाकुरजी को पधरावना ‡ ।

---

* वृषसंक्रान्ति की पहिले की सोलह घड़ी पुण्य काल है पर जो रातको लगे तो सांझके पहिले ही पुण्यकाल मानना ।

† ज्येष्ट शुक्ला १० दशहरा—इस में दशयोग होय तो बहुत नहीं तो जितने अधिक योग हों उतनाही पुण्य विशेष है । जेठ का महीना शुक्लपक्ष, दशमी १० बुध(वा मंगल) हस्त, व्यतीपात, गरानन्द, कन्याके चन्द्रमा और वृष के सूर्य्य यही दशयोग हैं । इसमें गङ्गा यमुना में स्नान और तर्पणादि का महाफल है गङ्गा यमुना न मिलें तो नदी में नहाना । जेठ सुदी प्रतिपदा से स्नान आरंभ करना पहिले दिन एक एक पूजा की सामग्री से पूजा करना एक बेर गोता लगाना ऐसेही क्रम से एक एक नित्य बढ़ाना । काशी प्रयाग और मथुरा में इस दिन दशाश्वमेध घाट पर नहाना दशमी के दिन गङ्गा स्नान करके दशफल दस सत्तू के लड्डू दस गुड़ और दस तिलपात्र दान करना । गङ्गाजी के तटपर सोनेकी वा चांदी की वा मृत्तिका की गङ्गाजी की मूर्त्ति बनाना और उसकी बिधि पूर्वक पूजा करनी । दश दश मुट्ठी जव तिल इत्यादि अन्न ब्रह्मणों को गङ्गा प्रीत्यर्थ दान देना । सोना वा चांदी वा आटे के दश जलचर मछली काछुवा इत्यादि बनाकर उनकी पूजा करके गङ्गा में छोड़ देना । गङ्गा किनारे दीया बालना दीया के कमल गङ्गा में बहाना । ॐनमः शिवायै नाराण्यै दशहरायै गङ्गायै नमोनमः इसी मंत्र से पूजन करना । इस मंत्रका पांच हजार उस दिन जप करै तो सब पाप से छूट जाय गङ्गा स्तोत्र का इस दिन पाठ करना स्तोत्र पाठ भी प्रतिपदा से क्रम से बढ़ाना । यह दशहरा गङ्गा यमुना के संगम की तिथि है और कहते हैं कि रामेश्वर की स्थापना भी इसी दिन हुई है । इस दिन विष्णु शिव ब्रह्मा सूर्य्य भगीरथ और हिमालय की भी पूजा करना ।

‡ ज्येष्ट शुक्ला ११ निर्जला—इसीका नामान्तर भी महादशी है इस

ज्येष्ट शुक्ल १४—स्नान यात्रा के हेतु जल ले आना। जल में फूल की कली चन्दन कपूर इत्यादि ठंढी वस्तु मिलाकर ओम में ढांककर रखना। वा विधि पूर्वक मंत्र से अधिवासन करना।

ज्येष्ट शुक्ला १५—स्नान यात्रा ज्येष्टा नक्षत्र में पहले दिन के लाए पानी में सवेरे श्रीठाकुरजी को स्नान कराना। मूंग भींगी फल इत्यादि ठंढी वस्तु भोग लगानी।

आषाढ़ शुक्ल पक्ष।

द्वितीया—पुष्य नक्षत्र में रथ यात्रा। सफेद गींटे का बागा। जड़ाऊ आभरण लूमह चन्द्रिका।

तृतीया—श्रीठाकुरजी का गौना।

षष्ठी—पांडरंग षष्ठी श्रीविट्ठलनाथजी (दक्षिण वाले) का पाटोत्सव है और इसी दिन से रंगीन वस्त्र धारण करना आरम्भ होता है।

एकादशी—हरि शयनी।

पूर्णिमा—असाढ़ीजोग। चुनरी का बागा मुकुट मोर की पिछवाई।

श्रावण कृष्ण पक्ष।

प्रतिपदा वा द्वितीया—जिस दिन चन्द्रमा अच्छा हो हिण्डोला आरम्भ, लाल बागा, पाग मोरशिखा।

दिन निर्जल व्रत करना और जल पूर्ण कुम्भ दान करना। भीमसेन ने इसी दिन व्रत किया था। इस दिन भगवान का सिंहासन जलमें रख कर जल शयन कराना। ज्येष्ट शुक्ला १५ वटसावित्री यह व्रत अमावास्या और पूर्णिमा दोनों दिन होता है। इसमें वट के नीचे बांसके पात्रमें वालूकी सावित्री और सत्यवानकी मूर्त्ति बना कर पूजा करना रोलीसेंदुर केसर हरदी नाड़ा इत्यादि सौभाग्यद्रव्य चढ़ाना। प्रतिमा सोने चांदी वा मिट्टी की बनाना दूसरे दिन फिर पूजन करके "सावित्रीयंम यादत्ता सहिरण्या महासती। ब्रह्मण: प्रीणनार्थंय ब्राह्मणप्रतिगृह्यतां॥" इस मंत्रसे मूर्त्ति ब्राह्मण को दान देना। यह व्रत प्राय: स्त्रियों का है। जेठकी पुनवांसी के तिल दान करना। इस दिन ज्येष्टा नक्षत्र होय तो पर्व विशेष है उसमें छाता और जूता दान करना। यह पौर्णमासी मन्वादि भी है।

जेठ में प्रति दिन जलदान का माहात्म्य है।

पंचमी—आठवासा का उत्सव ।

श्रावण शुक्ल पक्ष ।

तृतीया—श्रीठकुरानी तीज। चुनरी का बागा श्रीस्वामिनी जी का शृङ्गार भारी । हिण्डोले का मुख्य उत्सव ।

पंचमी—श्याम बागा मुकुट का शृङ्गार ।

अष्टमी—लाल बागा मुकुट का शृङ्गार, बगीचे में हिंडोला ।

एकादशी—पवित्रा श्री ठाकुरजी को पवित्रा यथा शक्ति समर्पण करना।

द्वादशी—गुरु को और श्री ठाकुरजी को पवित्रा समर्पण करना ।

त्रयोदशी—चतुरा नागा का उत्सव।

पूर्णिमा—रक्षा बन्धन ।

पूर्णिमा पीछे हिण्डोला विसर्जन अच्छे मुहूर्त में करना ।

भाद्र पद कृष्ण ।

सप्तमी—श्रीविष्णुस्वामी का जन्मोत्सव, किसी २ मत से पूतना बध के कारण छठें दिन छठी नहीं हुई थी इसी कारण इस सप्तमी को हुई ।

अष्टमी—महामहोत्सव जन्माष्टमी। पहले दिन से सब तयारी कर रखना। उत्सव के दिन बड़े सवेरे उठना। घर में जितने स्वरूप ठाकुरजी के छोटे बड़े हों सब को पंचामृत स्नान करावार अभ्यंग करा के उत्तम केसरिया वस्त्र शृङ्गार भारी कुलह चन्द्रिका आदिक। जहां तक हो सके भारी तयारी करना। शृङ्गार करके तिलक करना भेंट धरना। बन्दनवार थापा केले का खम्भा लगाना। अष्टमी के दिन को श्रीठाकुरजी के जनम गांठ के उत्सव की भावना करना और रात को जन्मोत्सव की भावना। सन्ध्या से रोशनी करना। अर्धरात्रि को एक छोटे स्वरूप को पंचामृत स्नान कराना। घंटा शंख नौबतखाना बजाना। व्रज भयो महर के पूत, यह पद गाना जन्म पीछे श्रीठाकुरजी को नई फूल की माला तिलक पीतांबर समर्पण करना फिर यथा शक्ति महाभोग धरना। पंजीरी भी। सवेरे नवमी को श्रीठाकुरजी को पालने पर झुलाना। दहो से नन्द महोत्सव करना,पालना के भोग में मेंवा मिठाई मक्खन रखना, भेंट आरती करना।

भाद्र पद शुक्ल ।

द्वितीया—दमूठन का उत्सव ।

पंचमी—श्रीबलदेवजी का जन्म श्रीचन्द्रावलीजी का जन्म जहां दो स्वामिनी जी विराजती हों वहां दक्षिण भाग की स्वामिनी जी को दूध का स्नान तिलक।

षष्टमी—श्रीराधाष्टमी, शृङ्गार जन्माष्टमी का, श्रीस्वामिनी जी को दूध से स्नान कराना, तिलक भोग आरती तोरण आदि जन्माष्टमी की भांति सब करना।

एकादशी—दानएकादशी, मुकुट काछनी का शृङ्गार वस्त्र लाल, दही दूध छोटी २ कुलिया में भोग रखना, ब्रज भक्त (सखी) हों तो उनके सिर: पर दही दूध रखकर सामने खड़ी करना।

द्वादशी—वामनजयन्ती, केशरिया वस्त्र धोती उपरना कुल्हे, दोपहर को पंचामृत।

पूर्णिमा—सांझी के उत्सव का आरम्भ, सांझ को ठाकुर जी के सामने फूल की वा रंग की सांझी बनाना।

आश्विन कृष्ण।

अष्टमी—सहीना का चौका।

द्वादशी—प्रभु श्रीगोस्वामि गोपीनाथ जी का उत्सव।

तेरस—श्रीबालकृष्ण जी का उत्सव।

चौदस—कोट की आरती।

पूर्णिमा—सांझी की समाप्ति।

आश्विन शुक्ल पक्ष।

प्रतिपदा—नवरात्रारम्भ, कुल्हे चन्द्रिका।

नवमी—नवरात्र की समाप्ति, कुल्हे चंद्रिका सफेद छापे का बागा, सामग्री।

दशमी—विजयदशमी, सफेद जरी का बागा, पाग चन्द्रिका सन्ध्या को जवारे की कलगी धराना, तिलक, खंजर कमर में धराना, रावण वध के कीर्त्तन गाना।

एकादशी—मुकुट।

पूर्णिमा—महारास, सफेद ताश का बागा, मुकुट, आभरण सफेद, रात को चांदनी में श्रीठाकुर जी विराजें, सफेद वस्तु भोग लगाना, रास के कीर्त्तन गाना।

कार्तिक कृष्ण ।

दशमी वा एकादशी से छटरी दीपमालिका आरम्भ।

त्रयोदशी—धन तेरस, हरी जरी का बागा ।

चतुर्दशी—रूपचतुर्दशी, बागा लाल जरी का।

अमावास्या—दीपावली सफेद ताश का बागा, कुलह चन्द्रिका, रात को छटरी में बैठाना, सामने दीपावली चौपड़, भंडेहर, खिलौना आदि रखना ।

कार्तिक शुक्ल ।

प्रतिपदा—अन्नकूट, शृङ्गार दीवाली का रहेगा, गोवर्धन की पूजा करके अन्नकूट का भोग रखना, जहां तक बन पड़े सामग्री समर्पण करना ।

द्वितीया—भाई दुइज, तिलक ।

अष्टमी—गोपाष्टमी ।

नवमी—अक्षयनवमी गोविन्दाभिषेकोत्सव, परिक्रमा करना ।

एकादशी—प्रबोधनी अच्छे समय में ऊख के मंडप में पधराय कर जगाना, नया जाड़े का कपड़ा समर्पण करना, अंगीठी आदि जाड़े का उपचार रखना ।

द्वादशी—श्रीगिरिधर जी का और श्रीरघुनाथ जी का उत्सव ।

त्रयोदशी—श्रीराधावल्लभ जी का पाटोत्सव ।

पूर्णिमा—यज्ञपत्नी अंगीकार ।

कार्तिक में अगस्त्य के फूल की माला, दीपदान, रंग से स्वस्तिकादि लिखना, तुलसी समर्पण, और सामग्री भोग रखना ।

मार्गशीर्ष कृष्ण ।

अगहन कृष्ण ३—बुध अतवार ।

अगहन कृष्ण ६—श्रीगोविन्दराय जी का उत्सव।

अगहन कृष्ण १३—श्रीघनश्याम जी का उत्सव।

मार्गशीर्ष शुक्ल ।

द्वितीया—कूख में पधारे ।

पंचमी—श्रीरुक्मिणी जी तथा श्रीसीता जी का विवाहोत्सव ।

सप्तमी—श्रीगोकुलनाथ जी का उत्सव ।

पौष कृष्ण ।

नवमी—प्रभु श्रीगोस्वामि विट्ठलनाथ जी का उत्सव ।

पौष शुक्ल ।

अष्टमी—अन्नप्राशन इसी दिन श्रीनन्दराय जी का जन्म ।

माघ कृष्ण पक्ष ।

षष्ठी—श्रीठाकुर जी का नाम करण ।

मकर संक्रान्ति जिस दिन हो उस दिन छोट के नए रुई के बागा । और तील का लड्डू भोग धरना ।

माघ शुक्ल पक्ष ।

पंचमी—बसन्तोत्सव, खेल आरम्भ, सपेद बागा, इसी दिन से अबीर बुक्का केसर चोवा से नित्य खिलाना, सामने वसन्त रखना, वसन्त राग माघ की पूर्णिमा तक गाना श्री अद्वैत प्रभु का उत्सव ।

षष्ठी—श्रीयशोदा जी का जन्म ।

अष्टमी—श्रीमध्वाचार्योत्सव ।

त्रयोदशी—श्रीनित्यानन्द प्रभु का उत्सव ।

पूर्णिमा—होली डांड़ा ।

फालगुण कृष्ण ।

सप्तमी—श्रीनाथ जी का पाटोत्सव ।

फालगुण शुक्ल ।

एकादशी—कुंज एकादशी, फूल का मुकुट धरावना कुंज में खिलाना ।

पूर्णिमा—होलिकोत्सव, सपेद बागा, पाग मोर चन्द्रिका, खेल । श्री चैतन्य प्रभु का उत्सव ।

चैत्र कृष्ण ।

प्रतिपदा—दोलोत्सव, सपेद बागा, पाग मोर चन्द्रिका आम के मौर को डोल बांध कर ठाकुर जी को झुलाना, चार भोग चार खेल होंयं ।

चैत्र कृष्ण ५—मत्स्यावतार ।

चैत्र कृष्ण १३—वाराहावतार ।

संक्षिप्त नित्य सेवा पद्धति ।

सेवा का मूल यह है कि स्नेह पूर्वक जैसे निज देह वा बालक वा स्वामी की गरमी सरदी आदि ऋतु के अनुसार भोजन वस्त्र से रक्षा की जाती है

वैसेही सर्वस्वामी परिपूर्ण परमेश्वर की मूर्ति की भी सेवा करना, नित्य सवेरे प्रातःकृत्य से निवृत्त होकर तिलक सन्ध्या करके मन्दिर में जाकर पहिले दण्डवत करके मार्जनी करना, रात के बरतन धो कर वस्त्रादिक जो बदलना हो सब ठीक करके घण्टानाद पूर्वक ठाकुर जी को जगाना और मंगल भोग रखकर मंगला आर्ती करना, फिर स्नान करा कर यथाशक्ति शृङ्गार करना, फूल की माला पहराना चरण पर तुलसी समर्पण करके खड़ी मूर्ती हो तो वेणु धराकर दर्पण दिखलाना, अथवा सौकर्य हो तो शृङ्गार भोग रख कर फिर दूध भोग लगा कर तब राज भोग धरना, न सौकर्य हो तो शृङ्गार पीछे एकही भोग रखना, आचमन सुख वस्त्र करके बीड़ी समर्पण करके चौपड़ खिलौना आदि सामने धर के आरती करना, फिर सज्जा साज करके किवाड़ बन्द कर देना, सन्ध्या को फिर घण्टानाद करके जगा कर दिन का पानी आदि बदल कर यथा शक्ति फल भोग रखना, सौकर्य हो तो सांझ को भी दो भोग और रखना नहीं तो एकही वेर सही, फल भोग के पीछे शृङ्गार उतार कर शयनभोग रखना, और दूध रखना, फिर आरती करके शयन कराना, गरमी हो तो पतली चद्दर जाड़ा हो तो रजाई उढ़ाना, स्वामिनी जी को साड़ी और खड़े स्वरूप हों तो तनियां रात को भी रहै, बाल स्वरूप हो तो नंगेही पौढ़ैं, मणिविग्रह हों तो नित्य स्नान नहीं कराना, व्रत के दिन भी ठाकुर जी को नित्य की भांति अन्न आदि समर्पण करना, गरमी सरदी का सेवा में बहुत ध्यान रखना ।

अथ संक्षिप्त निर्णय ।

एकादशी के व्रत का मोटा निर्णय यह है कि पहिले दिन पचपन घड़ी से पल भर भी दशमी विशेष हो तो व्रत नहीं करना द्वादशी को व्रत करना, किन्तु निम्बार्क सम्प्रदाय वाले ४५ घड़ी से अधिक दशमी हो तो व्रत नहीं करते । द्वादशी दो हों तो पहिली द्वादशी को व्रत करना दो एकादशी हों तो दूसरी एकादशी को व्रत करना । पता न मिले और दशमी के समय में कुछ भी सन्देह हो तो द्वादशी को व्रत करना, जन्माष्टमी राम नवमी और नृसिंहजयन्ती उदयात् लेना और वामन द्वादशी मध्यान्ह व्यापिनी विजयदशमी सायङ्काल व्यापिनी । और उत्सव सब संसार में जिस दिन तिथि मानी जाय उस दिन । रास पूर्णिमा जिस दिन चन्द्रमा की कला विशेष मिले उस दिन करना ।

वैष्णवता और भारतवर्ष।

VAISNAWISM AND INDIA.

एक वेर मन लगाकर आद्योपान्त पक्षपात छोड़ कर पढ़िए फिर
चाहे प्रसन्न हूजिए चाहे हंसिए चाहे गाली दीजिए।

'इदंविष्णुर्विचक्रमे' से 'कब ऐहो श्याम बंसीवाला' तक।

वेदे रामायणे चैव पुराणे भारते तथा,
आदावन्ते च मध्ये च हरिः सर्वत्र गीयते।

वैष्णवता और भारतवर्ष।

यदि विचार करके देखा जायगा तो स्पष्ट प्रकट होगा कि भारतवर्ष का सब से प्राचीन मत वैष्णव है। हमारे आर्य लोगों ने सब से प्राचीन काल में सभ्यता का अवलम्बन किया और इसी हेतु क्या धर्म क्या नीति सब विषय के संसार मात्र के ये दीक्षागुरु हैं। आर्यों ने आदि काल में सूर्यहीं को अपने जगत् का सब से उपकारी और प्राणदाता समझ कर ब्रह्म माना और इन का मूल मंत्र गायत्री इसी से इन्ही सूर्य नारायण की उपासना में कहा गया है। सूर्य की किरणें 'आपो नारा इति प्रोक्ता आपोवै नर सूनवः' जलों में और मनुष्यों में व्याप्त रहती है और इस द्वारा ही जीवन प्राप्त होता है इसी से सूर्य का नाम नारायण है। हम लोगों के जगत् के ग्रह मात्र जो सब प्रतेयक ब्रह्माण्ड हैं इन्ही की आकर्षण शक्ति से स्थिर हैं इसी से नारायण का नाम अनन्त कोटि ब्रह्मांड नायक है। इसी सूर्य का वेद में नाम विष्णु है क्योंकि इन्ही की व्यापकता से जगत् स्थित है। इसी से आर्यों में सब से प्राचीन एकही देवता थे और इसी से उस काल के भी आर्य वैष्णव थे। कालान्तर में सूर्य में चतुर्भुज देव की कल्पना हुई। 'ध्येयः सदा सवितृ मंडल मध्यवर्ती नारायणःसरसिजासन संनिविष्टः'। 'तद्विष्णोः परमं पदम्' 'विष्णोः कर्माणि पश्यत' 'यत्र गावो भूरिशृंगाः' 'इदंविष्णुर्विचक्रमे' इत्यादि श्रुति जो सूर्यनारायण के आधि भौतिक ऐश्वर्य की प्रतिपादक थीं आधिदैविक सूर्य की विश्वमूर्ति के वर्णन में व्याख्यात हुईं। चाहे जिस रूप से हो वेदों ने प्राचीन काल से विष्णु महिमा गाई। उसके पीछे उस सूर्य की एक प्रति मूर्ति पृथ्वी पर मानी गई अर्थात् अग्नि। आर्यों का दूसरा देवता अग्नि है। अग्नि यज्ञ है और 'यज्ञो वै विष्णुः'। यज्ञही से रुद्र देवता माने गए। आर्यों के एक छोड़कर दो देवता हुए। फिर तीन और तीन से ग्यारह को त्रिविधि करने से तैंतीस और इसी तैंतीस से तैंतीस करोड़ देवता हुए। इस विषय का विशेष वर्णन अन्य प्रसंग में करेंगे। यहां केवल इस बात को दिखलाते हैं कि वर्तमान समय में भी भारतवर्ष से और वैष्णवता से कितना घनिष्ट सम्बन्ध है। किन्तु योरप के पूर्वी विद्या जानने वाले विद्वानों का मत है कि रुद्र आदि

आर्यों के देवता नहीं हैं (१) वह अनार्यों (Non Aryan or Tamalian) के देवता हैं। इसके वे लोग आठ कारण देते हैं। प्रथम वेदों में लिंग पूजा का निषेध है। यथा 'वशिष्ठ इन्द्र से बिनती करते हैं कि हमारी वस्तुओं को 'शिश्नदेवा' (लिंग पूजक) से बचाओ' इत्यादि। (२) ऋक वेद और अन्यान्य ऋचाओं में भी शिश्नदेवा लोगों को असुर दस्यु इत्यादि कहा है और रुद्री में भी रुद्र की स्तुति भयंकर भाव से की है। दूसरी युक्ति यह है कि स्मृतियों में लिंग पूजा का निषेध है। [३] प्रोफेसर मैक्समूलर ने वशिष्ट स्मृति के अनुवाद के स्थल में यह विषय बहुत स्पष्ट लिखा है। तीसरी युक्ति वे यह कहते हैं कि लिंग पूजक और दुर्गा भैरवादिकों के पूजक ब्राह्मण को पंक्ति से बाहर करना लिखा है। [मिताक्षराधृत ब्रह्मांड पुराण के वाक्य, चतुर्विंशतिमत पराशर व्याख्या में माधव श्लोक ३८, आपस्तंस्त्र, भागवत चतुर्थस्कन्द द्वितीयाधाय २८ श्लोक, और धर्माब्धि सार के तीसरे परिच्छेद का पर्वाद्धि देखो।] चौथी युक्ति यह कहते हैं कि लिंग का तथा दुर्गा भैरवादि का निर्माल्य खाने में पाप लिखा है। कमलाकराह्निक, निर्णयसिन्धु आचारमाधवादि ग्रंथों में सैकड़ों वाक्य हैं देख लो।] पांचवें शास्त्रों में शिव मंदिर और भैरवादिकों के मंदिर को नगर के बाहर बनाना लिखा है। [४] छठवें वे लोग कहते हैं कि शैव बीज मंत्र से दीक्षित और शिव को छोड़कर

---

[१] ऐंटिक्विटो अव उडीसा १ जिल्द १३६ पेज देखो।

[2] Rigveda, IV., P. 6. and Dr. Wilson's Vedic Comments.

[3] proffessor Max muller's Ancient Sanskrit Litrature p: 55.

[४] भागवत के पहले स्कन्ध के दूसरे अध्याय का २५ श्लोक। 'व्यवहाराध्याय दिव्य प्रकरण कोष विधान १८ श्लोक, वशिष्ठ स्मृति, गीता सप्तमाध्याय २० श्लोक, गौतम कृताचारसूत्र १२ खंड, आचार प्रकाश में मत्स्य पुराण का वाक्य और काशीखंड का वाक्य देखो। इस विषय को पुष्टता के हेतु प्रोफेसर मैक्समूलर लिखते हैं कि जिस ऋचा के वशिष्ट ऋषि हैं उसी में शिश्न देवा लोगों की निन्दा है अतएव इस विषय में वशिष्ट की स्मृति भी प्रमाण के योग्य है। बहुत लोग यह भी कहते हैं कि शाक्त मत नास्तिकों की प्रकृति ही से जगत् मानने वालों को (Naturlists) नेचरियों की शाखा है क्रम पाकर उसी प्रकृति को ये लोग देवी के आकार में मानने लगे।

और देवता को न मानने वाले ऐसे शुद्ध शैव भारतवर्ष में बहुत ही थोड़े हैं। या तो शिवोपासक स्मार्त हैं या शाक्त हैं। शाक्त भी शिव को पार्वती के पति समझकर विशेष आदर देते हैं कुछ सर्वेश्वर समझकर नहीं। जंगमादिक दक्षिण में जो दीक्षित शैव हैं वे बहुत ही थोड़े हैं। शाक्त तो जो दीक्षित होते हैं वे प्रायः कौलही हो जाते हैं। सौर गाणपत्य को तो कुछ गिनती ही नहीं। किन्तु वैष्णवों में मध्व और रामानुज को छोड़कर और इन में भी जो निरे आग्रही हैं वेही तो साधारण स्मार्तों से कुछ भिन्न हैं नहीं तो दीक्षित वैष्णव भी साधारण जन समाज से कुछ भिन्न नहीं और एक प्रकार के अदीक्षित वैष्णव तो सभी हैं। सातवीं युक्ति इन लोगों की यह है कि जो अनार्य लोग प्राचीन काल में भारतवर्ष में रहते थे और जिन को आर्य लोगों ने जीता था वही शिल्प विद्या नहीं जानते थे और इसी हेतु लिंग ढोंका या सिद्धपीठ इत्यादि पूजा उन्ही लोगों की है जो अनार्य हैं। आठवें शिव या जो भैरव इत्यादि के वस्त्र निवास आभूषण आदिक सभी आर्यों से भिन्न हैं। स्मशान में वास अस्थि की माला आदि जैसी इन लोगों की वेषभूषा शास्त्रों में लिखी है वह आर्योचित नहीं है। इसी कारण शास्त्रों में शिव का भृगु और दक्ष आदि का विवाद कई स्थल पर लिखा है और रुद्र भाग इसी हेतु यज्ञ के बाहर है। यद्यपि ये पूर्वोक्त युक्तियां योरोपीय विद्वानों की हैं हम लोगों से कोई सम्बन्ध नहीं किन्तु इस विषय में बाहर वाले क्या कहते हैं केवल यह दिखलाने को यहां लिखी गई हैं।

पाश्चात्य विद्वानों का मत है कि आर्य लोग (Aryans) जब मध्य एशिया में (Central Asia) थे तभी से वे लोग विष्णु का नाम जानते हैं। जारोस्ट्रियन (Zorostrian) ग्रन्थ जो ईरानी और आर्य शाखाओं के भिन्न होने के पूर्व के लिखे हैं उन में भी विष्णु का वर्णन है। वेदों के आरम्भ काल से पुराणों के समय तक तो विष्णु महिमा आर्य ग्रन्थों में पूर्ण है वरंच तंत्र और आधुनिक भाषा ग्रन्थों में उसी भांति एक छत्र विष्णु महिमा का राज्य है।

पण्डितवर बाबू राजेन्द्रलाल मित्र ने वैष्णवता के काल को पांच भाग में विभक्त किया है। यथा वेदों के आदि समय की वैष्णवता २ ब्राह्मण के समय की वैष्णवता ३ पाणिनी के और इतिहासों के समय की वैष्णवता ४ पुराणों के समय की वैष्णवता ५ आधुनिक समय की वैष्णवता।

वेदों के आदि समय से विष्णु की ईश्वरता कही गई है। ऋग्वेद संहिता में विष्णु की बहुत सी स्तुति है। विष्णु को किसी विशेष स्थान का नायक या किसी विशेष तत्व वा कर्म का स्वामी नहीं कहा है वरंच सर्वेश्वर की भांति स्तुति किया है। यथा विष्णु पृथ्वी के सातों तहों पर फैला है। विष्णु विष्णु ने जगत् को अपने तीन पैर के भीतर किया। जगत् उसी के रज में लिपटा है। विष्णु के कर्मों को देखो जो कि इन्द्र का सखा है। ऋषिओं विष्णु के ऊंचे पद को देखो जो एक आंख की भांति आकाश में स्थिर है। पंडितों स्तुति गाकर विष्णु के ऊचें पद को खोजो। इत्यादि। ब्राह्मणों में इन्ही मंत्रों का बड़ा विस्तार किया है और अब तक यज्ञ होम श्राद्ध आदि सभी कर्मों में ये मंत्र पढ़े जाते हैं। ऐसेही और स्थानों में विष्णु को जगत् का रक्षक स्वर्ग और पृथ्वी का बनाने वाला सूर्य और अन्धेरे का उत्पन्न करने वाला इत्यादि लिखा है। इन मंत्रो में विष्णु के विषय में रूप का परिचय इतनाही मिलता है कि उसने अपने तीन पदों से जगत को व्याप्त कर रखा है। यास्क ने निरुक्त में अपने से पूर्व के दो ऋषिओं का मत इसके अर्थ में लिखा है। यथा शाकपुणि लिखते हैं कि ईश्वर का पृथ्वी पर रूप अग्नि है घन में विद्युत है और आकाश में सूर्य है। [सूर्य की पूजा किसी समय समस्त पृथ्वी में होती थी यह अनुमान होता है। सब भाषाओं में अद्यापि यह कहा वत प्रसिद्ध है कि 'उठते हुए सूर्यको सब पूजता है'। [अरुणवाभ सूर्य के उदय मध्य और अस्त की अवस्था को तीन पद मानते हैं। दुर्गाचार्य अपनी टीका में उसी मत को पुष्ट करते हैं। सायनाचार्य विष्णु के बावन अवतार पर इस मंत्र को लगाते हैं। किन्तु यज्ञ और आदित्य हो विष्णु है इस बात को बहुत लोगों ने एक मत होकर माना है। अस्तु विष्णु उस समय आदित्यही को नामांतर से पुकारा है कि स्वयं विष्णु देवता आदित्य से भिन्न थे इस का झगड़ा हम यहां नहीं करते। यहां यह सब लिखने से हमारा केवल यह आशय है कि अति प्राचीन काल से विष्णु हमारे देवता हैं। अग्नि वायु और सूर्य यह तीनों रूप विष्णु के हैं इन्हीं से ब्रह्मा शिव और विष्णु यह तीन मूर्तिमान देव हुए हैं।

ब्राह्मणों के समय में विष्णु की महिमा सूर्य से भिन्न कह कर विस्तर रूप से वर्णित है और शतपथ ऐतरेय और तैतरेय ब्राह्मण में देवताओं का द्वारपाल देवताओं के हेतु जगत का राज्य बचाने वाला इत्यादि कहकर लिखा है।

इतिहासों में रामायण और भारत में विष्णु की महिमा स्पष्ट है वरंच इतिहासों के समय में विष्णु के अवतारों का पृथ्वी पर माना जाना भी प्रकट है। पाणिनि के समय के बहुत पूर्व कृष्णावतार कृष्ण पूजा और कृष्ण भक्ति प्रचलित थी यह उनके सूत्रही से स्पष्ट है [यथा जीविकार्थे चापण्ये वासुदेवः ॥५॥३॥९९॥० कृष्णं नमेच्चेत् सुखं यायात्। ३।३।१५ ई० वासुदेवे भक्तिरस्य वासुदेवकः।४।३।९८।०] और प्रद्युम्न अनिरुद्ध और सुभद्रा नाम इत्यादि के पाणिनि के लिखने ही से सिद्ध है कि उस समय के अति पूर्व कृष्णावतार की कथा भारतवर्ष में फैल गई थी। यूनानियों के उदय के पूर्व पाणिनि का समय सभी मानते हैं। विद्वानों का मत है कि क्रम से पूजा के नियम भी बदले यथा पूर्व में यज्ञाहुति फिर बलि और अष्टांग पूजा आदि हुई और देव विषयक ज्ञान की वृद्धि के अन्त में सब पूजन आदि से उसकी भक्ति श्रेष्ट मानी गई।

पुराणों के समय में तो विधि पूर्वक वैष्णव मत फैला हुआ था यह सब पर विदित ही है। वैष्णव पुराणों की कौन कहे शाक्त और शैव पुराणों में भी उन देवताओं की स्तुति उनको विष्णु से सम्पूर्ण भिन्न करके नहीं कर सके हैं। अब जैसा वैष्णव मत माना जाता है उसके बहुत से नियम पुराणों के समय से और फिर तन्त्रों के समय से चले हैं। दो हज़ार वर्ष की पुरानी मूर्त्तियां वाराह राम लक्ष्मण और वासुदेव की मिली हैं और उन पर भी खुदा हुआ है कि उन मूर्त्तियों की स्थापना करने वालों का वंश भागवत अर्थात् वैष्णव था। राजतरंगिनी ही के देखने से राम केशव आदि मूर्त्तियों की पूजा यहां बहुत दिन से प्रचलित है यह स्पष्ट हो जाता है इससे इसकी नवीनता या प्राचीनता का झगड़ा न करके यहां थोड़ासा इस अदल बदलका कारण निरूपण करते हैं।

मनुष्य के स्वभावही में यह बात है कि जब वह किसी बात पर प्रवर्त होता है तो क्रमशः उस को उन्नति करता जाता है और उस विषय को जब तक वह एक अन्त तक नहीं पहुंचा लेता सन्तुष्ट नहीं होता। सूर्य के मानने की ओर जब मनुष्यों की प्रवृति हुई तो इस विषय को भी वे लोग ऐसी ही सूक्ष्म दृष्टि से देखते गए।

प्रथमतः कर्म मार्ग में फंस कर लोग अनेक देवी देवों को पूजते हैं किन्तु बुद्धि का यह प्रकृत धर्म है कि यह ज्यों ज्यों समुज्वल होती है अपने विषय

सान की उज्ज्वल करती जाती है। थोड़ी बुद्धि बढ़ने ही से यह विचार चित्त में उत्पन्न होता है कि इतने देवी देव इस अनन्त सृष्टि के नियामक नहीं हो सकते इस का कर्त्ता स्वतंत्र कोई विशेष शक्ति सम्पन्न ईश्वर है। तब उस का स्वरूप जानने की इच्छा होती है अर्थात् मनुष्य कर्म काण्ड से ज्ञान कांड में आता है। ज्ञान कांड में सोचते सोचते संगति और रुचि के अनुसार यां तो मनुष्य फिर निरीश्वरवादी हो जाता है या उपासना में प्रवर्त होता है। उस उपासना की भी विचित्र गति है। यद्यपि ज्ञान वृद्धि के कारण प्रथम मनुष्य साकार उपासना छोड़ कर निराकार की ओर रुचि करता है किन्तु उपासना करते करते जहां भक्ति का प्राबल्य हुआ वहीं अपने उस निराकार उपास्य को भक्त फिर साकार कहने लगता है। बड़े बड़े निराकार वादियों ने भी "प्रभो दर्श दो! अपने चरण कमलों को हमारे सिर पर स्थान दो, अपनी सुधामयी वाणी श्रवण कराओ" इत्यादि प्रयोग किया है। वैसे ही प्रथम सूर्य पृथ्वी वासियों को सब से विशेष आश्चर्य और गुणकारी वस्तु बोध हुई उस से फिर उन में देव बुद्धि हुई। देव बुद्धि होने ही से आधिभौतिक सूर्य मंडल के भीतर एक आधिदैविक नारायण माने गये। फिर अन्त में यह कहा गया कि नारायण एक सूर्य ही में नहीं सर्वत्र हैं और अनन्त कोटि सूर्य चन्द्र तारा उन्हीं के प्रकाश से प्रकाशित हैं। अर्थात् आध्यात्मिक नारायण की उपासना में लोगों की प्रवृत्ति हुई।

इन्हीं कारणों से वैष्णव मत की प्रवृत्ति भारतवर्ष में स्वाभाविकी है। जगत् में उपासन मार्ग ही मुख्य धर्म मार्ग समझा जाता है। क्रस्तान मुसलमान ब्राह्म बौद्ध उपासना सब के यहां मुख्य है। किन्तु बौद्धों में अनेक सिद्धों की उपासना और तप आदि शुभ कर्मों के प्राधान्य से वह मत हम लोगों के स्मार्त्त मत के सदृश है और क्रस्तान ब्राह्म मुसलमान आदि के धर्म में भक्ति की प्रधानता से यह सब वैष्णवों के सदृश हैं। इंजील में वैष्णवों के ग्रन्थों से बहुत सा विषय लिया है और ईसा के चरित्र में भी कृष्ण के चरित्र का सादृश्य बहुत है यह विषय सविस्तर भिन्न प्रबन्ध में लिखा गया है। तो जब ईसाइयों के मत को ही हम वैष्णवों का अनुगामी सिद्ध कर सके हैं फिर मुसलमान जो कृस्तानों के अनुगामी हैं वे हमारे अन्वनुगामी हो चुके।

यद्यपि यह निर्णय करना अब अति कठिन है कि अति प्राचीन काल के

ध्रुव प्रह्लाद आदि सध्यावस्था के उद्धव आरुणि परीक्षितादिक और नवीन काल के वैष्णवाचार्यों के खान पान रहन सहन उपासना रीति वाह्यचिन्ह आदि में कितना अंतर पड़ा है किन्तु इतनाही कहा जा सकता है कि विष्णु उपासना का मूलसूत्र अति प्राचीन काल से अनवच्छिन्न चला आता है। ध्रुव प्रह्लादादि वैष्णव तो थे किन्तु अब के वैष्णवों की भांति कंठी तिलक मुद्रा लगाते थे और मांस आदि नहीं खाते थे इन बातों का विश्वस्त प्रमाण नहीं मिलता। ऐसे ही भारत वर्ष में जैसी धर्म रुचि अब है उससे स्पष्ट होता है कि आगे चल कर वैष्णव मत में खाने पीने का विचार छूट कर बहुत सा अदल बदल अवश्य होगा। यद्यपि अनेक आचार्यों ने इसी आशा से मत प्रवर्त्त किया कि इस में सब मनुष्य सामानता लाभ करें और परस्पर खानपानादि से लोगों में ऐक्य बढ़े और किसी जाति वर्णदेश का मनुष्य क्यों न हो वैष्णवपंक्ति में आ सके किन्तु उनलोगों की यह उदार इच्छा भली भांति पूरी नहीं हुई क्योंकि स्मार्त मत की ओर ब्राह्मणों की विशेष हानि के कारण इस मत के लोगों ने उस समुन्नत भाव से उन्नति को रोक दिया। जिससे अब वैष्णवों में छुआ छूत सब से बढ़ गया बहुदेवोपासकों को घृणा देने के अर्थ वैष्णवातिरिक्त और किसी का स्पर्श बचाते वहां तक एक बात थी किन्तु अब तो वैष्णवों ही में ऐसा उपद्रव फैला है कि एक सम्प्रदाय के वैष्णव दूसरे सम्प्रदायवाले को अपने मन्दिर में और अपने खान पान में नहीं लेते और सात कनौजिया नौ चूल्हे वाली मसल हो गई है। किन्तु काल की वर्त्तमान गति के अनुसार यह लक्षण उनकी अवनति के हैं। इस काल में तो इसकी तभी उन्नति होगी जब इस के वाह्य व्यवहार और आडंबर में न्यूनता होगी और एकता बढ़ाई जायगी और आन्तरिक उपासना की उन्नति की जायगी। यह काल ऐसा है कि लोग उसी मत को विशेष मानेंगे जिसमें वाह्य देह कष्ट न्यून हो। यद्यपि वैष्णवधर्म भारतवर्ष का प्रकृत धर्म है इस हेतु उस की ओर लोगों की रुचि होगी किन्तु उसमें अनेक संस्कारों की अतिशय आवश्यकता है। प्रथम तो गोस्वामी गण अपना रजोगुणी तमोगुणी स्वभाव छोड़ेंगे तब काम चलेगा। गुरु लोगों में एक तो विद्या ही नहीं होती जिस के न होने से शील नम्रता आदि उनमें कुछ नहीं होते। दूसरे या तो वे अति रूखे क्रोधी होते हैं या अति विलास लालस हो हो कर स्त्रियों की भांति सदा दर्पण ही देखा करते हैं। अब वह सब स्वभाव

उनको छोड़ देना चाहिए क्योंकि इस उन्नीसवीं शताब्दी में वह श्रद्धा जाड्य अब नहीं बाकी है। अब कुकर्म्मी गुरु का भी चरणामृत लिया जाय वह दिन छप्पर पर गए। जितने बूढ़े लोग अभी तक जीते हैं उन्हीं के शील संकोच से प्राचीन धर्म इतना भी चल रहा है बीसपचीस बरस पीछे फिर कुछ नहीं है। अब तो गुरु गोसांई का चरित्र ऐसा होना चाहिए कि जिस को देख सुन कर लोगों में श्रद्धा से स्वयं चित आकृष्ट हो। स्त्रीजनों का मन्दिरों से सहवास निवृत्त किया जाय। केवल इतना ही नहीं भगवान श्री कृष्णचन्द्र की केलि कथा जो अति रहस्य होने पर भी बहुत परिमाण से जगत् में प्रचलित हैं वह केवल अंतरंग उपासकों पर छोड़ दीजाय। उनके माहात्म्य सत विशद चरित्र का महत्व यथार्थ रूप से व्याख्या कर के सब को समझायाजाय। रास क्या है गोपी कौन हैं यह सब रूपक अलंकार स्पष्ट करके श्रुतिसम्मत उनका ज्ञान वैराग्य भक्ति बोधक अर्थ कियाजाय। यह भी दबी जीभ से हम डरते२ कहते हैं कि व्रत स्नान आदि भी वहीं तक रहैं जहां तक शरीर को अति कष्ट न हो। जिस उत्तम उदाहरण के द्वारा स्थापक आचार्य गणने आत्मसुख विसर्जन करके भक्तिसुधा से लोगों को प्लावित कर दिया था उसी उदाहरण से अब भी गुरु लोग धर्म प्रचार करैं। बाह्य आग्रहों को छोड़ कर केवल आन्तरिक उन्नत प्रेम मयी भक्ति का प्रचार करें देखैं कि दिग्दिगन्त से हरिनाम की कैसी ध्वनि उठती है और विधर्मी गण भी इस को सिर झुकाते हैं कि नहीं। और सिक्ख कबीर पन्थी आदि अनेक दल के हिन्दू गण भी सब आप से आप बैर छोड़ कर इस उन्नत्त समाज में मिल जाते हैं कि नहीं।

जो कोई कहै कि यह तुम कैसे कहते हो कि वैष्णव मत ही भारत वर्ष का प्रकृत मत है तो उस के उत्तर में हम स्पष्ट कहैंगे कि वैष्णव मत ही भारतवर्ष का मत है और वह भारत वर्ष की हड्डी लहू में मिल गया है। इस के अनेक प्रमाण हैं क्रम से सुनिए। पहले तो कबीरदादू सिक्ख बाउल आदि जितने पंथ हैं सब वैष्णवों की शाखा प्रशाख्य हैं और सारा भारतवर्ष इन पंथों से छाया हुआ है। [२] अवतार और किसी देव का नहीं क्योंकि इतना उपकार ही [दस्यु दलन आदि] और किसी से नहीं साधित हुआ है। [३] नामों को लीजिए तो क्या स्त्री पुरुष आधे नाम भारतवर्ष के विष्णु संबन्धी है और आधे में जगत् है। कृष्णभट्ट रामसिंह गोपालदास हरिदास रामगोपाल राधा लक्ष्मी रुकमिन गोपी जानकी आदि। विश्वास

न हो कलेक्टरी के दफ्तर से मर्दुमशुमारी के कागज़ निकाल कर देख लीजिए या एक दिन डांकघर में बैठ कर चिट्ठियों के लिफाफों की सैर कीजिए [४] ग्रंथ काव्य नाटक आदि के संस्कृत या भाषा के जो प्रचलित हैं उनको देखिए, रघुवंश माघ रामायण आदि ग्रन्थ विष्णुचरित्र के ही बहुत हैं। [५] पुराण में भारत भागवत वाल्मीकि रामायण यही बहुत प्रसिद्ध हैं और यह तीनों वैष्णव ग्रन्थ हैं। [६] व्रतों में सब से मुख्य एकादशी है वह वैष्णव व्रत है और भी जितने व्रत हैं उन में आधे वैष्णव हैं [७] भारतवर्ष में जितने मेले हैं उन में आधे से विशेष विष्णु लीला विष्णु पर्व या विष्णु तीर्थों के कारण हैं। [८] तिहवारों को भी यही दशा है । बरंच होली आदि साधारण तिहवारों में भी विष्णु चरित्र ही गाया जाता है । [९] गीत छंद चौदह आना विष्णु परत्व हैं दो आना और देवताओं के । किसी का व्याह हो रामजानकी के व्याह के गीत सुन लीजिए। किसी के बेटा हो नंद बधाई गाई जायगी। [१०] तीर्थों में भी विष्णु सम्बन्धी ही बहुत है। अयोध्या हरिद्वार मथुरा वृन्दावन जगन्नाथ रामनाथ रंगनाथ द्वारका बदरीनाथ आदि भली भांति याद करके देख लीजिए। [११] नदियों में गंगा यमुना मुख्य हैं सो इन का माहात्मा केवल विष्णु संबंध से है। (१२) गया में हिन्दू मात्र को पिण्ड दान करना होता है वहां भी विष्णु पद है ० (१३) मरने के पीछे रामरामसत्य है इसी की पुकार होती है और अन्त में शुद्धश्राद्ध तक 'प्रेतमुक्ति प्रदोभव' आदि वाक्य से केवल जनार्दनही पूजे जाते हैं। यहां तक कि पितृरूपी जनार्दन ही कहलाते हैं। [१४] नाटकों और तमाशों में रामलीला रास ही अति प्रचलित हैं। [१५] सब वेद पुस्तकों के आदि और अन्त में लिखा रहता है। हरिः ॐ '। [१६] संकल्प कीजिए तो विष्णुः विष्णुः। [१७] आचमन में विष्णु विष्णु। [१८] शुद्ध होना हो तो यः स्मरेत् पुंडरीकाक्षं [१९] सुग्गे को भी राम ही राम पढ़ाते हैं । [२०] जो कोई वृत्तान्त कहै तो उस को रामकहानी कहते हैं। [२१] लड़कों को बालगोपाल कहते हैं। [२२] छपने में जितने भागवत रामायण प्रेमसागर व्रजविलास छापी जाती है और देवताओं के चरित्र उतने नहीं छपते। [२३] आर्य लोगों के शिष्टाचार में रामराम जय श्री कृष्ण जय गोपाल ही प्रचलित हैं। [२४] ब्राह्मणों के पीछे वैष्णव वैरागी ही को हाथ जोड़ते हैं और भोजन कराते हैं। [२५] विष्णु के साला होने के कारण चन्द्रमा को सभी चन्दा मामा कहते

हैं। [२६] गृहस्थ के घर घर तुलसी का थाला ठाकुर की मूर्ति रसोई भोग लगाने को रहती ही हैं। [२७] कथा घाट बाट में भागवत ही रामायण की होती है। [२८] नगरों के नाम में भी रामपुर गोविन्दगढ़ गोपालपुर आदि ही विशेष हैं [२८३] मिठाई में गोविन्द बड़ो मोहन भोग आदि नाम हैं अन्य देवतों का यहीं कुछ नाम नहीं है। [३०] सूर्य चन्द्र वंशी क्षत्री लोग श्री राम कृष्ण के वंश में होने का अब तक अभिमान करते हैं। [३१] ब्राह्मण गण ब्रह्मण्य देव कह कर अबतक कहते हैं 'ब्राह्मणो मामकीतनुः'। [३२] औषधियों में भी रामवाण नारायण चूर्ण आदि नाम मिलते हैं। [३३] कार्तिक स्नान राधा दामोदर को पूजा देखिए भारतवर्ष में कैसी है। [३४] तारक मंत्र लोग श्री रामनाम ही को कहते हैं। [३५] किसी हौस में चले जाइए तूल के थान निकलवा कर देखिए उसपर जितने चित्र विष्णु लीला सम्बन्धी मिलेंगे अन्य नहीं [३६] बारहीं महीने के देवता विष्णु हैं। ऐसी ही अनेक अनेक बातें हैं। विष्णु सम्बन्धी नाम बहुत बस्तुओं के हैं कहां तक लिखे जायं। विष्णु पद [आकाश], विष्णुरात [परीक्षित], राम दाना, रामधेनु, राम जी की गैया! रामधनु [आकाश धनु], रामफल, सीता फल, रामतरोई, श्रीफल, हरिगीती, रामकली, राम कपूर, रामगिरी, रामचंदन, राम गंगा, हरिचंदन, हरि सिंगार, हरिकेला, हरि नेच (कमल), हरि केली (बंगला देश), हरिप्रिय (सफेद चंदन), हरिवासर (एकादशी), हरि बीज (बड़ा नीबू), हरि वर्षखंड, कृष्णकली, कृष्णकन्द, कृष्णकान्ता, विष्णुक्रान्ता (फूल), सीतामञ्ज, सीता बलदी, सीताकुंड, सीतामढ़ी, सीता की रसोई, हरिपर्वत हरि का पतन, रामगढ़, रामवाग, राम.शिला, रामजी की घोड़ी, हरिपदी [आकाश गंगा], राम गंगा, नारायणी, कन्हैया आदि नगर नद नदी पर्वत फलफूल के सैकड़ों नाम हैं। जले विष्णुः स्थले विष्णुः सब स्थान पर विष्णु के नाम ही का संबंध विशेष है। आग्रह छोड़ कर तनिक ध्यान देकर देखिए कि विष्णु से भारतवर्ष से क्या संबंध है फिर हमारी बात स्वयं प्रमाणित होती है कि नहीं कि भारतवर्ष का प्रकृत मत वैष्णव ही है।

अब वैष्णवों से यह निवेदन है कि आप लोगों का मत कैसी दृढ़ भित्ति पर स्थापित है और कैसे सार्वजनीन उदार भाव से परिपूर्ण हैं यह कुछ कुछ हम आप लोगों को समझा चुके। इसी भाव से आप लोग भी इस में स्थिर रहिये यही कहना है। जिस भाव से हिन्दू मत अब चलता है उस

भाव से आगे नहीं चलेगा। अब हम लोगों के शरीर का बल न्यून हो गया विदेशी शिक्षाओं ने मनोवृत्ति बदल गई, जीविका और धन उपार्जन की हेतु अब हम लोगों को पांच पांच छ छ पहर पसीना चुआना पड़ेगा, रेल पर इधर से उधर कलकत्ते से लाहौर और बम्बई से शिमला दौड़ना पड़ेगा, सिविल सर्विस का बैरिस्टरी का इंजनीयरी का इमतिहान देने को विलायत जाना होगा, बिना यह सब किए काम नहीं चलेगा, क्योंकि देखिए क्रस्तान मुसल्मान पारसी यही हाकिम हुए जाते हैं, हम लोगों की दशा दिन दिन हीन हुई जाती है, जब पेट भर खाने ही को न मिलेगा तो धर्म कहां बाकी रहैगा, इससे जीवमात्र के सहज धर्म उदर पूरण पर अब ध्यान दीजिए। परस्पर का बैर छोड़िए। शैवशाक्त सिक्ख जो हो सब से मिलो। उपासना एक हृदय की रत्न वस्तु है उस को आर्य क्षेत्र में फैलाने की कोई आवश्यकता नहीं वैष्णव शैव ब्राह्म आर्यसमाजी सब अलग अलग पतली पतली डोरी हो रहे हैं इसी से ऐश्वर्य रूपी मस्तहाथी उनसे नहीं बंधता। इन सब डोरो को एक में बांध कर मोटा रस्सा बनाओ तब यह हाथी दिग्दिगंत भागने से रुकैगा। अर्थात् अब वह काल नहीं है कि हम लोग भिन्न २ अपनी अपनी खिचड़ी अलग पकाया करें। अब महाघोर काल उपस्थित है। चारो ओर आग लगी हुई है। दरिद्रता के मारे देश जला जाता है। अङ्गरेजों से जो नौकरी बच जाती हैं उन पर मुसल्मान आदि विधर्मी भरती होते जाते हैं। आमदनी वाणिज्य की थी ही नहीं केवल नौकरी की थी सो भी धीरे धीरे खसकी। तो अब कैसे काम चलैगा। कदाचित् ब्राह्मण और गोसाईं लोग कहैं कि हम को तो मुफ्त का मिलता है हम को क्या। इस पर हम कहते हैं कि विशेष उन्हीं का रोना है। जो कराल काल चला आता है उसको आंख खोल कर देखो। कुछ दिन पीछे आपलोगों के मानाने वाले बहुत ही थोड़े रहैंगे। अब सब लोग एकत्र हो। हिन्दू नाम धारी बेद से लेकर तंत्र वरंच भाषा ग्रन्थ मानने वाले तक सब एक हो कर अब अपना परम धर्म यह रक्खो कि आर्य जाति में एका हो। इसी में धर्म की रक्षा है। भीतर तुम्हारे चाहे जो भाव और जैसी उपासना हो ऊपर से सब आर्य मात्र एक रहो। धर्म सम्बन्धी उपाधियों को छोड़ कर प्रकृत धर्म की उन्नति करो।





श्रीः

अष्टादश

पुराणोपक्रमणिका ।

जिस में सर्व पुराणों की संख्या तथा अध्यायानुसार
विषयों का विवरण है ।

अष्टादशपुराण

की

उपक्रमणिका ।

व्यास जी के बनाए अठारह पुराण लोक में प्रसिद्ध हैं। काव्य वाल्मीकीय रामायण, इतिहास-महाभारत, अठारह पुराण, अठारह उपपुराण, पांच-पञ्चरात्र और पांच संहिता इन की समष्टि की संज्ञा पुराण है। अठारह उप पुराण, यथा १ आदि पुराण (सनत्कुमारोक्त) २ नरसिंह पुराण ३ स्कन्द-पुराण ४ शिवधर्म (नन्दीशप्रोक्त) ५ आश्चर्य पुराण (दुर्वासा का कहा) ६ नारद पुराण ७ कपिल पुराण ८ वामन पुराण ९ वरुण पुराण १० शाम्ब पुराण ११ सौर पुराण १२ पराशर पुराण १३ भार्गव पुराण १४ मारीच पुराण १५ कालिका पुराण १६ देवी पुराण १७ माहेश्वर पुराण १८ पद्म पुराण भास्कर, नन्दिकेश्वर, रहस्य, उशना और ब्रह्माण्ड ये पांच नाम उप पुराणों के और भी मिलते हैं ॥

१ वशिष्ट पञ्चरात्र २ नारदीय पञ्चरात्र ३ कपिल पञ्चरात्र ४ गौतमीय पञ्चरात्र और ५ सनत्कुमारीय पञ्चरात्र ये पांच पञ्चरात्र और ब्रह्म शिव गौतम प्रह्लाद और सनत्कुमार ये पांच संहिता हैं, बहुत से लोगों की इच्छा होगी कि परिश्रम भी न करें और जान भी लें कि अठारहो पुराणों क्या है, हम उन की इच्छा पूर्ण करने को पुराणों की यह उपक्रमणिका प्रकाश करते हैं जिस से बहुत सहज में लोग जान जांयगे कि चार लाख श्लोक समूह के अठारह टुकड़ों में क्या क्या विषय सन्निवेशित हैं ।

हरिश्चन्द्र

अष्टादशपुराणोपक्रमणिका ।

प्रथम ब्रह्मपुराण ।

यह पुराण पूर्व्व एवं उत्तर २ भाग में विभक्त है । अनस्तु श्लोक संख्या १०००० दश सहस्र । सूत शौनक संवाद में नाना प्रसङ्ग एवं विविध इतिहास वर्णित हैं ।

पूर्व्वभाग ।—१ देवता एवं असुर गणों की उत्पत्ति वर्णन २ दक्षादि प्रजापति की उत्पत्ति वर्णन ३ सूर्य्यवंश वर्णन एवं तन्मध्य में श्रीराम का चतुर्व्यूह कथन ४ सोमवंश वर्णन तत् प्रसङ्ग से श्रीकृष्ण चरित्र कथन ५ द्वीपकथन ६ वर्षकथन ७ पातालकथन ८ स्वर्गकथन ९ नरककथन १० सूर्य्यस्तुति ११ पार्वती जन्म एवं विवाह कथन १२ दक्षआख्यान १३ एकाम्र क्षेत्रकथन ॥

उत्तरभाग ।—१ पुरुषोत्तमवर्णन २ तीर्थ यात्राविस्तार कथन ४ यमलोककथन ५ पितृश्राद्धविधि ६ वर्णाश्रमाचार धर्म्मनिरूपण ७ विष्णुधर्म्म कथन ८ युगाख्यान ९ प्रलयकथन १० योगकथन ११ सांख्यकथन १२ ब्रह्मवादकथन १३ पुराणांशकथन ।

फलश्रुति ।—यह पुराण लिखा कर वैशाखमास में स्वर्ण युक्त जलधेनु सहित पौराणिक ब्राह्मण को अर्चना पूर्वक दान करने एवं ब्राह्मण भोजन कराने से चंद्र सूर्य्य स्थिति काल पर्य्यन्त ब्रह्मलोक में स्थिति होती है एवं संयत होकर यह पुराण श्रवण वा पाठ करने से सकल धर्म्मफल लभ्य होता है ।

द्वितीयपद्मपुराण ।

पांचखण्ड में ५५००० सहस्र श्लोक । पंचखण्ड यथा १ सृष्टिखण्ड २ भूमिखण्ड ३ स्वर्गखण्ड ४ पातालखण्ड ५ उत्तरखण्ड ।

प्रथमसृष्टिखण्ड ।—पुलस्त्य भीष्म संवाद से सृष्ट्यादि का उपक्रम एवं नाना धर्म्म आख्यान और इतिहास कथन इस खण्ड में १ पुष्कर माहात्म्य विस्तार २ ब्रह्मयज्ञ विधि ३ वेदपाठादि लक्षण ४ दान विवरण ५ पृथक् पृथक् व्रत कथन ६ शैल जाया विवरण ७ तारकाख्यान ८ गोमाहात्म्य ९ कालकेयादि दैत्य वध १० ग्रहों की पूजा एवं दान विवरण है ।

द्वितीयभूमि खण्ड ।—सूतशौनकसंवाद । १ पितृमातृ पूजाकथन २ शिव-

शर्म्माकथा ३ सुव्रतचरित्र ४ वृत्रासुरबध ५ पृथक्वर्ण आख्यान ६ धर्म्मकथा ७ पितृशुश्रूषणकथन ८ नहुषकथा ९ ययातिचरित्र १० गुरुतीर्थ निरूपण ११ राजा के सहित जैमिनि के संवाद में बहुत सी आश्चर्यकथा १२ अशोकसुन्दरी की कथा १३ हुण्डदैत्यबध १४ कामदाख्यान १५ विदुण्डबध १६ च्यवन कुञ्जल का सम्वाद १७ सिद्धाख्यान १८ ग्रन्थ की फल श्रुति ।

तृतीयस्वर्गखंड।—ऋषि लोगों से सौति का कथा प्रसङ्ग १ ब्रह्माण्डोत्पत्ति कथन २ भूमि लोक संस्थान ३ तीर्थ आख्यान ४ नर्म्मदा की उत्पत्ति ५ नर्म्मदास्थ तीर्थ उपाख्यान ६ कुरुक्षेत्रादि तीर्थकथन ७ कालिन्दी की पुण्यकथा ८ काशीमाहात्म्य ९ गयामाहात्म्य १० प्रयागमाहात्म्य ११ वर्णाश्रम धर्म्म एवं योग निरूपण १२ व्यास जैमिनिसम्वाद की पुण्य कथा १३ समुद्रमन्थन १४ व्रतकथन १५ श्रेष्ठमाहात्म्यस्तोत्र ।

चतुर्थपातालखण्ड।—श्रीराम का अश्वमेध एवं राज्याभिषेक कथन २ अगस्त्यादि का आगमन ३ पौलस्ति का उपाख्यान ४ अश्वमेध करणादेश ५ अश्वमेधीय घोटकगमन ६ नानाराज कथन ७ जगन्नाथ देव का वृत्तान्त ८ वृन्दावन का माहात्म्य ९ लीलावतारी की नित्यलीलानुकथन १० वैशाख स्नान दान एवं अर्चनमाहात्म्य ११ धरावराहसंवाद १२ यमएवं ब्राह्मण की कथा १३ राजा का आचरण १४ श्रीकृष्ण का स्तोत्र १५ शिवशंभुमिलन १६ दधीचि का आख्यान १७ भस्मधारण महात्म्य १८ शिवमहात्म्य १९ इंद्रपुत्र का आख्यान २० पुराणवित्तम की प्रशंसा २१ गौतम का आख्यान २२ गीता २३ भारद्वाज के आश्रम में श्रीरामचन्द्र का कल्पान्तरीय इतिहासकथन ।

पञ्चमउत्तरखण्ड।—शिव पार्वती सम्वाद १ पर्वत का आख्यान २ जालन्धर की कथा ३ श्री शैलादि का विवरण ४ सगर का उपाख्यान ५ गङ्गा प्रयाग काशी एवं गया की पुण्यकथा ६ आन्नादि दानमाहात्म्य ७ माहाद्वादशीव्रतकथन ८ चतुर्विंशति एकादशी माहात्म्य ९ विष्णुधर्मकथन १० विष्णुसहस्रनाम ११ कार्तिकव्रतफल १२ माघस्नानफल १३ जम्बूद्वीप के तीर्थ सकल का माहात्म्य १४ साभ्रमती महिमा १५ नृसिंहोत्पत्तिकथन १६ देवशर्म्मा का आख्यान १७ गीतामाहात्म्य १८ भक्ति का माहात्म्य १९ श्रीभागवत माहात्म्य २० इंद्रप्रस्थ की महिमा २१ नाना तीर्थकथा २२ मन्त्ररत्न की कथा २३ त्रिपाद विभूति का कथन २४ मत्स्यादि अवतार कथन २५ श्रीराम का शतनाम एवं तन्माहात्म्य २६ भृगु की त्रिगुणविभव परीक्षा ।

फलश्रुति।—यह पुराण लिखाकर स्वर्णयुक्त पुराणवित् ब्राह्मण को दान करने से अथवा श्रवण करने से वैष्णव धाम की प्राप्ति होती है एवं इस की अनुक्रमणिका श्रवण करने से समुदाय पुराण श्रवण का फल लाभ होता है।

तृतीय विष्णुपुराण। *

आदि एवं अन्त २ भाग में २३००० सहस्र श्लोक उस में आदि भाग ६ अंश

---

* विष्णुपुराण २३ हजार श्लोक है परन्तु भूलकर सुखसागर के बारहवें स्कंध में ३०००० तीसहजार लिखदिया! यही नहीं बरंच चन्द कवि ने भी रायसा में २३ हजार चारसौ लिखदिया परन्तु रायसा के कई एक पुस्तकों में २३४०० और रामरत्न गीता में चत्तो हरजार लिखदिया परन्तु तुलसी सदार्थ में तेईस हजार लिखा मेरी राय से जिन जिन पुस्तकों में अंतर है उन सब को यहां लिखदेता हूं पाठक गण स्वयं विचार करलें।

सुखसागर में मक्खनलाल ने लिखा है। ब्रह्मपुराण दशहजार वो पद्मपुराण पचपनहज़ार वो विष्णुपुराण तीसहजार वो शिवपुराण चौबीसहजार वो श्री मद्भागवत पुराण अठारहहजार वो नारदपुराण पच्चीसहजार वो मार्कण्डेयपुराण नौहजार वो अग्निपुराण पन्द्रह हजार चारसौ वो भविष्यपुराण चौदह हजार पांच सौ वो ब्रह्मवैवर्त्त पुराण अठारह हजार वो लिङ्गपुराण ग्यारह हजार वो वाराहपुराण चौबीसहजार वो स्कन्दपुराण इक्यासी हजार एकसौ वो वामनपुराण दशहजार वो कूर्मपुराण सत्रह हजार वो मत्स्यपुराण चौदह हजार वो गरुड़पुराण उन्नीसहजार वो ब्रह्माण्डपुराण बारह हजार श्लोक हैं।

पृथ्वी राज रासौ में लिखा है।

पद्दरी—ब्रह्मन्यदेव सम वासुदेव। अष्टादस पुरान तिन कहै सभेव॥
तिन कहौं नाम परिमान ब्रम्हि। जिन सुनत सुद्ध भव हो तव्रम्हि॥
ब्रह्म पुरान दस सहस लुट्टि। जिहि पढत सुनत तन तप्प छुट्टि॥
पंचास पंचह हजार गन्हि। पद्मह पुरान तिन कह्यौ ब्रम्हि॥
तेईस सहस सें चारि जानि। विष्णु पुराण विष्णू समानि॥
चौबीस सहस कहि शिवपुरान। तिहिपढतसुनत सम अमियपान॥
अठार सहस भागवत भेव। करि पार परिख्यत सुकदेव॥
नारद पुरान कहि पाव लाख। तहां मुक्ति मोट आनन्द भाख॥
मारकंड नाम तेइस हजार। पौरान पवित्र सो दुख जार॥

पंद्रह हजार संख्या सपूर। अग्नि पुरान पढि पाप दूर॥
चवदे हजार सैं पांच पड्डि। भवषित पुरान सो पाप जड्डि॥
ब्रह्मवैव्रत सहसं अठार। केवल गिनान कथि भक्ति सार॥
रुद्रह हजार लिंगह पुरान। आनन्द अर्थ आगम गुरान॥
चौवीस सहस वाराह भक्ति। पौरख पुरान तिन असित सक्ति॥
हजार इक्यासी कहि विवेक। स्कंद पुरान भव भक्ति एक॥
इग्यारह सहस बावन सु अक्क। पौरान सुनत सुधि अग्ग पक्क॥
सत्रह हजार कूरंम पुरान। भाषा विनोद प्राक्रम गुरान॥
विद्या हजार मित सक्क देव। विधि संख उधरे सेव भेव॥
गुनईस सहस गरुडह पुरान। ओतान वक्त भक्ति उरान॥
ब्रह्मांड पुरान बारह सहंस। करि व्यास भक्ति प्रभु कंस नंस॥
पंद्रह हजार अरु च्यरि लाख। सम ब्रह्म व्यास कहि चंद भाख॥

तुलसी शब्दार्थ में लिखा है। अष्टादश पुराण—

दोहा—ब्रह्म ब्रह्माण्ड बावन सरस, ब्रह्मवैवर्त सुजान।
मार्कण्ड अरु भविष्य ये, राजस कहैं पुरान॥ १॥
नारद विष्णु वराह अरु, गरुड़ पद्म सुखसार॥
भगवत रूपी भागवत, ये सात्त्विक निरधार॥ २॥
मीन कूर्म अरु लिंग सिव, स्कन्धरु अग्नि विचार।
तामस सिव के अंग ए, सुनतहि मिटै खमार॥ ३॥
बावन ब्रह्म दस दस सहस, द्वादस है ब्रह्माण्ड।
ब्रह्मवैवर्त दस सहस पुनि, पचपन पद्म अखण्ड॥ ४॥
पन्द्रह सहस सुचारिसत, मार्कण्ड सु पुरान।
साढ़े चौदह भविष्य है, तेइस विष्णु बखान॥ ५॥
पंचविंस नारद कहत, सूकर चौविस जान।
उनइस गरुड़ बखानिय, अठारह भगवत मान॥ ६॥
मत्स सु चौदह सहस है, कूरम सत्रह होइ।
लिंग इकादस कहत हैं, चौविस रुद्र जु सोइ॥ ७॥
पावक पन्द्रह सहस पुनि, चारि सैकरा आन।

स्कन्ध इक्यासी सहस अरु , इकसत करत बखान ॥ ८ ॥
तीन लाख अट्ठानवे , सहस वेद सत आद ।
सब पुरान ऽश्लोक को , कही व्यास मर्याद ॥ ९ ॥

उपपुराण नाम—सनतकुमारद्विजानपुनि , नारसिंह अस्कन्ध ।
दुर्वासा आश्चर्यगनि , नारद कपिल प्रबन्ध ॥ १० ॥
मानव अरु ब्रह्माण्ड कहि , भार्गव गरुड़ बखान ।
माहेश्वर पुनि कालिका , सांवरु सूर्य पुरान ॥ ११ ॥
विष्णुपुरान परासरी पुनि , संचय सर्वार्थ ।
देवि भागवत मिलि भये , अष्टादस सब सार्थ ॥ १२ ॥

श्रीभागवत के १२ वें स्कंध के १३ वें अध्याय में लिखा है।

ब्राह्मंदशसहस्राणिपाद्मंपंचोनषष्ठिच श्रीवैष्णवंत्रयोविंशच्चतुर्विंशतिशैवकम् ॥ ४ ॥
दशाष्टौश्रीभागवतं नारदंपंचविंशति मारर्कंडेयंनववाह्नंतुदशपंचचतुःशतम् ॥ ५ ॥
चतुर्दशभविष्यंस्यात्तथापंचशतानिच दशाष्टौब्रह्मवैवर्तंलिंगमेकादशैवतु ॥ ६ ॥
चतुर्विंशतिवाराहमेकाशीतिसहस्रकम् स्कांदंशतंतथाचैकंवामनंदशकीर्तितम् ॥ ७ ॥
कौर्मंसप्तदशाख्यातंमात्स्यंतत्तुचतुर्दश एकोनविंशत्सौपर्णंब्रह्मांडंद्वादशैवतु ॥ ८ ॥
एवंपुराणसंदोहश्चतुर्लक्षउदाहृतः तत्राष्टादशसाहस्रंश्रीभागवतमिष्यते ॥ ९ ॥

पुराणों के नामों में भी कई एक लोगों ने पृथक पृथक लिखा है। यथा शब्द कोष में लिखा है।—पुराण। (; पुरा पुराना (पुर आगे जाना)—अर्थात् जिसमें पुराने समय की बातें हों, अथवा जो पुराने समय में बने हों) पु० वे ग्रन्थ जिन में संवतों को व्यास जी ने बनाये अथवा इकट्ठे किये। पुराण सब पद्य में लिखे हुए हैं और उन को हिंदू पवित्र मानते हैं। हर एक पुराण में विशेष कर के इन पांच बातों का वर्णन है जैसे। सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशोमन्वन्तराणि च वंशानु चरितं चैव पुराणं पंच लक्षणम् ।

अर्थात् १ संसार की उत्पत्ति ; २ प्रलय और प्रलय के पीछे फिर संसार की उत्पत्ति ; ३ देवता और शूर वीरों की वंशावली ; ४ मनुष्यों का राज ; और ५ उन के वंश के लोगों का व्यवहार और चलन ; पुराण अठारह हैं १ ब्रह्म पुराण, २ पद्मपुराण, ३ ब्रह्माण्डपुराण, ४ अग्निपुराण, ५ विष्णुपुराण ६

४ दक्षादि वर्णन ५ ध्रुवचरित्र ६ पृथुचरित्र ७ प्रचेता आख्यान ८ प्रह्लाद उपाख्यान ९ प्रह्लाद राज्य का पृथक आख्यान ।

गरुड़पुराण, ७ ब्रह्मवैवर्त्तपुराण, ८ शिवपुराण, ९ लिङ्गपुराण, १० नारद पुराण, ११ स्कन्दपुराण, १२ मार्कण्डेपुराण, १३ भविष्यत पुराण, १४ मत्स्यपुराण, १५ वराहपुराण, १६ कूर्म्मपुराण, १७ वामन पुराण, औ भागवत पुराण। इन सब पुराणों में चार लाख श्लोक गिने गये हैं और अठारह उपपुराण भी हैं। गु॰ पुराना; पहले का; सबसे पहला।

संस्कृत कोष में लिखा है।—पुराण पुं॰ पण अर्थात् व्यवहार दांव मूल्य धन द्यूतव्यवहार अर्थात् जुए का खेल विष्णु चिरंजीवी दीर्घायु: प्राण:जीव ईश्वर वा॰ त्रि॰ प्रत्न प्राचीन पुराना वृद्ध जीर्ण न॰ पंचलक्षण अर्थात् व्यास के बनायेहुए अठारह पुराण तथा च प्रमाणम् ॥ श्लोक मद्वयं भद्वयं चैव ब्रत्रयं वचतुष्टयम् ॥ अनापलिंगकूस्कानि पुराणानि पृथक् पृथक् ॥ १ ॥

मार्कंडेय पुराण १ मत्स्यपुराण २ भविष्योत्तरपुराण ३ भागवतपुराण ४ ब्रह्मांडपुराण ५ ब्रह्मवैवर्त्तपुराण ६ ब्रह्मोत्तर पुराण ७ वाराहपुराण ८ वामनपुराण ९ वायुपुराण १. विष्णुपुराण ११ अग्निपुराण नारद पुराण १३ पद्मपुराण १४ लिंगपुराण १५ गरुड़पुराण १६ कूर्मपुराण १७ स्कंदपुराण।

शिवपुराण के उल्था में शिवसिंह ने यों लिखा है।

पुराण १८ हैं और उप पुराण भी अठारह है जिनके नाम यह हैं पद्म १ स्कंद २ गरुड़ ३ मत्स्य ४ वायु ५ ब्रह्माण्ड ६ लिंग ७ अग्नि ८ कूर्म ९ वामन १० नारदीय ११ विष्णु १२ भविष्योत्तर १३ मार्कण्डेय १४ वाराह १५ भारत १६ ब्रह्मवैवर्त्तक १७ भागवत १८। उपपुराण। काली १ शाम्ब २ सनत्कुमार ३ वरुण ४ मारीच ५ नन्दी ६ शिव ७ दुर्वासा ८ मुनि ९ नारदीय १० कपिल ११ सौरि १२ माहेश्वरी १३ शुक्र १४ भार्गव १५ नृसिंह १६ धर्म १७ पाराशर १८ ॥

अथ श्लोक अष्टादशपुराणे ॥

पद्मस्कन्दविहंगमत्स्यपवनं ब्रह्माण्डलिंगानय: ।
कूर्मोवामननारदीयसहितं विष्णुभविष्योत्तरं ॥
मार्कण्डेय वराह भारतयुत: श्रीब्रह्म वैवर्त्तक: ।
श्रीमद्भागवतंदिशंतुपरमं श्रेय: पुराणा निवै ॥ १ ॥

प्रथमभाग द्वितीयअंश।—१ प्रियव्रत उपाख्यान २ द्वीप और वर्ष निरूपण ३ पातालकथन ४ नरककथन ५ सप्तस्वर्ग निरूपण ६ सूर्य्यादिसंचार ७ भरतचरित्र ८ मुक्तिमार्ग निरूपण ९ निदाघादि ऋतुसंवाद।

प्रथमभाग तृतीयअंश।—१ मन्वन्तर कथा २ वेदव्यास अवतार ३ नरक-उद्धार और कर्म्म ४ सगर एवं और्व संवाद में सर्व धर्म्म निरूपण ५ वर्णाश्रम निरूपण ६ श्राद्धकल्प ७ सदाचारकथन ८ मायामोह की कथा।

प्रथमभाग चतुर्थअंश।—१ सूर्य्यवंशकथा २ सोमवंशकथा।

प्रथमभाग पञ्चमअंश।—१ नाना राजा लोगों की कथा २ श्रीकृष्णावतार प्रश्न ३ गोकुल कथा ४ श्रीकृष्ण बाल्य लीला पूतनादिवध ५ कौमार अघासुरादिवध ६ कैशोरकंसवधादि मथुरालीला ७ यौवन द्वारवतीलीला दैत्य वध एवं विवाह ८ भूभारहरण ९ अष्टावक्र उपाख्यान।

प्रथमभाग षष्ठअंश।—१ कलिजात चरित्र २ चतुर्विध लय कथा ३ ब्रह्म-ज्ञान कथा ४ केशिध्वज कर्तृक खाण्डिक्य निरूपण।

द्वितीयभाग—सूतशौनक सम्वाद—१ विष्णु धर्म्म कथन २ नाना धर्म्म कथन ३पुण्य व्रत नियम एवं यम कथन ४ धर्म्मशास्त्र ५ अर्थशास्त्र ६ वेदान्त-शास्त्र ७ ज्योतिःशास्त्र ८ वंश आख्यान ९ स्तवकथन १० मनु सकल की कथा।

फलश्रुति—यह पुराण लिखा कर अषाढ़मास में घृत धेनु के साथ पौरानिक ब्राह्मण को दान करने से सूर्य्यके रथ पर आरोहण करके विष्णुधाम में गमन एवं भक्तियुक्त पाठ किम्बा श्रवण करने से विष्णुलोक में बास औ दिव्य भोग प्राप्ति होती है इस की अनुक्रमणिका पाठ वा श्रवण करने से समुदाय पुराण श्रवण फल होता है।

चतुर्थ वायुपुराण।

पूर्व्व और उत्तर दो खण्ड २४००० सहस्र श्लोक वायु ने श्वेत कल्पप्रसङ्ग से सकल धर्म्म कहा है।

यथा अष्टादश उपपुराणे॥

कालीसांबसनत्कुमारवरुणं मारीचनंदीशिवं।
दुर्वासामनुनारदोवकपिलं शौरचमाहेश्वरो॥
शुक्रंभार्गव कंन्दसिंहमपर धर्म्मंचपराशरं।
कुर्वन्तयुपपुराणकानिसततेसम्यौक्तितेऽष्टादश॥२॥

पूर्वभाग—१ स्वर्गादि लक्षण विस्तार कथन २ सकल मन्वन्तर के राजगण का वंश कथन ३ गयासुरवध ४ मास गणों की महिमा एवं माघमास की विशेष महिमा ५ दान धर्म्म एवं राज धर्म्म विस्तार कथन ६ भूचर पतालचर दिक्चर एवं आकाश चर विवरण ७ व्रत विवरण।

उत्तरभाग—१ नर्म्मदा तीर्थ कथन २ शिवसंहिता कथन।

फलश्रुति—यह पुराण लिख कर गुड़ धेनु के साथ स्टदख ब्राह्मण को श्रावण मास में दान करने से चतुर्द्दश इंद्र परिमित काल रुद्रलोक में वासनियम एवं हविष्य से पुराण श्रवण करने से वा श्रवण कराने से रुद्र तुल्यता प्राप्ति पुराणकी अनुक्रमणिका सुनने से समुदाय पुराण श्रवण फल लाभ होता है।

पञ्चम श्रीभागवत।

द्वादशस्कन्ध १८००० सहस्र श्लोक सारस्वत कल्पीय वाथा।

प्रथमस्कन्ध।—१ सूत और ऋषियों का मिलन २ व्यासदेव का पुण्य चरित्र ३ पाण्डव का चरित्र ४ परीक्षित का उपाख्यान।

द्वितीयस्कन्ध।—१ परीक्षित शुकसम्वाद से सृष्टिद्वयनिरूपण २ ब्रह्मानारद सम्वाद से अवतार कथन ३ पुराण लक्षण ४ सृष्टि प्रकरण कथन।

तृतीयस्कन्ध।—१ विदुरचरित्र एवं मैत्रेय मिलन २ ब्रह्मा सृष्टि प्रकरण ३ कपिल सांख्य कथन।

चतुर्थस्कन्ध।—१ सतीचरित्र २ ध्रुवचरित्र ३ पृथुचरित्र ४ प्राचीन बर्हि आख्यान।

पञ्चमस्कन्ध।—१ प्रियव्रतचरित्र एवं उनका वंशकथन २ ब्रह्माण्डान्तर्गत लोक सकल का वृत्तान्त ३ नरकस्थिति कथन।

षष्ठस्कन्ध।—१ अजामिल चरित्र २ दक्षसृष्टि निरूपण ३ वृत्रासुर आख्यान ४ मरुत जन्म कथन।

सप्तमस्कन्ध।—१ प्रह्लादचरित्र २ वर्णाश्रम निरूपण ३ वासना कर्म्म इत्यादि कीर्त्तन।

अष्टमस्कन्ध।—१ गजेन्द्र मोक्षण २ मन्वन्तर निरूपण ३ समुद्रमथन ४ बलि वैभव एवं बन्धन ५ मत्स्यावतार चरित्र।

नवमस्कन्ध।—१ सूर्य्यवंश कथन २ रामायण ३ सोमवंश निरूपण।

दशमस्कन्ध।—१ श्रीकृष्ण बालचरित्र २ कौमार चरित्र ३ व्रजस्थिति ४ कैशोर लीला ५ मथुरावास ६ यौवन ७ द्वारकास्थिति ८ भूभारहरण।

एकादशस्कन्ध—१ वसुदेव नारद संवाद २ यदु दत्तात्रेय सम्वाद ३ श्री कृष्ण उद्धव सम्वाद ४ यादव मुक्तिकथन ।

द्वादशस्कन्ध—१ भविष्य एवं कलि कथा २ परीक्षित मोक्ष ३ वेदशाखा कथन ४ मार्कण्डेय तपस्या ५ सौरी विभूति कथन ६ पुराण संख्या कथन ।

फलश्रुति—यह पुराण हैम सिंहासनस्थ करके भाद्री पूर्णिमा को प्रीतिपूर्वक ब्राह्मण को वस्त्र एवं स्वर्ण सहित दान करने से भगवद्भक्ति लाभ होता है और श्रवण करने से अथवा श्रवण कराने से भक्ति और मुक्ति लाभ होता है और इस की अनुक्रमणिका श्रवण करने किम्वा कराने से सम्पूर्ण भागवत श्रवण फल लभ्य होता है ।

षष्ठ नारदपुराण ।

पूर्व एवं उत्तर दो भाग में २५००० सहस्र श्लोक पूर्व भाग चार पाद में विभक्त ।

पूर्वभाग का प्रथमपाद ।

सूत शौनक सम्वाद—१ सृष्टि संक्षेपवर्णन एवं नाना धर्म्म कथा ॥ पूर्वभाग द्वितीयपाद । १ मोक्ष धर्म्म कथन मोक्षोपाय निरूपण २ वेदाङ्गकथन ३ सनन्दन कर्त्तृ नारद प्रति शुकोत्पत्ति कथन ४ महातन्त्र से पशुपाश विमोचन ५ मन्त्रशोधन ६ दीक्षा ७ मन्त्रोद्धार पूजाप्रयोग कवच विष्णुसहस्रनाम एवं स्तोत्र ८ गणेश सूर्य्य विष्णु शिव एवं शक्ति का क्रम से उपाख्यान कथन ।

पूर्वभाग तृतीयपाद—१ नारद और सनत्कुमार सम्वाद २ पुराण लक्षण प्रमाण एवं दान काल कथन ३ चैत्रादि मास को प्रतिपदादि तिथिव्रत विस्तार कथन ।

पूर्वभाग चतुर्थपाद—१ सनातन कर्त्तृक नारद प्रति बृहदाख्यान कथन ।

उत्तरभाग—१ एकादशी व्रत विषयक प्रश्न २ वशिष्ठ एवं मांधाता का सम्वाद ३ रुक्माङ्गद की कथा ४ मोहिनी की उत्पत्ति एवं सम्वाद ५ मोहिनी प्रतिवसु का शाप एवं उद्धार ६ गङ्गा की पुण्यकथा ७ गया यात्रा ८ काशी माहात्म्य ९ पुरुषोत्तमवर्णन १० क्षेत्रयात्रा एवं अन्यान्य बहुकथा ११ प्रयागमाहात्म्य १२ कुरुक्षेत्रमाहात्म्य १३ हरिद्वारमाहात्म्य १४ कामोदा आख्यान १५ बदरी तीर्थ माहात्म्य १६ कामाख्या माहात्म्य १७ प्रभासमाहात्म्य १८ पुराण आख्यान १९ गौतमाख्यान २० वेदपाद स्तव २१ गोकर्णक्षेत्र माहात्म्य २२ लक्ष्मण आख्यान २३ सेतुमाहात्म्य २४ नर्मदामाहात्म्य २५ अव-

त्नीमाहात्म्य २६ मथुरामाहात्म्य २७ वृन्दाबनमाहात्म्य २८ ब्रह्मा के निकट वसु का गमन २९ मोहिनीचरित्र कथन ।

फलश्रुति—यह पुराण श्रवण करने किम्वा श्रवण कराने से ब्रह्मधाम प्राप्ति होती है और अनुक्रमणिका श्रवण करने से किम्वा श्रवण कराने से स्वर्ग लाभ होता है और यह पुराण आश्विनी पूर्णिमा को सप्त धेनु युक्त उत्तम ब्राह्मण को दान करने से मोक्ष प्राप्ति होती है।

सप्तम मार्कण्डेयपुराण ।

९००० सहस्र श्लोक ।

१ मार्कण्डेय कर्तृक जैमिनि का पक्षियों के निकट प्रेरण २ धर्म्म पक्षि सकल का जन्म निरूपण ३ इन की पूर्वजन्म कथा ४ सूर्य्य क्रिया कथन ५ बलदेव तीर्थ यात्रा ६ द्रौपदेय कथा ७ हरिश्चन्द्र पुण्यकथा ८ आडीवक नामक युद्ध कथा ९ पिता पुत्र कथा १० दत्तात्रेयकथा ११ हैहय चरित्र एवं माहात्म्य १२ मदालसा कथा १३ अलर्कचरित्र १४ षष्ठी संकीर्त्तन १५ नव प्रकार पुण्यकथा १६ कतिपय अन्तकाल निर्देश १७ पक्षिसृष्टि निरूपण १८ रुद्रादिसृष्टि १९ द्वीप एवं वर्ष कथा २० मनु कथा और अष्टम मन्वन्तर में देवीमाहात्म्य कथा २१ प्रणवोत्पत्ति कथा वेद एवं तेज जन्म २२ मार्कण्डेय जन्म और माहात्म्य २३ वैवस्वत चरित्र सहित वत्समीर चरित्र २४ खनित्र पुण्यकथा २५ अवक्षत चरित्र २६ किमिच्छव्रत २७ अविनाश चरित्र २८ इक्ष्वाकु चरित्र २९ तुलसाचरित्र ३० रामचन्द्रकथा ३१ कुश वंश आख्यान ३२ सोमवंश की कथा ३३ नहुष की अद्भुतकथा ३४ ययाति चरित्र ३५ यदुवंशकीर्त्तन ३६ श्रीकृष्ण बालचरित्र ३७ मथुरा में श्रीकृष्ण चरित्र ३८ द्वारका चरित्र ३९ सकल अवतार कथा ४० सांख्ययोग उद्देश ४१ प्रपञ्च एवं असत्य कीर्तन ४२ मार्कण्डेय चरित्र ४३ पुराण श्रवण फल ।

फलश्रुति—यह पुराण लिखा कर सुवर्ण संयुक्त ब्राह्मण को दान करने से ब्रह्मपद मिलता है एवं भक्तिपूर्वक श्रवण करने से किम्वा श्रवण कराने से मार्कंडेय तुल्य गति प्राप्ति और वांछित फल लाभ होता है ।

अष्टम अग्निपुराण ।

१५,००० सहस्र श्लोक ईशानकल्प कथा वशिष्ठ नल उपाख्यान ।

१ पुराणप्रश्न २ सर्वअवतार कथा ३ सृष्टिप्रकरण कथन ४ विष्णुपूजादि

विधि ५ अग्निपूजा मंत्र और मुद्रादि लक्षण ६ दीक्षाविधान ७ अभिषेक कथन ८ मण्डल करण लक्षण ९ कुशमार्जन १० पवित्रारोपण विधि ११ देवालयकरण विधि १२ शालग्राम पूजा एवं लक्षण कथन १३ प्रतिष्ठाप्रकरण १४ न्यासादि विधि १५ विनायक दीक्षाविधि १६ अन्यान्यकथन १७ देवप्रतिष्ठाविधि १८ ब्रह्माण्ड निरूपण १९ गङ्गादि तीर्थ माहात्म्य २० द्वीपवर्णन २१ ऊर्द्ध एवं अधोलोक रचना २२ ज्योतिषचक्र निरूपण २३ ज्योतिष शास्त्र वर्णन २४ युद्धजयकरण शास्त्र २५ षट् कर्म्म कथा २६ मन्त्रयन्त्र औषध प्रकरण २७ कुब्जिकादिकथन २८ छ प्रकार के न्यास की विधि २९ कोटि होम विधान एवं विस्तार निरूपण ३० ब्रह्मचर्य्य धर्म्म ३१ श्राद्धकल्पविधि ३२ ग्रहयज्ञ ३३ वेदोक्त एवं स्मृत्युक्तकर्म्म ३४ प्रायश्चित्त कथन ३५ तिथिव्रतादि कथन ३६ वारव्रत ३७ नक्षत्रव्रत ३८ मासव्रत ३९ दीपदान विधि ४० नूतन व्यूहार्च्चन प्रकरण ४१ नरक निरूपण ४२ व्रत एवं दान निरूपण ४३ नाड़ी चक्रवर्णन ४४ संध्याविधि ४५ गायत्री अर्थ ४६ शिवलिङ्गस्तोत्र ४७ राजाभिषेक यन्त्र ४८ राजधर्म्म एवं राजकार्य्य ४९ राजा का अध्ययन ५० शकुन्यादि शुभाशुभ दृष्टि निरूपण ५१ मण्डलादि निर्द्देश ५२ रणदीक्षा विधि ५३ श्रीरामोक्तनीति ५४ रत्नलक्षण ५५ धनु विद्या ५६ व्यवहार निरूपण ५७ देवासुर विवर्द्धन आख्यान ५८ आयुर्वेद निरूपण ५९ गजादि की रोग चिकित्सा एवं आरोग्य कथन ६० गो अश्वादि की चिकित्सा ६१ नाना पूजा प्रकरण ६२ विविधशान्ति ६३ छन्दःशास्त्र ६४ साहित्यशास्त्र ६५ एकार्णवादि शास्त्र समाख्यान ६६ प्रसिद्ध शिष्टानुशासन ६७ धनागार एवं सृष्ट्यादिवर्ग ६८ प्रलय लक्षण ६९ शारीरक निरूपण ७० नरकवर्णन ७१ योगशास्त्र ७२ ब्रह्मज्ञान ७३ पुराण श्रवण माहात्म्य ।

फलश्रुति—यह पुराण लिख कर अग्रहायण मास में सुवर्ण कमल सहित अथवा तिल धेनु सहित पुराण वित्ब्राह्मण को दान करने से स्वर्ग लाभ होता है एवं यह पुराण श्रद्धा करके श्रवण करने किम्वा श्रवण कराने से सकल पाप क्षय होता है। और भक्ति युक्त होकर इस पुराण की अनुक्रमणिका पाठ करने से सकल पुराण पाठ का फल लभ्य होता है।

नवम भविष्यपुराण ।

पञ्चपर्व १४००० सहस्र श्लोक । अघोरकल्प वृत्तान्त । नाना आश्चर्य कथा । प्रथमपर्व ब्राह्मपर्व और द्वितीय तृतीय चतुर्थ एवं पञ्चमपर्व एकत्र हैं ।

प्रथमपर्व्व सूत शौनक सम्वाद—१ पुराण प्रश्न २ नाना आख्यान युक्त सूर्य्य चरित्र वर्णन ३ सृष्ट्यादि लक्षण ४ पुस्तक लेखक एवं लिखने का लक्षण ५ सकल प्रकार संस्थान लक्षण ६ प्रतिपदादि तिथि एवं सप्तकल्प कथन ७ विष्णु विषय अष्टम्यादि शेषकल्प कथा ८ शैव विषय इच्छाधीन भिन्न भिन्न कल्प कथन ९ सौर विषय शेषकथा १० नाना आख्यान युक्त प्रति सृष्टि नाम वर्णन ११ पुराण उपसंहार एवं पञ्चपर्व्व कथन इस पर्व्व में धर्म्म विषय में ब्रह्मा की महिमा का आधिक्य कथन है ।

द्वितीयपर्व्व—भोग विषय में शिवमाहात्म्य कथन ।

तृतीयपर्व्व—मोक्षविषय में विष्णु का माहात्म्य कथन ।

चतुर्थपर्व्व—चतुर्वर्ग विषय में सूर्य्यमाहात्म्य कथन ।

पञ्चमपर्व्व—सर्व्व कथा युक्त प्रतिसर्ग वर्णन इस पुराण में अद्वितीय ब्रह्म का गुण तारतम्य रूप भेद से सकल देव की समता वर्णित है ।

फलश्रुति—यह पुराण लिख कर पौषी पौर्णिमा को गुड़ धेनुस्वर्ण वस्त्र माल्य सहित पुराण पाठक ब्राह्मण को दान करने से एवं श्रवण किम्वा पाठ करने से सकल घोर पाप से विमुक्ति एवं ब्रह्मपद प्राप्ति होती है और पुराण की अनुक्रमणिका पाठ किम्वा श्रवण करने से भक्ति मुक्ति मिलती है ।

दशम ब्रह्मवैवर्त्तपुराण ।

चारखण्ड १८००० सहस्र श्लोक प्रथम ब्रह्मखण्ड द्वितीय प्रकृति खण्ड तृतीय गणेशखण्ड चतुर्थ श्रीकृष्ण जन्म खण्ड ।

सूत ऋषिसम्वाद प्रथम ब्रह्मखण्ड—१ सृष्टिप्रकरण २ नारद और ब्रह्मा विवाद एवं शापान्त ३ नारद का शिवलोक गमन एवं गान शिक्षा ४ शिवादेश से मरीचि की सहित नारद का सावर्णि प्रबोधार्थ सिद्धाश्रम में गमन ।

द्वितीय प्रकृतिखण्ड—१ सावर्णि नारद सम्वाद २ श्रीकृष्ण माहात्म्य युक्त नानाख्यान ३ प्रकृति की अंश और कलाओं का माहात्म्य वर्णन ४ उनका गङ्गादि विस्तार और माहात्म्य वर्णन ।

तृतीय गणेश खण्ड—१ गणेश जन्म प्रश्न २ पुण्यव्रत कथन ३ पार्व्वती कार्तिक एवं गणेश जन्म ४ कार्त्तवीर्य्य चरित्र ५ परशुराम विवरण ६ जमदग्नि एवं गणेश का आश्चर्य विवाद ।

चतुर्थ श्रीकृष्णजन्म खण्ड—१ श्रीकृष्णजन्म प्रश्न एवं जन्म कथा २ गोकुल-गमन ३ पूतनादि बध ४ बाल्य कौमार विविध लीला वर्णन ५ शरत्काल में

गोपीसहित रास क्रीड़ा ६ श्रीराधिका सहित निर्जन क्रीड़ा विस्तार वर्णन ७ अक्रूर सहित हरि मथुरा गमन ८ कंस वध ६ द्विजसंस्कार १० सांदीपनी गुरु निकट विद्योपार्जन ११ कालयवनवध १२ द्वारकागमन १३ नरकादि वध वर्णन ।

फलश्रुति—यह पुराण लिख कर माघ मास में धेनु सहित ब्राह्मण को दान करने से ब्रह्मलोक प्राप्ति होती है एवं अज्ञान बन्धन से मुक्ति होती है और पाठ किम्वा श्रवण करने से संसार बंधन क्षय होता है तथा इस पुराण को अनुक्रमणिका पाठ करने श्रीकृष्ण के प्रसाद से वांछित फल लाभ होता है।

एकादश लिङ्गपुराण ।

पूर्व एवं उत्तर दो भाग ११००० सहस्र श्लोक । शिवमाहात्म्य प्रकाशक अग्निकल्प कथा ।

पूर्वभाग—१ पुराणान्त में सृष्टि विषयक संक्षेप प्रश्न २ योगाख्यान ३ कल्पाख्यान ४ लिङ्गउद्भव एवं पूजा ५ सनत्कुमार और शैलादि का सम्वाद ६ दधीचि चरित्र ७ युग धर्म्म निरूपण ८ कोषकथन ६ सूर्य्यवंश ऐवं सोमवंश वर्णन १० सृष्टिवर्णन एवं त्रिपुर आख्यान ११ लिङ्गप्रतिष्ठा कथन १२ पशुपाश विमोक्षण १३ शिवव्रत १४ सदाचार निरूपण १५ प्रायश्चित्त कथन १६ श्रीशैल वर्णन १७ अन्धक आख्यान १८ वाराह चरित्र १६ नृसिंह चरित्र २० जलन्धर वध २१ शिवसहस्रनाम २२ दक्षयज्ञ विनाश २३ कामदेव दहन २४ गिरिजा सह शिव विवाह २५ विनायक आख्यान २६ शिवनृत्य २७ उपमन्युकथा ।

उत्तरभाग—१ विष्णुमाहात्म्य २ अम्बरीष कथा ३ सनत्कुमार नन्दि सम्वाद ४ शिवमाहात्म्य ५ स्नान यागादिक वर्णन ६ सूर्य्य पूजा विधि ७ शिव पूजा ८ बहुविध दानादि विधि ६ श्राद्धप्रकरण १० मूर्त्ति प्रतिष्ठा प्रकरण ११ घोरतम कथा १२ ब्रजेश्वरी महाविद्या गायत्री महिमा वर्णन १३ त्र्यम्बक-माहात्म्य १४ पुराण श्रवण माहात्म्य ।

फलश्रुति—यह पुराण लिखा कर फाल्गुनी पूर्णिमा को तिल धेनु सहित भक्तिपूर्वक ब्राह्मण को दान करने से जरा मरण वर्जित होकर शिव सायुज्य प्राप्ति होती है और पुराण पाठ वा श्रवण करने से नाना भोग करके अन्त में शिवलोक में गमन होता है और अनुक्रमणिका श्रवण किम्वा पाठ करने से

श्रोता एवं पाठक उभय शिवभक्त होते हैं एवं बहुकाल स्वर्ग भोग करते हैं।

द्वादश वराहपुराण।

पूर्व एवं उत्तर भाग २४००० सहस्र श्लोक विष्णुमाहात्म्य वर्णन भूमि वराह संवाद मानवकल्प प्रसंग।

पूर्वभाग—१ आदि सत वृत्तान्त रम्भा चरित्र-कथन २ दुर्ज्जय प्रतिश्राद्ध कल्प कथा ३ महा तपस्या आख्यान ४ गौरी उत्पत्ति कथन ५ विनायक कथा ६ नागकथा ७ सेनानी एवं आदित्यकथा ८ देवगण कथा ९ कुवेर गण सकल कथा १० वृषकथा ११ सत्यतप कथा १२ व्रत आख्यान १३ अगस्त्यगीता १४ रुद्रगीता १५ महिषासुर बध में ब्रह्मा विष्णु एवं शिव की शक्ति एवं माहात्म्य कथन १६ पर्वाध्याय १७ श्वेत उपाख्यान १८ गोदान कथा १९ भगवद्धर्म्म २० व्रत एवं तीर्थ कथा २१ अचि अपराध कथा २२ शारीरिक प्रायश्चित २३ सकल तीर्थ महिमा २४ मथुरा माहात्म्य विशेष वर्णन २५ ऋषिपुत्र प्रसङ्गाधीन यमलोक वर्णन २६ कर्म्म विपाक २७ विष्णु व्रत निरूपण २७ गोकर्ण माहात्म्य।

उत्तरभाग—पुलस्त्य कुरुराज सम्वाद सकल तीर्थ माहात्म्य पृथक् पृथक् विस्तारित रूप वर्णन २ अशेष धर्म्माख्यान ३ पौष्कर पुण्य कथा।

फलश्रुति—यह पुस्तक लिखकर चैत्री पूर्णिमा को काञ्चन गरुड़ एवं तिल धेनु समन्वित भक्ति पूर्वक ब्राह्मण को दान करने से वैष्णव धाम प्राप्ति एवं देवता और ऋषि गण द्वारा बन्दित होता है और पुराण पाठ करने किम्बा श्रवण करने से भगवान की भक्ति होती है। और अनुक्रमणिका पाठ किम्बा श्रवण करने से संसार नाशिनी विष्णुभक्ति लभ्य होती है।

त्रयोदश स्कंदपुराण।

सप्तखण्ड८१००० सहस्रश्लोक—१माहेश्वरखण्ड२वैष्णवखण्ड ३ ब्रह्मखण्ड ४ काशीखण्ड ५ अवन्तीखण्ड ६ नागरखण्ड ७ प्रभासखण्ड। इस पुराण में कार्त्तिकेय ने माहेश्वर धर्म्म कहा है।

प्रथम माहेश्वरखण्ड।

प्राय १२०००सहस्र श्लोक—१ केदारमाहात्म्य २ दक्ष यज्ञ कथा ३ शिव लिंग अर्च्चन फल ४ समुद्रमन्थन ५ देवेन्द्र चरित्र ६ पार्वती उपाख्यान एवं विवाह ७कार्त्तिकेय उत्पत्ति ८ तारकासुर युद्ध ९ पाशुपतआख्यान १० चण्डा-

ख्यान ११ दूत प्रवर्त्तन १२ नारद समागम १३ कुमार माहात्म्य १४ पञ्च तीर्थ कथा १५ धर्म नृपाख्यान १६ नदी एवं सागर कीर्त्तन १७इन्द्रद्युम्न कथा १८ नाड़ी जङ्घ कथा १९ पृथिवी प्रादुर्भाव २० दमनक कथा २१ मही सागर संयोग २२ कुमार कथा २३ नाना आख्यान युक्त तारक युद्ध २४ तारक वध २५ पञ्च लिङ्ग निवेश २६ द्वीपाख्यान २७ ऊर्द्ध लोक स्थिति २८ ब्रह्मांड स्थिति एवं परिमाण २९ वर्करेश कथा ३० महाकाल समुद्भव एवं अद्भुत कथा ३१ वासुदेव माहात्म्य ३२ करितीर्थ वर्णन ३३ नाना तीर्थ कथा ३४ गुप्तक्षेत्र कथा ३५ पाण्डवों की पुण्य कथा३६ महाविद्या प्रसाधन ३७तीर्थ यात्रा समाप्ति ३८ अरुणाचल माहात्म्य ३९ सनक एवं ब्रह्मा की कथा ४० गौरी तपस्या एवं तीर्थ निरूपण ४१ महिषासुर के पुत्र का आख्यान एवं उस का अद्भुत वध ४२ शोनाचल में भगवती का नित्य अवस्थान कथन ।

द्वितीय वैष्णवखण्ड—१ भूमि वराह आख्यान रोचक क्षेत्रमहात्म्य २ कमला कथा ३ श्री निवास स्थिति ४ कुलाल आख्यान ५ सुवर्ण मुख कथा ६ नाना ख्यान युक्त भारद्वाज कथा ७ मतङ्गाञ्जन सम्वाद ८ उत्कल में पुरुषोत्तम माहात्म्य ९ मार्कण्डेय कथा १० अम्बरीष कथा ११ इन्द्रद्युम्न आख्यान १२ विद्युनति कथा १३ जैमिनि कथा १४ नारद कथा १५ नीलकण्ठ आख्यान १६ नृसिंह वर्णन १७ राजा की अश्वमेध कथा एवं ब्रह्मलोक गति १८ रथयात्रा विधि एवं जन्म और स्नान यात्रा विधि १९ दक्षिणा मूर्त्ति आख्यान २० गुण्डिचा आख्यान २१ रथ रक्षा विधान २२ शयनोत्सव वर्णन २३ संश्रोक्त श्वेतोपाख्यान २४ शक्रोत्सव २५ दोलोत्सव २६ भगवान का सांवत्सरिकव्रत कथन २७ विष्णु पूजा २८ मोक्षसाधन मत्प्रोक्त नाना योग निरूपण २९ दशावतार कथा ३० स्नानादि कीर्त्तन ३१ वदरिका माहात्म्य ३२ वैनतेय शिला जात अग्न्यादि तीर्थ माहात्म्य ३३ भगवान के वास का कारण कपाल मोचन तीर्थ कथा ३४ पञ्च धारा तीर्थ कथा ३५ मेरु संस्थापन ३६ कार्त्तिक माहात्म्य में मदालसा माहात्म्य ३७ धूम्र कोष आख्यान ३८ कार्त्तिक मास का दिन कृत्य ३९ भीष्मपञ्चक व्रत आख्यान ४० तीर्थ माहात्म्य प्रसङ्ग से स्नान विधान ४१ पुत्रादि कीर्तन एवं मालाधार कथा और पञ्चामृत स्नान एवं घण्टा वादनादि फल ४२ नाना पुष्प द्वारा अर्चन फल ४३ तुलसीदल से अर्चन फल ४४ नैवेद्य माहात्म्य ४५ हरिवास वर्णन ४६ एकादशी एवं जागरण माहात्म्य ४७ मत्स्योत्सव विधान ४८ नाम माहात्म्य ४९ ध्यानादिपु

कथा ५० मथुरा तीर्थ माहात्म्य ५१ द्वादश वन माहात्म्य ५२ श्रीमद्भागवत माहात्म्य ५३ वज्र शाण्डिल्य सम्वाद ५४ अन्तर्लीला कथन और श्रीनाथ की-शवदेवादि विग्रह स्थापन ५५ माघ में स्नान दान जप माहात्म्य और नानाख्यान ५६ वैशाख माहात्म्य ५७ शय्या दान फल ५८ जल दान फल ५९ कामाख्या वर्णन ६० श्रुतदेवचरित्र ६१ व्याध उपाख्यान ६२ अक्षय तृतीयादि विशेष पुण्य कीर्तन ६३ अयोध्या माहात्म्य चक्र ब्रह्मतीर्थ प्रसङ्ग ऋण प्रति विमोच कथा आधार सहस्र एवं स्वर्गद्वार चंद्रहरि और धर्महरि वर्णन ६४ स्वर्ण वृष्टि आख्यान ६५ तिलद्वार सहित सरयू मिलन कथा ६६ सीताकुंड कथा ६७ गुप्त हरि कथा ६८ सरयू और घर्घरा आख्यान ६९ गोप्रभाव ७० दुग्धोद कथा ७१ गुरु कुण्डादि पञ्चतीर्थ कथा ७२ घोषार्कादि त्रयोदश तीर्थ वर्णन ७३ गयाकूप माहात्म्य ७४ माण्डव्य आश्रम और पूर्व तीर्थ वर्णन ७५ अजितादि मानसादि असंख्य तीर्थ वर्णन ।

तृतीय ब्रह्मखण्ड—१ सेतुमाहात्म्य प्रसङ्ग से स्नान एवं दर्शन जन्य फल कथन २ गालव तपस्या ३ राक्षसाख्यान ४ चक्र तीर्थ माहात्म्य ५ देवीपतन कथा ६ वैताल तीर्थ माहात्म्य ७ पाप नाशादि तीर्थकथन ८ मङ्गलादि तीर्थ माहात्म्य ९ ब्रह्मकुण्ड वर्णन १० हनुमत् कुण्ड महिमा ११ अगस्त्य तीर्थ फल १२ राम तीर्थ कथन १३ लक्ष्मी तीर्थ निरूपण १४ शंखादि तीर्थ महिमा १५ साध्यमृत् तीर्थ महिमा १६ धनुष्कोट्यादि तीर्थ महिमा १७ क्षीरकुण्डादि माहात्म्य १८ गायत्र्यादि तीर्थ माहात्म्य १९ रामनाथ महिमा एवं तत्वज्ञानोपदेश २० सेतु यात्राभिधान २१ धर्मारण्य माहात्म्य एवं तत्स्थान सम्भूति और पुण्य कथा २२ कर्म्म सिद्धि आख्यान २३ ऋषिवंश २४ अप्सरातीर्थ माहात्म्य २५ वर्ण एवं आश्रम धर्म और तत्व निरूपण २६ देवस्थान विभाग २७ बकुलार्क कथा २८ छत्रा नन्दा शान्ता श्रीमाता एवं मतङ्गिनी देवी की अवस्थिति २९ इन्द्रेश्वरादि माहात्म्य ३० द्वारकादि निरूपण ३१ लोहासुर आख्यान ३२ गङ्गाकूप निरूपण ३३ श्रीरामचरित्र ३४ सत्य मन्दिर वर्णन ३५ जीर्ण मन्दिरादि उद्धार कथा ३६ शासन प्रतिपादन ३७ जातिभेद कथन ३८ स्मृतिधर्म्म निरूपण ३९ नानाख्यान से वैष्णवधर्म्म निरूपण ४० चातुर्मास्य सकल धर्म्म निरूपण ४१ दान व्रत महिमा ४२ तपस्या पूजा एवं सच्छ्रत कथन ४३ प्रकृति आख्यान ४४ शालग्राम निरूपण ४५ तारकासुर वध उपाय ४६ लक्ष्मी अर्चन एवं महिमा ४७ विष्णु को शाप से

हरत्व प्राप्ति एवं पार्वती का अनुनय ४८ महादेव का ताण्डव नृत्य राम नाम निरूपण ४९ हरलिङ्ग पतन ५० जवन कथा ५१ पार्वती जन्म और चरित्र ५२ तारक बध ५३ प्रणव ऐश्वर्य्य कथन ५४ तारक चरित्र ५५ दक्ष यज्ञ समाप्ति ५६ द्वादश अक्षर निरूपण ५७ ज्ञान योग आख्यान ५८ द्वादश आदित्य महिमा ५९ श्रावणादि पुण्य कथा।

तृतीय ब्रह्मखण्डउत्तरभाग—१ शिव का अद्भुत माहात्म्य २ पञ्चाक्ष महिमा ३ गोकर्ण महिमा ४ शिवरात्रि महिमा ५ प्रदोष व्रत कीर्तन ६ सोमवार व्रत ७ सीमन्तिनी कथा ८ भद्रायु उत्पत्ति कथन ९ सदाचार १० शिव धर्म कथा ११ भद्रायु विवाह एवं महिमा १२ भस्म माहात्म्य १३ शबराख्यान १४ उमा माहेश्वर व्रत १५ रुद्राक्ष माहात्म्य १६ रुद्राध्याय माहात्म्य श्रवणादि पुण्य कथन।

चतुर्थ काशीखंड। विन्ध्यनारद सम्वाद—१ सत्यलोक प्रभाव २ अगस्त्याश्रम में देवता सकल का आगमन ३ पतिव्रता चरित्र ४ तीर्थयात्रा प्रशंसा ५ सप्तपुरी आख्यान ६ यमपुरी निरूपण ७ शिवशर्म्मा को ध्रुवलोक इन्द्रलोक अग्निलोक प्राप्ति ८ अग्नि उद्भव ९ क्रव्याद वरुण सम्भव १० गन्धवती अलकापुरी एवं ईश्वरी का उद्भव और चंद्र मङ्गल बुध एवं रवि आदि लोक का उद्भव ११ सप्तऋषि एवं ध्रुवलोक का वर्णन १२ ध्रुवलोक की पुण्यकथा १३ सत्यलोक निरूपण १४ स्कन्ध और अगस्त्य का आलाप १५ मणिकर्णिका का उद्भव १६ गङ्गा का प्रभाव एवं सहस्रनाम १७ वारानसी प्रशंसा १८ भैरव आविर्भाव १९ दण्डपाणि एवं ज्ञानरवि का उद्भव २० कलावती आख्यान २१ सदाचार निरूपण २२ ब्रह्मचारि कथा २३ स्त्रीलक्षण कथन २४ कृत्याकृत्य निर्देश २५ अविमुक्तेश्वर वर्णन २६ गृहस्थ एवं योगि धर्म २७ कालज्ञान २८ दिवोदास कथा २९ काशीवर्णन ३० योगि चर्य्या लोलार्क ३१ शाम्बार्क कथा ३२ द्रुपदार्क एवं तार्क्ष तीर्थ कथा ३३ अरुणार्क का उदय ३४ दशाश्वमेध आख्यान ३५ मन्दराचल से गणपति की माया प्रकाश ३६ पिशाच मोचन आख्यान ३७ गणेश प्रेषण ३८ गणपति का आगमन और माया प्रकाश ३९ पृथिवी से माया का प्रादुर्भाव ४० विष्णुमाया का विस्तार ४१ दिवोदास विमोचन ४२ पञ्च नदोत्पत्ति ४३ बिन्दुमाधव सम्भव ४४ वैष्णव तीर्थ आख्यान ४५ महादेव का काशी में आगमन ४६ जैगीषव्य के सहित मद्गेश का आख्यान ४७ शिवक्षेत्र आख्यान ४८ वान्दुकेश्वर एवं व्याघ्रेश्वर का उद्भव

४९ शैलेश्वर एवं कृत्तिबास का उद्भव ५० देवता सकल का अधिष्टान ५१ दु-र्गासुर का पराक्रम ५२ दुर्गाविजय ५३ ऊंकारेश्वर वर्णन ५४ ऊङ्कार माहात्म्य ५५ त्रिलोचन समुद्भव ५६ केदार आख्यान ५७ धर्मेश्वर कथा ५८ वीरेश्वर आख्यान ५९ गङ्गा महात्म्य कीर्त्तन ६० विश्वकर्मेश्वर महिमा ६१ दक्ष य-ज्ञोद्भव ६२ सतीश्वर ऐवं अमृतेश्वर उपाख्यान ६३ पराशर भुजस्तम्भ ६४ क्षेत्र-तीर्थ समूह वर्णन ६५ मुक्ति मण्डप कथा ६६ विश्वेश्वर विभव ६७ यात्रा परिक्रम ।

पञ्चम अवन्तीखण्ड—१ महाकाल यवन का आख्यान २ ब्रह्मशीर्षच्छेद ३ प्रायश्चित विधि ४ अग्नि उत्पत्ति एवं आगमन ५ देवदत्त ६ नाना पाप नाशन शिवस्तोत्र ७ कपाल मोचन आख्यन एवं महाकाल वन स्थिति ८ कर्णखलेश तीर्थ आख्यान ९ अप्सराकुण्ड कथा १० स्वर्ग में रुद्रकुंड उपाख्यान ११ कुण्डुड़वेश एवं मर्कटेश्वर तीर्थ वर्णन १२ स्वर्गद्वार चतुः सिंधु शंकरांक गन्धवती एवं दशाश्वमेध कालांश तीर्थ वर्णन १३ पिशाचकादि यात्रा १४ ह-नूमान एवं यमेश्वर वर्णन १५ महाकालेश्वर यात्रा १६ वाल्मीकेश्वर तीर्थ १७ भेषजाख्य शुक्र तीर्थ कुशस्थली प्रदक्षिण १८ अक्रूर मन्दाकिनी कपाल चन्द्रार्क वैभव करभेश लड्डुकेशादि तीर्थ वर्णन १९ मार्कण्डेश्वर २० यज्ञवा-पी २१ सोमेश २२ नरकान्तक २३ केदारेश्वर २४ रामेश्वर २५ सौभाग्येश्वर २६ नरार्क २७ केशार्क २८ शक्तिभेद २९ स्वर्णाक्षर सुख ३० ओङ्कारेश्वरादि तीर्थ वर्णन ३१ अन्धक स्तुति कीर्त्तन ३२ कालारण्यलिङ्ग संख्या ३३ स्वर्णश्रृङ्ग ३४ कुशस्थली ३५ अवन्तयाख्य ३६ उज्जयिनी ३७ पद्मावती ३८ कूर्महती ३९ रमावती नामक तीर्थ उपाख्यान ४० विशाला एवं प्रतिकल्प ४१ ज्वरशा-न्तिक तीर्थ कथन ४२ शिप्रा स्नानादि फल ४३ नाग कृत शिव स्तुति ४४ हिरण्याक्ष वधाख्यान ४५ सुन्दर कुंड ४६ नीलगङ्गा ४७ पुष्कर ४८ विन्ध्यवा-सनी ४९ पुरुषोत्तम ५० अविनाश ५१ अघनाशन ५२ गोमती ५३ वामन एवं कुंडतीर्थ वर्णन ५४ विष्णुसहस्रनाम ५५ कालभैरव तीर्थ वीरेश्वर सरोवर आख्यान ५६ नागपञ्चमी में नृसिंह महिमा वर्णन ५७ जयन्तिका कुठारेश्वर यात्रा ५८ देवसाधक और ५९ कर्कराज ६० विघ्नेशादि सुरोहण तीर्थ विवरण ६१ रुद्रकुंडादि बहु तीर्थ निरूपण ६२ अष्टतीर्थ निरूपण ६३ रेवामाहात्म्य ६४ धर्मपुत्र का वैराग्य वशतः मार्कण्डेय संगम ६५ प्रागलय उपाख्यान ६६ अमृता कीर्त्तन ६७ प्रतिकल्प में नर्मदा वर्णन ६८ आर्यस्तव ६९ नर्मदास्तव ७०

कालराचि कथा ७१ महादेव स्तुति ७२ पृथक् २ कल्प को अद्भुत कथा ७३ विशल्याख्यान ७४ जालेश्वर कथा ७५ गौरीव्रत ७६ त्रिपुर दहन कथा ७७ देहपात विधान ७८ कावेरी संगम ७९ दारुतीर्थ ब्रह्माभिन्न ईश्वर कथा ८० अग्नि ८१ रवि ८२ मेघनाद ८३ हिदारुक ८४ देव ८५ नर्मदेश्वर ८६ कपिलाख्य ८७ करञ्जक ८८ कुंडलेश्वर ८९ पिप्पलाद और ९० विमलेश्वरादि तीर्थ कथन ९१ शचीहरण आख्यान ९२ मन्दक बध ९३ शूलभेद उद्भव ९४ पृथक् दान धर्म्म कथन ९५ दीर्घ तापस आख्यान ९६ ऋष्यशृङ्ग कथा ९७ चित्रसेन कथा ९८ काशीराज मोक्षण ९९ देवशिला आख्यान १०० शवरी चरित्र १०१ व्याधाख्यान १०२ पुष्करिण्यर्क १०३ तापितेश्वर १०४ शक्र १०५ करोटीक १०६ कुमारेश १०७ अगस्त्येश १०८ मातृज १०९ लोकेश ११० धनदेश १११ मङ्गलेश ११२ कामज ११३ नागेश ११४ गोपार ११५ गौतम ११६ शंख चूड़ज ११७ नारदेश ११८ नन्दिकेश ११९ वरुणेश्वर १२० दधिस्कन्ध १२१ हनुमन्तेश्वर १२२ रामेश्वर १२३ सोमेश १२४ पिङ्गलेश्वर १२५ ऋणमोच १२६ कपिलेश्वर १२७ पूतिकेश्वर १२८ जलेशय १२९ चंडार्क १३० यम १३१ कलहडोश १३२ नादिक १३३ नारायण १३४ कोटीश्वर १३५ व्यास १३६ प्रभासिका १३७ नागेश्वर १३८ संकर्षण १३९ मन्मथेश्वर १४० एरंडी संगम १४१ सुवर्णशील १४२ वारञ्ज १४३ कामद १४४ भांडीर १४५ वाह्निनीभव १४६ चक्र १४७ धौतपाप १४८ स्कान्द १४९ आंगिरस १५० कोटि १५१ अयोनि १५२ अंगार १५३ त्रिलोचन १५४ इन्द्रेश १५५ जम्बुकेश १५६ सोमेश १५७ कोहनाशक १५८ नार्म्मद १५९ आर्क १६० आग्नेय १६१ भार्गवेश्वर १६२ ब्राह्म १६३ देव १६४ भागेश १६५ आदिवाराह १६६ रामेश १६७ सिद्धेश १६८ आहल्य १६९ कङ्कटेश्वर १७० शाक्र १७१ सौम्य १७२ नान्देश १७३ तापेश १७४ रुक्मिणी भव १७५ योजनेश १७६ वराहेश १७७ द्वादशी तीर्थ १७८ शिव १७९ सिद्धेश १८० मङ्गलेश्वर १८१ लिङ्ग वराह १८२ कुंडेश १८३ श्वेतवाराह १८४ भार्गवेश १८५ रवीश्वर १८६ शुक्लादि १८७ हुङ्कारस्वामि १८८ संगमेश १८९ नरकेश १९० मोक्ष १९१ सार्प १९२ गोपक १९३ नाग १९४ शांव १९५ सिद्धेश १९६ मार्कंड १९७ अक्रूर १९८ कामोद १९९ शूलारोप २०० मांडव्य २०१ गोपकेश्वर २०२ कपिलेश २०३ पिंगलेश २०४ भूतेश २०५ गांग २०६ गौतम २०७ आश्वमेध २०८ भृगुकच्छ २०९ केदारेश्वर २१० कणखलेश २११ जालेश्वर २१२ शालग्राम २१३

वराह २१४ चन्द्रप्रभास २१५ आदित्य २१६ श्रीपति २१७ हंसक २१८ मूल स्थान २१९ शूलेश २२० आग्नेय एवं चित्रदैवक २२१ शिखीश्वर २२२ कोटि २२३ दशकन्य २२४ सुवर्णक २२५ ऋणमोच २२६ भारभूति २२७ पुंड्र २२८ सुण्डिस २२९ आमलेश्वर २३० कपालेश्वर २३१ शृङ्गेरण्डीभव २३२ कोटी २३३ लोटनेश्वर तीर्थ विवरण २३४ फलश्रुति कथन २३५ दमि जङ्गल माहात्म्य रोहिताश्व कथा २३६ धुन्धुमार उपाख्यान २३७ धुन्धुमार वधोपाय २३८ धुन्धुमार वध कथन २३९ चित्रवह उद्भव एवं २४० महिमा कथन २४१ चंडीश प्रभाव २४२ रतीश्वर वर्णन और केदारेश्वर वर्णन २४३ लक्ष तीर्थ कथन २४४ विष्णुपदी उद्भव २४५ मुखार२४६ च्यवनान्ध २४७ ब्रह्मा सरोवर २४८ चक्र २४९ ललिता २५० बहु गोमख २५१ रुद्रावर्त्त २५२ मार्कंड २५३ रावणेश्वर २५४ शुद्धपट २५५ देवाम्बु २५६ प्रेत २५७ जिह्वोद २५८ सम्भूति और १५९ शिवोद भेद तीर्थ वर्णन २६० फलश्रुति ।

षष्टनागरखंड—१ लिंगोत्पत्ति आख्यान २ हरिश्चन्द्र कथा ३ विश्वामित्र माहात्म्य ४ त्रिशंकु स्वर्ग गति ५ हाटकेश्वर माहात्म्य ६ वृत्रासुर वध ७ नागबिल्व और ८ शंख तीर्थ कथा ९ अचलेश्वर वर्णन १० चमत्कार पुराख्यान ११ गयशीर्ष १२ बालसख्य १३ बालमंड १४ मृगाह्वय १५ विष्णुपाद १६ गोकर्ण १७ युगरूप १८ समाश्रय १९ सिद्धेश्वर २० नाग सरोवर २१ सप्तार्षेय २२ अगस्त्य २३ भ्रूणगर्तनेश २४ भेष्म औ इन्दुवैर और अर्क २५ सार्मिष्ट २६ शोभनार्थ औ २७ दौगर्भमान अर्जकेश्वर तीर्थ वर्णन २८ जमदग्नि उपाख्यान २९ नैः क्षत्रिय कथा ३० राम ह्रद ३१ नागपुर ३२ षड्लिङ्ग ३३ यज्ञभू ३४ मुंडिरादि ३५ त्रिकार्क ३६ सती परियागेश ३७ यागेश वालिखिल्य और ३८ गाडुर तीर्थ कथन ३९ लक्ष्मी सप्तविंशति शापकथन ४० सोमप्रसाद कथन ४१ अम्बा वृद्ध ४२ पादुकाख्य ४३ आग्नेय ४४ ब्रह्मकुंड ४५ गोमुख ४६ लोहयष्टाख्य ४७ आजावालेश्वरी ४८ शालेश्वरी ४९ राजवापी ५० रामेश्वर ५१ लक्ष्मणेश्वर ५२ कुशेश्वर औ ५३ लवेश्वर तीर्थ वर्णन ५४ लिङ्ग उपाख्यान ५५ अष्टषष्टि समाख्यान ५६ दमन्ती एवं त्रिजातक उपाख्यान ५७ रेवती ५८ भट्टिका तीर्थ ५९ क्षेमङ्करी ६० केदार ६१ शुक्ल ६२ मुखारक औ ६३ सत्यसन्धेश्वर तीर्थ आख्यान ६४ कर्णोत्पला नदी कथा ६५ अटेश्वर ६६ याज्ञवल्क्य ६७ गौरी और ६८ गणेश तीर्थ कथा ६९ वास्तुपदा आख्यान ७० अजा ग्रह कथा ७१ सौभाग्यादि कथा ७२ शूलेश्वर कथा ७३ धर्मराज कथा ७४ मिष्टा-

म्रदेश्वर आख्यान ७५ गाणपत्य त्रय कथा ७६ जावालि चरित्र ७७ मकरेश्वर कथा ७८ कालेश्वरी एवं ७९ अन्धकोपाख्यान ८० अप्सराकुंड उपाख्यान ८१ पुष्पादित्य उपाख्यान ८२ रोहिताश्व उपाख्यान ८३ नागरोत्पत्ति कीर्तन ८४ भार्गवचरित्र ८५ विश्वामित्र चरित्र ८६ सारस्वत चरित्र ८७ पैप्पलाद ८८ कंसारीश एवं ८९ पौण्ड तीर्थ वर्णन ९० सावित्राख्यान सहित ब्रह्मा यज्ञ चरित्र एवं रैवत भर्तृ यज्ञाख्यान कथा ९१ मुख्य तीर्थ निरीक्षण ९२ कौरव क्षेत्र ०३ हाटकेश क्षेत्र ९४ एवं प्रभास क्षेत्र उपाख्यान ९५ पौष्कर क्षेत्र ९६ नैमिष क्षेत्र एवं ९७ धर्म्म अरण्य क्षेत्र ९८ वारानसी ९९ द्वारका एवं १०० अवन्ती पुरी कथन १०१ वृन्दावन १०२ खाण्डवारण्य एवं १०३ अद्वैताख्य पुरी कथन १०४ काल्प १०५ शालग्राम एवं १०६ नन्दग्राम का उपाख्यान १०७ असि १०८ शुक्ल एवं १०९ पितृसंज्ञ तीन तीर्थ का वर्णन ११० अर्बुद १११ रैवत एवं ११२ शैत्र इन तीन पर्वतों का उपाख्यान ११३ गंगा ११४ नर्मदा एवं ११५ सरस्वती इन तीन नदियों का उपाख्यान ११६ कुपिका औ शङ्ख ११७ अमरक एवं बालमण्डन इन चार तीर्थ का हाटकेश्वर तीर्थ क्षेत्र के समान फल कथम ११८ साम्बादित्य ११९ श्राद्धकल्प १२० युधिष्ठिर १२१ आन्धक १२२ जलशायि १२३ चातुर्मास्य एवं १२४ अशून्य शयन व्रत कथन १२५ मङ्कलेश १२६ शिवरात्रि १२७ तुला पुरुष दान १२८ पृथ्वी दान कथन १२९ बालकेश्वर १३० कपाल मोचनेश्वर १३१ पाप पीड़ १३२ सप्तलिंग वर्णन १३३ युगपरिमाणादि कथन १३४ निंबेशशाक १३५ भार्य्याख्या कथन १३६ एकादश रुद्र कथन १३७ दान माहात्म्य १३८ द्वादश आदित्य उपाख्यान।

सप्तम प्रभास खण्ड—१ सोमेश वर्णन २ विश्वेश वर्णन ३ अर्कस्थल वर्णन ४ सिद्धेश्वरादि का पृथक उपाख्यान ५ अग्नितीर्थ ६ कपर्द्दीश तीर्थ वर्णन ७ भीम ८ भैरव ९ चण्डीश १० भास्कर ११ अंगारकेश्वर १२ बुध बृहस्पति मङ्गल चन्द्र शनि १३ राहु केतु एवं १४ शिव स्वरूप मूर्ति वर्णन १५ सिद्धेश्वरादि पञ्चरुद्र अवस्थिति वर्णन १६ वरारोहा १७ अजापाला १८ मङ्गला १९ ललिता एवं ईश्वरी २० लक्ष्मीश २१ वाडवेश २२ अर्घीश २३ कामेश्वर २४ गौरीश्वर २५ वरुणेश्वर २६ उशीष २७ गणेश्वर २८ कुमारेश २९ शाकल्य ३० शकल एवं उतंक ३१ गौतम ३२ दैत्यघ्नेश और ३३ चक्रतीर्थ संनिहितार्थ कथन ३४ भूतेशादि लिङ्ग कथन ३५ आदि नारायण कथन ३६

चक्र ध्राखज्ञान ३७ मास्वादित्य कथा ३८ कराटक शोधिनी कथा ३९ सन्निषघ्नी कथा ४० कपालोश्वर कथा ४१ कोटीशकथा ४२ बालब्रह्म कथा ४३ नरकेश ४४ सस्वर्तेश ४५ एवं निधीश्वर कथा ४६ बलभद्र कथा ४७ गङ्गा कथा एवं गणेश कथा ४८ जाम्बवती कथा ४९ पाण्डुकूप सत्कथा ५० शतमेध लक्षमेध एवं कोटिमेध कथा ५१ दुर्वासार्क ५२ यदुस्थान एवं ५३ हिरण्यासंगम कथा ५४ नगरार्क ५५ श्रीकृष्ण ५६ संकर्षण एवं समुद्रकथा ५७ कुमारी चेत्र पाल एवं ५८ ब्रह्मेश की पृथक कथा ५९ पिङ्गला ६० संगमेश्वर ६१ शंकरार्क एवं ६२ घटेश की कथा ६३ ऋषितीर्थ ६४ नन्दार्क तीर्थ ६५ चितयकूप कीर्तन ६६ शशपान ६७ पर्णार्क और ६८ अंशुमती की अद्भुत कथा ६९ वाराह ७० स्वामि वृत्तान्त ७१ छाया लिङ्गाख्य एवं ७२ गुल्फ कथा कनकनन्दा ७४ कुन्ती एवं ७५ गंगेश कथा ७६ चमसोद्भेद ७७ विदुर एवं ७८ त्रिलोकेश कथा ७९ मङ्कनेश ८० त्रैपुरेश और ८१ षण्ड तीर्थ कथा ८२ सूर्य्य प्राची ८३ त्रपुचण एवं ८४ उमानाथ कथा ८५ भूङ्गार ८६ मूलस्थल एवं ८७ च्यवनाकेश कथा ८८ अजपालेश ८९ वालार्क एवं ९० कुबेरस्थल कथा ९१ ऋषितोया कथा ९२ संगालेश्वर कीर्तन ९३ नारदादित्य कथन ९४ नारायण निरूपण ९५ तप्तकुंड माहात्म्य ९६ मूलचण्डीश वर्णन ९७ चतुर्वक्त्र गणाध्यक्ष एवं ९८ कलम्बेश्वर कथा ९९ गोपाल स्वामि १०० वकुल स्वामि एवं १०१ मारुती कथा १०२ चेमार्क १०३ उन्नत १०४ विघ्नेश एवं १०५ जल स्वामि कथा १०६ कालमेघ १०७ रुक्मिणी १०८ उर्व्वशीश्वर एवं १०९ भद्रा कथा ११० शङ्खावर्त्त १११ इक्षुतीर्थ ११२ गोष्पद एवं अच्युत गृह कथा ११३ जालेश्वर ११४ हुङ्कार कूप एवं ११५ चण्डीश कथा ११६ आशापुर विघ्नेश एवं ११७ कल्लाकुण्ड कथा ११८ कपिलेश्वर कथा ११९ जरद्गव शिव कथा १२० नल १२१ कर्कोट और १२२ हाटकेश्वर कथा १२३ नारदेश १२४ यन्त्रभूषा एवं दुर्गकूट एवं गणेश कथा १२५ सुपर्णलाख्य १२६ भैरवी एवं १२७ भल्लतीर्थ कथा १२८ कर्द्दमाल कीर्तन १२९ गुप्त सोमेश्वर कीर्तन १३० बहु स्वर्णेश १३१ शृङ्गेश एवं १३२ कोटीश्वर कथा १३३ मार्कण्डेश्वर १३४ कोटीश्वर एवं १३५ दामोदर गृह कथा १३६ स्वर्णरेखा १३७ ब्रह्मकुण्ड १३८ कुन्तीश्वर १३९ भीमेश्वर १४० ब्रह्मायर्थ चेत्र मृगाकुण्ड एवं १४१ सर्वस्व कथा १४२ विघ्नेश १४३ गंगेश एवं १४४ रैवत कथा १४५ अर्बुदेश्वर कथा १४६ अचलेश्वर कथा १४७ नागतीर्थ कथा १४८ वशिष्ठाश्रम वर्ण १४९ भद्रकर्ण माहात्मय १५० त्रिनेत्र माहात्म्य

१५१ केदारमाहात्म्य १५२ तीर्थागमन कीर्तन १५३ कोटीश्वर १५४ रूपतीर्थ एवं १५५ हृषीकेश कथा १५६ सिद्धेश १५७ शुक्रेश्वर एवं १५८ मणिकर्णिकेश कीर्तन १५९ पंगु १६० यमएवं १६१ वाराह तीर्थ वर्णन १६२ चन्द्रप्रभास १६३ पिण्डोद १६४ श्रीमाता १६५ शुक्ल १६६ एवंकात्यायनी तीर्थ माहात्म्य १६७ पिंडारक माहात्म्य १६८ कनखल १६९ चक्र एवं १७० मानुषतीर्थ माहात्म्य १७१ कपिलाग्नि और १७२ रक्तानुबन्ध तीर्थ कथा १७३ गणेश १७४ पार्थेश्वरयात्रा १७५ सुहलयात्रा कथन १७६ चण्डीस्थान १७७ नागोद्भव शिव कुण्ड एवं १७८ महेश कथा १७९ कामेश्वर एवं १८० मार्कण्डेय उत्पत्तिकथा १८१ उद्दालकेश एवं १८२ सिद्धेश गत तीर्थ कथा १८३ श्री देवमाता उत्पत्ति १८४ व्यास एवं १८५ गौतम तीर्थ कथा १८६ कुल सान्ता माहात्म्य १८७ राम एवं कोटि तीर्थ कथा १८८ चन्द्रोद्भव १८९ ईशानशृङ्ग १९० ब्रह्मस्थानोद्भव १९१ त्रिपुष्कर १९२ रुद्र हृद एवं १९३ गुहेश्वर कथा १९४ अविमुक्त माहात्म्य १९५ उमा माहेश्वर माहात्म्य १९६ महौजस प्रभाव १९७ जम्बु तीर्थ वर्णन १९८ गङ्गाधर एवं मिश्र कथा १९९ फलश्रुति २०० द्वारका माहात्म्य प्रसंग चन्द्र शर्म्म कथा २०१ एकादशी जागरणादि व्रत २०२ महा द्वादशी कथा २०३ प्रह्लाद एवं ऋषि समागम २०४ दुर्वासा उपाख्यान २०५ यात्रा उपक्रम कीर्त्तन २०६ गोमती उत्पत्ति कथन २०७ गोमती स्नादि फल २०८ चक्रतीर्थ माहात्म्य २०९ गोमती समुद्र सङ्गम २१० दुःमनकादि कुण्डाख्यान २११ नृग तीर्थ कथा २१२ गो प्रचार कथा १२३ गोपी द्वारका गमन २१४ गोपीसरोवर आख्यान १२५ ब्रह्मतीर्थादि कीर्त्तन २१६ नानाख्यान युत पञ्च नदी आख्यान २१७ शिवलिङ्ग २१८ महातीर्थ एवं २१९ कृष्ण पूजादि कीर्त्तन २२० त्रिविक्रम मूर्त्ति कथा २२१ दुर्वासा एवं श्री कृष्ण कथन २२२ कुशदैत्य बधोपाख्यान २२३ एवं प्रतिमा आख्यान एवं २२४ विशेष पूजा फल २२५ गोमती एवं द्वारका में तीर्थ आगमन कीर्त्तन २२६ कृष्ण मन्दिर दर्शन फल २२७ द्वारावती अभिषेक २२८ द्वारका तीर्थ वास कथा २२९ द्वारका पुर कीर्त्तन ।

फलश्रुति—यह पुराण लिख कर हैमशूल युक्त ब्राह्मण को दान करने से शिव लोक प्राप्ति होती है ।

चतुर्दश वामन पुराण ।

पूर्व्व उत्तर २ भाग १०००० सहस्र श्लोक । उत्तर भाग वृहत्वामन संज्ञक

इस पुराण में त्रिविक्रम चरित्र बहुविध वर्णित है कूर्म्म कल्प का आख्यान।

प्रथम पूर्व भाग—१ पुराणप्रश्न २ ब्रह्मा शिरच्छेद कथा ३ कपाल मोचन आख्यान ४ दक्ष यज्ञ बिनाश ५ महादेव का काल रूप धारण ६ कामदेव दहन ७ प्रल्हाद नारायण का युद्ध एवं देवता असुर का युद्ध एवं सूर्य्य की कथा ८ भुवनकोश वर्णन १० काम्य व्रत आख्यान ११ दुर्गाचरित्र १२ तपती चरित्र १३ कुरुक्षेत्र वर्णन १४ सरोवर माहात्म्य १५ पार्वती जन्म तपस्या एवं विवाह कथन १६ गौरी उपाख्यान १७ कौशिकी उपाख्यान १८ कुमार चरित्र १९ अन्धक बध उपाख्यान २० साध्य उपाख्यान २१ जावालि चरित्र २२ अरजा कथा २३ अन्धक युद्ध एवं गण कथन २४ मरुत जन्म कथा २५ बलिचरित्र २६ लक्ष्मी चरित्र २७ त्रिविक्रम चरित्र २८ प्रह्लाद की पूर्व में तीर्थ यात्रा २९ धुन्धुचरित्र ३० प्रेत उपाख्यान ३१ नक्षत्र पुरुष आख्यान ३२ श्रीदाम चरित्र ३३ त्रिविक्रम चरित्र ३४ ब्रह्म उक्तस्तव ३५ प्रह्लाद एवं बलि सम्बाद ३६ सुतल में हरि प्रशंसा कथन॥

द्वितीय उत्तरभाग—१ माहेश्वरी संहिता श्रीकृष्ण के भक्ति का कीर्तन २ भागवती संहिता अवतार कथा ३ सौरी संहिता सूर्य्य महिमा कथन ४ गाणेश्वरी संहिता गणेश महिमादि कथन। यह संहिता चतुष्टय के प्रत्येक संहिता में एक सहस्र श्लोक॥

फलश्रुति—यह पुराण लिख कर कार्तिकी संक्रान्ति को घृत धेनु के साथ वेदज्ञ ब्राह्मण को दान करने से नरक भोग से मुक्ति और स्वर्ग लाभ होता है एवं भोगादिक और देहान्त में विष्णु के परम पद को प्राप्ति होती है यह पुराण पाठ किम्बा श्रवण करने से परम गति प्राप्ति होती है॥

पञ्चदश कूर्म्मपुराण।

पूर्व एवं उत्तर २ भाग १७००० सहस्रश्लोक। उत्तरभाग पञ्चपाद में विभक्त लक्ष्मी कल्पचरित्र। इसी कल्प में हरि ने कूर्म्म रूप धारण किया है एवं इन्द्र द्युम्न प्रसंग से धर्म्मार्थ काम मोक्ष का माहात्म्य कहा है॥

प्रथम पूर्वभाग—१ पुराण उपक्रम कथन २ लक्ष्मी इन्द्रद्युम्न सम्बाद ३ कूर्म्म ऋषि गण कथा ४ वर्णाश्रमाचार कथा ५ जगदुत्पत्ति कथा ६ काल संख्या एवं लयान्त में विभु स्तव ७ सर्ग संक्षेप कथा ८ शंकर चरित्र ९ पार्वती सहस्रनाम १० योग निरूपण ११ भृगुवंश आख्यान १२ स्वायम्भुव कथा १३ देवतादि उत्पत्ति १४ दक्ष यज्ञ नाश १५ दक्ष सृष्टि कथा १६ कश्यप

वंश कथन १७ आत्रेय वंश कथन १८ कृष्ण चरित्र १९ मार्कण्डेय कृष्ण सम्वाद २० व्यास पाण्डव की कथा २१ युगधर्म कथा २२ व्यास जैमिनी की कथा २३ वाराणसी माहात्म्य २४ प्रयाग माहात्म्य २५ त्रिलोक वर्णन २६ वेदशाखा निरूपण।

द्वितीय उत्तरभाग—१ ऐश्वरीगीता २ नानाधर्म प्रकाशिका व्यास गीता ३ नानाविध तीर्थ का पृथक् माहात्म्य ४ ब्राह्मीसंहिता ६ भागवती संहिता इस में सकल वर्णन से पृथक् वृत्ति निरूपण है।

उत्तरभाग में प्रथम पाद में ब्राह्मण की सदाचारात्मिका व्यवस्थिति कथन। द्वितीय पाद में क्षत्रिय की वृत्ति निरूपण। तृतीय पाद में वैश्य जाति की चार प्रकार की वृत्ति निरूपण। चतुर्थ पाद में शूद्र की वृत्ति कथन। पञ्चम पाद में वर्णसंकर की वृत्ति कथन।

फलश्रुति—यह पुराण लिख कर भक्ति पूर्वक हेम कूर्म युक्त ब्राह्मण को दान करने से परमागति होती है और श्रवण किम्बा पाठ करने से सर्व्वोत्कृष्ट गति मिलती है॥

षोड़श मत्स्यपुराण।

१४००० सहस्रश्लोक सत्य कल्प कथा—१ व्यास कर्तृक नरसिंह वर्णन २ मनु एवं मत्स्यसम्वाद ३ ब्रह्मांड वर्णन ४ ब्रह्मदेव एवं असुर उत्पत्तिकथन ५ मारुत उत्पत्ति ६ मदन द्वादशी कथा ७ लोकपाल पूजा ८ मन्वन्तर कथन ९ वैश्य राज्याभि वर्णन १० सूर्य्य एवं वैवस्वत की उत्पत्ति ११ बुध का संगम १२ पितृ वंशानु कथन १३ श्राद्धकाल निरूपण १४ पितृतीर्थ प्रचार १५ सोमोत्पत्ति १६ सोमवंश कीर्तन १७ ययाति चरित्र १८ कार्तवीर्य्यचरित्र १९ सृष्टवंश कीर्तन २० भृगुशाप २१ विष्णु का दश मूर्त्ति धारण २२ पुरुवंश कथा २३ हुताशन वंश कथन २४ क्रिया योग कथन २५ पुराण कीर्तन २६ नक्षत्र पुरुष कथन एवं व्रत २७ मार्कण्डेय शयन २८ कृष्णाष्टमी व्रत २९ तड़ाग विधि माहात्म्य ३० पादुकोत्सर्ग ३१ सौभाग्य शयन वर्णन ३२ अगस्त्य व्रत कथन ३३ अनन्त तृतीया ३४ रस कल्यानी व्रत कथा ३५ आनन्दकर व्रत सारस्वत वृत ३७ उपराग अभिषेक ३८ सप्तमास स्नपन वृत कथा ३९ भीम द्वादशी वृत ४० अनङ्ग शयन वृत ४१ अशून्य शयन वृत ४२ अंगारक वृत ४३ सप्तमी सप्तक वृत ४४ विशोक द्वादशी वृत ४५ दशधा मेरुप्रदान वृत ४६ ग्रहशान्ति ४७ ग्रह स्वरूप कथन ४८ शिव चतुर्दशी वृत ४९ सर्वफल त्याग

व्रत ५० सूर्य्यवार व्रत ५१ संक्रान्ति स्नान ५२ विभूति द्वादशी व्रत ५३ षष्टि व्रत माहात्म्य ५४ स्नानविधि क्रम ५५ प्रयाग माहात्म्य ५६ द्वीप एवं लोकानुवर्णन ५७ अन्तरीक्ष और दिशा कथन ५८ ध्रुव माहात्म्य ५९ इन्द्र भवन वर्णन ६० त्रिपुर घातन ६१ पितृ प्रवर माहात्म्य ६१ मन्वन्तर निर्णय ६३ चतुर्युग सम्भूति युगधर्म्म निरूपण ६४ वज्राङ्ग सम्भूति ६५ तारकासुरोत्पत्ति एवं माहात्म्य ६६ ब्रह्म देव अनुकीर्तन ६७ पार्वती सम्भव कथा ६८ शिव तपोवन वर्णन ६९ अनङ्ग देह दाह ७० रतिविलाप ७१ गौरी तपोवन ७२ शिव प्रसादन ७३ पार्वती ऋषि सम्वाद एवं विवाह ७४ कार्तिकेय जन्म औ विजय ७५ तारक वध ७६ नरसिंह वर्णन ७७ पद्मकल्प कथा ७८ अन्धकासुर घातन ७९ बारानसी माहात्म्य ८० नर्म्मदा माहात्म्य ८१ प्रवरानुक्रम ८२ पितृ गाथा कीर्तन ८३ उभयमुखी दान ८४ कृष्णाजिनदान ८५ सावित्र्यु पाख्यान ८६ राजधर्म्म ८७ विविधोत्पात कथन ८८ ग्रह शान्ति कथन ८९ यात्रा निमित्त कथन ९० स्वप्नमङ्गल कीर्तन ९१ वामन माहात्म्य ९२ बराह माहात्म्य ९३ समुद्र मन्थन ९४ कालकूट अभिशान्तन ९५ देवासुर विमर्द्दन ९६ वास्तुविद्या ९७ प्रतिमा लक्षण ९८ देवता स्थापन ९९ प्रासाद लक्षण १०० देवमंडप लक्षण १०१ भविष्य राजा का उद्देश कथन १०२ महादान कथन १०३ कल्प कथा ।

फलश्रुति—यह पुराण लिख कर भक्ति पूर्वक विषुव संक्रान्ति को ब्राह्मण को दान करने से परम पद मिलता है और इस पुराण के पाठ किम्बा श्रवण करने से आयुः कीर्ति कल्याण की वृद्धि एवं हरि भवन प्राप्ति होती है ।

सप्तदशगरुड़पुराण ।

पूर्व एवं उत्तर २ खण्ड में १९००० श्लोक गरुड़ प्रति भगवान ने कहा है इस पुराण में तार्क्ष कल्प की कथा है ।

प्रथम पूर्वखण्ड—१ पुराण उपक्रम वर्णन २ संक्षेप स्वर्ग वर्णन ३ सूर्य्यादि पूजा बिधि ४ दीक्षा विधि ५ लक्ष्मी पूजा प्रकरण ६ नव व्यूह अर्च्चन ७ विष्णु पूजा बिधान ८ वैष्णव पञ्जर ९ योगाध्याय १० विष्णु सहस्र नाम ११ विष्णुध्यान १२ सूर्य्य पूजा १३ मृत्युञ्जयार्च्चन १४ नानामंत्र १५ शिवपूजा १६ गणपूजा १७ गोपालपूजा १८ त्रैलोक्य मोहन श्रीरामार्च्चने १९ विष्णुपूजा एवं पञ्चतत्वपूजा २० चक्रार्चन २१ देवपूजा २२ न्यासादि कथन २३ सन्ध्यादि

उपासना २४ दुर्गार्चन २५ सुरार्चन २६ माहेश्वर पूजा २७ पवित्रा रोपणार्चन २८ मूर्तिध्यान २९ वास्तु प्रमाण ३० प्रासाद लक्षण ३१ सकल देवता प्रतिष्ठा ३२ सकल देवता पृथक् पूजा ३३ अष्टांग योग ३४ दानधर्म्म ३५ प्रायश्चित्त विधि क्रम ३६ द्वीप ईश्वर और नरक वर्णन ३७ सूर्य्य व्यूह कथन ३८ ज्योतिष शास्त्र वर्णन ३९ सामुद्रिक स्वर ज्ञान ४० नवरत्न परीक्षा ४१ तीर्थ माहात्म्य ४२ गयामाहात्म्य ४३ मन्वन्तर पृथक् २ आख्यान ४४ पित्राख्यान ४५ वर्णाधर्म्म ४६ द्रव्यशुद्धि ४७ द्रव्य समर्पण ४८ श्राद्धकथा ४९ विनायक पूजा ५० ग्रहयज्ञ ५१ आश्रम कथा ५२ जननाख्यान एवं प्रशौच ५३ नीतिसार ५४ व्रतोक्ति ५५ सूर्य्यवंश ५६ सोमवंश ५७ हरि अवतार कथन ५८ रामायण ५९ हरिवंश ६० भारताख्यान ६१ आयुर्वेद ६२ निदान ६३ चिकित्सा ६४ द्रव्यगुण ६५ रोगघ्न विष्णु कवच ६६ गरुड़ कवच ६७ त्रिपुर आख्यान ६८ प्रश्न चूड़ामणि ६९ अश्वायुर्वेद ७० ओषधी नाम कथन ७१ व्याकरण शास्त्र ७२ छन्दःशास्त्र ७३ सदाचार ७४ स्नानविधि ७५ वैश्वदेव तर्पण ७६ सन्ध्या ७७ पार्वण कर्म्म ७८ नित्यश्राद्ध ७९ सपिण्डश्राद्ध ८० धर्म्मसार निष्कृति ८१ प्रतिसंक्रम ८२ युगधर्म्म कृतफल ८३ योगशास्त्र ८४ विष्णुभक्ति ८५ भगवत्प्रणाम फल ८६ वैष्णव महात्म्य ८७ नरसिंह स्तव ८८ ज्ञानामृत ८९ गुह्याष्टक स्तव ९० विष्णु अर्चना ९१ वेदान्त सार सांख्य और सिद्धान्तशास्त्र ९२ ब्रह्मज्ञान ९३ आत्मज्ञान ९४ गीतासार एवं फल कथन।

द्वितीय उत्तरखण्ड प्रेत कल्प कथा—१ धर्म्म प्रकटित कारण २ पूर्वयोनि गति कारण ३ दानादिफल ४ और्द्ध देहिक क्रिया ५ यमलोक मार्ग वर्णन ६ षोड़श श्राद्ध फल ७ यममार्ग से निष्कृति कथन ८ धर्म्मराज वैभव ९ प्रेत पीड़ा निर्णय १० प्रेत चिह्न निरूपण ११ प्रेत चरित्र १२ प्रेत कारण १३ प्रेतकृत्य विचार १४ सपिण्डी करण १५ प्रेतत्व मोचण आख्यान १६ विमुक्ति कारण दान १७ प्रेत आवश्यक दान १८ शारीरिक विनिर्द्देश १९ यमलोक वर्णन २० प्रेतत्व उद्धार कथन २१ कर्म्म कर्त्ता निर्णय २२ मृत्यु की पूर्व क्रिया कथन एवं पश्चात् कर्म्म निरूपण २३ षोड़श श्राद्ध कथन २४ स्वर्ग प्राप्ति क्रिया २५ सूतक संख्या २६ नारायण बलिकर्म्म २७ वृषोत्सर्ग माहात्म्य २८ निषिद्ध त्याग २९ अपमृत्यु क्रिया ३० मनुष्य कर्म्म विपाक ३१ कृताकृतत्व विचार ३२ मुक्तिकारण विष्णु ध्यान ३३ स्वर्ग गमन-विहित आख्यान ३४ स्वर्ग सुख निरूपण ३५ भूर्लोक वर्णन ३६ सप्तलोक वर्णन ३७ पञ्चउर्द्ध लोक कथन ३८

ब्रह्माण्ड स्थिति कीर्तन ३९ ब्रह्माण्ड अनेक चरित्र कथन ४० . ब्रह्मजीव निरूपण ४१ आतयन्तिक लय कथन ४२ फलश्रुति निरूपण ।

फलश्रुति—यह पुराण पाठ करने किम्बा श्रवण करने से पाप शमन होता है और लिख कर विषुव संक्रान्ति को सुवर्ण हंस हय युक्त ब्राह्मण को .ान करने से स्वर्ग लाभ होता है ।

अष्टादश ब्रह्माण्डपुराण ।

४ पाद तीन भाग १२००० सहस्रश्लोक प्रथम भाग में—१ प्रक्रिया पाद २ अनुषङ्ग पाद ३ उपोद्यात पाद मध्य भाग ४ उपसंहार पाद शेष भाग इस पुराण में भाविकल्प की कथा है ।

प्रथम भाग प्रक्रिया पाद आरम्भ—१ कृतय समुद्देश २ नैमिषाख्यान ३ हिरण्यगर्भोत्पत्ति ४ लोक कल्पना कथा ॥

द्वितीय अनुषङ्गपाद—१ कल्प मन्वन्तराख्यान कथा २ लोक ज्ञान कथन ३ मानसिक सृष्टि विवरण ४ रुद्र प्रसव विवरण ५ महादेव विभूति वर्णन ६ ऋषिसर्ग वर्णन ७ अग्नि उत्पत्ति विवरण ८ काल सद्भाव वर्णन ९ प्रियव्रत समूह उद्देश १० पृथिवी आयाम एवं विस्तार बर्णन ११ भारतबर्ष वर्णन १२ अन्यवर्ष वर्णन १३ जंव्द्वादि सप्तद्वीप वर्णन १४ अधः एवं उर्द्धलोक विवरण १५ ग्रहाचार १६ आदितय व्यूह विवरण १७ देव ग्रह वर्णन १८ नीलकण्ठाख्यान १९ महादेव वैभव २० अमावश्या कथा २१ युग तत्व निरूपण २२ यज्ञ प्रवर्तन २३ मध्य एवं अन्तय युग की क्रिया एवं सतयुग की प्रजा का लक्षण २४ ऋषि प्रवर बर्णन २५ वेद आख्यान २६ स्वायम्भुव निरूपण २७ शेष मन्वन्तराख्यान २८ पृथिवी दोहन ।

मध्यभाग उपोद्घात पाद—१ सप्तऋषि कथा २ प्रजापति उपाख्यान ३ देवादि उद्भव ४ जय एवं क्रीड़ा ५ मरुत् उतपत्ति कीर्तन ६ काश्यप विवरण ७ ऋषि वंश निरूपण ८ पितृकल्प कथा ९ श्राद्ध कल्प कथा १० वैवस्वतोत्पत्ति ११ वैवस्वत सृष्टि बिविरण १२ मनुपुत्र निर्णय १३ गन्धर्व निरूपण १४ इक्ष्वाकुवंश बिवरण १५ अत्रिवंश विवरण १६ अमावसु अर्चन १७ रजि चरित्र १८ ययाति चरित्र १९ यदुवंश निरुपण २० कार्तवीर्य्य चरित्र २१ जमदग्नि बिवरण २२ वृष्णिवंश विषय २३ सागर उपाख्यान २४ भार्गव चरित्र गय बध २६ समर बिवरण २७ पुनर्वार भार्गव विषय २८ देवासुर

युद्ध में श्रीकृष्ण का आविर्भाव वर्णन २९ शुक्र कार्तृक इन्द्रस्तव ३० विष्णु माहात्म्य विवरण ३१ इलिवंश निरूपण ३२ कलियुग के भविष्य राजागण का चरित्र ॥

अन्तभाग उपसंहार पाद—१ वैवस्वत मन्वन्तर का संक्षेप विवरण २ भविष्य मनु का कर्म चरित्र ३ कल्प प्रलय निर्देश ४ काल परिमाण विवरण ५ परिमाण और लक्षण सहित चतुर्द्दश लोक विवरण ६ नरक एवं विकर्म्म वर्णन ७ मनोमयपुर आख्यान् ८ प्राकृतिक लय विवरण ९ शैवपुर वर्णन १० सत्वादि गुण सम्बन्ध से जीव की गति विवरण ११ अनिर्द्दिष्ट ब्रह्म वर्णन ॥

फलश्रुति—यह पुराण श्रवण किम्वा पाठ करे उसका पाप मोचन होय एवं देवलोक में गति होय यह पुराण लिख कर * स्वर्ण सिंहासनस्थ करके ब्राह्मण को दान करने से ब्रह्मलोक प्राप्ति होती है ॥

---

* इतिहास तिमिर नाशक तीसरा खण्ड में यह सिद्ध किया गया है कि पहले आर्यलोग लिखना न जानते थे किंतु यह भ्रम है पुराणों में प्रायः लिखने का अनेक स्थानों में वर्णन आया है जो इस अनुक्रमणिका से मालूम हुआ होगा और इस का अनेक प्रमाण मैंने कईएक स्थलों में संग्रह किया है इतिहास तिमिरनाशक का भ्रम मूल लेख नीचे लिखा है। अब हमलोग मेक्समूलर साहब के लेखों को माने या पुराण को। यथार्थ में मेक्समूलर को भ्रम हुआ है और उसी को मूल मानकर राजा जी चले हैं तब वह क्यों न भूलें।

"इस का कुछ प्रमाण नहीं मिलता कि इनको लिखना भी आता हो वेद श्रुति स्मृति शास्त्र दर्शन सूक्त ऋच साम वर्ग अध्याय अध्यापक उपाध्याय ग्रंथ पाठ पाठक पठन मनन घोषण इत्यादि सब शब्द जब उन के अर्थ पर ध्यान करो यही गवाही देते हैं कि वेदों के ज़माने में लिखना किसी को नहीं आता था वेद या ब्राह्मण वा सूत्रों में इसका कहीं कुछ ज़िकर नहीं है कोई शब्द ऐसा नहीं कि जिस से इसका इशारा पाया जाय उणादि सूत्र में जो अति प्राचीन व्याकरण है और जिस का ज़िकर पाणिनि ने किया है यदि कोई शब्द ऐसा मिल भी जाता है तो वह पीछे से मिलाया हुआ मालूम होता है [इसी तरह उणादिसूत्र में दीनारः जिनः तिरीटम् स्तूपः इत्यादि शब्द पीछे से लिख दिये हैं दीनारः (Denarious) रूमी शब्द है और जि धातु को जिस से जिन निकला है सायन ने जहां उणादि से लिखा छोड़ दिया है नृसिंह ने भी अपनी स्वरमंजरी में जि धातु को

छोड़ि अनेकन साधन कों मन मान कह्यौ न करै चित चाहौ ।
नन्द के लाल सौं नेह करै किन भूलत दौरे वृथा जिय दाहो ॥
आजु लौं नीचन सौं हरिचन्द से कौन ने बोलि तौ प्रीत निबाही ।
हैं गनिका सबरी गज गीध अजामिल आदिक याको गवाही ॥ १ ॥

छोड़ दिया है यह धातु किसी प्रामाणिक ग्रन्थ में नहीं मिलता है] जैसा अरबी शब्द किताब (पुस्तक) जिस का अर्थ हो लिखना है अथवा यूनानी शब्द पेपर (काग़ज़) जिस का अर्थ हो पेपरिस वृक्ष की छाल से बनाया हुआ है कोई भी हाथ नहीं लगता संस्कृत में सूत्रों की रचना ऐसी है कि ज़ुबानी याद रक्खे जायं सूत्रकारों ने उन्हें लिखने के लिये कदापि नहीं रचा मनुजी ने जहां पढ़ने पढ़ाने का बहुत विस्तार पूर्वक नियम बांधा है [ब्रह्मारम्भेवसाने च पादौग्राह्यौगुरोस्सदा । संहत्यहस्तावध्येयं सहि ब्रह्माञ्जलिःस्मृतः ॥ अध्येष्यमाणन्तु गुरुर्नित्यकालमतन्द्रितः । अधीष्व भो इति ब्रूयाद्विरामोस्त्विति चारमेत् ॥] पुस्तक क़लम दवात काग़ज़ का नाम भी नहीं लिखा लिखने का कहीं किसी प्रकार से कुछ चर्चा हो नहीं किया और देखो अब तो लिखना पढ़ना ये दोनों ऐसे द्वंद्व हो गये हैं कि पर्यायो से जान पड़ते हैं एक के स्मरण के साथ हो दूसरे का स्मरण भी हो आता है निदान लिखने की विद्या इस देश में पीछे से फैली [यदि पहले होती महाभारत में जहां कौरव पांडव के दूतों का हाल लिखा है उन के साथ पत्र जाने का भी हाल लिखा होता ।] पत्र लेखनी मसी ये सब शब्द पीछे से काम में आये उत्तर में पहले भोजपत्र पर और दक्षिण में पहले तालपत्र पर लिखा होगा इसी से जिस पर लिखें उसका नाम पत्र रह गया और ताल पत्र पर लोकों के खोचने अर्थात् खोदने से यह काम हो लिखना ठहरा लिप लोपना है जब पत्रों पर सियाही लगाई होगी यह शब्द काम में आया यदि पाणिनि के समय में भी लिखना किसी को मालूम होता वह अवश्य इस के लिये कोई शब्द बनाता उसने जो वर्ण अक्षर और विराम लिखा है वर्ण का अर्थ आवाज़ का रंग है अक्षर का अर्थ अविनाशी है विराम का अर्थ आवाज़ का बंद होना है यदि वह लिखना जानता होता अनुस्वार विसर्ग जिह्वामूलीय और उपध्मानीय का नाम बोपदेव की तरह बिन्दु द्विबिन्दु वज्राकृति और गजकुंभाकृति रखता ।"

वैशाख माहात्म्य।

दोहा---भरित नेह नवनीर सों, बरसत सुरस अथोर।
जयति अलौकिक घन कोऊ, लखि नाचत मन मोर॥

नित्य उमाधव जेहि नवत, माधव अनुज सुरारि।
श्यामाधव माधव भजौ, माधव मास विचारि॥ १॥
रमत माधवी कुंज करि, प्रेम माधवी पान।
माधव रितु संग माधवी, लै माधव भगवान॥ २॥
वैशाषा पति नहि भजहिं, जो वैशाष मझार।
ते वै शाषा शृंग अहैं, वा वैशाष कुमार॥ ३॥
गुरु आयसु निज सीस धरि, सुमिरि पिया नंद नन्द।
माधव को कछु बिधि लिखत, ग्रंथन लखि हरि चन्द॥४॥
चैत्र कृष्ण एकादशी, अथवा पूनो मान।
मेष संक्रमन सों करै, वा अरंभ अस्नान॥ ५॥
ब्राह्मण गन सों पूछिकै, नियम शास्त्र कै मान।
हरिहि नौमि संकल्प करि, न्हाय समेत बिधान॥ ६॥
मंत्र—सकल मास वैशाष में, मेष राशि रवि मान।
मधुसूदन प्रिय होहिं लखि, सनियम माधव न्हान॥ ७॥
मधु रिपु की परसाद सों, द्विज अनु ग्रहहि जोय।
नित वैशाष नहान यह, विघ्न रहित मम होय॥ ८॥
माधव मेषग भानु में, हे मधु सतु सुरारि।
प्रात न्हान फल दीजिये, नाथ पाप निरुवारि॥ ९॥ इति
जा तीरथ में न्हाइये, लीजै ताको नाम।
जहं न जानिये नाम तहं, बिष्णु तीर्थ सुख धाम॥ १०॥

तुलसी श्यामा मञ्जरी, जो मधु रिपु कौं देत ।
सो नारायण होत है, माधव मैं करि हेत ॥ ११ ॥
तुलसी दल वैशाष में, अरपहिं तीनो काल ।
जन्म मरण सो मुक्त तेहि, करत नन्द को लाल ॥ १२ ॥
जो सींचत पीपर तरुहि, प्रात न्हाइ हरि मानि ।
करत प्रदक्षिण भांति बहु, सर्व्व देव मय जानि ॥ १३ ॥
तरपन करि सुर पित्र नर, सचराचर तरु मूल ।
मेटै अपने पित्र को, नरक कुंड को सूल ॥ १४ ॥
जे सीचहिं जल भक्ति सों, पीपर तरु जड़ माहिं ।
तिन तार्‍यो निज अयुत कुल, यामै संशै नाहिं ॥ १५ ॥
गज पीठ सुहराइ कै, न्हाइ तरुहि जल देइ ।
छाया पूजि तजि दुर्गतिहि, देवन की गति लेइ ॥ १६ ॥
एक बेर भोजन करै, कै तारा लखि खाइ ।
कै बिन मांगो पाइ कै, दै निसि नींद बिहाइ ॥ १७ ॥
ब्रह्मचर्य्य धरनी शयन, अशन हबिष्यन खान ।
औ गंगादिक मैं करै, विधि विधान असनान ॥ १८ ॥
पुन्य मास वैशाष मै, हरि सों राखि सनेह ।
मन भायो ताको मिलै, यामें कछु न संदेह ॥ १९ ॥
मधु सूदन पूजन करै, तप ब्रत सह दै दान ।
पाप अनेकन जनम को, दाहैं तूल समान ॥ २० ॥
माधव धापै पौसरा, करै चटाई दान ।
छत्र व्यजन जूता छरी, अरु सूछम परिधान ॥ २१ ॥
चन्दन जल घट पुष्प ग्रह, चित्र बस्तु अंगूर ।
देवहि दीजै प्रीति सों, केला फल करपूर ॥ २२ ॥

माधव में जो पित हित, करत अंबु घट दान।
सक्तु व्यंजन मधुफल सहित, प्रीति करत भगवान ॥ २३ ॥
माधवहित जो देत घट, या माधव की मांहिं।
भोजन के सह विप्र को, ते बैकुंठहिं जांहिं ॥ २४ ॥
होइ सकै नहि मास भर, जो विधिवत असनान।
करै अंत की तीन दिन, तो फल होइ समान ॥ २५ ॥

अथ अक्षयतृतीया।

रोहिणिमाधव शुक्लपख, तीज सोम बुध होय।
अति पवित्रदुरलभबहुरि, पाप नसावत सोय ॥ २६ ॥
माघो पूनो भाद्रपद, कृष्ण चतुर्दशि जान।
माधव तृतिया कार्तिक, नवमी युग परमान ॥ २७ ॥
इन चारहु युगादि मैं, श्राद्ध करत जो कोय।
द्वै सहस्र संबत दिनन, तृप्ति पित्र की होय ॥ २८ ॥
तिथि युगादि मैं न्हाइकै, करै दान जप ध्यान।
ताकों शुभ फल देत श्री, कृष्ण चन्द भगवान ॥ २९ ॥
माधव शुक्ला तीज कों, श्री गंगा जल न्हाय।
सर्ब्ब पाप सों छूटिकै, बिष्णु लोक सो जाय ॥ ३० ॥
जवही को होमादि करि, हरि को जवहि चढाइ।
दान देइ जव द्विजन कों, पुनि आपहु जव खाइ ॥ ३१ ॥
दान करै जल कुम्भ को, रस अन्नादिक साथ।
चना और गोधूम को, सक्तु देइ द्विज हाथ ॥ ३२ ॥
दधि ओदन आदिक सबै, ग्रीषम रितु के भोग।
देइ तीज दिन बिप्र कों, नासै भव भय रोग ॥ ३३ ॥
शिवहि पूजि के तीज दिन, शिव हित दै घट दान।

शिव पुर सो नर पावई, भाषत शिव भगवान ॥ ३४ ॥
मंत्र—ब्रह्म विष्णु शिव रूप यह, दियो धर्म्म घट दान ।
पिता पितामह आदि सब, तृप्त होंहि परमान ॥ ३५ ॥
गन्धउदक तिल फलसहित, पितन जल घट देत ।
अक्षय पावैं तृप्ति सब, दान कियो एहि हेत ॥ ३६ ॥
ब्रह्म, विष्णु, शिव रूप यह, देत धर्म्म घट दान ।
या सो मेरे काम सब, पुरवौ श्री भगवान ॥ ३७ ॥
वायु देवता को व्यजन, नासन आतप ताप ।
तासों याके दान सों, प्रीति होहिं हरि आप ॥ ३८ ॥
सक्तु प्रजा पति देवता, सखहित किय निरमान ।
होंहिं मनोरथ पूर्ण सब, या सतुआ के दान ॥ ३९ ॥[इति]
चार युगादिक तिथिन मैं, करि समुद्र असनान ।
सो फल पावत मनुज जो, करि कै पृथवी दान ॥ ४० ॥
इन चारिहू युगादि मैं, कछु नहि खैये रात ।
रात खान सों दिवस को, पुन्य नास ह्वै जात ॥ ४१ ॥
माधव शुक्ला तीज को, श्री माधव कों जौन ।
चन्दन चरचहिं पावहीं, महा पुन्य नर तौन ॥ ४२ ॥
कपूरादि सुगंध सों, सुन्दर चन्दन बासि ।
कृष्णहि देत जो पुन्य नर, रहत पाप सो नासि ॥ ४३ ॥
चन्दन तन धारन किये, कृष्णहिजो लखि लेत ।
तीज दिवस सो मुक्त ह्वै, पावत कृष्ण निकेत ॥ ४४ ॥
शीतल जल नव घटन भरि, बालबिजन बहु भांति ।
देत हरिहिं सो पावई, पुन्य फलन की पांति ॥ ४५ ॥
पुष्पमाल बहुभांति अरु, ग्रीषम के उपचार ।

अजयंतादि अनेक विधि, करै बुद्धिअनुसार ॥ ४६ ॥
कृष्ण हित जो कछु करै, माधव तृतिया पाइ ।
सो अखंड ह्वै कै रहै, पुन्य न कबहु नसाइ ॥ ४७ ॥
परशुराम को जन्मदिन, पुनि याहीदिन जान ।
तिनकी हित हू कीजिये, दान बरत असनान ॥ ४८ ॥
छाता जूता आदि सब, ग्रीषम सुखकी वस्तु ।
द्विजन देइ या तीज को, कहि कृष्णार्पण मस्तु ॥ ४९ ॥
सुकृत जौन यामें करै, सो सब अक्षय होय ।
तासों अक्षय तीज यह, नाम कहैं सब कोय ॥ ५० ॥
चन्दन को वागो करै, चन्दन ही की माल ।
चन्दन ही के भौन में, बैठावे नंद लाल ॥ ५१ ॥
फूलन को मंदिर रचैं, फूलन सेज बनाय ।
तामे थापैं कृष्ण कों, फूल माल पहिराय ॥ ५२ ॥
रितुफल बहु सब भांति के, दधि ओदन सुखधाम ।
पना धरै सब वस्तु को, कहै लेहु घनश्याम ॥ ५३ ॥
दीपादिक की मुख्यता, कातिक मै जिमि जान ।
तैसेइ माधव मास मैं, सीत वस्तु की मान ॥ ५४ ॥
चार बरन को दीजिये, माधव मैं जल दान ।
अंत्यज पशु पच्छीन को, नीर दान सुख खान ॥ ५५ ॥
जे पसु पच्छिन देत हैं, ग्रीषम मैं जल पान ।
ते नर सुर पुर जात हैं, सुन्दर बैठि बिमान ॥ ५६ ।
जे अति आतप सो तपे, देहु तिन्है विश्राम ।
छाया जल बहु भांति सों, ह्वै है पूरन काम ॥ ५७ ॥
गरमी के हित जे करत, बापी कूप तड़ाग ।
तिनको पुन्य अखण्ड ते, करत न सुरपुर त्याग ॥ ५८ ॥

साधुन को अरु द्विजन गृह, नदी तीर हरि धाम ।
जे छावत छाया तिन्हैं, मिलत श्याम अभिराम ॥ ५९ ॥

अथ श्रीगंगासप्तमी ।

माधव सुदि सप्तमि कियो, क्रुध जन्हु जल पान ।
छोड्यो दच्छिन कर्ण तें, तातें पर्व महान ॥ ६० ॥
ताही सो जान्हवि भई, तादिन सों श्री गंग ।
तिनको उत्सव कीजिये, तादिन धारि उमंग ॥ ६१ ॥
तामें गंगा न्हायके, पूजन कीजे चारु ।
गंगा नाम सहस्र जपि, लीजे पुन्य अपारु ॥ ६२ ॥

अथ बैशाखशुद्ध १२ ।

सिंह राशि गत होहिं जो, मंगल गुरु इकठौर ।
मेष राशि गत दिवस पति, शुक्ल पच्छ जुत और ॥ ६३ ॥
द्वादशि तिथि मैं होइ पुनि, बितीपात संयोग ।
हस्त होइ नच्छत्र तौ, होइ महा यह जोग ॥ ६४ ॥
प्रातस्नान यामैं करै, सहित बिवेक विधान ।
गो सुवरन अवनी बसन, देइ द्विजन कहं दान ॥ ६५ ॥
देव होइ सुरपति बनै, नरपतिहू जग माहिं ।
जो मन इच्छित सो मिलै, यामैं संशय नाहिं ॥ ६६ ॥

अथ नृसिंह चतुर्दशी ।

माधव शुक्ल चतुर्दशी, स्वाती पुनि शनिवार ।
बणिज करण सिध योग मैं, नर हरि लिय अवतार ॥ ६७ ॥
जो सब जोग कहूं मिलै, तौ परम सौभाग ।
बिना जोगहू ब्रत करै, करि हरि सों अनुराग ॥ ६८ ॥
सब लोगन को ब्रत उचित, चौदस माधव मास ।
पै बैष्णव जन तो करैं, निश्चय ब्रत उपवास ॥ ६९ ॥

सांझ समै हरि को करै, पंचामृत असनान ।
शीतल भोग लगावई, करि आनन्द विधान ॥ ७० ॥
वा मृद गो मय आंवलनि, करि मध्यान स्नान ।
पूछि द्विजन सो यह करै, सुभ संकल्प विधान ॥ ७१ ॥
मंत्र—देव देव नरसिंह जू, जानि जनम को जोग ।
आज करैं उपवास हम, त्यागि सकल जग भोग ॥ ७२ ॥
यह पढ़ि नदी नहाई कै, सांझ समै घर आइ ।
लक्ष्मी सहित नृसिंह को, सुबरन मूर्ति बनाइ ॥ ७३ ॥
रात पूजि जागरन करि, प्रात पूजि पुनि श्याम ।
पीठक विप्रहि दै करै, यह बिनती सुख धाम ॥ ७४ ॥
मंत्र—नरहरि अच्युत जगतपति, लक्ष्मी पति देवेस ।
पूजौं पीठक दान सौं, मन कामना अशेस ॥ ७५ ॥
जे मम कुल में होयंगे, होय गए जे साथ ।
या भव सागर दुसह तें, तिनहिं उधारो नाथ ॥ ७६ ॥
डूब्यौ पातक सिंधु में, सहा दुःख के वारि ।
खिन्न जानि मोहि राखिये, नर हरि भुजा पसारि ॥ ७७ ॥
श्री नरसिंह रमेश जू, भक्तन को भय टारि ।
क्षीर समुद्र निवास तुव, चक्र पाणि दनु जारि ॥ ७८ ॥
जय जय कृष्ण गुविन्द हरि, राम जनार्दन नाथ ।
या व्रत सों मोहि दीजिये, भक्ति मुक्ति दोउ साथ ॥ ७९ ॥
या विधि सों व्रत जे करैं, कृष्ण जन्म दिन जानि ।
ते चारहु फल पावहीं, यह उर निश्चय मानि ॥ ८० ॥
जिमि निकसि प्रभु खंभ तें, राख्यो जन प्रहलाद ।
तिमि तिनको रच्छा करत, जे राखत व्रत स्वाद ॥ ८१ ॥
अथ पौर्णिमा—माधव कातिक माघ की, पूनो परम पुनीत ।

ता दिन गंगा न्हाइयै, करि केशव सों प्रीति ॥ ८२ ॥
एक मास जो नहिं बनैं, श्री गंगा असनान।
तौ पूनोदिन न्हाइयै, अरु करियै जलदान ॥ ८३ ॥
व्रत समाप्त या दिन करै, देइ द्विजन कों दान।
हाथ जोड़ि कै यह कहै, लखि कै श्री भगवान ॥ ८४ ॥
मंत्र—हे मधुसूदन कृष्ण हरि, राधा जीवन प्रान।
तव पताप पूरन भयो, माधव विधिवत स्नान ॥ ८५ ॥
श्याम मृगा के चर्म पै, श्याम तिलहि दै दान।
सुवरन सहकहि होंहिं प्रिय, मधुसूदन भगवान ॥ ८६ ॥
ब्राह्मण बहुत खवावई, करि अनेक पकवान।
जौ बहु द्विज नहिं होइं तौ, बारह सहित विधान ॥ ८७ ॥
एहि विधि माधव में करै, प्रेम सहित असनान।
ताकों सब कछु देहिं श्री, मधुसूदन भगवान ॥ ८८ ॥
लखि कै निरनय सिंधु अरु, भगवद्भक्ति विलास।
माधव को यह बिधि लिखी, हरीचन्द हरिदास ॥ ८९ ॥
एक दिवस मैं यह लिखी, माधव विधि अभिराम,
जेहि पढ़ि कै सुख पाइहैं, कृष्ण भक्त सुख धाम ॥ ९० ।
लीजो चूक सुधारि कै, कविगन सहित अनन्द।
हौं नहि जानत रचन बिधि, नहिं पिङ्गल नहिं छन्द ॥ ९१ ॥
माधव बिधिमाधव सुमिरि, उर अति धारि अनन्द।
परम प्रेम निधि रसिक बर, बिरच्यो श्रीहरिचन्द ॥ ९२ ॥
प्रान पियारे प्रेम निधि, प्रेमिन जीवन प्रान।
तिनके पद अरपन कियो, यह बैशाख विधान ॥ ९३ ॥

इति वैशाख माहात्म्य।

कार्त्तिक कर्म्म विधि।

लोकानाम्पापरूपप्रबलतमतमोनाशनायाशु शस्तं
हन्तुं तीक्ष्णं त्रितापं पटुतरमनिशं यः परं दुःखहेतुः ॥
दातुं शक्तं त्रिलोकैरसुलभममृतं कार्त्तिकं कर्म्म वैधं
राकाज्योत्स्नास्वरूपं विलसतु जगति श्री हरिश्चन्द्रचन्द्रात् ॥ १ ॥



श्रीराधाकृष्णाय नमः ।

श्रीराधादामोदराय नमः ।

कार्त्तिक कर्म्म विधि ।

जैजै श्री नंद नन्द श्रीराधारसबस रसिक ।
दामोदरव्रजचंद गोपीनाथ अनाथ गति ॥ १ ॥
रासरसिक राधारमण मनमोहन घनश्याम ।
कोटि कोटि मनमथ मथन सुंदर सब सुखधाम ॥ २ ॥
बन्दौं कातिक मास दामोदर प्रिय पुण्यप्रद ।
नाशंत यम की त्रास दियं हुलास कर अतिसुखद ॥ ३ ॥

श्लोकः ।

श्रीकृष्णं करुणाकरं कविवरं कान्तापतिं कामदं
गोपीनां नयनोत्सवं गुणनिधिं गो गोपवृन्दप्रियं ।
राधाराधितविग्रहं रतिरतं रामानुजं रासगं
मानाथं मथुराधिपं मनहरं मान्यं मनोज्ञं भजे ॥ १ ॥

इस संसार में जन्म लेके मनुष्यों को भगवत्स्मरण और स्नान दानादिक करना यही मुख्य धर्म्म है क्योंकि बड़े बड़े पर्व्वों में स्नान पूजा व्रत दानादिक करने से पाप नाश होते हैं और मुक्ति मिलती है और पर्व्व और व्रत इत्यादि तो अनेक हैं और नित्य ही स्नानादिक का बड़ा फल है परन्तु मार्गशीर्ष कार्त्तिक माघ वैशाख सब महीनों में उत्तम गिने जाते हैं तिस में भी कार्त्तिक स्नान का फल विशेष है यह बात सब शास्त्र में प्रसिद्ध है कि कार्तिक के महीने में काशी में पंचगंगास्नान का बड़ा पुण्य है ।

यथा काशीखंडे ।

कार्त्तिकेमासि में यात्रा यैः स्नाता भक्तितत्परैः ।
बिंदुतीर्थे कृतं स्नानं तेषां मुक्तिर्न दूरतः ॥ १ ॥
शतं समास्तपस्तप्त्वा कृते यत्प्राप्यते फलं ।

तत्कार्त्तिके पंचनदे सकृत्स्नानेन लभ्यते ॥ २ ॥
कार्त्तिके विंदुतीर्थे यो ब्रह्मचर्य्यपरायणः ।
स्नानमर्घ्यादिते भानौ भानुजात्तस्य भीः कुतः ॥ ३ ॥

यथा पाद्मे। भार्गवार्चनचन्द्रिकायां च ।

आश्विनस्यतुमासस्य या शुक्लैकादशी भवेत् ।
कार्त्तिकस्य व्रतानीह तस्यां वै प्रारभेत्सुधीः ॥ ४ ॥

यथा विष्णुरहस्ये ।

प्रारभ्यैकादशीं शुक्लामाश्विनस्य तु मानवः ।
प्रातस्नानम्प्रकुर्वीत यावत् कार्त्तिकभास्कर ॥ ५ ॥

तथा मदन पारिजाते विष्णुः ।'तथा नारदीयेच ।

कार्त्तिकं सकलं मासं नित्यस्नायी जितेन्द्रियः ।
जपन् हविष्यभुक् शान्तः सर्व्वपापैः प्रमुच्यते ॥ ६ इति ॥

इन वाक्यों का सारांश अर्थ यह है कि आश्विन शुक्ल एकादशी से आरम्भ कर कें जो कार्त्तिक में जितेन्द्रिय होकर और व्रतादिक कर पंचगंगा में प्रात स्नान करता है यह मुक्तिभागी होता है और उस को यमराज का भय नहीं रहता और भी इस का महा फल लिखते हैं।

तथा पुराणसारोद्धारे । नारदीयेच ।

प्रयागे माघमासेतु सम्यक् स्नानस्य यत्फलं ।
तत्फलं कार्त्तिके काश्यां पंचनद्यां दिनेदिने ॥ ७ ॥
कृते धर्म्मनदं नाम त्रेतायां धूतपापकं ।
द्वापरे बिन्दुतीर्थं च कलौ पंचनदं स्मृतं ॥ ८ ॥
अव्रतः कार्त्तिको येषां गतो मूढधियामिह ।
न तेषाम्पुण्यलेशोपि दुष्टानां शूकरात्मनां ॥ ९ इति ॥

माघमहीने में प्रयाग नहाने का जो फल है वह कार्त्तिक में पंचगंगा में एक दिन स्नान से मिलता है । सत्ययुग में धर्म्मनद, त्रेता में धूत पापा, द्वापर में विन्दुसर, कलियुग में पंचगंगातीर्थ ही मुख्य है । जो लोग

कार्त्तिक में स्नान व्रतादिक नहीं करते वे मूढ़ बुद्धि हैं उन्हें किसी पुण्य का फल नहीं होता ।

यथा पद्मपुराणे कार्त्तिक माहात्म्ये । सत्यभामा प्रति श्रीश्रीकृष्ण वाक्यं ।

कार्त्तिके मासि ये नित्यं तुलासंस्थे दिवाकरे ।
प्रातः स्नास्यन्ति ते मुक्ताः महापातकिनोपिवा ॥ १० ॥
स्नानं जागरणं दीपं तुलसीवनपालनं ।
कार्त्तिके ये प्रकुर्वन्ति ते नरा विष्णुमूर्त्तयः ॥ ११ ॥
कार्त्तिकव्रतिनां पुंसां विष्णुवाक्यप्रणोदिताः ।
रक्षां कुर्वन्ति शक्राद्याः राजानं किंकरा यथा ॥ १२ ॥
विष्णुप्रियं सकलकल्मषनाशनं यत् ।
सर्व्वंच धर्म्मधनधान्यविवृद्धिकारि ॥
ऊर्जेव्रतं सनियमं कुरुते मनुष्यः ।
किं तस्य तीर्थपरिशीलनसेवया च ॥ १३ ॥
ते धन्यास्ते सदापूज्यास्तेषां चकुलमेव च
विष्णुभक्तिपरा ये स्युः कार्त्तिके व्रतकादिभिः॥ १४ इति॥

तुला के सूर्य्य में कार्त्तिक में जो लोग प्रातस्नान करते हैं वे महा पातकी हों तौ भी मुक्त होते हैं। स्नान, जागरण, दीपदान, तुलसी पूजन इत्यादिक जो लोग करते हैं वे सब विष्णु के स्वरूप हैं । कार्त्तिकके व्रती लोगों की इन्द्रादिक देवता ऐसी रक्षा करते हैं जैसे राजा को सेवक रक्षा करै क्योंकि उन को श्रीविष्णुभगवान की यही आज्ञा है । विष्णु का प्यारा, कल्मष नाश करने वाला, और सब धर्म्म धान्य धन का बढ़ाने वाला कार्त्तिक व्रत जो लोग करते हैं उन को तीर्थों में घूमने से और उस की सेवा से क्या है अर्थात् वह सब कुछ करचुके। वह और उन के कुल धन्य हैं और पूज्य हैं जो कार्त्तिक में व्रतादिक से विष्णु की भक्ति करते हैं ॥ इति ॥

तथा सनत्कुमारसंहितायां कार्त्तिकमाहात्म्ये ।

न कार्त्तिकसमं धर्म्यमर्घ्यं नो कार्त्तिकात्परं ।

न कार्त्तिकसमं काम्यं मोक्षदानं च कार्त्तिकात् ॥ १५ ॥
तस्मात्सौरैश्च गाणेशैः शाक्तैः शैवैश्च वैष्णवैः ।
कर्त्तव्यं कार्त्तिकस्नानं सर्व्वपापापनुत्तये ॥ १६ ॥
न कार्तिकसमो मासो न काशी सदृशी पुरी ।
न प्रयागसमं तीर्थं न देवः केशवात् परः ॥ १७ ॥
प्रसंगाद्वा बलाद्वापि ज्ञात्वा ऽज्ञात्वा कृतं तु यत् ।
स्नानं कार्तिकमासस्य न पश्येद्यमयातनां ॥ १८ ॥
तावद्गर्ज्जन्ति पापानि ब्रह्महत्यादिकानि च ।
न कृतं कार्तिके स्नानं यावज्जन्तुभिरादरात् ॥ १९ ॥
तीर्थराजादितीर्थानि प्राप्ते कार्तिकमासके ।
स्नानार्थं पंचगंगांतु समायांति न संशयः ॥ २० ॥
दुर्लभो मानुषोदेहो दुर्लभा काशिकापुरी ।
तत्रापि कार्तिके मासि पंचगंगं सुदुर्लभं ॥ २१ ॥

कार्त्तिक के समान न कोई धर्म्म है, न अर्थ है न काम है न मोक्ष है न दान है। सब एक ही हैं इस से शैव, वैष्णव, शाक्त, और गाणपत्य सब को कार्त्तिक स्नान करना चाहिए। काशी के समान कोई पुरी नहीं प्रयाग के समान कोई तीर्थ नहीं केशव के समान कोई देवता नहीं और कार्त्तिक के समान कोई महीना नहीं है। संग साथ से वा बल से जाने वा बिना जाने भी जिस ने कार्त्तिकस्नान किया है उस को यम का भय नहीं है। ब्रह्महत्या-दिक पाप तभी तक गर्ज्जना करते हैं जब तक जीव ने कार्त्तिकस्नान नहीं किया। प्रयागादिक सब तीर्थ कार्त्तिक में पंचगंगा स्नान को आते हैं। एक तो मनुष्य का देह दुर्लभ है दूसरे काशी पुरी दुर्लभ है तिस में भी कार्त्तिक महीनें में पंचगंगा तीर्थ अति दुर्लभ है। इति।

और भी इस का महिमा बहुत लिखा है।

यथा पद्मपुराणे स्वर्गखंडे तृतीयाध्याये।

तथा नारदीयेरुक्मांगदोपाख्याने ।

प्रातः स्नानं नरो यो वै कार्त्तिके श्री हरिप्रिये ।
करोति सर्व्वतीर्थेषु यत्स्नात्वा तत्फलं लभेत् ॥ २२ ॥

सब तीर्थों में स्नान करने का जो फल है वह कार्त्तिकमें प्रातः स्नान से मिलता है । इति ।

तथा तत्रैव विंशतितमेध्याये ।

श्रेष्ठं विष्णुव्रतं विप्र तत्तुल्या न शतंमखाः ।
कृत्वा व्रतं व्रजेत् स्वर्गं वैकुंठं कार्त्तिकव्रती ॥ २३ ॥

श्री विष्णु भगवान का व्रत सब व्रतों में उत्तम है सौ यज्ञ भी उस के समान नहीं हैं, जो लोग इस कार्त्तिकका व्रत करते हैं वे व्रती लोग वैकुंठ नामक स्वर्ग में जाते हैं ।

तथा वायु पुराणे ।

यदीच्छेदि पुत्रान्भोगान् चन्द्र सूर्य्यग्रहोपमान ।
कार्त्तिकं सकलम्प्राप्य प्रातस्नायीभवेन्नरः ॥

कार्त्तिक का माहात्म्य सब शास्त्रों में बहुत कहा है कहां तक लिखें इस कार्त्तिक में एक व्रत और भी होता है जिस का नाम मासोपवास है ।

यथा हेमाद्रौ विष्णुरहस्ये ।

व्रतमेतत्तु गृह्णीयाद्यावत्त्रिंशद्दिनानितु ।
आश्विनस्य सितेपक्षे एकादश्यामुपोषितः ॥ २४ ॥
वासुदेवंसमुद्दिश्य कार्त्तिके सकलं नरः ।
मासं चोपवसेद्यस्तु समुक्तिफलभाग् भवेत् ॥ २५ ॥
कृत्वा मासोपवासं च विचार्य्य विधिवन्मुने ।
कुलानां शतमुद्धृत्य विष्णुलोकं व्रजेन्नरः ॥ २६ ॥

इत्यादिक । यह कार्त्तिक का मासोपवास व्रत अत्यन्त पवित्र है इस की विशेष विधि व्रतार्क में लिखी है । कार्त्तिक का महात्म्य सूचन कर के अब कुछ उस के नियम लिखे जाते हैं जिस से विदित हो कि कार्त्तिक व्रत कब से

करना और किस किस वस्तु का त्याग करना इत्यादिक। कार्त्तिक स्नान आश्विन सुदी ११ एकादशी से प्रारम्भ करना इसके वाक्य ऊपर लिख आए हैं।

यथा स्कान्दे तथा ब्रह्मपुराणे च।

वैष्णवं वैष्णवानां यद्व्रतम्विष्णुपदप्रदं।
आश्विनस्यासितेपक्षे एकादश्यां द्विजोत्तमैः।
वैष्णवैः कल्पनापूर्व्वम्प्रारम्भोस्यं विधीयते ॥ २७ ॥

विष्णुपद का देने वाला यह वैष्णवों का परम वैष्णवव्रत कुंवार सुदी एकादशी से वैष्णव लोगों को कल्पना पूर्व्वक प्रारम्भ करना चहिए तथा कार्त्तिक में खाने पीने का संयम और ब्रह्मचर्य्य तो अवश्य ही करना चहिए।

प्रमाणं नारदीये।

अव्रतेन क्षपेद्यस्तु मासं दामोदरप्रियं।
तिर्य्यग्योनिमवाप्नोति नात्र कार्य्याविचारणा ॥ २८ ॥

तथा काशीखंडे।

ऊर्ज्जेयवान्न मश्नीयाद् देवान्नमथवा पुनः।
वृन्ताकं सूरणं चैव शूकशीवींश्च वर्जयेत् ॥ २९ ॥

स्कान्दे।

कार्त्तिके वर्ज्जयेत्तद्द्विदलं बहुबीजकं।
माष मुद्ग मसूराश्च चणकाश्च कुलत्थकाः ॥ ३० ॥

कार्त्तिक का महीना जो लोग बिना व्रत के बिताते हैं वे पशु योनि पाते हैं। कार्त्तिक में यव और पवित्र हविष्यान्न खाना और भंटा, सूरन और सेम इत्यादि नहीं खाना। कार्त्तिक में द्विदल बहुत बीयावाली वस्तु, उड़द, मोट, मसुरी, चना और कुलथी इत्यादि नहीं खाना इति।

तथा नारदीये स्कान्दे च।

कार्त्तिके वर्जयेत्तैलं कार्त्तिके वर्जयेन्मधु।
कार्तिके वर्जयेत्कांस्यं कार्तिके शुक्लसन्धितं ॥ ३१ ॥

कार्त्तिक में तेल, मधु, कांस्यपात्र में भोजन, बासीअन्न, और खारे शाक ये सब वर्जित हैं। इति

कार्त्तिक के व्रत में ब्रह्मचर्य्य और हविष्यभोजन ही मुख्य है जैसा कि ऊपर लिख आए हैं " जपन्हविष्यभुक्शान्त. " अब हविष्य में कौन कौन वस्तु है सो लिखते हैं और कार्त्तिक में किस किस वस्तु का त्याग है वह भी लिखते हैं ।

यथा सनत्कुमारसंहितायां कार्त्तिकमाहात्म्ये ।
तथा पुराणसारोद्धारे च पुराणसमुच्चयेपि । भविष्योक्तं ।

हैमंतिकं सितास्विन्नं धान्यामुद्गास्तिलाः यवाः ॥
कलाय कंगु नीवारा वास्तुकं हिलमोचिका ।
षष्टिका कालशाकंच मूलकं केमुकेतरं ॥३२॥
कंदं सैंधव सामुद्रो लवणो दधि सर्पिषी ।
पयोनुद्धृतसारं च पनसाम्रौहरीतकी ॥ ३३ ॥
कदली लवली धात्री फलान्यगुडमैक्षवं ।
पिप्पली जीरकं चैव नागरंगकतिंत्तणी ।
अतैलपक्वं मुनयो हविष्यान्नम्प्रचक्षते ॥ ३४ ॥

तथा हेमाद्रौ छान्दोग्यपरिशिष्टे कात्यायनः ।

हविष्येषु यवाः मुख्यास्तदनु व्रीहयः स्मृताः ।
माषकोद्रवगौराद्रीन् सर्व्वाभावेपि वर्ज्जयेत् ॥ ३५ ॥

तत्रैव अग्निपुराणे ।

व्रीहि षष्टिक मुद्गाश्च कलायाः सलिलम्पयः ।
श्यामाकाश्चैव नीवारागोधूमाद्यान्व्रतेहिताः ॥ ३६ ॥

हविष्य में इतनी वस्तु लेना । जाड़े का सपेद चावल, धान, मूंग, तिल, यव, मटर, कांगुनी, तिन्नी का चावल, बथुआ का शाक, हेला का शाक, कालिका का शाक, केमुका का शाक, साठी का चावल, सेंधा नोन और समुद्र का नोन, दही घी, बिना घी निकाला दूध, कटहर, आम, हर्रें, केला, हारफारेवड़ी, आंवला, चीनी मिस्री (गुड़बिना) पीपल; जीरा, नरंगी, इमली, तेलमें न किया होय ऐसे अन्न को मुनि लोग हविष्य कहते हैं । हविष्य

में जब मुख्य हैं वा नहीं तो धान भी ग्राह्य हैं परन्तु उड़द, कोदों, सपेद गेहूं तो कुछ अन्न न मिलता होय तो भी नहीं लेना । धान, साठी का चावल, मूंग, कलाई, जल, दूध, सांवां, तिन्नी, लाल गेहूं ये व्रत में लेना। भोजन करने की वस्तु लिख के अब न खाने वाली वस्तु लिखते हैं।

यथा सनत्कुमारसंहितायां कार्त्तिकमाहात्म्ये।

सर्वथैव न भोक्तव्यमामिषान्नं तु कार्तिके ।
तत्सर्वदा वर्जनीयं कार्तिके तु विशेषतः ॥ ३७ ॥
दग्धमन्नं द्विपक्वं च मसूरान्नं सवल्कलं ।
उद्दालकाः पर्युषितमन्नमामिष उच्यते ॥ ३८ ॥
वृन्ताकानि पटोलानि तुम्बिका च कलिंगकं ।
बिम्बीफलानि चपुमं फलशाकेषु चामिषं ॥ ३९ ॥
दोरका तुलमी f ली कदाकं पोत पत्रकं ।
चक्रवर्तीं राजगिरिः पत्रशाकेषु चामिषं ॥ ४० ॥
गंजरं रक्तमूलं च पलांडुर्लशुनं तथा ।
सर्वदैवामिषाणिस्युः कार्तिके स्मरणं त्यजेत् ॥ ४१ ॥
परमांसैःस्वमांसानि यः पुष्णाति नराधमः ।
परजन्मनि तस्यैव विष्ठायां जायते क्रमिः ॥ ४२ ॥
बालान्मृगान् पक्षिणोवा तथा बालफलानि च ।
घातयन्ति दुरात्मानो जायन्ते मृतबालकाः ॥ ४३ ॥
सर्वाण्येकत्रदानानि सर्वतीर्थान्यथैकतः ।
सर्वव्रतान्येकतश्च ह्यहिंसाकलया सम ॥ ४४ ॥
एवं विचार्य्य भुंजीत स्वान्नं विष्णुनिवेदितं । इति

कार्त्तिक में मांस और उस के समान जितनी वस्तु हैं वह सबसर्व्वथा न खाना । और यह मांस तो सर्व्वदा वर्जनीय है परन्तु कार्त्तिक में विशेष करके अर्थात् मांस इत्यादिक बुरी वस्तु कभी नहीं खाना और कार्त्तिक

में तो सर्व्वथा नहीं खाना। जला अन्न, दो बेर किया हुआ अन्न, मसूर, कुरथी, बासी अन्न ये सब भी मांस कहलाते हैं। भंटा, परवल, तुम्बी फल, तरबूज, कुंदुरू, और ककड़ी, ये सब फल के शाक में मांस के तुल्य हैं। तुलसी, खाता शाक, पोई, चकोंड, राजगोरा, ये सब पत्ते के शाक में आमिष के तुल्य हैं। गाजर लाल मूली लहसुन गोभी प्याज इत्यादिक मांस सर्व्वदा ही त्याग करना और कार्त्तिक में तो इन का स्पर्श भी नहीं करना। दूसरे जीवों के मांस से जो पापी अपने मांस को पुष्ट करता है अर्थात् जो लोग बल पुष्टता वा स्वाद के लोभ से किसी पशु पक्षी का मांस खाते हैं वे मनुष्याधम दूसरे जन्म में उसी जीव के (जिस का मांस खाया है) विष्टा के कीड़े होते हैं छोटे पशुओं को छोटे पक्षियों को जो मारते हैं जो कच्चे फलों को तोड़ते हैं वे लोग दूसरे जन्म में मरे बालक होते हैं। सब व्रत और सब दान और सब तीर्थ का एकत्र फल और अहिंसा का फल बराबर है ऐसा विचार के सुंदर प्रसादी अन्न ही भोजन करना मांसादिक सर्व्वथा नहीं खाना। इति।

तथा पाद्मे कार्त्तिकमाहात्म्ये ।

परान्नं परशय्यां च परवादं परांगनां ।
सदा च वर्ज्जयेत्प्राज्ञो कार्त्तिके तु विशेषतः ॥ ४५ ॥
वेद देव द्विजानां च गुरु गो व्रतिनान्तथा ।
स्त्रीराजोपहतां निंदां वर्ज्जयेत्कार्त्तिकेव्रती ॥ ४६ ॥

दूसरों का अन्न दूसरों की सेज दूसरों की निंदा दूसरों की स्त्री इन को सदा बचाना चहिए कार्त्तिक में विशेष करके। वेद, देव, तीनों वर्ण अर्थात् ब्राह्मण क्षत्री वैश्य, गुरू, गऊ, व्रतकरनेवाले। जिन का राज्य अर्थात् सम्पदा नाश हो गई है इन लोगों की निन्दा नहीं करना। इस का भावार्थ यह है कि कार्त्तिक में जहां तक बनसके दूसरों का अन्न नहीं खाना और दूसरों की शैया से बचना अर्थात् दूसरों की स्त्री से बचना दूसरों की निन्दा नहीं करना अब इस काल में लोग लोगों की निन्दा बहुत करते हैं और दूसरों की निन्दा करना महा पाप है क्योंकि जो लोग दूसरों की निन्दा करते हैं वे लोग जिन की निन्दा करते हैं उन का सब पाप आप लेलेते हैं तथा दूसरों की स्त्री को कुदृष्टि देखना कार्त्तिक में विशेष करके वर्जित है और अब कार्त्तिक में बहुत स्त्रियों के नहाने जाने से कितने ही पुरुष भी सवेरा भया

कि कार्त्तिक नहाने के बहाने उन का दर्शन करने जाया करते हैं उन लोगों को चाहिए कि इस वाक्य को कान खोल के सुनें। इति।

कार्त्तिक के व्रत और उस के नेम लिख के अब कार्त्तिक स्नान की विधि और मन्त्रादिक लिखते हैं जिस का प्रमाण और विशेष विधि पुराण सारोद्धार, पुराण समुच्चय, निर्णयसिन्धु, स्कन्दपुराणांतर्गतकार्त्तिकमाहात्म्य, पद्मपुराणांतर्गत कार्त्तिक माहात्म्य, ब्रह्मपुराण आदिक ग्रन्थों में लिखा है विशेष करके इस का विस्तार पूर्व्वक विधान सनत्कुमार संहिता के कार्त्तिक माहात्म्य में है जिस में से आवश्यक कर्म्म यहां पर लिखे जाते हैं। प्रातःकाल उठ के धर्म्म चिन्तवन करके भगवान का ध्यान करना जैसा सनत्कुमार संहिता में ध्यान लिखा है।

प्रातस्स्मरामिभवभीतिमहार्तिशान्त्यै नारायणं गरुड़वाहनमब्जनाभं
ग्राहाभिभूतवरवारणमुक्तिहेतुं चक्रायुधं तरुणवारिजपत्रनेत्रं ।४७।
प्रातर्नमामि मनसा वचसा च मूर्ध्ना पादारविंदयुगलं परमस्यपुंसः।
नारायणस्य नरकार्णवतारकस्य पारायणप्रवणविप्रपरायणस्य ।४८।
प्रातर्भजामि भजतामभयं करंतं प्राक् सर्व्वजन्मकृतपापभयापहत्यै।
योग्राहवक्त्रपतितांघ्रिगजेंद्रघोरशोकार्तिनाशनकरोधृतशंखचक्रः४९

श्लोकत्रयमिदम्पुण्यं प्रातः प्रातः पठेन्नरः।
लोकत्रयगुरुस्तस्मै दद्यादात्मपदं हरिः ॥ ५० ॥

और भी जो कुछ हो सके भगवान का स्मर्ण कर के अपने गुरु का ध्यान करना।

यथा गार्ग्यां।

ज्ञानमुद्रापरं ध्यायेत् श्रीगुरुं स्वस्तिकासनं।
ध्यात्वा कृष्णं परं ध्यायेत् भक्तो एकाग्रमानसः ॥ ५१ ॥
किशोरं कोमलं श्यामं वंशीवेत्रविभूषितं।
एवं कृत्वा हरेर्ध्यानं पुनर्गच्छेद्बहिस्थलं ॥ ५२ ॥

पलथी मारे बैठे ज्ञानमुद्रा से उपदेश कर रहे हैं ऐसा अपने श्री गुरु का

ध्यान कर के फिर श्री कृष्णचन्द्र का ध्यान करना कोमल अंग किशोर सुरूप श्यामसुन्दर बंसी छड़ी धारण किए ऐसे श्री भगवान का ध्यान कर के फिर महादेव इत्यादिक देवता, गंगादिक नदी, नारदादि ऋषि, पृथ्वी, सप्तसमुद्र, नवग्रह इत्यादिक का ध्यान कर के वैश्रवन का ध्यान कर के अपना हाथ देखना वा दूब, ऐना, सोना, गऊ इत्यादिक मंगल वस्तुओं को देख लेना जिस में दुष्ट मुख दर्शन का दोष नाश हो जाय फिर यह मन्त्र पढ़ के पृथ्वी पर पैर रखना।

समुद्रमेखलेदेवि पर्वतस्तनमंडिते।
विष्णुपत्निनमस्तुभ्यं पादस्पर्शंचमस्वमे ॥ ५३ ॥

फिर मंदिर में जा कर के श्री भगवान को दंडवत् करना फिर नगर के बाहर शौच कर के पवित्र होना नदी के तलाव के वा कोई जलाशय के किनारे मल त्याग नहीं करना इस का महा दोष है और भी अन्न के खेतखलिहान में देवालय में राजमार्ग में मल त्याग नहीं करना इस का माघ माहात्म्य में बड़ा पाप लिखा है और जहां मल त्याग करना वहां तृण बिछाय के और मुख के आगे वस्त्र को आड़ कर के सूर्य्य चन्द्रमा की ओर से मुख फेर कर के मल त्याग करना ऐसे मल त्याग कर के फिर मृत्तिकास्पर्श कर के पवित्र होना जिस की विधि सब स्मृतिओं और पुराणों में लिखी है। एकालिंगे गुदेपंच इत्यादि। यह वाक्य पृथक् पृथक् पुस्तकोंमें अनेक चालसे मिलता है और गिनती में परस्पर विरोध पड़ता है परन्तु यहां हम वही वाक्य लिखते हैं जो सनत्कुमार संहिता के कार्त्तिक माहात्म्य में है क्योंकि यहां प्रसंग कार्त्तिक का है।

यथा। एकालिंगे गुदे सप्त दश वामकरे तथा।
उभयोः सप्तदातव्याः पादयोर्मृतिकाद्वयं ॥ ५४ ॥

लिंग में एक गुदा में सात बायें हाथ में दश फिर दोनों हाथ में सात सात पैर में दो दो बेर मिट्टी लगा के धोना। ब्रह्मचारी को इसकी दूनी बानप्रस्थ को तिगुनी और जती को चौगुनी यह क्रम है। फिर

अश्वक्रान्ते रथक्रान्ते विष्णुक्रान्ते वसुन्धरे।
मृत्तिके हर में पापं यन्मया दुष्कृतं कृतं ॥ ५५ ॥

इस मन्त्र से शुद्ध मृत्तिका से हाथ पैर धो के फिर दतुअन करना।

यथा गार्ग्यां ।

कंटकी चीर कार्पास निर्गुंडीब्रह्मवृक्षिका ।
वटे रंड विगंधाढ्यान्न कुर्य्याद्दन्तधावनं ॥ ५६ ॥

बबूल बेर कपास निर्गुंड़ी पलाश बड़ रेंड़ दुर्गंध के वृक्ष इस की लकड़ी से दतुवन नहीं करना तथा दतुवन करने के समय यह मन्त्र पढ़ना ।

तत्रैव ।

आयुर्बलं यशो वर्चः प्रजा पशु वसूनि च ।
ब्रम्हप्रज्ञां च मेधां च त्वंनो देहि वनस्पते ॥ ५७ ॥

फेर कुल्ला करना उपवास, नवमी, छठ श्राद्ध के दिन, अमावस, आदितवार, एतने दिन दतुवन नहीं करना मिट्टी वा और किसी वस्तु से मुख शुद्ध कर लेना और बारह कुल्ला करने से मुख की शुद्धि हो जाती है फेर श्री गंगा स्नान करने जाना उस समय चित्त एकाग्र कर के जाना मुख में भगवान का यश गावते जाना जो लोग श्री गंगास्नान करते जाते हैं उन को पैर पैर पर अश्वमेध और वाजपेययज्ञ का फल होता है ।

यदुक्तं । श्रीमद्भागवते पंचमस्कन्धे

यस्यांस्नानार्थं चागच्छतःपुंसःपदेपदेऽश्वमेधराजसूय फलंदुर्लभमिति

ऐसे श्री गंगाजी के स्नान को मन अति शुद्ध करके जाना श्री जाय के पहिले श्री गंगाजी के तट पर दीपदान करना और भी देवालय तुलसीवृक्ष के निकट दीपदान करना ।

यथा सनत्कुमारसंहितायां कार्त्तिकमाहात्म्ये ।

देवालये नदीतीरे राजमार्गे विशेषतः ।
निद्रास्थाने दीपदाता तस्य श्रीः सर्व्वतोमुखी ॥ ५८ ॥

फेर श्री गंगाजी के निकट आय के बालझारना प्रमाण स्मृति में ।

अशोधितेषु केशेषु स्नानं यः कुरुते नरः ।
सम्यक् पुण्यं न लभते तस्मात्केशांश्च शोधयेत् ॥ ६० ॥

फेर संकल्प करे "कार्त्तिकमासे असुकपक्षे असुकतिथौ असुक वासरे असुकगोत्रोत्पन्नो असुक शर्म्माहं अचिन्त्यफलप्राप्तयर्थं श्री गंगास्नानमहं करिष्ये ।"

ऐसे संकल्प करके फिर प्रतिज्ञा करना इस मन्त्र से।

कार्त्तिकेहं करिष्यामि प्रातःस्नानं जनार्दन।
प्रीत्यर्थं तव देवेश दामोदर मया सह ॥ ६१ ॥

यह प्रतिज्ञा का मन्त्र पढ़ना (यह मन्त्र सब कार्त्तिकमाहात्म्य में लिखा है) फेर अर्घ्य इन मन्त्रों से दीजिए।

यथा स्कान्दे पाद्मे। ब्राह्मे सनत्कुमारसंहितायां च।

नमः कमलनाभाय नमस्ते जलशायिने।
नमस्तेस्तुहृषीकेश गृहाणार्घ्यं नमोस्तुते ॥
नित्ये नैमित्तिके कृत्ये कार्त्तिके पापशोधने।
गृहाणार्घं मयादत्तं राधया सहितो हरे ॥ ६२ ॥
व्रतिनः कार्त्तिकेमासि स्नातस्य विधिवन्मम।
गृहाणार्घ्यं मयादत्तं दनुजेन्द्रनिषूदन ॥ ६३ ॥
दामोदर जगन्नाथ शंखचक्रगदाधर।
राधाकान्तगृहाणार्घ्यं प्रसीद परमेश्वर ॥ ६४ ॥
द्रवरूपेण देवेश वर्त्ततेगंगवारिषु।
इदमर्घ्यं गृहाणत्वं स्वीकृत्यकरुणांकुरु ॥ ६५ ॥

ऐसे अर्घ्य प्रदान करके फिर बाल में अवला तिल और तुलसी की मट्टी लगाना और जिस जिस दिन अंवला तिल न लगाना हो उस दिन केवल तुलसी की मट्टी लगाना। फिर श्री गंगा जी की मृत्तिका का तिलक (अश्वक्रांते रथ क्रांते) इस मंत्र से करके हाथ जोड़के दंडवत् करके प्रार्थना करना।

विरजा धूतपापा च पुण्यतोयासरस्वती।
गंगाच यमुना चैव पंचनद्यः पुनन्तुमां ॥ ६६ ॥
अयोध्या मथुरा मायां काशी कांची अवन्तिका।
पुरी द्वारावती चैव सप्तैता मोक्षदायकाः ॥ ६७ ॥
विष्णोराज्ञा मनुप्राप्य कार्त्तिक व्रतकारिणः।

रचन्ति देवास्ते सर्व्वे मां पुनन्तु सवासवाः ॥ ८ ॥
वेदमन्त्रा सबीजाश्च सरहस्यामखान्विताः ।
कश्यपाद्याश्च मुनयो मां पुनन्तुसदैवते ॥ ६९ ॥
नमस्ते देवदेवेश शंखचक्रगदाधर ।
देवदेहिममानुज्ञां युष्मत्तीर्थं निसेवणे ॥ ७० ॥
नन्दिनीत्येष ते नाम देवेषु नलिनी तिच ।
दचा पृथ्वी च विहगा विश्वनाथा शिवा सती ॥ ७१ ॥
विद्याधरी सुप्रसन्ना तथा लोकप्रसादिनी ।
क्षेमावती जान्हवी च शान्ता शान्तिप्रदायिनी ॥ ७२ ॥
एतानि पुण्यनामानि स्नानकालेप्रकीर्तयेत् ।
भवेत्सन्निहिता तत्र गंगात्रिपथगामिनी ॥ ७३ ॥ इति ॥

फिर हाथजोड़ के यह मन्त्र पढ़िए ।

स्वर्गारोहणसोपानं त्वदीयमुदकं शिवे ।
अतः स्पृशामि पादाभ्यामपराधं क्षमस्वमे ॥ ७४ ॥

ऐसे प्रार्थना कर के मौन होय के स्नान करना भगवान का नाम लेना श्री गंगा जी के निकट कुल्ला नहीं करना ऐसे सनान करके सीढ़ी पर एक अर्घ्य देना।

मंत्र ।

यन्मया दूषितं तोयं शारीर मल सम्भवैः ।
तद्दोष परिहारार्थं यक्ष्माणं तर्पयाम्यहं ॥ ७५ ॥

फिर शुद्ध दो वस्त्र पहिन के सन्ध्यादिक करना। स्कन्द पुराण में लिखा है कि श्री गंगा जी में ये तेरह कर्म्म नहीं करना । शौच, कुल्ला, जूठाफेंकना, मलकरना, तेल लगाना, निंदा, प्रतिग्रह, रति, दूसरे तीर्थ की इच्छा तथा दूसरे तीर्थ की प्रशंसा, वस्त्र धोना, उपद्रव, ये सब कर्म्म श्री गंगा जी में नहीं करना, फिर श्री गंगाजल माथे पर छिड़क कर अघमर्षण करना फिर वस्त्रांग

आचमन करके शिखा बांधना फेर तिलक करना बिना तिलक सन्ध्यादिक नहीं करना। यथा पाद्मे ।

यज्ञोदानं तपोहोमं स्वाध्यायपितृतर्पणं ।
भस्मीभवतितत्सर्व्वं ऊर्ध्वपुंड्र विनाकृतं ॥ ७६ ॥

यज्ञदान तप होम स्वाध्याय पितृतर्पण इत्यादिक सब कर्म्म ऊर्ध्व-पुंड्र किए बिना जो करते हैं उन का निष्फल होता है। ऊर्ध्वपुंड्र ही लगाना और तिलक न लगाना इस का सिद्धान्त श्रीश्री गिरिधरदेव चरण ने ऊर्ध्व-पुंड्र मार्त्तण्ड में किया है। ऐसे ही सर्व्वदा तुलसी की माला धारण करना और जो सब दिन धारण न करते होंय तो कार्त्तिक में अवश्य धारण करना। यदुक्तं निर्णय सिन्धौ। अथ माला धारणं। तत्र स्कान्दे। द्वारकामाहात्म्ये।

निवेद्य केशवे मालां तुलसी काष्ट संभवां ।
वहते यो नरो भक्त्या तस्य नैवास्ति पातकं ॥ ७७ ॥
नजह्या त्तुलसी मालां धात्री मालांविशेषत: ।
महापातक संहन्त्रीं सर्व्व कामार्थ दायिनीं ॥ ७८ ॥

विष्णुधर्म्मे ।

स्पृशेत्तुयानि लोमानि धात्री माला कलौ नृणां ।
तावद्वर्ष सहस्राणि वैकुंठे वसतिर्भवेत् ॥ ७९ ॥
मालायुग्मं तु यो नित्यं धात्री तुलसि सम्भवां ।
वहते कंठ देशे तु कल्प कोटि दिवं वसेत् ॥ ८० ॥

मन्त्र। तुलसी काष्टसम्भूते माले कृष्णजनप्रिये ।
बिभर्मित्वामहं कंठे कुरु मां कृष्णवल्लभं ॥ ८१ ॥
एवं सम्प्रार्थ्य विधिवन्मालां कृष्णगलेर्पितां ।
धारयेत् कार्तिके यो वै सगच्छेत् वैष्णवम्पदमिति ॥८२॥

निर्णयसिन्धु ग्रन्थ में माला धारण लिखते हैं वहां स्कन्दपुराण का यह वचन है कि तुलसी के काठ की माला भगवान की प्रसादी जो लोग भक्ति से पहिनते हैं उनके एक पाप भी नहीं बंचते। महा पापों के दूर करने

वाली सब कामों के देनेवाली तुलसी की माला वा आवले की माला को कधी भी नहीं त्यागना। विष्णुधर्म्म में। कलियुग में आंवले को माला से जितना रोंआं छूजाता है उतने हज़ार बरस उस मनुष्य को स्वर्गवास मिलता है। ऊपर जो मन्त्र लिखा है उस से जो विधिपूर्व्वक माला सदा धारण करते हैं वा श्री कृष्ण को प्रसादी माला जो लोग कार्तिक में धारण करते हैं उन को वैष्णव पद मिलता है। इति।

इस रीति से तिलक माला धारण करके क्या करना चाहिए सो लिखते हैं।

यथा सनत्कुमारसंहितायां।

ततः सन्ध्या मुपासीत स्वसूत्रोक्तेन कर्म्मणा।
ततः कार्य्यो जपोदेव्या यावत्सूर्य्योदयो भवेत्॥ ८३॥

फिर अपने सूत्र के अनुसार सन्ध्या करना फिर जब तक सूर्य्योदय न होय तब तक गायत्री देवी का जप करना। इति।

निर्णयसिन्धु बनाने वाले ने यह निर्णय किया है कि कार्त्तिक के महीने में बिना अरुणोदय भी संध्या करने का दोष नहीं है। इति।

मायाकृतं मूत्र पुरीष शौचं स्नानंच गंडूषणमेहनंच।
वस्त्रस्यसंक्षालनमेवदोषान् क्षमस्व गंगे मम सुप्रसीद८४

श्री गंगा जी की प्रार्थना इस मंत्र से करना। अब सूर्य्योदय पीछे जो करना चहिए वह लिखते हैं। तत्रैव।

विष्णोःसहस्रनामाद्यं सन्ध्यान्ते च पठेन्नरः।
देवालये समागत्य पुनः पूजनमारभेत्॥ ८५॥

सन्ध्या करके विष्णुसहस्र नाम इत्यादिक ग्रन्थों का पाठ करके फिर भगवान की पूजा को आरम्भ करना। तहां फूल से भगवान की पूजा करना इस का माहात्म्य लिखते हैं।

यथा भार्गवार्चनदीपिकायांनृसिंहपुराणे।

अगस्त्यकुसुमै र्देवं योर्चयेच्च जनार्द्दनं।
दर्शनात्तस्य देवर्षे नरकं नार्हति नरः॥ ८६॥
विहाय सर्व्वं पुष्पाणि मुनिपुष्पेण केशवं।

कार्तिके योऽर्चयेद्भक्त्या वाजपेयफलं लभेत् ॥ ८७ ॥

स्कान्दे ।

मालतीमालया विष्णुः केतक्या चैव पूजितः ।
समाः सहस्रं सुप्रीतो भवेत्स मधुसूदनः ॥ ८८ ॥

पृथ्वीचन्द्रोदये पाद्मे ।

कार्तिके नार्चितो यैस्तु कमलैः कमलेक्षणः ।
जन्मकोटिषु विप्रेन्द्र न तेषां कमला गृहे ॥ ८९ ॥
कार्तिके केशवे पूजा येषां नाम्ना सुतैः कृता ।
ते निर्भर्त्स्य रवेः पुत्रं वसन्ति त्रिदिवे सदा ॥ ९० ॥
तुलसीदललक्षेण कार्तिके योऽर्चयेत् हरिं ।
पत्रे पत्रे मुनिश्रेष्ठ मौक्तिकं लभते फलं ॥ ९१ ॥

अगस्त के फूल से जो भगवान की पूजा करते हैं उन के दर्शन से नरक नहीं मिलता। सब फूलों को छोड़ के कार्त्तिक में जो अगस्त के फूल से भक्ति पूर्व्वक पूजा करते हैं उन्हें वाजपेय का फल होता है। कार्त्तिक में जिन्हें कमल से श्री भगवान की पूजा नहीं किया उन के घर कोटि जन्म तक लक्ष्मी नहीं आतीं। जो कार्त्तिक में भगवान के नाम से पूजा करते हैं वे लोग जम को अनादर देके स्वर्ग में रहते हैं। और जो लोग लाख तुलसी दल भगवान को अर्पण करते हैं वे एक एक पत्ते में मोती समर्पण का फल पाते हैं वा एक एक पत्ते में मुक्ति का फल पाते हैं। इति ।

मन्त्रः ।

नमस्तुलसि कल्याणि गोविंदचरणप्रिये ।
केशवार्थे विचिन्वामि वरदा भव शोभने ॥ ९२ ॥

ऊपर लिखे हुए मन्त्र से तुलसी तोड़ कर श्री भगवान की पूजा करने का अकथनीय फल है। अब पूजा करने की विधी लिखते हैं वह पूजा दो प्रकार की है जिस में नियम नहीं और परमभावात्मिका उस का नाम सेवा और जिस में नियम होय चाहे नित्य होय चाहे नैमित्तिक होय उस का

नाम पूजा। इस के भेद और प्रकार आदिपुराण और गर्गसंहिता में और भी सम्प्रदाय के ग्रन्थों में विस्तारपूर्व्वक लिखे हैं। अब हम इस स्थान पर पूजा करने की विधि लिखते हैं। श्री भगवान की पूजा में चित्त एकाग्र रखना पहिले मंदिर में जा करके प्रभु को जगाना फिर षोड़शोपचार पूजा की सामग्री ले के पूजा आरम्भ करना तहां पहिले आवाहन करना।

मन्त्र।

गोलोकधामाधिपते रमापते गोविन्ददामोदरदीनवत्सल ॥
राधापते माधव सात्वतां पते सिंहासनेऽस्मिन् मम सन्मुखोभव ९३

अथ आसनं।

श्रीपद्मरागस्फुरदूर्ध्वपृष्ठं महार्हवैडूर्य्यखचित्पदाब्जं।
वैकुंठवैकुंठपते गृहाण पीतं तड़ित्स्नानकवस्त्रयुक्तं ॥९४॥

अथ पाद्यं।

परिस्थितं निर्मलसैक्यपात्रे समागतं विष्णुसरोवराद्धि।
योगेश देवेश जगन्निवास गृहाण पाद्यं प्रणमामि पादौ ॥९५॥

अथ अर्घ्यं।

नमस्ते देवदेवेश नमस्ते धरणीधर।
नमस्ते कमलाकान्त अर्घ्यं नः प्रतिगृह्यतां ॥ ९६ ॥

अथाचमनं।

कर्पूरवासितं तोयं मन्दाकिन्याः समाहृतं।
आचम्यतां जगन्नाथ मया दत्तं हि भक्तितः ॥ ९७ ॥

अथ स्नानं।

काश्मीरपाटीरविमिश्रितेन स्वमर्चिकोशीरवताजलेन।
स्नानं कुरु त्वं यदुनाथ देव गोविन्दगोपालकतीर्थपाद ॥ ९८ ॥

अथ मधुपर्कं।

मध्वान्हचलाकभवश्रमापहं सितांगसंपर्कमनोहरं परं।
गृहाण विष्णो मधुपर्कमासनं श्रीकृष्णपीताम्बरसात्वतां पते ॥९९॥

अथ वस्त्रं ।

विभो सर्व्वतो प्रस्फुरत् प्रोज्ज्वलंतं महत् स्वर्णसूत्रांकितं दुर्लभं च ॥
स्वतोनिर्म्मितंपद्मकिंजल्कवर्णंगृहाणास्वरं देवपीतास्वाराख्यं॥१००॥

अथ भूषणं ।

कनकरत्नमयं मयनिर्मितं मदनरुक्मदनं सदनं रुचां ॥
उरसि सर्व्वसुवर्णविभूषणं सकललोकविभूषण गृह्यतां ॥ १०१ ॥

अथ यज्ञोपवीतं ।

सुवर्णाभमापीतवर्णं सुमंत्रैः वरं प्रोक्षितं वेदवन्निर्म्मितं च ।
शुभं पंचकार्य्येषु नैमित्तिकेषु प्रभो यज्ञ यज्ञोपवीतं गृहाण ॥१०२॥

अथ गंधं ।

संध्येन्दुगौरं बहुमंगलं श्री काश्मीरपाटीरकपंकपंकं ।
सुसंवरं गंधचयं गृहाण समस्तभूमंडलभारहारिन् ॥ १०३ ॥

अथाक्षतं ।

ब्रह्मावर्त्ते ब्रह्मणा पूर्व्वमुप्तं ब्राह्मी स्तोयैः सिंचितं विष्णुनाच ।
रुद्रैय रौद्राक्षितो राक्षसेभ्यः साक्षाद्भूमाक्षतं त्वं गृहाण ॥१०४॥

पुष्पं ।

मंदार सन्तानक पारिजात कल्पद्रुमश्री हरिचंदनानां ।
गृहाण पुष्पाणि हरे तुलस्या मिश्राणि साक्षान्नवमंजरीभिः॥१०५॥

अथ धूपं ।

लवंगपाटीरजचूर्णमिश्रं मनुष्य देवासुर सौख्यदं च ।
सद्यः सुगन्धीकृतहर्म्यदेशं द्वारावती भूप गृहाण धूपं ॥ १०६ ॥

अथ दीपं ।

तमोहारिणं ज्ञानमूर्त्तिं मनोज्ञं लसद्वर्त्ति कर्पूर युक्तं गवाज्यं ।
जगन्नाथ देवेश ज्योतिस्वरूप स्फुरज्ज्योतिकं दिव्यदीपं गृहाण १०७

अथ नैवेद्यं ।

सर्व्वैः रसैः वेदविधिव्यवस्थितं रसैः रसाढ्यं च यशोमतीकृतं ।
गृहाण नैवेद्यमिदं स्वरोचिषं गव्याप्लुतं सुन्दरनन्दनन्दन ॥१०८॥

अथ जलं ।

गंगोत्तरी वेगबलात्समुद्धृतं सुवर्णपात्रेण हिमांशुशीतलं ।
सुनिर्मलाभं ह्यमृतोपमं जलं गृहाण राधावरदीनवत्सल ।१०९।

अथ आचमनं ।

कंकोलजातीफलपुष्पवासितं परं गृहाणाचमनं दयानिधे ।
राधापते श्रीविरिजापते प्रभो श्रियःपते सर्व्वपते च भूपते ॥११०॥

अथ ताम्बूलं ।

जातीफलैलासुरपुष्पयुक्तं यावित्रिपूगीफलपत्रवृन्दं ।
मुक्ताफलाखादिररोचनाढ्यं गृहाण ताम्बूलमिदं सुरेश ॥१११॥

अथ दक्षिणा ।

नाकपालवसुपालमौलिभिः वन्दितांघ्रियुगल प्रभो हरे ।
दक्षिणां परिगृहाण माधव यज्ञरूप प्रभु दक्षिणापते ॥ ११२ ॥

अथ प्रदक्षिणा ।

यानिकानिच पापानि जन्मान्तरकृतानि च ।
तानि सर्व्वाणि नश्यन्तु प्रदक्षिण पदेपदे ॥ ११३ ॥

अथ नीराजनं ।

प्रस्फुरत्परमदीप्तमंगलं गोघृताक्तनवपंचवर्त्तिकं ।
आर्त्तिकं परिगृहाण चार्त्तिहन् पुण्यकीर्तिविशदीकृता वने ११४

अथ प्रार्थना ।

हरे मत्समः पातकी नास्ति भूमौ
तथा त्वत्समो नास्ति पापापहारी ॥
इति त्वां च मत्वा जगन्नाथ देव

यथेच्छा भवेत्ते तथा मां कुरु त्वं ॥ ११५ ॥

अथ नमस्कारः ।

नमोस्त्वनन्ताय सहस्रमूर्त्तये सहस्रपादाक्षिशिरोरुबाहवे ।
सहस्रनाम्नेपुरुषायशाश्वतेसहस्रकोटीयुगधारिणेनमः ।११६। इति

इस प्रकार से भगवान की पूजा करके तब तुलसी पूजन करे तुलसी पूजन की विधि लिखते हैं ।

यथा सनत्कुमारसंहितायां कार्त्तिकमाहात्म्ये ।

तुलस्यां सर्व्वतीर्थानि तुलस्यां सर्व्वदेवताः ।
कार्त्तिकेमासि तिष्ठन्ति नात्र कार्य्या विचारणा ११७

कार्त्तिक के महीने में श्री तुलसी जी में सब देवता और सब तीर्थ निवास करते हैं ।

तथा पद्मपुराणे कार्त्तिकमाहात्म्ये ।

तुलसीकाननं राजन् गृहे यस्यावतिष्ठते ।
तद्गृहं तीर्थरूपंतु न यान्ति यमकिंकराः ॥११८॥
रोपणात्पालनात्स्पर्शान्नृणाम्यापहरातथो ।
तुलसी दहते पापं वाङ्मनःकायसम्भवं ॥ ११९ ॥

तुलसी का बन जिस घर में रहता है उस तीर्थ रूप घर को यम के दूत नहीं देखते । वृक्ष लगाने से, पालने से, स्पर्श करने से, तुलसी जी कायिक वाचिक मानसिक तीनो पापों को दूर करती हैं ।

तथा काशीखण्डे दूतान् प्रति यमवाक्यं ।

तुलस्यलंकृता ये ये तुलसीनामजापकाः ।
तुलसीवनपाला ये ते त्याज्या दूरतो भटाः ॥ १२० ॥

यमराज दूतों से आज्ञा करते हैं किहे दूत लोग हमारी बात सुनो, जो तुलसी की कंठी पहिनते हैं जो लोग तुलसी का नाम जपते हैं जो लोग तुलसी के बन की रक्षा करते हैं उन को तुम लोग दूर ही से छोड़ देना ।

तथा स्कान्दपुराणे कार्त्तिकमाहात्म्ये ।

तुलसी गन्धमादाय यत्र गच्छति मारुतः ।

दिशा दश च ताः पूताः भूतग्रामं चतुर्विधं ॥ २२१ ॥

तुलसी जी की सुगन्धि लेकर जहां जहां वायु जाता है वहां की दिशा और वहां के चारों प्रकार के जीव पवित्र हो जाते हैं। इति।

अब तुलसी पूजा के मंत्र लिखते हैं।

अथ ध्यानं।

ध्यायेच्च तुलसीं देवीं श्यामां कमललोचनां।
प्रसन्नामब्जकल्हार वराभय चतुर्भुजां ॥ १२२ ॥
किरीट हार केयूर कुण्डलादि विभूषितां।
धवलांशुकसंयुक्तां पद्मासननिषेवितां ॥ १२३ ॥

अथावाहनं।

देवि त्रैलोक्य जननि सर्व लोकैकपावनि।
आगच्छ भगवत्यत्र प्रसीद श्री हरिप्रिये ॥ १२४ ॥

अथासनं।

सर्वलोकमये देवि सर्वदा विष्णुवल्लभे।
देवि स्वर्णमयं दिव्यं गृहाणासनमव्ययं ॥ १२५ ॥

अथार्घ्यं।

सर्वदेवदलाकारे सर्वदेव नमस्कृते।
दत्तं पाद्यं गृहाणेदं तुलसि त्वं प्रसीद मे ॥ १२६ ॥

अथाचमनीयं।

सर्वलोकस्य रक्षार्थं सदा कल्याणकारिणि।
गृहाण तुलसि प्रीत्या इदमाचमनीयकं ॥ १२७ ॥

अथ स्नानं।

गंगादिभ्यो नदीभ्यश्च समानीतमिदं जलं।
स्नानार्थं तुलसीदेवि प्रीत्या तत् प्रतिगृह्यतां ॥ १२८ ॥

अथ वस्त्रं।

क्षीरोदमथनोद्भूते लक्ष्मी चंद्र सहोदरे।

गृह्यतां परिधानार्थमिदं चौमाम्वरं शुभे ॥ १२९ ॥

अथ गन्धं ।

श्रीगंधकुंकुमं दिव्यं कर्पूरागरुसंयुतं ।
कल्पितं ते महादेवि प्रीत्यर्थं प्रतिगृह्यतां ॥ १३० ॥

अथ पुष्पं ।

नीलोत्पल सुकल्हार मालत्यादीनि शोभने ।
पद्मादि गंधवन्तीति पुष्पाणि प्रतिगृह्यतां ॥ १३१ ॥

अथ धूपं ।

धूपं गृहाण देवेशि मनोहरि सुमंगलं ।
आज्यमिश्रं तु तुलसि भक्तस्याभीष्टदायिनि ॥ १३२ ॥

अथ दिपं ।

अज्ञानतिमिरांधेभ्यो ज्ञानदीपप्रदायिनि ।
दत्तः तुलसि प्रीत्यर्थं दीपोयं प्रतिगृह्यतां ॥ १३३ ॥

अथ नैवेद्यं ।

नमस्ते जगतांनाथे प्राणिनां प्रियदर्शने ।
यथाशक्ति मयादत्तं नैवेद्यं देवि गृह्यतां ॥ १३४ ॥

जलं ।

नमो भगवति श्रेष्ठे नारायणि जगन्मये ।
तुलसि त्वरया देवि पानीयं प्रतिगृह्यतां ॥ १३५ ॥

अथ ताम्बूलं ।

अमृतेऽमृतसम्भूते तुलस्यमृतरूपिणि ।
एलाकर्पूरसंयुक्तं ताम्बूलं प्रतिगृह्यतां ॥ १३६ ॥

अथ फलं ।

इदं फलं मया देवि स्थापितं पुरतस्तव ।
अनेन सफला वाप्तिर्भवेज्जन्मनि जन्मनि ॥ १३७ ॥

अथ प्रदक्षिणा ।

दक्षिणे दक्षिणाकारे स्वभक्तानाम्प्रियंकरि ।
करोमि ते सदा भक्त्या विष्णुकान्ते प्रदक्षिणां ॥ १३८ ॥

अथ नमस्कार । पुष्पांजलिः ।

नमोनमो जगद्धात्र्यै जगदाद्यै नमोनमः ।
नमोनमो जगद्भूत्यै नमस्ते परमेश्वरि ॥ १३९ ॥
नमस्तुलसि कल्याणि नमो विष्णुप्रिये शुभे ।
नमो मोक्षप्रदे देवि नमः संपत्प्रदायिनी ॥ १४० ॥
तुलसी पातु मां नित्यं सर्व्वापद्भ्योपि सर्व्वदा ।
कीर्तिता वा स्मृता वापि या पावयति मानुषान् ॥ १४१ ॥
महाप्रसादजननि सर्व्व पापप्रणाशिनि ।
आधिव्याधि हरे देवि तुलसि त्वां नमाम्यहं ॥ १४२ ॥
या दृष्टा निखिलाघसंघशमनी स्पृष्टा वपुः पावनी ।
रोगाणामभिवन्दिता निरसनी सिक्तान्तकत्रासिनी ॥
प्रत्यासत्तिविधायिनी भगवतः कृष्णस्य संरोपिता ।
न्यस्ता तच्चरणे विमुक्तिफलदा तस्यै तुलस्यै नमः ॥१४३॥

अथ प्रार्थना ।

प्रसीद मयि देवेशि कृपया परया सदा ।
अभीष्टफलसिध्यर्थं कुरु मे माधवप्रियं ॥ १४४ ॥ इति ॥

इस रीति से नित्य तुलसी पूजन करना और तुलसी के पत्र से विष्णु का पूजन करना ।

यथा गारुड़े ।

गवामयुतदानेन यत्फलं लभते खग ।
तुलसीपत्रमेकेन तत् फलं कार्त्तिके स्मृतं ॥ १४५ ॥

अयुत गोदान करने का जो फल है वह कार्त्तिक में एक तुलसी पत्र

चढ़ाने से मिलता है यह आप श्रीमुख से आज्ञा करते हैं गरुड़जी से । इति ।

इस भांति तुलसी पूजन कर के फिर आंवला की पूजा करना तथा कार्त्तिक में आंवला की माला भी पहिरना ।

यथा स्कान्दे । कार्त्तिकमाहात्म्ये । पुराणसारोद्धारे च ।

सर्व्वदेवमयी धात्री वासुदेवमनःप्रिया ।
आरोपणीया सेव्या च पूजनीया सदा बुधैः ॥१४६॥
धात्रीफलविलिप्ताङ्गो धात्रीफलविभूषितः ।
धात्रीफलकृताहारो नरो नारायणो भवेत् ॥ १४७ ।
धात्रीछायां समाश्रित्य कुर्य्याच्छ्राद्धन्तु यो मुने ।
मुक्तिं प्रयान्ति पितरः प्रसादात्तस्य वै हरेः ॥ १४८ ॥
कार्त्तिकेमासि विप्रेन्द्र धात्रीवृक्षोपशोभिते ।
वने दामोदरम्विष्णु म्विचान्नैस्तोषयेद्विभुं ॥ १४९ ॥इति॥

श्री वासुदेव के मन की प्यारी सब देव मयी धात्री पंडित लोगों को सदा लगाना चाहिये सेवा करना चाहिये और पूजना चाहिये। आंवला जिसने देह में लगाया है वा उस को माला पहिनते हैं वा जो लोग आंवला का फल खाते हैं वे मनुष्य नारायण होते हैं। आंवले की छाया में जो श्राद्ध करता है भगवान की कृपा से उस के पितर स्वर्ग में जाते हैं। कार्त्तिक के महीने में आंवले के बगीचे में भगवान दामोदर की विचान्न से पूजा करना। इत्यादि बहुत माहात्म्य लिखा है इस से नित्य आंवला का पूजन करना तथा आंवला के नीचे ब्राह्मण भोजन कराना इस भांति आंवला की पूजा कर के फिर श्रीमद्भागवत इत्यादिक भगवान की कथा सुनना और यथाशक्ति दान कर के ब्राह्मण भोजन कराना।

यथा सनत्कुमारसंहितायां कार्त्तिकमाहात्म्ये ।

नृत्यगानादिकार्य्येषु प्रहरं दिवसं नयेत् ।
ततः पुराणश्रवणं यामार्द्धं सम्यगाचरेत् ॥ १५० ॥
सम्पूर्णं कार्त्तिकं यस्तु संपूज्यामलकीं शुभां ।

राधादामोदरप्रीत्यै भोजयेच्चैव दम्पतीन् ॥ १५१ ॥
पश्चात्स्वयं सुभुंजीत न श्रीस्तस्य त्यजं व्रजेत् ।
कृत्वा माध्यान्हिकं कर्म्म भुंजीत हविरूर्जितं ॥१५२॥
ब्रह्मांशकसमुद्भूते पलाशे यस्तु भोजनं ।
कुर्य्यात् कार्तिकमासे सो विष्णुलोकं प्रयास्यति ॥१५३॥

पहर दिन चढ़े तक भगवान के मंदिर में नाचना गाना फिर आधे पहर कथा सुनना फिर आंवले के नीचे दंपती ब्राह्मण भोजन कराय के माध्यान्ह सन्ध्या कर के ऊपर जिन वस्तुओं का निषेध लिखा है उन्हे छोड़ के महा प्रसादी अन्न भोजन करना। जो कार्त्तिक में नित्य ऐसा करते हैं उन्हे लक्ष्मी त्याग नहीं करती। ब्रह्मा के अंश से उत्पन्न भया है ऐसे पलाश के पत्ते में जो भोजन करते हैं वे लोग विष्णुलोक पाते हैं। इति।

इस भांति दिन का कर्म्म लिख के अब सन्ध्या का कर्म्म लिखते हैं। रात्रि-कर्म्म में तीन कर्म मुख्य हैं एक तो आकाश दीपदान, दूसरा भगवन्मन्दिर वा श्री गंगा जी वा तुलसी के निकट दीपदान, तीसरा नाम संकीर्त्तन। अब तीनों का फल और विधि लिखते हैं।

यथा ब्रह्मांडे ।

विष्णुवेश्मनियोदद्यात्तुलायां नभदीपकं ।
अग्निष्टोमसहस्रस्य फलमाप्नोति मानवः ॥ १५४ ॥

तथा निर्णयामृते निर्णयसिन्धौ च पुष्करपुराणे ।

तुलायान्तिलतैलेन सायङ्काले समागते ।
आकाशदीपं योदद्यान्मासमेकं हरिं प्रति ॥ १५५ ॥
महतीं श्रियमाप्नोति रूपसौभाग्यसम्पदामिति ।

जो भगवन्मंदिर में आकाशदीप देते हैं उन्हें हजार अग्निष्टोम का फल होता है। कार्त्तिक के महीने भर जो लोग श्रीकृष्ण के प्रति सन्ध्या को आकाशदीप देते हैं वे लोग बड़ी लक्ष्मी और बहुत सम्पदा और रूप सौभाग्य पाते हैं।

तथा हेमाद्रौ आदिपुराणे ।

दिवाकरे ऽस्ताचलमौलिभूते गृहाद्दूरे पुरुषप्रमाणं ॥
यूपाकृतिं यज्ञियवृक्षदारु मारोप्यभूमावथतस्य मूर्धि ॥ १५६ ॥
यवांगुलच्छिद्रयुतास्तु मध्ये द्विहस्तदीर्घा अथ पट्टिकास्तु ॥
कृत्वा चतस्रोष्टदलाः कृतास्तु याभिर्भवेदष्टदिशानुसारि ॥१५७॥
तत् कर्णिकायान्तु महाप्रकाशो दीपाः प्रदेया दलगास्तथाष्टौ ॥
निवेद्य धर्म्माय हराय भूम्यै दामोदरायाप्यथ धर्म्मराज्ञे ॥
प्रजापतिभ्यस्त्वथसत्पितृभ्यः प्रेतेभ्य एवाथतमः स्थितेभ्यः॥१५८।

जब सन्ध्या होय तब घर के पास मनुष्य के बराबर पवित्र लकड़ी गाड़ के उस के ऊपर दो हाथ का बांस लगाना उस पर चौमुखा वा अठमुखा दीया रख के आठ बत्ती वा आठ पत्तो पर आठ दीया बालना इन आठोंके निमित्त १ धर्म्म २ महादेव जी ३ पृथ्वी ४ श्रीराधादामोदर ५ धर्म्मराज ६ प्रजापतिगन ७ पितृगन ८ अंधेरे में रहने वाले प्रेत। इन आठों के निमित्त दीपदान करना और वैष्णवों के मन्दिर में ऊंचा बांस गाड़ के उस पर इस मंत्र से दीपदान करना ।

दामोदराय नभसि तुलायां दोलया सह ।
प्रदीपं ते प्रयच्छामि नमोनन्ताय वेधसे ॥ १५९ ॥ इति ॥

कार्त्तिकमाहात्म्य में २० वा ८ वा ५ हाथ का बांस लिखा है। इस प्रकार आकाश दीपदान करके फिर भगवन्मन्दिर में राजमार्ग में गंगा जी के तट पर दीपदान करना ।

यथा सनत्कुमारसंहितायां ।

कार्तिकेमासि सम्प्राप्ते गगने स्वच्छतारके ।
रात्रौ लक्ष्मीः समायाति द्रष्टुंभुवनकौतुकं ॥ १६० ॥
यत्रयत्र च दीपाल्या पश्यत्यब्धिसमुद्भवा ।
तत्रतत्र रतिं कुर्य्यान्नान्धकारे कदाचन ॥ १६१ ।
देवालये नदीतीरे राजमार्गे विशेषतः ।

निद्रास्थाने दीपदाता तस्य श्रीः सर्व्वतोमुखी ॥ १६२ ॥
कीचकंटकसंकीर्णे विषमे दुर्गमस्थले ।
कुर्य्याद्यो दीपदानानि नरकं स न गच्छति ॥ १६३ ॥

कार्त्तिक महीने की रात की जब स्वच्छ तारे निकले रहते हैं तब लक्ष्मी जी घर का कौतुक देखने को आती हैं सो वह जहां जहां दिये बलते देखती हैं वहां प्रसन्न हो कर निवास करती हैं और जहां अन्धकार देखती हैं उस स्थान को त्याग करती हैं। देवता के मन्दिर में, नदी के तीर पर, राजमार्ग में विशेष कर के और निद्रा की जगह दीया बालनेवाले लोगों को लक्ष्मी जी सर्व्वतोमुख रहती हैं। कीच में कांटे की जगह में ऊंचो, नीची, संकरी दुर्गम जगह में जो लोग दीपदान करते हैं वे नरक में नहीं जाते। इति।

इस मंत्र से दीपदान करना।

मन्त्रहीनं क्रियाहीनं जपहीनं जनार्द्दन ।
व्रतं सम्पूर्णतां यातु कार्तिके दीपदानतः ॥ १६४ ॥ इति

और जो विद्यार्थी को पढ़ने के वास्ते तेल देते हैं उन्हें भी बड़ा पुण्य होता है

यथा तत्रैव।

यो वेदाभ्यासिने दद्याद्दीपार्थे तैलमुत्तमं ।
कार्त्तिकेमासि सम्प्राप्ते मुक्तिफलभाग्भवेत् ॥ १६५ ॥

जो कार्त्तिक में पढ़नेवाले विद्यार्थी को दीये का तेल देते हैं वे मुक्तिफल पाते हैं।

और कार्त्तिक सुदी सप्तमी की कामना होय तो कार्त्तवीर्य्य के वास्ते दीपदान करना यह सब कामना का पूर्ण करनेवाला है।

यथा प्रयोगरत्नाकरे। उड्डामरतंत्रे च।

ऊर्जे मासि सितेपक्षे सप्तम्यांभानुवासरे ।
श्रवणर्क्षे व्यतीपाते विष्णोश्चक्रावतारिणः ।
दीपदानं प्रकर्त्तव्यं सर्व्वसौख्यविवृद्धये ॥ १६६ ॥

कार्त्तिक सुदी सप्तमी मंगलवार श्रवण नक्षत्र व्यतीपात के दिन विष्णुचक्र के अवतार को दीपदान करना इस से सब सौख्य बढ़ते हैं। इस प्रकार से

यटीन करके पहर रात तक भगवान का गुण गान करना. जहां भक्त लोग कीर्तन करते हैं वहां श्रीभगवान आप निवास करते हैं ।

यथा पाद्मे कार्त्तिकमाहात्म्ये ।

नाहं वसामि वैकुंठे योगिनां हृदये न च ।

मद्भक्ता यत्र गायन्ति तत्र तिष्ठामि नारद ॥ १६७ ॥

नारद जी से आप आज्ञा करते हैं कि हे नारद हम न तो वैकुंठ में रहते हैं और न जोगियों के हृदय में रहते हैं जहां हमारे भक्त गाते हैं हम वहीं बैठते हैं । इति ।

यह जो ऊपर लिख आए हैं ये कार्त्तिक के नित्य कर्म हैं और भी कार्त्तिक की एकादशी से लेकर के पुनवासी तक के पांच दिन को भीषपंचक कहते हैं इस में इस मंत्र से भीषमतर्प्पण करना ।

वैयाघ्रपद्गोत्राय जलं वीराय वर्म्मणे ।

सत्यव्रताय शुचये गाङ्गेयाय महात्मने ।

भीष्मायैतद्ददाम्यर्घ्यं आबालब्रह्मचारिणे ॥ १६८ ॥

इस प्रकार पांच दिन भीषपंचक में तर्प्पण और स्नान करना। इति ।

कार्त्तिक में गर्ग्गसंहिता सुनने का बड़ा माहात्म्य है । यथा—

यःकार्त्तिकेमासिनृपश्रियायुतोश्रृणोतिशश्वन्मुनिगर्ग्गसंहिताम्
स चक्रवर्त्ती भविता न संशयो नरेन्द्रहस्तोद्धृतपादपादुकः १६९
मनोजवैः सिन्धुतुरङ्गमैर्नवै र्हिपैश्च विन्ध्याचलसम्भवैः परैः ॥
वैतालिकोद्गीतयशा महीतले निषेवितो वारवधूजनैस्सह ॥१७०॥

हे लक्ष्मीसंयुक्त नृप जो कार्त्तिक में गर्ग्ग मुनि की संहिता विधिपूर्वक सुने तो वह ऐसा चक्रवर्ती होय कि राजा लोग उस की खड़ाऊं उठावें हवा के वेग ऐसे सिन्धी नए घोड़ों से और ऊंचे और विन्ध्याचलकी तराई के हाथियों से और पृथ्वी के वैतालिकों के गीत रूपी अपने यश से और वारांगनाओं से सदा सेवित रहै ।-इस प्रकार कार्त्तिक का नित्य कर्म्म कर के पूर्णिमा को यह व्रत समाप्त करै, यथाशक्ति दान दे, ब्राह्मणों का जोड़ा भोजन करावै । इति ।

लोकानामापरूपप्रबलतमतमोनाशनायाशु शक्तं ।

हन्तुन्तीव्राम्लितापम्प्रटुतरमनिशं यः परन्दुःखहेतुः ॥
दातुं शक्तं त्रिलोकीरसुलभमम्स्तृतङ्कान्ति कङ्कर्म्मवैधं ।
राकाज्योत्स्नास्वरूपस्विलसतु जगति श्रीहरिश्चन्द्रचन्द्रात् ।

दोहा—जैजै श्रीवल्लभ सदा, श्रीविट्ठल द्विजराज ।
कृपा करत सब भय हरत, तारत पतित समाज ॥१॥
नमो नमो कविमुकुटमणि, पितुपदकमल पुनीत ।
जाकी कृपा अपारतें, समुझि परी यह रीत ॥२॥
जानि परम उपकार पुनि, देखि शास्त्र को पन्थ ।
जगहित श्रीहरिचंद किय, कातिक विधि को ग्रन्थ ॥३॥

॥ इति ॥

कार्त्तिकनैमित्तिककृत्य ।

श्रीहरिश्चन्द्र लिखित ।

" तत्कर्म्म हरितोषं यत्सा विद्या तन्मतिर्यया "

कार्तिक नैमित्तिक कृत्य ॥

दो०—जेहि लहि फिर कछु लहन को, चाहत चित में होय ।
जयति पवित्री जग करन, प्रेम बरन यह दोय ॥ १ ॥

छप्पय—तदपि पान करि परम अमृत मय प्रेम सरयो रस ।
जड़ उनमत्त समान होइ विचरत गत कलमस ॥
सकल कर्म्म को जाल सिथिल किय परम प्रीति सों ।
रह्यो न कछु कर्त्तव्य शेष कुल वेद रीति सों ॥
पै जानि भागवत धर्म्म एहि सूझत सो पथ जेहि लहत ।
लखि दीन जीव संसार के परम कृपा गहि कछु कहत ॥

कार्त्तिक धर्म्म यहां क्यों विधान करते हैं? इस हेतु भी कहा से कि सर्व्व धर्मों में भगवद्धर्म्म मुख्य है और यही श्री मुख से है।

"मन्मनाभवमद्भक्तो मद्याजीमान्नमस्कुरु मामेवैष्यसिकौन्तेय" इत्यादि ॥

विशेषतः कलियुग मे भगवद्धर्म्म ही की नित्यता है यह भी निश्चय ।

यथा हेमाद्रौ श्री भागवद्वाक्यम् ।

कलौसभाजयन्त्यार्य्या: गुणज्ञास्सारभागिन:
यत्रसङ्कीर्त्तनेनैव सर्व्वस्वार्थोभिलभ्यते ॥

अनेकनिबन्धेषु महा भारते ।

कलौकलिमलध्वंस सर्व्वपापहरंहरिम् ।
येऽर्च्चयन्तिनरानित्यं तेपिवंद्यायथाहरि: ॥

मदनपारिजाते योगि याज्ञवल्क्यः ।

विष्णुर्ब्रह्माचरुद्रश्च विष्णुर्देवोजनार्द्दनः ।
तस्मात्पूज्यतमंनान्यमहंमन्येजनार्द्दनात् इ०

और इसमें विशेषता यह है कि एक श्री भगवान के पूजन में सब का पूजन आजाता है — यथा श्री मद्भागवते ।

यथा तरोर्मूल निषेचनेनतृप्यन्तितत्स्कन्धभु
जोपशाखाः । प्राणोपहाराञ्चतथेन्द्रियाणां
तथैवसर्व्वार्हणमच्युतेज्या ॥

और इस भगवद्धर्म के सब अधिकारी हैं यह श्रीमुख गाया है ।

स्त्रियोवैश्यास्तथाशूद्रास्तेपियान्तिपराङ्गतिम्

ऐसा ही परम भक्त श्री प्रह्लाद जीने भी कहा है ।

नालं द्विजत्वं देवत्वं ऋषित्वं वाऽसुरात्मजाः
प्रीणनायमुकुन्दस्यनधनंनबहुज्ञता । इत्यादि ।

इसी सर्व्व साधारण को और अनेक धर्म्मों को छोड़कर केवल भगवद्धर्म्म मुख्य हुआ तो भगवद्धर्म्मों में परम पुनीत कार्त्तिक व्रतादि यहां दिखाते हैं ।

कार्त्तिक सब मासों में पवित्र है और उसकी नित्य क्रया क्या है यह कार्त्तिक कर्म्म विधि नामक निवन्ध में लिख चुके हैं यहां वे धर्म्म लिखे जाते हैं जो नैमित्तिक हैं और

जैसे कार्त्तिक स्नान आश्विन शुद्ध ११ से आरम्भ होता है इसी नैमित्तिक कृत्य भी उसी दिन से लिखते हैं।

अथ आश्विनशुद्ध ११ — इसी एकादशी से कार्त्तिक के सब व्रत आरम्भ करना। इस एकादशी का नाम पापाङ्कुशा है इस में भगवान को पद्मनाभ नाम से पूजा करै।

अथ आश्विनशुद्ध १५ — यदि एकादशी से कार्त्तिक स्नान न आरम्भ किया हो तो इस दिन से करना इस पूर्णिमा में दो कर्म हैं प्रथम रासोत्सव द्वितीय कोजागर व्रत।

रासोत्सव जिस दिन सायङ्काल में पूर्णचन्द्र हो उस दिन करना क्योंकि 'कलाहीनेशशाङ्केतुनकुर्य्याच्छारदोत्सवम्' इस वाक्य में हीन चन्द्र का निषेध है और भगवान को श्वेत वस्त्र श्वेताभरण श्वेत नैवेद्य समर्पण करना और चांदनी में शृङ्गार सहित बैठा कर रास लीला के भजन गाना इस दिन श्री मद्भागवत की रास पञ्चाध्यायी का पाठ बहुत पुण्य देने वाला है और किसी ग्रंथकार ने यह भी लिखा है कि रात को चन्द्रमा की चांदनी में सूई में डोरी पिरोना और कुछ अक्षर पढ़ना इससे नेत्र की ज्योति बढ़ती है।

कोजागर व्रत जिस दिन आधीरात को पूर्णिमा हो उस दिन करना सांझ से लक्ष्मी और इन्द्र का स्थापन करके पूजा करना और नारियल का जल लक्ष्मी को भोग लगा कर पीना आधी रात के समय लक्ष्मी जी यह कहती हुई निकलती हैं कि जो जगता मिलैगा और जूआ खेलता होगा मैं

उसे धन दूंगी। कमल पर बैठी हुई लक्ष्मी का ध्यान करना और ॐ लक्ष्म्यै नमः इस मंत्र से सब पूजा कर के इस मंत्र से पुष्पांजली देना ॥

नमस्ते सर्व्वदेवानां वरदासिहरिप्रिये ।
यागतिस्त्वत्प्रपन्नानांसामेभूयात्त्वदर्च्चनात् ॥

इन्द्र को भी चार दांत के श्वेत हाथी पर बैठे ध्यान कर के इन्द्रायनमः इस मन्त्र से पूजा कर के पुष्पांजली इस मन्त्र से देना ।

विचित्रैरावतस्थाय भास्वत्कुलिशपाणये ।
पौलोम्यालिंगितांगाय सहस्राक्षायतेनमः

इसी पुनवासी को बड़े पुत्र की आरती और तिलक करना और रात को जागरन करना ।

अथ कार्त्तिककृष्णा ४ — इस चतुर्थी को कर्क चतुर्थी का व्रत है । इसी चतुर्थी में रानियों सहित राजा दशरथ की पूजा करना ।

अथ कार्त्तिककृष्णा ८ — इस अष्टमी का नाम राधाष्टमी है यह अष्टमी अरुणोदय व्यापिनी लेना और अरुणोदय की समय न मिले तो सूर्य्योदय व्यापिनी मानना इस अष्टमी को श्रीराधा कुण्ड स्नान करना और श्रीराधिका का पूजन करना । इस दिन श्री राधा सहस्रनाम पाठ का बड़ा पुन्य लिखा है । इस दिन पुत्रवती स्त्री को गौ पूजन का दाम्पत्य और शिव पूजन का विधान भी कोई ग्रन्थकार लिखते हैं ।

अथ कार्त्तिक कृष्णा ११ — इस एकादशी का नाम रमा है इसमें व्रत और जागरन और श्री राधा दामोदर का पूजन करना और रात को दीपदान करना।

अथ कार्त्तिक कृष्णा १२ — इस को वत्स द्वादशी कहते हैं — यह द्वादशी सायंकाल व्यापिनी मानना और इस में नक्त व्रत करना ब्रह्मचर्य्य से रहना और उड़द का भोजन करना पृथ्वीपर सोना-सांझ की समय गऊ की पूजा करना। वह गऊ सीधी और दूध देने वाली हो और उसका बच्चा भी उसी रंग का हो। सब पूजा कर के तामें के अरघे में इस मन्त्र से अर्घ देना॥

क्षीरोदार्णवसम्भूते सुरासुरनमस्कृते।
सर्वदेवमयेमात गृहाणार्घ्यंनमोस्तुते॥

फिर इस मंत्र से गोग्रास देना।

सर्व्वदेवमयेदेवि सर्वदेवैरलंकृते।
मातर्माभिलषितं सफलंकुरुनन्दिनि॥

इसी दिन गऊ का घी, दूध, दही और मठा तथा तेल का और कढ़ाई का किया भोजन न करना इस द्वादशी से ५ दिन तक सांझ पीछे देवता, ब्राह्मण, गऊ अपने से बड़े मनुष्य, मातादिक अपने से बड़ी स्त्री, हाथी और घोड़े की आरती करना और सांझ को दीए बालना। उतर मुख नव वा विशेष दीए बाल कर शुभाशुभ विचारना। दीया बालने का मंत्र।

सूर्य्यांशसम्भवादीपा अन्धकारविनाशकाः ।
त्रिकालेसांदीपयंतु दिशंतुचशुभाशुभम् ॥

अथ कार्त्तिक कृष्णा १३—इस दिन सांझ को यम का दीया द्वार के बाहर देना ॥ मन्त्र ।

मृत्यु नापाशदंडाभ्यां कालेनश्यामयासह ।
त्रयोदश्यांदीपदानात् सूर्यजःप्रीयतांमम् ॥१॥

इसी तेरस के दिन गो व्रत भी होता है ।

अथ कार्त्तिक कृष्णा १४—इस चतुर्दशी में जो मङ्गलवार पड़े तो श्री महादेव जी का व्रत और पूजा करना । यह चतुर्दशी स्नान वाले चन्द्रोदय व्यापिनी मानें और सर्व्व साधारण इसमें अवश्य स्नान करें क्योंकि जो इस में तेल लगा के सिर मल के नहीं नहाते उनको बड़ा दोष होता है । स्नान की समय खेत की हल से निकाली मिट्टी, चिचिड़ा, भटकटैया और तुम्बी तीन बेर अपने ऊपर से फिरावे और स्नान करके तिलक करके तब नित्य का कार्त्तिक स्नान करे चिचड़ा घुमाने का मन्त्र ॥

सीतालोष्टसमायुक्त संकटकदलान्वित ।
हरपापमपामार्ग भ्राम्यमाणःपुनःपुनः ॥

नित्य स्नान करके यमतर्पण करे यह तर्पण जिसका पिता जीता हो वह भी करै । मन्त्र ।

यमायनमः, धर्म्मराजायनमः, मृत्यवेनमः,

अन्तकायनमः, वैवस्वतायनमः, काला-
यनमः, सर्व्वभूतक्षयायनमः, औदुम्बराय-
नमः, दध्नायनमः, नीलायनमः, परमेष्टिने
नमः, वृकोदरायनमः, चित्रायनमः,
चित्रगुप्तायनमः,

इस मन्त्र से तीन तीन अञ्जली जल तिल समेत दे इस चतुर्द्दशी से प्रति पदातक महाराज बलि का राज रहता है इसी इन तीनो दिन घर स्वच्छ रक्खै दीए बाले उज्वल वस्त्र पहिने और गीतादिक से चित्त प्रसन्न रक्खै। रात को चौमुखा दीया नर्क के नाम का इस मन्त्र से निकाले।

दत्तोदीपश्चचतुर्दश्यां नरकप्रीतयेमुदा।
चतुर्वर्त्तिसमायुक्त स्सर्व्वपापापनुत्तये॥

पीछे हाथ में जलती लकड़ी वा पलीता लेकर पितरों को मार्ग दिखावै। मन्त्र।

अग्निदग्धाश्चयेजीवायेप्यदग्धाःकुलेमम
उज्वलज्योतिषादग्धा स्तेयांतुपरमांगतिम्
यमलोकम्परित्यज्य आगतायेमाहालये।
उज्वलज्योतिषावर्त्म प्रपश्यंतुव्रजंतुते॥

इसी रात्रि को कोई काली पूजन भी करते हैं और हनुमान जी का जन्मोत्सव भी इसी रात्रि को होता है और

इसी रात्रि में बीरों का पूजन कुमारी पूजन और तंत्रोक्त मन्त्रों की सिद्धि भी होती है पर यह अधिकारी परत्व है सतोगुनी भक्तों को तो परम भागवत हनुमान जी का ही पूजन ग्राह्य है। हनुमान जी को तुलसी दल पर श्री राम नाम लिख कर चढ़ाना और लड्डू भोग रख कर रामायण का पाठ वा और कुछ राम चरित्र सुनाना। मन्त्र

यत्रयत्ररघुनाथकीर्त्तिनं तत्रतत्र कृतमस्तकांजलिम्। वाष्पवारिपरिपूरितलोचनंमारुतिन्नमतराक्षसान्तकम्॥

इस चतुर्दशी को नक्तव्रत करना वा उड़द के पत्ते शाक का फल विशेष है॥

जो इस चतुर्दशी को मंगलवार पड़े तो चित्राव्रत और शिव पूजन करना॥

अथ कार्त्तिक कृष्णा ३०—यह दीपावली अमावस्या है इस दिन को व्रत करना। सांझ को भगवान के मन्दिर में दीपदान करना और दीए के वृक्ष बनाना और अनेक प्रकार के भोग समर्पण करके हटरी में बैठाना। सांझ को अपना घर सब स्वच्छ करके यथा शक्ति उसकी शोभा करना सड़कों को राजा आज्ञा देकर स्वच्छ करावे और तोरणादिक सड़क के बाहर लगाना दूकान पर सब वस्तु रखना और घरमें सब

स्थानोंपर दीया बाल के लक्ष्मी और बलि का पूजन करना लक्ष्मी को खोए का लड्डू भोग लगाना और इस मन्त्र से दीप दान करना।

त्वंज्योतिःश्रीरविश्चंद्रो विद्युत्सौवर्णतारकाः
सर्वेषांज्योतिषांज्योतिर्दीपज्योतिर्नमोस्तुते

रात को राज मार्ग में, स्मशान में, नदी के वा ताड़ाग के तटों पर, मन्दिरों में, शिखरों में, गलियों में, और दुर्गम स्थानों में राजा दिया बालने की आज्ञा दे सब लोग शृङ्गार करके सुगन्ध लगा के पान खाते बाहर निकलें और मित्रों से सम्बन्धियों से मिलें वाराङ्गना और नटनर्तकादिक नृत्य गीत करें राजा (यदि हिन्दू हो) इस बात की डौंड़ी पिटवा दे कि आज महाराज बलि का राज्य है कोई दुखी न हो सब अपना मन माना करें जीव हिंसा, सुरा पान, अगम्यागमन, चोरी, और बिश्वासघात ये पांच पाप छोड़ कर छूई हुई वस्तु का भोजन, वारांगना सेवन, द्यूत और सब जाति के सङ्ग बैठना यह सब राजा बलि के राज में पाप नहीं हैं।

गोप लोग गऊ का शृङ्गार करें और सब लोग गऊ को भोजन दें। मल्ल लोग मल्ल युद्ध करें। घोड़े वाले घोड़ा नचावें रात को राजा नगर के बाहर निकले और बालकों को एकत्र करके उनका खेल देखे और उनको खिलवना, मिठाई दे। सब लोग बाजे बजावें और आनन्द की बातें करें। रात को स्त्रियों के वा ब्राह्मणों वा क्षत्रियों के सङ्ग जूआ खेले इस्से

पूर्व पूर्व मुख्य है आधी रातको जब पुरुष सोने लगें तब स्त्रियां सूप और डोंडी पीटती हुई दरिद्रा को घर से बाहर निकाले। इस दिन भी अभ्यङ्ग की विधि है।

अथ कार्त्तिक शुद्ध १—इसमें श्री गोवर्द्धन पूजन, बलिपूजा, दीपोत्सव, गोक्रीड़ा, मार्गपालीबन्धन, इष्टिकाकर्षण, नया वस्त्र पहिरना, उत्सव, जूआ खेलना, मङ्गल मालिका और स्त्रियों की आरती करना ये मुख्य कर्म्म हैं उसमें प्रथम श्री गोवर्धन पूजन है यह उत्सव अवश्य माननीय है क्योंकि इस के हेतु श्रीमुख वाक्य है॥

एतन्ममतन्तात क्रियतां यदिरोचते।
अयंगोब्राह्मणादीनाम्मह्यञ्चदयितोमखः॥

इस में प्रेम मार्ग मे वा और अन्यमार्ग में जैसी जिसकी रीति हो वह पूजन करे अब साधारण लोगों के हेतु यह रीति लिखी जाती है जहां साक्षात् श्री गोवर्धन पर्व्वत है वहां तो उन्हीं की और जहां गोवर्धन नहीं है वहां गऊ के गोबर का पर्व्वत बनाना उत्तर मुख रखना और एक कन्दरा बनाना वहां भगवान की मूर्त्ति रखकर षोड़शोपचार पूजन करना और अन्न कूट भोग लगाना जहां गिरिराज की शिला हो वहां तो गिरिराज की शिला कन्दरा में रखकर पूजन करना जहां शिला न हो वहां शालग्राम वा छोटे श्री ठाकुर जी की मूरत रखके पूजा करनी और गऊ गोप की भी पूजा करनी पहिले भगवान् की पूजा करनी उसको।मन्त्र।

बलिराज्ञोद्वारपाल भवानद्यभवप्रभो ।
निजवाक्यार्थनार्थाय सगोवर्द्धनगोपते ॥
गोपालमूर्त्तेविश्वेश शक्रोत्सवविभेदक ।
गोवर्द्धनकृतच्छत्र पूजास्मेहरगोपते ॥
देवेवर्षतियज्ञविप्लवरुषा वर्षाश्मपर्षानि
लैः । सीदत्पालपशुस्त्रियात्मशरणंदृष्ट्वा
नुकम्पुत्स्मयन् ॥ उत्पाट्यैककरेणशैलम
बलो लीलोच्छिलींध्रंयथा ॥ बिभ्रद्गोष्ट
मपान्महेन्द्रमदभित् प्रीयान्नइन्द्रोगवं ॥

इति भगवत् प्रार्थना मंत्र ।

गोवर्द्धनधराधार गोकुलत्राणकारक ।
विष्णुबाहुकृतच्छाय गवांकोटिप्रदोभव ॥
एषोऽवजानतेमर्त्यान् कामरूपीवनौकसः
हंतह्यस्मैनमस्यामः शर्म्मणेआत्मनोगवां॥
हंतायमद्रिरबला हरिदासवर्य्यो ।
यद्रामकृष्णचरणस्पर्शप्रमोदः ॥
मानंतनोतिसहगोगणयोस्तयोर्यत् ।
पानीयसूयवसुकन्दरकन्दमूलैः ॥

इति गिरिराज प्रार्थना मंत्र ।

यालक्ष्मीर्लोकपालानां धेनुरूपेणसंस्थिता
घृतंवहतियज्ञार्थे ममपापंव्यपोहतु ॥
अग्रतस्सन्तुमेगावो गावोमेसन्तुपृष्ठतः ।
गावोमेहृदयेसन्तु गवाम्मध्येवसाम्यहम

इति गो प्रार्थना मंत्र ।

अहोभाग्यमहोभाग्यंनन्दगोपब्रजौकसाम
यन्मित्रम्परमानन्दं पूर्णब्रह्मसनातनं ॥
आसामहोचरणरेणुजुषामहस्यां ।
वृन्दावनेकिमपि गुल्मलतौषधीनां ॥
यादुस्त्यजंस्वजन आर्यपथंविहाय ।
भेजुर्मुकुन्दपदवीं श्रुतिभिर्विमृग्यां ॥
याबैश्रियार्चितमजादिभिराप्तकामैः ।
योगेश्वरैरपिहृदयात्म निरासगोष्ठ्यां ॥
कृष्णस्यतद्भगवत चरणारविन्दे ।
न्यस्तंस्तनेषुविजहुः परिरभ्यतापं ॥
बन्देनन्दब्रजस्त्रीणां पादरेणूमभीक्ष्णशः ।
यासांहरिकथोद्गीतं पुनातिभुवनत्रयम्॥

इति गोप गोपी प्रार्थना मंत्र ।

धन्येयमद्यधरणी तृणवीरुधस्त्वत्।
पादस्पृशोद्रुमलता करजाभिमृष्टाः॥
नद्योद्रयः खगमृगास्सदयावलोकैः।
गांप्योंतरेणभुजयो रपियत्स्पृहाश्रीः॥

इति वृज प्रार्थना मंत्र।

इन मन्त्रों से गोवर्द्धन पूजन कर के अन्न कूट भोग भगवान को समर्पण कर के नमस्कार करना इति।

इस प्रकार गोवर्द्धन पूजा कर के महाराज बलि की पूजा करे घर के एक कोने में महाराज बलि की और रानी विंध्यावलि की मूर्त्ति पांच रंग से लिखे जीभ, ओठ, हथेली तलवा और आंख के कोनें लाल रङ्ग से बाल काले रङ्ग से और सब अङ्ग पीले रङ्ग से कपड़े श्वेत रङ्ग से और आयुधादिक नीले रङ्ग से लिखे दो भुजा बनावे और राजाओं के सब चिन्ह बना कर अक्षत और षोड़शोपचार से पूजा करे।

मन्त्र।

बलिराजनमस्तुभ्यं विरोचनसुतप्रभो।
भविष्येन्द्रसुराराते पूजेयंप्रतिगृह्यतां॥

बलि राजा की पूजा कर के कुबेर और लक्ष्मी की पूजा करनी। पूजा के पीछे स्त्रियां आरती करें।

तीसरे पहर कास और कुस की मार्ग पाली बना कर नगर के बाहर वृक्ष में बांधना और नीचे लिखे हुए मन्त्र से

उसको नमस्कार करके सब लोग वाहनादि समेत उसके नीचे से निकलें इससे वर्ष भर कुशल होती है । मन्त्र ।

मार्गपालिनमस्तेस्तु सर्वलोकसुखप्रदे ।
विधेयैःपुत्रदाराद्यैः पुनरेहिव्रतस्यमे ॥

सांझ को कुश काश की मोटी रस्सी बनाना और उसको एक ओर से राज पुत्रादिक एक ओर से नीच लोग खींचें जो नीच लोग खींच लें जांय तो जानना कि राजा की जय होगी ।

रात को जूआ खेलना यद्यपि जूआ खेलने का विधान तीनो दिन है परन्तु इस दिन मुख्य है, रात को जूआ स्त्रियों से खेलना और दीप दान करना ब्राह्मणों को और मित्रोंको को वस्त्र और पान देना इति ।

अथ कार्त्तिकशुक्ल २—इसका नाम यम द्वितीया है, इसमें प्रातः काल श्री यमुना स्नान जहां श्री यमुना जी न हो वहां श्री यमुना जलपान वा मार्ज्जन करना काशी बासियों को यम तीर्थ स्नान और यमेश्वर का दर्शन करना इस दिन अपने घर नहीं खाना मुख्य करके छोटीबहिन के घर भोजन करना छोटी बहिन न होतो बड़ी के घर भोजन करना वह भी नहो बूआ के घर वा नाते की बहिन के घर खाना जो नाते की भी कोई बहिन न हो तो मानी हुई बहिन वा मित्र की बहिन के घर खाना और बहन की पूजा करना अपने घर कभी नहीं खाना बहिन खिलाती समय इस मन्त्र से भाई की प्रार्थना करे ।

भ्रातस्तवानुजाताहं भुंक्ष्वभक्तमिदंशुभं ।
प्रीतयेयमराजस्य यमुनायाविशेषत: ॥

इस दिन श्री जमुना जी ने यमराज को भोजन कराया है इससे यमराज ने वरदान दिया है कि आज के दिन जो जमुना स्नान करेगा और बहिन का आदर करके बहिन के घर खाएगा उसको यम दंड न होगा तीसरे पहर यमराज, यमी, यमुना, चित्रगुप्त और यमदूतों का पूजन करना यमायनम: इस मन्त्र से षोड़शोपचार पूजन कर के इन मन्त्रों से पुष्पांजली देना ।

यमायनम:, निर्ऋतयेनम:, पितृराजायनम:, धर्म्मराजाय-नम:, वैवस्वतायनम:, दंडधरायनम:, कालायनम:, भूताधि-पायनम:, दत्तानुसारिणेनम:, कृतानुसारिणेनम:, ।

इन नाम मन्त्रों से पूजा करके अर्घ देना उसकामन्त्र ।

एह्येहिमार्तंडजपाशहस्त यमान्तका-
लोकधरामरेश । भ्रातृद्वितीयाकृत-
देवपूजां गृहाणचार्घ्यंभगवन्नमस्ते ॥

अथ कार्त्तिकशुद्ध ४—इस दिन शेषादिक महानागों की पूजा करनी ।

अथ कार्त्तिक शुद्ध ५—इस दिन जया व्रत करना विष्णु की जया सहित पूजा करना श्वेतवर्ण द्विभुज जया का ध्यान करके विष्णु और जया की प्रत्यङ्ग पूजा करके बांस की पाच

मे सप्तधान दान करना और " येन बद्धो बलीराजा " इस मन्त्र से रक्षाबन्धन करना।

अथ कार्त्तिकशुद्ध ६—जो मङ्गलवार होतो अग्नि का पूजन कर के ब्राह्मण भोजन करना।

अथ कार्त्तिकशुद्ध ७—इस दिन कीर्त्ति वीर्य्य की पूजा कर के उन का दीप दान कराना।

अथ कार्त्तिकशुद्ध ८—इस दिन गऊ का पूजन गोग्रास दान करना और इसी में शाक व्रत है नक्तव्रत करना शाक खाना और शाकही ब्राह्मण को देना।

अथ कार्त्तिकशुद्ध ९—इस दिन श्री वृन्दावन की परिक्रमा करना। यह नवमी द्वापर की युगादि भी है इसमे कुष्मांड दान करना और जगद्धात्री का पूजन करना। तुलसी के बिबाह का उत्सव इसी दिन से आरम्भ होता है जो तुलसी बिबाह करै वह तीन दिन का व्रत करै। यद्यपि धात्री पूजन कार्त्तिक में नित्यही है तथापि जो और दिन न किया हो तो इस दिन करै ॐ धात्र्यैनमः इस मन्त्र से षोड़शोपचार पूजा करै और आठ दीए आठ ओर बाल कर यह मन्त्र पढ़ै।

इमेदीपामयादत्ता प्रदीप्ताघृतपूरिता ।
धात्रिदेविनमस्तुभ्य मतश्शान्तिम्प्रयच्छमे॥

फिर भोगादिक समर्पण कर के इन मन्त्रों से पुष्पांजलि चढ़ावै।

धात्रिदेविनमस्तुभ्यं सर्व्वपापक्षयंकरि ।
पुत्रान्देहिमहाप्राज्ञे यशोदेहिबलञ्चमे ॥
प्रज्ञांमेधाञ्चसौभाग्यंविष्णुभक्तिञ्चशाश्वतीम्
निरोगंकुरुमांनित्यं निष्पापंकुरुसर्व्वदा ॥
सर्व्वज्ञङ्कुरुमांदेवि धनवतन्तथाकुरु ।
संवत्सरकृतंपापं दूरीकुरुममाक्षये ॥

फिर इस मन्त्र से सूत लपेट कर फेरी करै ।

दामोदरनिवासायै धात्र्यैदेव्यैनमोनमः ।
सूत्रेणानेनबध्नामिसर्व्वदेवनिवासिनीम् ॥

फिर इन मन्त्र से फूल चढ़ावै । धात्र्यै नमः, शान्त्यै नमः, कान्त्यै०, मेधायै०, प्रकृत्यै०, विष्णुपत्न्यै०, महालक्ष्म्यै०, रमायै, कमलायै, इन्दिरायै, लोकमात्रे, कल्याण्यै, कमनीयायै, सावित्र्यै, जगद्धात्र्यै, गायत्र्यै, सुधृत्यै, अव्यक्तायै, विश्वरूपायै, सुरूपायै, अब्धिभवायै नमः इन मन्त्रों से फूल चढ़ाना धात्री के मूल में तर्प्पण करना ।

पितापितामहाश्चान्ये येऽपुत्रायेप्यगोत्रिणः
तेपिबन्तुमयादत्तं धात्रीमूलेऽक्षयम्पयः ॥

आब्रह्मस्तम्ब पर्य्यन्त मित्यादि से फिर तर्प्पण करै । यह तर्प्पण सव्यही से करै ।

धात्री के नीचे दामोदर भगवान की पूजा करै चित्रान्न

चित्र वस्त्र समर्पे ब्राह्मणों का जोड़ा खिलावै भगवान की षोड़शोपचार पूजा कर के इस मन्त्र से अर्घ दे।

अर्घ्यंगृहाणभगवन् सर्व्वकामप्रदोभव।
अक्षय्यासंततिर्मेस्तुदामोदरनमस्तुते इत्यादि

अथ कार्त्तिकशुद्धा १०—इस दशमीको सार्व्वभौम व्रत होता हैं।

अथ कार्त्तिकशुद्धा ११—इस एकादशी का नाम प्रबोधिनी है। इस दिन भगवान सो कर उठते हैं इससे यह परम मङ्गल दिन है इस दिन जिस समय मुहूर्त्त अच्छा हो उस समय भगवान को जगाना पहिले नीचे पृथ्वी में अनेक रङ्गों से मङ्गल मण्डप साथिया चक्र इत्यादिक बनाकर उस पर ६४ जव का चार खम्भा बनाकर खड़ा करना उसके नीचे भगवान को बिठाना और फिर घंटा शङ्ख बजाते हुए इन मन्त्रों से जगाना।

ब्रह्मेन्द्ररुद्राग्निकुबेरसूर्य सोमादिभिर्वन्दितवन्दनीय। बुद्ध्यस्वदेवेशजगन्निवास मन्त्रप्रभावनसुखनदेव॥

इयंचद्वादशीदेव प्रबोधार्थंतुनिर्मिता।
त्वयैवसर्व्वलोकानां हितार्थंशेषशायिना॥
उत्तिष्ठोत्तिष्ठगोविन्द त्यजनिद्राञ्जगत्पत
त्वयिसुप्तेजगत्सुप्त मुत्थितेतूत्थितंजगत्॥

उत्तिष्ठोत्तिष्ठगोबिन्द उत्तिष्ठगरुडध्वज ।
उत्तिष्ठपुण्डरीकाक्ष त्रैलोक्येमङ्गलङ्कुरु ॥

तथाच जो निकुंज के परम रसके अधिकारी हों
वह इन मन्त्रों से जगावे ।

विगतारजनीनाथ प्रमदानांसुखप्रदा ।
उदेत्ययंदिनमणिर्वियोगीजनवंचकः ॥
प्राणनाथजगन्नाथ गोपीनाथकृपानिधे ।
चिरसुप्तोसिजागृष्व सुरतश्रमकर्षितः ॥
ललितावाद्यतेवीणां विशाषानृत्यतेंगणे ।
गायन्तिगोपिकासर्व्वा स्तावकंनिर्म्मलंयशः
वयस्याद्वारिसम्प्राप्ताः क्रीड़ार्थंतवसानद ॥
ह्य्यंगवीनहस्तासात्वांयशोदाऽभिवांछति
वियत्ताश्चक्रवाकिन्यः पक्षिणोकुर्व्वंतेरवम्
वाति वायुस्सुख स्पर्शोंदीपोयंमन्दतांगतः
उत्तिष्ठोत्तिष्ठ प्राणेश उत्तिष्ठोत्तिष्ट वल्लभ।
मुखन्दर्शय मेनाथ वियोगं शमयप्रिय ॥
त्वयिसुप्ते जगन्नाथ जगत्सुप्तम्भवेदिदम् ।
उत्थिते चेष्टते सर्व्वमुत्तिष्ठोत्तिष्ट माधव

इन मन्त्रों से जगा के पंचामृत स्नान कराना और च-न्दनादिकों से उद्वर्त्तन करके शीत के नए वस्त्र समर्पण कर के पुष्पादिकों से पूजन करना। मन्त्र।

गतामेघा वियच्चैव निर्म्मलं निर्म्मलादिशः।
शारदानि च पुष्पाणि गृहाण मम केशव॥

इस भांति पुष्प गन्ध अक्षत धूप दीप नैवेद्य तांबूल फ-लादिक अर्पण करके आर्ती करके इन मन्त्रों से स्तुति करना।

योऽविद्यया ऽनुपहतोपि दशार्द्धवृत्त्या।
निद्रामुवाह जठरी कृतलोक यात्रः॥
अन्तर्जलेहि कपिपुस्पर्शानुकूलाम्।
भीमो र्मिमालिनि जनस्य सुखं विवृण्वन्॥
सोसावदभ्र करुणो भगवान् विबुद्ध।
प्रेमस्मितेन नयनाम्बुरुहं विजृम्भन्॥
उत्थाय विश्वविजयाय च नो विषादम्।
माध्व्यागिराऽपनयतात्पुरुषः पुराण॥
यन्नाभि पद्म भवनादज आविरासीत्।
लोकत्रयोपकरणो यद नुग्रहेण॥
तस्मै नमस्त उदरस्थ भवाय योग।
निद्राऽवसान विकसन्नलिनेक्षणाय॥

प्रार्थना करके दण्डवत् प्रदक्षिणा कर कार्त्तिक के सब व्रत भगवान् के सामने समाप्त करे। इस दिन श्रीठाकुर जी को रथ पर बिठा कर नगर में घुमाने का महापुण्य है भगवान को रथ पर बैठा कर मङ्गलपाठ वेदपाठ बाजा शङ्ख घण्टा बजाते हुए नगर में घुमावे और जहां जहां रथ जाय वहां वहां लोग पूजा करें ॥ मन्त्र ।

यद्रोष विभ्रम विवृत्तकटाक्षपात
संभ्रान्त नक्र मकरो भयगीर्ण घोषः ।
सिन्धु शिरस्यर्हणं परि गृह्य रूपी
पादारविन्द मुप गम्य बभाष एतत् ॥
नत्वावयं जड़धियोरघि दाम एतत्
कूटस्थ मादि पुरुषं जगतामधीशं ॥
यत्सत्वत श्रुतगणा रजसः प्रजेशा
मन्यं च भूत पतय स्सभवान् गुणेशः ॥
कामम्प्रयाहि जहि विश्रवसोवमेहं
त्रैलोक्य रावण मवाप्नुहि वीर पत्नीम् ॥
वध्नीहि सेतु मिहिते यशसो वितत्यै
गायन्ति दिग्विजयिनो यमुपेत्य भूपाः ॥
स्वस्त्यस्तु विश्वस्य खलः प्रसीदताम्

ध्यायन्तु भूतानि शिव म्मिथोपिवा ।
मनश्च भद्र म्भजता दधीत्त्वजे
आवेश्य तान्नो मति रप्य हैतुकी ॥
युक्त प्रशैव्यादि वाहैर्मरकत सुरण ल्किङ्कि
णी जालमाला । रत्तौघै र्मौक्तिकान ।
मविरल मणिभि स्सम्भृतै श्चैवहारैः ॥
हेमैः कुम्भैः पताका शिवतर रुचिभि
र्भूषितः केतुमुख्यैः । क्षत्रैर्ब्रह्मेश वन्द्यो
दुरित हरहरैः पातु जैत्रो रथोव ॥
वक्त्रं नीलोत्पल रुचि लसत् कुण्डला-
भ्यां सुमृष्टम् । चन्द्राकारं रचित तिलकं
चन्दने नाक्षतैश्च ॥
गत्यां लीला जन सुख करीं प्रेक्षणे नामृ
तौघम् । पद्मा वासंस्ततमुरसा धारयन्
पातु विष्णुः ॥ मोदन्तां सुजनास्त्व निन्द्रित-
धियस्त्यक्ता खिलोपद्रवाः । स्वस्था स्सुस्थिर
बुद्धयः प्रतिहता मिचारमन्तां सुखम् ॥

देदैत्यागिरि गह्वराणि गहना न्याशु व्रजध्वं भयात्। दैत्यारिर्भगवान यन्नर हरियानं समा रोहति ॥

पलायध्वम्पलायध्वं रेरे दनुज दानवाः। संरक्षणाय लोकानां रथारूढो नृकेशरी ॥

इन मन्त्रों को पढ़ते और भगवान का चरित्र गाते हुए रथ को घुमावै। रथ के खींचने का, रथ के संग चलने का, रथ पर बैठे भगवान के दर्शन करने का, तथाच पूजा करने का अनन्त महात्मा है विस्तार भय से यहां नहीं लिखा इसी दिन तुलसी जी का विवाह भी है तुलसी विवाह की विधि विशेष और ग्रन्थों में लिखी है देख लो संक्षेप से यहां लिखते हैं तुलसी अपने हाथ से घर वा बगीचे में लगाना जब तीन महीने का वृक्ष हो तब उसका पूजन आरम्भ करना और फिर शुभ मुहूर्त देख के विवाह करना मंडप कलशस्थापन वेदी इत्यादि सब विवाह की भांति बनाकर नवग्रह मख मातृका पूजन नांदी श्राद्ध करके दान करना जो लग्न कोई अच्छी मिले तो उस लग्न में नहीं तो गोधुली लग्न में विवाह करना| अन्तर पकर के "वासश्रुतः" इस मंत्र से वस्त्र पहिराना "यदावध्नं" इस मंत्र से कङ्कण बांधना और मङ्गलाष्टक पाठ कर के अंतर पट हटा कर "मयासम्वर्द्धिता यथाशक्त्यलंकृता मिमांतुलसीं देवीं दामोदराय वराय तुभ्य महं सम्प्रददे" यह सङ्कल्प करके जल

भगवान के सामने छोड़ना और तुलसी को भगवान से कुला देना उस समय यह मंत्र पढ़वाना " कोदात्कस्मा अदात " इत्यादि फिर होम करना " पंचत्वंनो अग्ने इत्यादि " मंत्र से नव आहुति देकर फिर होम इन मंत्रों से करना पहिले द्वादशाक्षर से फिर वासुदेवाय नमः स्वाहा नारायणाय, माधवाय, गोविन्दाय, विष्णवे, मधुसूदनाय, त्रिविक्रमाय, वामनाय, श्रीधराय, हृषीकेषाय, पद्मनाभाय, दामोदराय, उपेन्द्राय, वासुदेवाय, अनिरुद्धाय, अच्युताय, अनन्ताय, गदिने, चक्रिणे, विष्वक्सेनाय, वैकुंठाय, जनार्दनाय, मुकुन्दाय, अधोक्षजाय, इन मन्त्रों से होम करके दक्षिणा भूयसी दक्षिणा आचार्य दक्षिणा शय्यादानादिक करके इस मंत्र से प्रार्थना करना।

त्वन्देविमेग्रतो भूयातुलसीदेवि पार्श्वतः ।
देवित्वं पृष्ठतोभूयास्त्वद्दानात्मोक्षमाप्नुयाम्॥

विवाह को समय स्त्रियां गीत गावें । इति तुलसी विवाह ॥ इस एकादशी को व्रत करके रात को जागरन करना इस रात को जागरन का दीपदान का बड़ा पुण्य है जो इस एकादशी को सोमवार और उत्तरा भाद्रपद नक्षत्र हो तो बड़ी फल दात्री हो । इसी दिन से भीष्म पंचक का व्रत करना । १०८ द्वादशाक्षर मन्त्र जप करके भगवान को पंचामृत स्नान कराके ओं विष्णवेनमः इस मन्त्र से १०८ आहुति देकर व्रत करना पृथ्वी पर सोना भीष्म तर्प्पण करना पहिले दिन तुलसी से चरण पूजन करके गोबर प्राशन

करना दूसरे दिन विल्वपत्र से जांघ की पूजा करके गोमूत्र प्राशन करना तीसरे दिन भङ्गरैया से नाभि पूजन करके दूध प्राशन करना चौथे दिन कनैल से कन्धा पूजन करके दही प्राशन करना पांचए दिन की विधी पूर्णमासी की विधि में देखो इसी दिन मत्स्य भगवान को घी के घड़े पर रख के स्वर्ण की मूर्त्ति बनाकर पूजा करना भी किसी का मत है पूजा करके इस मन्त्र से घड़ा दान कर देना।

जगद्योनिर्जगद्रूपो जगदादिरनादिमान्
जगदाद्यो जगद्वीजो प्रीयतां मे जनार्द्दनः

अथ कार्त्तिक शुक्ला १२—यह मन्वतरादि है इसमें दीप दान प्रातः समय नीराजनादिक करना।

अथ कार्त्तिक शुक्ला १४—इसका नाम वैकुण्ठ चतुर्दशी है यह परम पुन्य दिन है इसमें स्नान दानादिक करना। इसी चतुर्दशी में ब्रह्मकूर्चक व्रत और पाषाण होते हैं इसमें विश्वेश्वर का दर्शन और पूजन होता है। इस में रात को जागरण करना और कार्त्तिक का उद्यापन करना।

अथ कार्त्तिक शुक्ला १५—यह बड़ी पवित्र तिथि है इस में जो विशाखा के सूर्य्य और कृतिका के चन्द्रमा हों तो पद्मक नामक बड़ा पवित्र योग हो इसमें पुष्कर स्नान वा श्री यमुना स्नान वा श्री गङ्गा स्नान करके गोदान करना इसमें जो भरणी कृत्तिका वा रोहिणी नक्षत्र हों तो बड़ा फल है। इसी पूर्णिमा में मत्स्य जयन्ती मत्स्य भगवान का

पूजन करके दानादिक करना। इसी में सांझ को त्रिपुरोत्सव करना सांझ को इस मन्त्र से दीपदान करना।

कीटाः पतङ्गाः मशकाश्च वृक्षाः
जले स्थले ये बिचरन्ति जीवाः।
दृष्ट्वा प्रदीपं नव जन्म भागिनो
भवन्तु नित्यं श्वपचाश्च विप्रा॥

इस पूर्णिमा को कार्त्तिकेय का दर्शन करना। यह मन्वादि भी है इसमें नक्तव्रत वा उपवास करना। सांझ को कृतिका का पूजन करना मन्त्र शिवायैनमः सम्भूत्यैनमः प्रीत्यैनमः सन्तत्यैनमः अनुसूयायैनमः क्षमायैनमः कार्त्तिकेयायनमः खड्गिनेनमः वरुणायनमः हुतासनायनमः इन मन्त्रों से कृति का और कार्त्तिकेय का पूजन करना पूजा करके और सागर दान करना चौबीस अंगुल का क्षीर समुद्र बनाकर गऊ का दूध भर कर सोने की मछली और मोती की आंख बना कर दान करना। जो एकादशी को व्रत न समाप्त किया हो तो कार्त्तिक व्रत इस मन्त्र से समाप्त करना।

इदं व्रतं मयादेव कृतं प्रीत्यै तव प्रभो।
न्यूनं सम्पूर्णतां यातु त्वत्प्रसादाज्जनार्द्दन।

इसी पूर्णिमा में नील वृषभ दान करना और इसी में सन्तान व्रत शान्ति व्रत और मनोरथ पूर्णिमा व्रत होता है। इसी पूर्णिमा में चतुर्मास के व्रत समाप्त करना। उस व्रत की

दान लिखते हैं नक्त व्रत में दो बस्त्र दान करना। एकान्तर उपवास में गऊ। भू शयन में शय्या। एक बेर खाने से गऊ देना। जो अन्न छोड़ा हो तो जो अन्न छोड़ा हो वह सोने का बना कर देना कृच्छ्र किया हो तो दो गऊ देना। शाकाहार किया हो वा दूध छोड़ा हो वा दूध पीता हो वा और कोई गोरस छोड़ा हो तो गऊ देना। ब्रह्मचर्य्य लिया हो तो सोना देना। पान छोड़ा हो तो दो बस्त्र देना। मौन लिया हो तो घी का घड़ा, दो बस्त्र और घंटा देना। जो नित्य रङ्ग से मन्दिर में स्वस्तिकादिक बनाते हों तो गऊ और सोने का कमल देना। दीपदान में दीये और दो बस्त्र देना। गऊ ग्रास देते हों तो गऊ और बैल देना पृथ्वी पर भोजन करता हो कांसे की थाली और गऊ देना। सौ फेरी देते हों तो बस्त्र। अभ्यंग छोड़ा हो तेल का घड़ा। केश न बनवाया हो तो मधु, चीनी, सोना। गुड़ छोड़ा हो तो ताम्र का पात्र और गुड़ और सोना देना। ऐसे हो जिस बस्तु को छोड़ा हो वह स्वर्ण समेत देना। जो लाख तुलसी चढ़ाया हो तो उद्यापन करना। सांझ को इस मन्त्र से दीपदान करना।

नमःपितृभ्यःप्रेतेभ्यो नमो धर्म्माय विष्णवे।
नमो याम्याय रुद्राय कान्ताय पतयेनमः॥

इस मन्त्र से दीप दान करना। यह पूर्णिमा परम फल दाची है इसमें जो कुछ सुकृत हो सो करना भीष्म पञ्चक का

व्रत इसी दिन समाप्त करके काल पुरुष का दान करना होम करना यह तिथी श्री राधिका जी को बहुत प्यारी है इस से वैष्णवों को इस तिथि में श्री राधा सहस्र नाम पाठ श्री राधिका मन्त्र जप और राधिका पूजन करना। इसी पूर्णिमा को गोलोक में श्री ठाकुर जीने श्री राधिका जी का पूजन किया था और उस समय श्री महादेव जी ने ऐसा गान किया कि श्री राधिका जी सहित भगवान द्रव होगए इससे इसी पौर्णमासी को गङ्गा जी का जन्म है अतएव इस दिन गङ्गा स्नान का बड़ा फल है और तुलशी का भी जन्म दिन यही है यह देवी पुराण में लिखा है इससे तिथि में तुलशी पूजन और भगवान को तुलशी समर्पण की मुख्यता है। विशेष कहां तक कहैं यह कार्त्तिक ऐसा पवित्र महीना है इसमें भी यह पूर्णिमा ऐसी पवित्र तिथि है कि इस में स्नान दान जप व्रत जागरण दीपदान इत्यादि सब कर्म्म अक्षय होते हैं॥

दोहा।

प्राण नाथ पद रज सुमिरि, धारि हृदय आनन्द।
परम प्रेम निधि रसिक बर, बिरची श्री हरिचन्द॥
प्राण पियारे प्रेम निधि, प्रेमिन जीवन प्रान।
तिन के पद अरपन कियो, यह कारतिक बिधान॥

॥ इति श्री ॥

मार्गशीर्ष महिमा ।



"मासानाम्मार्गशीर्षोहं"

श्रीमद्भागवद्वाक्यं ॥

श्रीगोपीगोविंदाभ्यांनमः ।

मार्गशीर्षमहिमा ।

श्लोकप्राचीन ।

नूतनजलधररूचये गोपवधूटीदुकूलचौराय ।
तस्मै कृष्णाय नमः संसारमहीरुहस्य बीजाय ॥ १ ॥

श्लोकनवीन ।

व्रजजनसुखकारी । गोपिकावस्त्रहारी ॥
सकलभुवनभारी । नित्यलीलावतारी ॥
व्रजभुविपरिचारी । गोपनारीविहारी ॥
दनुजतनुविदारी । पातुनश्चक्रधारी ॥ १ ॥

सोरठा—प्रातहिअगहनन्हात, तिनगोपिन्हकोचीरलै ।
तरुकदम्बचढ़िजात, चोरिचोरिनितप्रातही ॥

दोहा—रासरमिवाफलदेनहित, तिनकींकरतबिहार ।
ऐसेप्रभुकेपदकमल, बिनवतबारम्बार ॥

सोरठा—पुनिबन्दौंसुखरास, भुक्तिमुक्तिप्रदसहजहीं ।
जगहितअगहनमास, कृष्णरूपगोपिनसुखद ॥

विदित हो कि इस दास ने परोपकारार्थ जो कार्तिक कर्म्म विधि लिखी थी उसे हमारे एक मित्र ने बहुत प्रसन्नता पूर्वक अंगीकार किया इस हेतु ऐसी इच्छा हुई कि इसी भांति मार्गशीर्ष की भी विधि लिखी जाय तो बहुत लोकोपकार होगा क्योंकि इस परम पवित्र मास का माहात्म्य बहुत कम लोग जानते हैं और यह अगहन महीना श्री भगवान का स्वरूप है जैसा आपने श्री मत् भगवतगीता और श्रीं मत् भागवत में आज्ञा किया है और व्रज की कुमारिका गण ने श्री भगवान के प्राप्ति के अर्थ इसी अगहन का स्नान किया था जिस्से उन्हें श्री कृष्ण मिले । इस अगहन का माहात्म्य

स्कान्द पुराण में लिखा है जिस में से नित्य विधि अध्याय क्रम से लिखते हैं। ब्रह्मा श्रीभगवान से पूछते हैं कि आपने श्रीमद्गीता वा श्री भागवत में आज्ञा किया है कि अगहन हमारा स्वरूप है इस हेतु हम उस का माहात्म्य अच्छी भांति सुना चाहते हैं ॥ १ ॥

श्रीभगवानुवाच।

अन्यैर्धर्म्मादिभिः कृत्वा गोपितं मार्गशीर्षकं।
मत्प्राप्तेः कारणं मत्वा देवैः स्वर्गनिवासिभिः ॥ २ ॥

श्री भगवान आज्ञा करते हैं कि सब धर्म्मों कर के मार्ग शीर्ष को स्वर्ग निवासी देवताओं ने हमारे प्राप्ति का कारण जान के छिपाय दिया ॥ २ ॥

येकेचित्पुण्यकर्म्माणो मम भक्तिपरायणाः।
तेषामवश्यंकर्तव्यं मार्गशीर्षमघापहं ॥ ३ ॥

परन्तु जो कोई पुण्य कर्म्मा हमारे भक्त होंयँ उन को हमारे स्वरूप अगहन मास का व्रत अवश्य करना चाहिए ॥ ३ ॥

उषस्युत्थाय योमर्त्यः स्नानं विधिवदाचरेत्।
तुष्टोहं तस्य यच्छामि आत्मानमपि पुत्रक ॥ ४ ॥

हे पुत्र अगहन में जो चार घड़ी रात रहे उठ के नहाते हैं उन को हम अपनी आत्मा भी दे देते हैं ॥ ४ ॥ इत्यादि प्रथमाध्याये।

श्री भगवान आज्ञा करते हैं।

प्रथमाध्याय।

अब स्नान की विधी लिखते हैं। बड़े सवेरे उठ के गुरु को नमस्कार करके हमारा ध्यान करे और सहस्र नाम इत्यादि पढ़के गांव के बाहर मल त्याग कर के शौच से शुद्ध होके आचवन कर के दतुअन कर के स्नान करे तुलसी जी के जड़ की मिट्टी और उन का पत्ता लेकर के मूल मंत्र पढ़ के वा गायत्री पढ़ के शरीर में लगाय के स्नान करे स्नान को समय इन मंत्रों से श्रीगंगा जी का आवाहन करे। मंत्र

विष्णुपादप्रसूतासिवैष्णवीविष्णुदेवता।
त्राहिपापात्समस्तान्मामाजन्ममरणांतिकात् ॥ ५ ॥

तिस्रःकोट्योर्धकोटिश्चतीर्थानांवायुरब्रवीत् ।
दिविभुव्यन्तरिक्षेचतानितेसन्तुजान्हवि ॥ ६ ॥
नन्दिनीत्येवतेनाम देवेषुनलिनीतिच ।
दक्षापृथ्वीचविहगाविश्वकायाशिवासिता ॥ ७ ॥
विद्याधरीसुप्रसन्नातथालोकप्रसादिनी ।
क्षेमावतीजान्हवीचशान्ताशान्तिप्रदायिनी ॥ ८ ॥
एतानिपुण्यनामानिस्नानकालेप्रकीर्तयेत् ।
भवेत्सन्निहितातत्रगंगात्रिपथगामिनी ॥ ९ ॥

इन मंत्रों को पढ़ के फिर श्री गंगा जी की मृत्तिका इस मंत्र से सिर में लगाना। मंत्र

अश्वक्रान्तेरथक्रान्ते विष्णुक्रान्तेवसुन्धरे ।
मृत्तिकेहरमेपापं यन्मयादुष्कृतंकृतं ॥ १० ॥
उद्धृतासिवराहेण कृष्णेन शतबाहुना ।
नमस्ते सर्व्व देवानाम्प्रभवारणिसुव्रते ॥ ११ ॥

इस मंत्र से मृत्तिका शिर मे लगाय के स्नान करे स्नान करके जल में वस्त्र न निचोड़े फिर आचमन करके कपड़ा पहन के फिर आचमन करे ॥

फिर संध्या तर्पण आरंभ करे तिस में पहले उर्ध्वपुंड्र धारण करके फिर संध्यादिक कर्म करे। इत्यादि द्वितीयाध्याये ।

श्रीभगवान आज्ञा करते हैं कि तुलसी की मृत्तिका वा गोपी चंदन वा प्रसादी कुंकुम चन्दनादि से तिलक लगाने का बड़ा पुण्य है और गोपी चंदन से शंख चक्रादिक चिन्ह हृदय बाहुमूल इत्यादिक अंगों मे धारण करना।

श्री भगवान कहते हैं कि तुलसी के काठ की माला जो धारण करते हैं वे चाहे भले हों चाहें बुरे हमारे ही होते हैं तुलसी की काठ की वा आंवले की माला जो लोग पहिनते हैं वे हमारे स्वरूप हैं इस भांति तिलक धारण कर के फिर संध्या कर के गुरु को भेंट कर के साष्टांग दंडवत कर के

हमारी मानसी पूजा कर के फिर विधि पूर्व्वक षोड़शोपचार पूजा करे।
इत्यादि चतुर्थाध्याये।

श्री भगवान आज्ञा करते हैं कि जो लोग हमें अगहन में पंचामृत से सनान कराते हैं वे लोग कोटिन गोदान का फल पाते हैं जो लोग शंख से हमें सनान कराते हैं वे जीवन्मुक्त हैं जिन के घर शंख की पूजा होती है वे धन्य हैं। इत्यादि पंचमाध्याये।

आप कहते हैं कि जो लोग हमारे सामने घंटा बजाते हैं उन की पूजा का करोड़ गुना फल होता है क्योंकि घंटा पर गरुड़ जी रहते हैं और गरुड़ जी के पक्ष से सामवेद निकलता है इस से जो पूजा की समय घंटा बजाता है उस को बहुत फल होता है जो लोग हमारी पूजा में नृत्य गान इत्यादिक करते हैं वे लोग अपने पित्रों के सहित वैकुंठ पाते हैं जो लोग हमें तुलसी के काठ का चंदन चढ़ाते हैं वे हमारे प्रिय होते हैं।

तुलसी दलजकं रुद्यं दत्वा यश्चैवते पुनः।
मार्गशीर्षे सदा भक्त्यासलभेद्वांछितं फलं ॥ १ ॥

श्री भगवान आज्ञा करते हैं कि जो लोग हमें अगहन में कमल का फूल चढ़ाते हैं वे लोग हमारे वल्लभ होते हैं हम को बिना सुगंधि के फूल और कीड़े का चाटा फूल नहीं चढ़ाना सब फूलों में जाती फूल का विशेष माहात्म है इस हेतु आप आज्ञा करते हैं। यथा।

सर्वासाम्पुष्पजातीनांजातिपुष्पमिहोत्तमं।
जातिपुष्पसहस्राणांयच्छेन्मालांसुशोभनां॥
मह्यंयोविधिवद्द्यात्तस्यपुण्यफलंशृणु।
कल्पकोटिसहस्राणिकल्पकोटिशतानिच ॥
मत्पुरेवसतेश्रीमान्समतुल्यपराक्रमः ॥ १ ॥
सर्व्वेषांपत्रपुष्पाणांतुलसीममवल्लभा।
अन्येषामपिदेवानांन निषिद्धाकदाचन ॥ २ ॥

सब फूलों में जाती फूल की विशेष महिमा है हजार जाती फूल माला जो हम को समर्पण करता है वह हजार करोड़ कल्प और सौ करोड़

काल्य हमारे लोक में हमारे तुल्य पराक्रम हो कर बास करता है और सब फूलों से तुलसी हम को बहुत प्यारी है और दूसरे देवताओं की पूजा में भी तुलसी निषिद्ध नहीं है। इत्यादि सप्तमे।

श्री भगवान आज्ञा करते हैं कि तुलसी हम को अत्यन्त प्रिय है।

यथा।

श्रीमत्तुलस्यार्चयतेसकृद्धिमांपत्रैःसुगन्धैर्विमलैरखंडितैः ।
यत्तस्यपापंवटसंस्थितंतदानिरीक्षयित्वापरिमार्जयेद्यमः ॥
तुलसीनयेषांममपूजनार्थंसम्यादितैकादशिपुण्यवासरे ।
धिग्यौवनंजीवितमर्थसंततिं तेषान्मुखंनेहचदृश्यतेपरैः ॥

जो कोई श्री तुलसी से हमारी पूजा करता है और उस्के विमल और बिना टूटे दल हम को समर्पण करता है उस्के हृदय का पाप जमराज दूर कर देते हैं। जिन लोगों ने एकादशी के दिन हमारी तुलसी से पूजा नहीं किया उनके जीवन और कामऔर उनके सन्तान धिक्कार योग्य हैं और मुंह देखने के योग्य नहीं हैं। इति

अगहन के महीने दीपदान का बहुत फल है। यथा।

यःकरोतिसहोमासि कर्पूरेणचदीपकं ।
अश्वमेधमवाप्नोति कुलंचैवसमुद्धरेत् ॥
घृतेनचाथतैलेन दीपंयोज्वालयेन्नरः ।
सहोमासेममाग्रेतु तस्यपुण्यफलंशृणु ॥
विहायसकलंपापं सहस्रादित्यसन्निभः ।
ज्योतिष्मताविमानेनममलोकेमहीयते ॥

जो कोई अगहन में कपूर का दीया बालता है उस्को अश्वमेध का फल मिलता है और अपने कुल का उद्धार करता है। घी से अथवा तेल से जो लोग अगहन में हमारे सामने दीया बालते हैं वे लोग सब पापों से छूट के हजार सूर्य्य के समान ज्योति पावते हैं और बड़े ज्योतिमान विमान पर बैठ के हमारे लोक जाते हैं। इत्यादिअष्टमे।

श्री भगवान आज्ञा करते हैं कि अगहन में जो लोग हमारी प्रदक्षिणा

करते हैं और जो हमें अष्टांग दंडवत करते हैं वे लोग स्वर्ग में निवास करते हैं। यथा।

प्रदक्षिणादंडपातंयःकरोतिसदामम ।
सहोमासिविशेषेणकल्पस्वसतेदिवि ॥
पद्भ्यांकराभ्यांजानुभ्यांउरसाशिरसातथा ।
मनसावचसादृष्ट्याप्रणामोऽष्टाङ्गउच्यते ॥

जो लोग हम को दंडवत और प्रदक्षिणा करते हैं वे लोग कल्प भर स्वर्ग में निवास करते हैं। पैर से १। हाथ से २। जंघा से ३। छाती से ४। सिर से ५। मन से ६। वचन से ७। और दृष्टि से ८। नमस्कार करने को अष्टांगदंडवत कहते हैं अर्थात् आठों अंग छुवैं और आठों अंग से नमस्कार करें उसको साष्टांग दंडवत कहते हैं। इत्यादिनवमे।

श्रीभगवान आज्ञा करते हैं कि एकादशी का व्रत और जागरण जो लोग करते हैं वे हम को अत्यन्त प्रिय हैं और जागरण में जो लोग दीपदान इत्यादि करते हैं वे हमारे परम प्यारे हो जाते हैं। यथा।

यःपुनःकुरुतेनृत्यंदीपंगानंचपूजनं ।
नतत्क्रतुशतैःपुण्यंव्रतैर्दानशतैरपि ॥

जो भक्त लोग हमारे सामने नाचते हैं दीप दान करते हैं हमारा कीर्तन करते हैं पूजा करते हैं उन के पुन्य के बराबर न सौ यज्ञ का पुण्य है और न सौ व्रत और दान का पुण्य है। इत्यादिद्वादशे।

अब कौन देवता की पूजा करना चाहिए सो आप आज्ञा करते हैं कि अगहन में कीर्ति और केशव को पूजा करना चाहिए और सपत्नीक ब्राह्मणों को भोजन कराना चहिए। यथा।

सहोमासेचवैदेवो कीर्तियुक्तोहिकेशवः ।
तस्यपूजाप्रकर्तव्यायथापूर्व्वंप्रभाषिता ॥
ब्राह्मणंकेशवंकुर्य्यात्तत्पत्नीकीर्तिमंशिकां ।
दंपतीविधिवत्पूज्यौवस्त्राभरणधेनुभिः ॥

दम्पत्योःपूजनेनत्सपूजितोहंसदारकः ।
तस्मादवश्यंसम्पूज्यौदम्पतीममतुष्टये ॥

अगहन के महीने में कीर्ति देवी और केशव देवता की पूजा षोड़शोपचार से करना ब्राह्मण को केशव मानना और ब्राह्मणी को कीर्ति समुझ के वस्त्र गहना गन्ध से दोनों की पूजा करना। दम्पती ब्राह्मण के पूजा से हमारी और लक्ष्मी दोनों की पूजा हो जाती है इस हेतु हमारे तुष्ट होने के अर्थ दम्पती की पूजा अवश्य करना। इत्यादि चतुर्दशे।

श्री भगवान आज्ञा करते हैं कि अगहन में हमारे प्रिय कदम्ब वृक्ष की पूजा अवश्य करना। यथा।

मार्गशुक्ले प्रतिपदिकदम्बंपूजयेत्तुयः ।
आयुरारोग्यमैश्वर्यंपुमान्प्राप्नोत्यसंशयः ॥
मार्गशीर्षेसिताष्टम्यांभोजनंचकदम्बके ।
सिद्ध्येसिद्ध्येचगोदानंपुमान्प्राप्नोत्यसंशयः ॥
एकादश्यांव्रतङ्कुर्यात्द्वादश्यामरुणोदये ।
कदम्बम्पूजयेद्भक्त्यासाक्षाल्लक्ष्मीक्षणादर्शनं ॥
अखंडदीपकङ्कुर्यान्नीपवृक्षे हरिप्रिये ।
सर्वानकामनवाप्नोतिवशीकारणमुत्तमं ॥
मार्गशीर्षेत्रयोदश्यांयोनीपम्पयसाऽर्चयेत् ।
बिन्दुनाबिन्दुनाचैवअश्वमेधफलंलभेत् ॥
मार्गशीर्षेचतुर्दश्यान्दधिनानीपमर्चयेत् ।
इहसन्तानवृद्धिश्चपरचपरमंपदं ॥
मार्गशीर्ष्यांपौर्णमास्याङ्कुङ्कुमहारेणनीपकं ।
वेष्टयेद्दनमालाभिःक्षणात्तस्यवशोभवेत् ॥
इदंरहस्यंगोपनीयं पुत्र सर्व्वात्मनाम म ॥ इति ॥

अगहन सुदी प्रतिपदा को जो कदम्ब को पूजा करते हैं वे आयुष्य आरोग्य ऐश्वर्य पाते हैं अगहन सुदी अष्टमी को जो कदम्ब के नीचे भोजन करते कराते हैं वे एक एक ग्रास में गोदान का फल पाते हैं। एकादशी का व्रत कर के द्वादशी को सवेरे जो कदम्ब की पूजा करता है उसको साक्षात श्रीकृष्ण का दर्शन होता है। जो कदम्ब के सन्मुख अखंड दीपदान करता है उसको सब कामों का फल होता है यह हमारा वशीकरण है। अगहन की तेरस को जो कदम्ब को दूध चढ़ाते हैं उनको एक एक बूंद में अश्वमेध का फल होता है। मार्गशीर्ष की चौदस को जो कदम्ब को दही चढ़ाते हैं उनको इस लोक में संतान और उस लोक में परम पद मिलता है अगहन सुदी पुर्नवासी को जो लोग कदम्ब को गुंजा की माला और बनमाला समर्पण करते हैं साक्षात श्री कृष्ण उनके वश में हो जाते हैं।

अब इस से बढ़ के और क्या फल होगा कि थोड़े साधन में और साक्षात् श्री कृष्ण वश हो जायं। ऐसा कौन होगा जो इस छोटे साधन को बड़े फल की इच्छा से न करै। यह केवल श्री भगवान की कृपा है कि हम जीवों के हेतु उसने ऐसे छोटे छोटे साधन बनाये हैं। देखो कदम्ब को एक दिन गुंजा की माला चढ़ाने से आप वश में हो जाते हैं यह केवल उन की दीन दयालता है। अहो ऐसा कौन मूर्ख होगा जो इस बात को जान के भी श्री कृष्ण को वश करने की इच्छा न करैगा।

श्री भगवान आज्ञा करते हैं कि हे पुत्र इस रहस्य को आत्मा से अधिक गुप्त रखना। इत्यादि षोड़शे।

यह स्कन्द पुराण के मार्गशीर्ष माहात्म्य का सारांश यहां पर लिखा गया है जिससे सज्जनों को सन्तोष होगा।

अब अगहन में किस दान की विशेष महिमा है सो लिखते हैं।

यथा।

तिलपात्रं तुयोदद्यान्मार्गशीर्षेसकांचनं।
कुलानांनरकस्थानांतिलसंख्यासमुद्धरेत्॥

मार्गशीर्ष के महीने में सोना समेत जो तिल पात्र दान करते हैं वे लोग जितने तिलदान करते हैं उतने कुलों का उद्धार करते हैं।

पुनः यथा।

अशक्त्याघृतपात्रंतुसहिरण्यंप्रदापयेत्।
अशक्तोक्तस्वपन्थानंस्वप्नेपिनसपश्यति॥

जो लोग अपनी शक्ति के अनुसार सोना समेत घी का पात्र दान करते हैं वे लोग सपने में भी नरक का रस्ता नहीं देखते। इत्यादि।

अगहन के महीने में कपड़ा और जूता दान करने का बड़ा पुण्य है और अगहन महीने में तुलसी के सामने ब्राह्मण को खीर खिलाने का बड़ा फल है। यथा।

तुलसीसन्निधौविप्रान्भोजयेद्यस्तुपायसैः।
एकेतुभोजितेमार्गेकोटिर्भवतिभोजिता॥

अगहन के महीने में तुलसी के सन्निधान जो लोग एक ब्राह्मण को खीर खिलाते हैं वे लोग कोटि ब्राह्मण भोजन का फल पाते हैं।

और भी अगहन में पूजा की सामग्री और शालिग्राम दान करने की आज्ञा है। यथा।

कुंकुमंह्यगरुंचैवचंदनंगुग्गुलंतथा।
पूजाद्रव्यंतथाचान्यंमार्गशीर्षेप्रयच्छति॥
विप्रायवेदविदुषेवैष्णवायविशेषतः।
सगच्छेन्मामकेलोकेसंयुतःकुलकोटिभिः॥
शालिग्रामशिलांरम्यांमार्गशीर्षेद्विजातये।
ददातिहेमसहितांदिव्यवस्त्रेणवेष्टिताम्॥
रत्नपूर्णांवसुमतींसशैलवनकाननाम्।
दत्वायत्फलमाप्नोतितेनतत्फलमाप्नुयात्॥
शालिग्रामंतथाचक्रंशंखंघंटांतथैवच।
ददातितस्यपुण्यस्यसंख्याकर्त्तुंनशक्यते॥

रोली अगर चंदन गुगुल और भी पूजा की सामग्री जो लोग वेदपाठी ब्राह्मणों को और विशेष करके वैष्णव को अगहन में देते हैं। वे लोग अपने

करोड़ कुल के सहित हमारे लोक में जाते हैं। जो लोग अगहन म शालिग्राम की रम्य शिला सोना और वस्त्र समेत ब्राह्मण को देता है वह रत्न पूर्ण पृथ्वी पहाड़ वन समेत दान करने का फल पाता है और शालिग्राम गोमती चक्र शंख घंटा जो लोग देते हैं उन के पुण्य की संख्या नहीं कर सकते। इत्यादि।

अगहन में स्त्रियों को सोहाग पेटारी दान करना चहिए। यथा।

सासिमार्गशिरेतुस्त्रीकुंकुमंमौक्तिकानिच ।
सिन्दूरंकज्जलंचापिहैमान्याभरणानिच ॥
सुगन्धीन्यपिवस्तूनिताम्बूलंरंजिताम्बरं ।
प्रयच्छतिद्विजातिभ्योतस्यपुण्यफलंशृणु ॥
पतिव्रतापुत्रिणीचसुभगाजन्मजन्मनि ।
स्वप्नेपिभर्त्तुर्दुःखंसानपश्यतिकदाचन ॥

अगहन में रोली मोती सेंदुर काजल सोना गहिना चूड़ी सुगंध पान रंगी साड़ी और भी ऐना कंघी टिकुली इत्यादिक सोहाग की वस्तु जो स्त्री दान करती हैं वह पतिव्रता होती हैं उन के पुत्र जीते हैं जन्म जन्म में भाग्यवान होती हैं और वह सपने में भी पति का दुःख नहीं देखतीं। इत्यादि।

अब मार्ग शीर्ष में और अन्य देवताओं के जो व्रत हैं वह लिखते हैं।

अगहन बदी तीज को स्त्रियों को सौभाग्य सुन्दरी का व्रत सौभाग्य का देने वाला है इस की विशेष विधि व्रतार्क आदि ग्रन्थों में लिखी है। इत्यादि।

मार्गशीर्ष कृष्ण ११ को उत्पन्ना एकादशी का व्रत है मत्स्य पुराण में इसकी गाथा है अर्जुन ने श्रीकृष्ण से पूछा है और श्रीकृष्ण ने आज्ञा किया है कि इस एकादशी को एकादशी का जन्म है और यह बड़ी पुनीत एकादशी है।

इत्यादि मात्स्ये उत्पन्नाव्रतं।

इसी अगहन बदी ११ को वैतरणी व्रत होता है इस में गो पूजन और गोदान करना चहिए यह कथा भविष्योत्तर पुराण की हेमाद्रि ग्रन्थ में लिखी है राजा युधिष्ठिर ने भीष्म पितामह से पूछा है उन्हों ने इस का विधान और फल कहा है।

एकादशीतिथिःकृष्णामार्गशीर्षगतान्नृप ।

तामासाद्यनरःसम्यग्गृह्णीयान्नियमंशुचिः ॥
एकादशीतिथिः कृष्णानाम्नावैतरणीशुभा ।
साव्रतेनसदाकार्य्या भक्तावाचोपवासिनी ॥
मध्यान्हेतुनरःस्नात्वा नित्यनिर्वर्तितक्रियाः ।
रात्रौसुरभिमानीय कृष्णामर्च्चेद्यथाविधि ॥

इत्यादिभविष्योत्तरेवैतरणीव्रतं ।

इसी एकादशी को कृष्णा एकादशी का व्रत होता है यह व्रत बाराह पुराण में पृथ्वी ने श्री बाराह जी से पूछा है सो आप ने आज्ञा किया है कि इस कृष्णा एकादशी को व्रत करना और तिलपात्र दान करना। यथा।

समस्तपातकहरं स्वर्गदंसर्व्वकामदं ।
नसमंकृष्णद्वादश्या किञ्चिदस्तिपरंभुवि ॥
मार्गशीर्षेकृष्णपक्षे दशम्यामेकभुक्नरः ।
एकादश्यामुपवसेत् कृष्णस्यार्चांसमाचरेत् ॥
स्नात्वाचकृष्णैस्तु तिलैःप्रभाते दद्याच्चसम्यक् तिलयुक्तपात्रं ॥
नमोस्तुकृष्णाय पितुश्चमातुः हत्वात्वघं प्रापयतोस्त्वगत्यै ॥

इत्यादिवाराहपुराणेकृष्णाव्रतं ।

अगहन वदी अमावस्या को स्त्रियों को गौरी तपोव्रत सौभाग्य बढ़ने के हेतु करना चहिए यह अंगिरा ने कहा है कि इस व्रत के करने से स्त्री को रूप सौभाग्य मिलता है। यथा।

आदौमार्गशिरेमासिह्यमावास्यादिनेशुभे ।
गृह्णीयान्नियमंतत्रदन्तधावनपूर्व्वकं ॥

इस दिन सौभाग्य वस्तु दान करना और सुवासिनी भोजन कराना चाहिए। इत्यादि अंगिरोक्तं गौरी तपोव्रतं।

इसी अगहन की अमावस को स्त्रियों को सौभाग्य वृद्धि के हेतु महाव्रत लिखा है यह हेमाद्रि ग्रन्थ में कालिका पुराण की कथा लिखी है। यथा।

ततोमार्गशिरेमासि प्रतिपद्यपरेहनि ।

उपवसेत्स्वगुरुम्पूज्यमहादेवंस्मरेन्मुहुः ।
एवमूतंमहच्चैव ब्रम्हघ्नेष्यघमर्षणं ।
धनंसायुप्रदन्नित्यं रूपसौभाग्यदंपरं ॥

इत्यादि कालिका पुराणे ।

मार्गशीर्ष सुदी ५ को नाग की पूजा करना यह बात हेमाद्रि ग्रन्थ में स्कान्द पुराण में लिखी है। यथा।

शुक्लामार्गशिरे याचश्रावणेयाचपंचमी ।
स्नानेदाने बहुफलानागलोकप्रदायिनी ॥

इत्यादि स्कान्दे नाग पंचमी।

अगहन सुदी ६ स्कान्द षष्ठी वा चम्पाषष्ठी है इसमें सूर्य और स्कान्द की पूजा करना। इस मंत्र से कार्त्तिकेय की पूजाकरना॥

सेनाविदारकस्कन्द महासेनमहाबल ।
रुद्रोमांगजषड्वक्त्र गङ्गागर्भनमोस्तुते ॥

इत्यादि दिवोदासीये चम्पा षष्ठी।

अगहन सुदी ७ को सूर्य्य तीर्थ में नहाना और सूर्य्य की पूजा करना और श्री यमुना जी में वा पंच गंगा में स्नानकरना यह स्कान्द पुराण के मार्गशीर्ष महात्म्य में लिखा है॥ यथा।

मार्गशीर्षेतुयाशुक्ला सप्तमीभानुसंयुता ।
कर्तव्यासाप्रयत्नेनसूर्य्यपर्व्वशताधिका ॥
तस्यांदत्तंहुतंजप्तं तपस्तप्तं कृतंचयत् ।
अक्षयंतद्धि जानीयाद्यमुनायांनसंशय ॥

इत्यादि स्कान्दे सूर्य्य सप्तमी ।

अगहन सुदी ११ मोक्षा एकादशी हेमाद्रि ग्रन्थ में भविष्योतर का वाक्य लिखा है इसमें जागरण और दीपदान का फल विशेष है।

इत्यादि मोक्षाव्रतं।

अगहन सुदी १२ को मत्स्य पूजा करना इस दिन मत्स्य भगवान का उत्पन्न है यह बात स्कान्द पुराण के एकादशी माहात्म्य में लिखी है। यथा।

ततःप्रभातसमयेक्वार्घ्यंमत्स्योत्सवं बुधैः

इत्यादि।

अगहन सुदी १४ को पिशाच मोचन तीर्थ पर श्राद्ध करना यह निर्णयसिन्धु में लिखा है इस्में श्राद्ध से पितरों का मोक्ष होता है।

इत्यादि निर्णय सिन्धौ पिशाचमोचने श्राद्धं।

अगहन सुदी १५ को दत्तात्रेय का जन्म है यह बात स्कन्दपुराण के सह्याद्रि माहात्म्य में लिखी है इस्में दत्तात्रेय की पूजा और उनका दर्शन करना। यथा।

मार्गशीर्षेतथामासिदृश्यमेक्तिसुनिर्मले ।
मार्गशीर्षेपौर्णमास्यांमृगशीर्षयुतेवुधे ॥
जनयामासदेदीप्यमानंपुत्रंसतीशुभं ।
तत्विष्णुमागतंदृष्ट्वाचलिर्नामाकरोत्सवं ॥
दत्तवान्स्वस्यपुत्रस्यदत्तात्रेयमितीश्वरम् ।

इत्यादि स्कान्दे दत्तात्रेय जन्मोत्सवः।

इसी अगहन सुदी १५ को जो कुछ दान पुन्य स्नान बन पड़े करना उचित है इस पूर्णिमा के समान कोई पर्व्व नहीं है यह बात स्कन्द पुराण की मार्गशीर्ष माहात्म्य में लिखी है। यथा।

स्नानंदानंतथापूजांपूर्णायान्नकरोतियः ।
षष्ठिवर्षसहस्राणिरौरवेप्रपच्यते ॥ १ ॥
गोदानंभूमिदानंचवस्त्रान्नादिचयद्भवेत् ।
मार्गशीर्षेपौर्णमास्यांदानेस्यादक्षयंफलं ॥

अगहन की पुनवांसी को जो स्नानदानादिक नहीं करते वह साठ हजार बरस रौरव में बास करते हैं।

अगहन सुदी १५ को जो कुछ दान करता है वह अक्षय होता है।

अगहन में श्री मद्भागवत सुन्ने का बड़ा महातम्य है। यथामार्गशीर्षमहात्म्ये।

श्रीमद्भागवतंनामपुराणंब्रह्मसम्मितं ।

शृणुयाच्छ्रद्धयायुक्तोममसन्तोषकारणं ॥
यावद्दिनानिहेपुत्रशास्त्रंभागवतंकलौ ।
तावत्कुर्वन्तिपितरःस्वर्गेत्वमृतभोजनं ॥
यत्रयत्रचतुर्वक्त्रश्रीमद्भागवतंभवेत् ।
गच्छामितत्रतत्राहंगौर्यथासुतवत्सला ॥

इत्यादि श्रीमद्भागवत माहात्म्यं ।

मार्गशीर्ष में गोपी गोविन्द तीर्थ की यात्रा और गोविन्द नाम स्मरण अवश्य करना चाहिए ।

यथा वायु पुराणे लक्ष्मी संहितायां काशी माहात्म्ये ।

गोपिगोविन्द तीर्थं तु गोपीगोविन्दसंज्ञकं ।
तत्रमार्गशिरेमासिमहिमाबहुगीयते ।

इति मार्गशीर्ष महिमा ।

मार्गशीर्षमहिमा ।

चतुर्वर्ग, मोक्षादिक पाने का बहुत सहज उपाय ।

हम लोग माघ वैसाख कार्तिकादि नहाने को अति पवित्र जानकर स्नानदानादिक करते हैं परन्तु हम लोग नहीं जानते कि एक महीना इन सभों से महापुनीत और थोड़े साधन में बहुत फल का देनेवाला बचगया है और उस में हम लोग कुछ स्नानदानादिक नहीं करते और जिस की प्रसिद्धि के वास्ते हम बड़े आनंद से यह इश्तिहार देते हैं ।

वह गोप्यमास जिस का माहात्म्य सब शास्त्रों में बड़े आदर से कहा है वह मार्गशीर्ष अर्थात् अगहन का महीना है जिस का गुन गान करने से महात्मा लोग तृप्त नहीं होते और यह महीना सब महीनों का राजा और भगवान का स्वरूप है ।

मासानाम्मार्गशीर्षोहं । श्री कुमारिका गनों ने इसी के स्नान से श्री कृष्ण को पाया था और स्कन्दपुरान में इस की बड़ी स्तुति लिखी है। यथा। स्कान्दे ब्रह्मप्रति भगवद्वाक्यम् ।

सर्व्वयज्ञेषुयत्पुण्यं सर्व्वतीर्थेषुयत्फलं ।
सहसाप्नोतितत्सर्व्वं मार्गशीर्षे कृते सुत ॥ १ ॥
यज्ञाध्ययनदानाद्यै स्सर्व्वतीर्थावगाहनैः ।
सन्यासेनचयोगेन नाहंवश्योभवामिच ॥ २ ॥

यह श्रीभगवान ने श्रीमत्भागवत और श्री भगवत् गीता में श्रीमुख से आज्ञा किया है कि सब महीने में अगहन हमारा स्वरूप है । और स्कान्दपुराण में भी ब्रह्मा से श्रीभगवान फिर आज्ञा करते हैं ।

यथा । स्नानेन दानेनच पूजनेन होमे विधाने तपसादितश्च ।
वश्यो यथा मार्गशिरेश्चमासि तथा न चान्येषुहि गर्भसुत्ता ॥ ३॥

माघाच्छतगुणं पुण्यं वैशाखे मासि लभ्यते ।
तस्मात् सहस्रगुणितं तुलासंस्थे दिवाकरे ॥ ४ ॥
तस्माच्च कोटिगुणितं वृश्चिकस्थे दिवाकरे ।

मार्गशीर्षेऽधिकंतस्मात्सर्व्वदा मम वल्लभ ॥ ५ ॥

आप कहते हैं कि हे गर्भमुक्त ब्रह्मा हम ध्यान, दान, पूजन, होम, विधान इत्यादिक से वश नहीं होते हम मार्गशीर्ष स्नान से. वश होते हैं। माघ में वैशाख का सौ गुना पुण्य है और वैशाख से हजार गुना पुण्य कार्तिक में है और कार्तिक से करोड़ गुन पुण्य वृश्चिक के सूर्य्य में, और अगहन में उस से भी अधिक पुण्य है। इस हेतु आप लोगों को इस अगहन के समय में जो कुछ बन सके स्नान दान तुलसी कदम्ब पूजन करना चाहिए।

स्कान्दपुराणे मार्गशीर्षमाहात्म्ये ।

मार्गशीर्षं न कुर्व्वन्ति ये नरा पापमोहिताः ।
पापरूपाहि ते ज्ञेयाः कलिकाले विशेषतः ॥ ६ ॥
धन्यास्ते कृतिनो ज्ञेया ये यजन्ति जनार्द्दनम् ।
कर्म्मणा मनसा वाचा भक्तितश्च भजन्ति ये ॥ ७ ॥
मार्गशीर्षे महापुण्या मथुरा काशिका तथा ।
मथुरास्नातुकामस्तु गच्छतस्तु पदेपदे ॥ ८ ॥
निराशानि व्रजंत्येव पातकानि न संशयः ।
गोदानं स्वर्णदानं च वस्त्रान्नादि च यद्भवेत् ॥ ९ ॥
पौर्णमास्यां सहोमासे दाने स्यादक्षयम् फलम् ।
सा पौर्णमासी लभ्येत गंगायां यदि भाग्यतः ॥ १० ॥
स्नानादेव फलं तत्र यज्ञकोटिसमं भवेत् ।
पूजयेत् संस्मरेद्यस्तु कदम्बं सर्व्वकामदम् ॥ ११ ॥
सर्व्वान्कामानवाप्नोति इहामुत्र न संशयः ।
कदम्ब मूलसंभूतां मृदं देहे बिभर्त्ति यः ॥ १२ ॥
सर्व्वतीर्थादिकं पुण्यं लभते मानवो भुवि ।

जो पाप मोहित लोग मार्गशीर्ष स्नान नहीं करते उन्हें इस कलियुग में विशेष करके पापरूप जानना। वे सुकृती लोग धन्य हैं जो तन-

मन, धन, बानी और कर्म से श्री भगवान की सेवा करते हैं। अगहन के महीने में मथुरा और काशी में महाफल होता है। जो लोग मथुरा स्नान करने जाते हैं उन के पाप भाग जाते हैं। अगहन की पुनवासी को सब दान अक्षय होते हैं। और भाग्य से यह पुनवासी में जो कोई गंगा स्नान बनजाय तो सैकड़ों करोड़ पुनवासी का फल मिले। जो लोग अगहन में कदम्ब की पूजा करते हैं उन के सब काम सिद्ध होते हैं। जो लोग कदम्ब के जड़ की मट्टी का तिलक करते हैं उन को सब तीर्थ सनान का फल मिलता है।

उस दिन सनान न बने तो पीछे के पांच दिन हरिपंचक में अवश्य सनान करे। यथा पाद्मे स्कान्दे च।

हरिपंचकविख्यातं सर्व्वलोकेषु सिद्धिदम्।
नारीणां च नरादीनां सर्व्वदुःखनिवर्हणम्॥

इस अ[illegible] के महीने में आप लोगोंसे जो कुछ बने स्नान दानादिक कीजिए।

आघस्नानविधिः।

भरित नेह नव नीर नित, बरसन सुरस अथोर।
जयति अपूरब घन कोऊ, लखि नाचत मन मोर॥ १॥

माघ स्नान पूस सुदी एकादशी वा पूनम से प्रारम्भ कर के माघ सुदी द्वादशी वा पूनम को समाप्त करना। माघ में मूली नहीं खानी। नहाने की विधि के अनुसार स्नान करना।

माघ स्नान के मंत्र।

दुःख दारिद्र्यनाशाय श्रीविष्णोस्तोषणाय च।
प्रातःस्नानं करोम्यद्य माघे पापविनाशनम्॥ २॥
मकरस्थे रवौ माघे गोविन्दाच्युत माधव।
स्नानेनानेन मे देव यथोक्तफलदो भव॥ ३॥

सूर्य्य को अर्घ देने का मंत्र।

सविते प्रसविन्नेच परम्धाम जले मम।
त्वत्तेजसा परिभ्रष्टं पापं यातु सहस्रधा॥

माघ स्नान का समय ठीक सूर्य उदय होने के पीछे, परन्तु किसी का मत है कि अरुणोदय में नहाना। जो सारा माघ न नहाया जा सके तो तीन दिन नहाना। मकर संक्रान्त, रथसप्तमी और माघी पूनम ये तीन दिन। वा माघ वदी तेरस चौदस मावस। वा माघ सुदी दसमी एकादशी द्वादशी वा संक्रान्त के पीछे तीन दिन। पर मुख्य तीन दिन तेरस से मावस तक ही हैं। माघ नहा कर उसी समय आग नहीं तापना। तिल में मीठा मिला कर दान करना और उसी का होम करना। तिल से नहाना, तिल का बटना लगाना, तिल का होम करना, तिल से तर्पण करना, तिल देना और तिल खाना। आमला, तेल, लकड़ी, कम्मल, एक रत्ती सोना और कपड़े तथा जूतों के जोड़े ब्राह्मणों को देना। जब माघ स्नान समाप्त हो उस दिन घी तिल मीठे का होम कर इस मंत्र से सूर्य की प्रार्थना करनी।

दिवाकार जगन्नाथ प्रभाकर नमोस्तुते।
परिपूर्णं कुरुष्वेह माघ स्नान सुषःपते॥

माघ में मकर संक्रान्त में स्नान कर के वस्त्र और तिल धेनु दान करना। माघ की अमावास्या को मौन स्नान करना। इस दिन जो सोमवार वा मंगल हो तो पुन्य विशेष है। अमावास्या यदि रविवार को हो और उस दिन श्रवण वा अश्विनी वा धनिष्ठा वा आर्द्रा वा अश्लेषा वा मृगशिरा नक्षत्र हो तो भी बड़ा फल है। माघ वदी ४ को गणेश पूजन। माघ वदी १४ को यम तर्पण करना। माघ सुदी ४ को ढुंढिराज का व्रत और पूजन करना। माघ सुदी ५ श्री पंचमी है इस दिन कुंद के फूल से लक्ष्मी की पूजा करनी और नए अंकुर तथा नई वौर से कामदेव की पूजा करनी। माघ सुदी ७ रथ सप्तमी है इस में अरुणोदय में स्नान का बड़ा पुन्य है। ऊख से जल हिला कर धतूरे के सात पत्ते सिर पर रख कर इन मन्त्रों से नहाना।

यद्यज्जन्मकृतं पापं मया जन्मसुसप्तसु।
तन्मेरोगंच शोकंच माकरी हन्तु सप्तमी॥ १॥
एतज्जन्मकृतं पापम् यच्चजन्मांतरार्जितम्।
मनोवाक्कायजं यच्च ज्ञाताज्ञातेचयेपुनः॥ २॥
इतिसप्तविधंपापम् स्नानान्मे सप्तसप्तिके।

सप्तव्याधिसमायुक्तम् हरमाकरिसप्तमि ॥ ३ ॥

स्नान के समय कुसम मिली बत्ती का दिया सिर पर ऊंचा कर के मन्त्र से जल में सूर्य्य को दे।

नमस्ते रुद्ररूपाय रसानाम्पतये नमः ।
वरुणाय नमस्तेस्तु हरिवास नमोस्तुते ॥ ४ ॥

चन्दन से अष्ट दल लिख कर बीच में प्रणव सहित शिव पार्वती लिख कर क्रम से इन नामों से कमल के पत्तों पर सूरज की पूजा करे। रवयेनमः भानवेनमः विवस्वतेनमः भास्करायनमः सवित्रे नमः अर्काय नमः सहस्रकिरणायनमः। सोने के सूर्य्य तिल पात्र में रख कर ब्राह्मण को दे और इस मन्त्र से सूर्य्य को अर्घ्य दे।

सप्तसप्तिवहप्रीत सप्तलोकप्रदीपन ।
सप्तमी सहितो देव गृहाणार्घ्यं दिवाकर ॥ ५ ॥
जननीसर्व्वलोकानां सप्तमीसप्तसप्तिके ।
सप्तव्याहृतिकेदेवि नमस्ते सूर्य्य मंडले ॥ ६ ॥

सोने का कनफूल वा सोने का दीया और सोने का न हो सके तो तिल के आटे का बना कर तामे के पात्र में तिल गुड़ घी समेत लाल कपड़े में लपेट कर इस मन्त्र से दान करे।

आदित्यस्य प्रसादेन प्रातःस्नानफलेनच ।
दुष्टदौर्भाग्यदुःखघ्नं मयादत्तं तुतालकम् ॥ ७ ॥

यही सप्तमी मन्वादि भी है। इस सप्तमी को रथ दान का बड़ा फल है। माघ सुदी ८ अष्टमी को तिल ले कर भीष्म तर्प्पण करना। मन्त्र

भीष्मः शान्तनवो वीरस्सत्यवादी जितेन्द्रियः ।
आभिरद्भिरवाप्नोतु पुत्रपौत्रोचितांक्रियाम् ॥ ८ ॥
वैयाघ्रपदगोत्राय सांकृत्यप्रवरायच ।
अपुत्रायददाम्येत ज्जलम्भीष्मायवर्म्मणे ॥ ९ ॥
वसूनामवताराय शन्तनोरात्मजायच ।

अर्घ्यं ददामि भीष्माय आबालब्रह्मचारिणे ॥ १० ॥

यह तर्पण जिसका पिता जीता हो वह भी अपसव्य से करै। माघ सुदी द्वादशी का नाम भीमद्वादशी है। माघ की पूनम को स्नान का बड़ा पुन्य है। जो मेष के शनि घर और गुरु चन्द्रमा सिंह के और सूर्य श्रवण नक्षत्र में हो तो महामाघी होती है। इति।

प्रान पियारे प्रेम निधि , प्रेमिन जीवन प्रान ।
तिनके पद अरपन कियो , माघ नहान बिधान ॥

द्वादश्यां पुराण निषेधः ।

पाद्मेसप्ताहमाहात्म्ये कुमारनारदसम्वादे ।

निवृत्तायान्तु कथायान्तु पुराणानां मुनीश्वरं ।
द्वादशीम्वर्जयेत् प्राज्ञःसूतसूतकसंभवात् ॥ १ ॥
श्रीमद्भागवतस्यापि सप्ताहे नैत्यिकेपिच ।
न निषेधोस्ति देवर्षे प्राहुरेवम्पुराविदः ॥ २ ॥
श्रीभागवतसप्ताहो महायज्ञः स्मृतोबुधैः ।
आषाढ शुक्लद्वादश्या मारभ्याहनिप्रावंति ॥ ३ ॥
पूर्वाह्णयामवेलायामावित्वात्कृष्णमायया ।
मुग्धोदर्भकरो रामआहरन्नोमहर्षमिति ॥

पौराणिकैर्ज्ञेयम्

पुरुषोत्तममासविधान ।

बृहन्नारदीय पुराण से सङ्ग्रहीत हुआ
श्रीवल्लभीयहरिश्चन्द्र
कर्त्तृक अनुवादित ।

"तत्कर्म्म हरितोषं यत् सा विद्या तन्मतिर्यया"

पुरुषोत्तम मास विधान।

मृगमदमुद्रितचारुकपोलम्। मृगमदमोचनलोचनलोलम् ॥
मृगमदसेवनसुन्दररूपम् । नौमिहरिं वृन्दावनभूपम् ॥१॥

दोहा।

सो पुरुषोत्तम राधिका, चरण शरण रहु आय।
कटि जैहैं भवभोग भय, रोग कुयोग बलाय ॥१॥
जिन पुरुषोत्तम नाम शुभ, सहस कहे रचि गाय।
सो पुरुषोत्तम वदन वपु, वल्लभ होहु सहाय ॥२॥
पुरुषोत्तम पद युग सुमिरि, धरि हिय परम अनन्द।
पुरुषोत्तम को विधि लिखी, पुरुषाधम हरिचन्द ॥३॥

एक समय अनेक देवर्षि ब्रह्मर्षि राजर्षि शिष्य प्रशिष्य समेत लोकोपकार शील स्वयमतीर्थ रूप तीर्थपाद चरणारविन्द मधुव्रत तीर्थ यात्रा के मिस नैमिषक्षेत्र में एकत्र हुए और वहां महा भागवत सूत पौराणिक भी आए। सूतजी से ऋषियों ने इस असार संसार के पार जाने का उपाय और श्रीकृष्ण की लीला का प्रश्न किया। सूतजी बोले मैं अनेक तीर्थों में भ्रमण करता हुआ श्री गङ्गाजी के किनारे भगवान श्री शुकदेवजी के मुखारविन्द से श्रीमद्भागवत रूपी मधुर सुधारस का पान करके आया हूं जो आज्ञा हो वह कथा आप लोगों को सुनाऊं। ऋषियों ने कहा सहज उपाय से भगवत् प्राप्ति का जो साधन हो वह कहिए। सूतजी बोले एक दिन भगवान नारदजी चारो ओर घूमते हुए बद्रिकाश्रम में भगवान नारायण के पास गए और यही प्रश्न किया कि भगवन् कलियुग के जीवों को स्वल्प साधन में भगवान की प्राप्ति का उपाय कहिए यह सुनकर भगवान नारायण ने पुरुषोत्तम मास का माहात्म्य कहा। पाण्डवों को वन में अत्यन्त क्लेशित देखकर उनके दुःख से छूटने के हेतु भगवान श्रीकृष्णचन्द्र ने पुरुषोत्तम महात्म्य सुनाया। सब मासों के एक एक देवता नियत हैं इस्से जब पहले मलमास पड़ा तब उसका कोई देवता नहीं था और इस कारण लोग उसकी निन्दा करते थे। मलमास इस बात से अत्यन्त दुखी होकर भगवान के पास गया और भगवान वैकुंठनाथ उस-

को लेकर गोलोक में गए। पूर्ण परब्रह्म सच्चिदानन्द घन भगवान श्री कृष्ण-चन्द्र मलमास का दुख सुनकर बोले मैं पुरुषोत्तम तेरा स्वामी हूं अतएव तेरा नाम आज से पुरुषोत्तम मास होगा और सब मासों से तेरा फल विशेष होगा जो साधन लोग कार्तिकादि पुण्यमासों में अनेक वर्ष में भी करके फल न पावेंगे वह पुरुषोत्तम मास में थोड़े साधन में फल पावेंगे।

भगवान श्री कृष्ण धर्मराज जी से कहते हैं कि पूर्व जन्म में जब द्रौपदी मेधावी ऋषि की कन्या थी तब दुर्वासा ऋषि ने इससे पुरुषोत्तम मास का व्रत करने को कहा था परन्तु स्त्री बुद्धि से इसने पुरुषोत्तम मास का अनादर किया और शिवजी का व्रत करके पांच देव पति मांगकर तुम पांचों को पति पाया परन्तु पुरुषोत्तम के अनादर से बारह वर्ष की विपत्ति भोगनी पड़ी सो तीन महीने पीछे पुरुषोत्तम मास आने वाला है सो इस में तुम लोग अवश्य व्रत करना।

भगवान श्री कृष्णचन्द्र की आज्ञानुसार पाण्डवों ने पुरुषोत्तम मास का व्रत किया और विपत्ति से छूट कर भगवान की कृपा से उत्तरोत्तर अनेक शुभ फल पाया।

नारद जी से भगवान नारायण बोले पूर्वकाल में सतयुग में हैहय देश का राजा दृढधन्वा राजा था। पुष्करावर्त्त नगर उसकी राजधानी थी और विदर्भ नगर के राजा की कन्या गुणसुन्दरी उसकी रानी थी। चारुमती कन्या और चित्रवाक् चित्रबाहु मणिमान् और चित्रकुण्डल यह चार पुत्र थे। इस राजा का पुण्य प्रताप ऐश्वर्य सब महान अखण्डित था। एक दिन राजा को अकस्मात चिन्ता हुई कि किस पुण्य से हमको ऐसा अखण्ड ऐश्वर्य मिला इसी चिन्ता में राजा शिकार खेलता हुआ एक मृग के पीछे गहन वन में घुसगया और एक वृक्ष के नीचे थक कर विश्राम करने लगा तो वहां एक सुग्गे को यह पढ़ते हुए सुना :—

"पाय जगत में सकल सुख , करत न तत्व बिचार।
भ्रमत विषय भूल्यो फिरत , किमि लहिहै भव पार॥ ३॥

सुग्गे की मनुष्य की बोली बोलते और परम तत्व के पूर्वोक्त वाक्य को पढ़ते सुनकर राजा को अत्यन्त आश्चर्य और मोह हुआ यहां तक कि घर आकर सब काम काज छोड़कर रात दिन उसी सुग्गे का वाक्य सोचने लगा। एक दिन भगवान वाल्मीकि इस राजा के घर पर आए और राजा ने बड़ी

नम्रता से सुग्गे के वाक्य का आशय पूछा। वाल्मीकिजी ध्यान करके बोले पूर्व्व जन्म में आप ताम्रपर्णी के निकट सुदेव नामक ब्राह्मण थे अपनी स्त्री गौतमी सहित पुत्र के हेतु आपने भगवान की बड़ी तपस्या किया। यद्यपि सुदेव के सात जन्म में भी पुत्र नहीं लिखा था तथापि भगवान के वाक्य से गरुड़ जी ने सुदेव को पुत्र का वरदान दिया। सुदेव ने शुकदेव नामक सर्व्व गुण सम्पन्न पुत्र पाया परन्तु देवल ऋषि के कहे हुए फल के अनुसार बारह वर्ष की अवस्था में वह बावली में डूब कर मर गया। सुदेव पुत्र शोक से अ-अत्यन्त व्याकुल होकर रोने लगा और यहां तक कि संयोग से उस समय आया हुआ पुरुषोत्तम मास उसने बिना अन्न जल के बिता दिया। इस व्रत से भगवान प्रसन्न होकर प्रगट हुए और कहा कि तुमने हठ करके पुत्र का वरदान लिया था इससे धनुश्शर्म्मा ब्राह्मण की भांति अन्त में दुख पाया अब हमारे प्रसाद से तुम्हारा पुत्र जी जायगा और तुम बारह हजार वर्ष पुत्र सहित इस शरीर में रहकर अन्त में सुधन्वा नामक राजा होगे और चार पुत्र एक कन्या और राज्य का अखण्ड ऐश्वर्य्य पाओगे। सो उसी पुण्य से आपने यह राज्य और यह ऐश्वर्य्य पाया है॥

वह सुग्गा आप का पूर्व्व जन्म का शुकदेव नामक पुत्र था जो आप को राज काज में मग्न देखकर आप के हित के हेतु सुग्गे के रूप में आप को चितावनी का शुभ वाक्य सुना गया॥

वाल्मीकि जी से अपने पूर्व्व जन्म का चरित्र और पुरुषोत्तम का विचित्र महात्म्य सुन कर सुधन्वा ने उन से पुरुषोत्तम मास की विधि पूछी। ऋषि बोले पुरुषोत्तम मास में ब्राह्ममुहूर्त्त में उठकर शौच करके और दन्तधावन करके तीर्थ में स्नान करे फिर गोपीचन्दन का ऊर्ध्वपुंड्र और शैव हो तो त्रिपुंड्र तिलक लगाकर भुजा पर शङ्ख चक्र का चिन्ह लगा कर सन्ध्या करे फिर पवित्र स्थान में चावल का अष्ट दल बना कर उस पर सोने चांदी तामे पीतल वा मिट्टी का कलश रक्खे कलश में इन मन्त्रों से जल भरे:—

कलशस्य मुखे विष्णुः कंठे रुद्रः समाश्रितः
मूले तत्रस्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणाः स्मृताः
कुक्षौ तु सागराः सर्व्वे सप्तद्वीपा वसुन्धरा
ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदस्सामवेदो ह्यथर्वणः

अङ्गैस्तु सहिताः सर्वे कलशं हि समाश्रिताः ॥
गङ्गा गोदावरी चैव कावेरी च सरस्वती ।
आयान्तु मम शांत्यर्थम् दुरित क्षय कारकाः ॥

इस मन्त्र से कलश की प्रतिष्ठा करके कलश का पूजन करके एक तंदुल पूर्णपात्र कलश के ऊपर रक्खे उसपर पीला कपड़ा बिछा कर श्रीराधिका सहित भगवान की सोने की मूर्त्ति स्थापन करके पुरुषोत्तम बीज और नीचे लिखे हुए मन्त्रों से प्राण प्रतिष्ठा करे ॥

ॐ तद्विष्णोः परमम्पदं सदा पश्यन्ति सूरयः
दिवीव चक्षुराततं स्वाहा
ॐ अस्यै प्राणाः प्रतिष्ठन्तु अस्यै प्राणाः क्षरन्तु
अस्यै देवत्व संख्यायै स्वाहा—

जो वेद मन्त्र का अधिकार न हो तो श्रीराधिका सहित पुरुषोत्तमायनमः स्वाहा—इस मन्त्र से प्राण प्रतिष्ठा करके नीचे लिखी हुई विधि से पूजा करे

आगच्छ देवदेवेश श्रीकृष्ण पुरुषोत्तम ।
राधया सहितश्चात्र गृहाण पूजनं मम ॥ १ ॥

श्री राधिका सहित पुरुषोत्तमायनमः आवाहनं समर्पयामि इत्यावाहनं ।

नाना रत्न समायुक्तं कार्तस्वर विभूषितं ।
आसनं देवदेवेश गृहाण पुरुषोत्तम ॥ २ ॥

श्रीराधा० आसनं०

गङ्गादि सर्व तीर्थेभ्यो मया प्रार्थनयाहृतं ।
तोय मेतत्सुखस्पर्शं पाद्यार्थं प्रतिगृह्यतां ॥ ३ ॥

इति पाद्यं

नन्द गोप गृहे जातो गोपिकानन्द हेतवे ।
गृहाणार्घ्यं मया दत्तं राधया सहितो हरे ॥ ४ ॥
इत्यर्घ्यं

गङ्गाजलं समानीतं सुवर्ण कलशस्थितं ।
आचम्यतां हृषीकेश पुराण पुरुषोत्तम ॥ ५ ॥
इत्याचमनं ।

काव्यं मे सिद्धिमायातु पूजिते त्वयिधातरि ।
पञ्चामृते मया नीते राधिका सहितो हरे ॥ ६ ॥
इति स्नानं ।

पयो दधि घृतं गव्यं माक्षिकं शर्करा तथा ।
गृहाणेमानि द्रव्याणि राधिकानन्ददायक ॥ ७ ।
इति पञ्चामृतस्नानं ।

योगेश्वराय देवाय गोवर्द्धन धराय च ।
यज्ञानांपतये नाथ गोविन्दाय नमोनमः ॥ ८ ॥
गङ्गाजल समम् शीतं नन्दि तीर्थ समुद्भवं ।
स्नानं दत्तं मया कृष्ण गृह्यतां नन्दनन्दन ॥ ९ ॥
इति पुनः स्नानं ।

पितांबरं युगं देव सर्व कामार्थ सिद्धये ।
मया निवेदितं भक्त्या गृहाण सुरसत्तम । १० ॥
इति वस्त्रं आचमनञ्च ।

दामोदर नमस्तेस्तु त्राहिमां भवसागरात् ।
ब्रह्मसूत्रं सोत्तरीयं गृहाण पुरुषोत्तम ॥ ११ ॥
उपवीतं आचमनं ।

श्रीखण्ड चन्दनं दिव्यं गन्धाढ्यं सुमनोहरं ।
विलेपनं सुरश्रेष्ठ प्रीत्यर्थं प्रतिगृह्यतां ॥ १२ ॥
चन्दनं ।

अक्षतास्तु सुरश्रेष्ठ कुंकुमाक्ताः सुशोभिताः ।
मया निवेदिता भक्त्या गृहाण पुरुषोत्तम ॥ १३ ॥

इत्यक्षतान् ।

माल्यादीनि सुगन्धीनि मालत्यादीनि वैप्रभो ।
मया हृतानि पूजार्थं पुष्पाणि प्रतिगृह्यतां ॥ १४ ॥

इति पुष्पाणि । ततोऽङ्गपूजा ।

नन्दात्मजो यशोदाया स्तनयः कैशिसूदनः
भूभारोत्तारक श्चैवह्यनन्तो विष्णुरूप धृक् ॥ १५ ॥
प्रद्युम्नश्चानिरुद्धश्च श्रीकंठः सकलास्त्र दृक् ।
वाचस्पतिः केशवश्च सर्वात्मेतिचनामतः ॥ १६ ॥
पादौ गुल्फौ तथा जानू जघने च कटौ तथा ।
मेढ्रं नाभिं च हृदयं कंठं वाहू मुखं तथा ॥ १७ ॥
नेत्रे शिरश्च सर्वाङ्गं विश्वरूपिणं मर्चयेत् ।
पुष्पाण्यादायक्रमश श्चतुर्थ्यंतैर्जगत्पतिं ॥ १८ ॥
प्रत्यंग पूजां कृत्वातु पुनश्च केशवादिभिः ।
चतुर्विंशति मंत्रै श्च चतुर्थ्यं तैश्च नामभिः ॥ १९ ॥
पुष्पमादाय प्रत्येकं पूजयेत्पुरुषोत्तमं ॥ २० ॥
वनस्पति रसो दिव्यो गन्धाढ्यो गन्ध उत्तमः ।
आघ्रेयः सर्व देवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यतां ॥ २१ ॥

इति धूपं ।

त्वं ज्योतिः सर्व देवानां तेजसां तेज उत्तमं ।
आत्मज्योतिः परंधाम दीपोयं प्रतिगृह्यतां ॥ २२ ॥

इति दीपं ।

नैवेद्यं गृह्यतां देव भक्तिं मे ह्यचलां कुरु ।
ईप्सितं मे वरं देहि परत्र च परांगतिं ॥ २३ ॥

इति नैवेद्यं ।

मध्ये पानीयं उत्तरापोशनं ।

गङ्गाजलं समानीतं सुवर्णकलशस्थितं ।
आचम्यतां हृषीकेश त्रैलोक्य व्याधि नाशन ॥ २४ ॥

इत्याचमनं ।

इदंफलं मया देव स्थापितं पुरतस्तव ।
तेन मे सफलावाप्ति र्भवेज्जन्मनि जन्मनि ॥ २५ ॥

इति श्री फलं ।

गन्ध कर्पूर संयुक्तं कस्तूर्यादि सुवासितं ।
करोद्वर्तनकं देव गृहाण परमेश्वर ॥ २६ ॥

इति करो द्वर्तन

पुगीफल समायुक्तं सकर्पूरं मनोहरं ।
भक्त्या दत्तं मया देव तांबूलं प्रतिगृह्यतां ॥ २७ ॥

तांबूलं ।

हिरण्य गर्भ गर्भस्थं हेमबीजं विभावसोः ।
अनन्त पुण्यफलद मतःशांतिं प्रयच्छमे ॥ २८ ॥

इति दक्षिणां ।

शारदेंदीवर श्यामं त्रिभङ्ग ललिताकृतिं ।
नीराजयामि देवेशं राधया सहितं हरिं ॥ २९ ॥

इति नीराजनम् ।

रक्षरक्ष जगन्नाथ रक्ष त्रैलोक्य नायक ।
भक्तानुग्रहकर्त्ता त्वं गृहाणास्मात् प्रदक्षिणां ॥ ३० ॥

इति प्रदक्षिणां ।

यज्ञेश्वराय देवाय तथा यज्ञोद्भवाय च ।
यज्ञानांपतयेनाथ गोविन्दाय नमोनमः ॥ ३१॥

इति मन्त्रपुष्पम् ।

विश्वेश्वराय विश्वाय तथा विश्वोद्भवाच।
विश्वस्यपतये तुभ्यं गोविन्दाय नमोनमः ॥ ३२ ॥

इति नमस्कारान् ।

मन्त्रहीनेति मन्त्रेण समाप्य पुरुषोत्तमम् ।
स्वाहांतैर्नाम मन्त्रैश्च तिल होमो दिनेदिने ॥ ३३ ॥

इति ।

पूजन करके हविष्यान्न भोजन करे मांस मद्य और मादक वस्तु द्विदल तपक्व बड़ी उर्द मसूर इत्यादि वस्तु न खाय। भाव दुष्टक्रिया दुष्ट और शब्ददुष्ट तु का वर्ज्जन करे पराये का द्रोह अन्न स्त्री और धन से दूर रहे बिना तीर्थ देश न जाय निंदा न करे जंभीरी नीबू बासी अन्न ब्राह्मण का बेचा हुआ । भूमि से उत्पन्न लवण ताम्रपात्र में रक्खा हुआ गव्य चमड़े के वर्तन का त ये सब मांस के तुल्य हैं । रजस्व ला म्लेच्छ पतित व्रात्य और देवब्राह्मण द्वी से पुरुषोत्तम में संबध न रक्खे इन का और कौवे वा सूतकवाले का छू- हुआ अन्न और दो बेर पकाया हुआ तथा जला हुआ अन्न न खाय। न लहसन सोथा छत्राक गाजर मूली सिंगरी इत्यादि भी न खाय। प्रति- । से पूर्णिमा तक कूष्मांडादिक का वर्ज्जन करे और जो वस्तु छोड़े वह वस्तु ह्मण को दान दे केवल दूध पी कर वा घी पी कर वा फलहार कर के वा ाचित खाकर उपवास एक नक्त वा नक्त व्रत जो बन पड़े और बिना कष्ट है वह करे। शालिग्राम का पूजन करे श्रीमद्भागवत सुने और सायंकाल दीप दान करे ।

राजा दृढ़धन्वा ने वाल्मीकि ऋषि से दीपदान का महात्म पूछा इस पर ीकि जी ने कहा प्राचीन काल में सौभाग्य नगर में एक चित्रभानु नाम था और चन्द्रकला नामक उस की रानी थी यह राजा धन धान्य सब । से सुखी था एक दिन इस के यहां अगस्त ऋषि आये और राजा ने

अपने पूर्व्व जन्म का वृत्तान्त पूछा मुनि ने कहा तुम बड़े दुष्ट मणिग्रीव नाम शूद्र थे और यह रानी तुम्हारी पतिव्रता स्त्री थी कुकर्म में सब धन खोकर शिकार खेलकर अपनी जीविका करते थे एक दिन घोर वन में मार्ग भूले हुए उग्रदेव नामक ऋषि ब्राह्मण को तुम लोगों ने बड़ी सेवा किया और उन से अपना दुःख निवेदन किया इस से प्रसन्न होकर ऋषि ने पुरुषोत्तम मास में दीपदान करने का उपदेश किया और मणिग्रीव ने वन में इंगुदी के तैल से दीपदान किया जिस से भगवान ने प्रसन्न होकर तुम को वरदान दिया और इस जन्म में तुम को सब सुख मिले।

दीपदान का महात्म सुनकर दृढ़धन्वा ने पुरुषोत्तम के उद्यापन की विधि पूछा वाल्मीकी जी ने उत्तर दिया कि कृष्णपक्ष को चतुर्दशी वा नौमी वा अष्टमी को उद्यापन करना तीस सपत्नीक ब्राह्मणों को न्योता देना और पञ्च धान्य का सर्व्वतोभद्र बनाकर चारों दिशा में चार कलशों पर वासुदेव संकर्षण प्रद्युम्न और अनिरुद्ध का स्थापन करना बीच में नित्यपूजित श्रीराधिका सहित श्रीपुरुषोत्तम का स्थापन करना एक वैष्णव ब्राह्मण को आचार्य्य और चार ब्राह्मणों को जप की वरणी दे कर चारों दिशा में दीपदान कर के चतुर्व्यूह का जप करना और भगवान की पूजा करना पञ्चरत्न और फल से भगवान की भक्ति पूर्वक अर्घ्य देना। अर्घ्य मन्त्रः—

देवदेव नमस्तुभ्य म्पुराण पुरुषोत्तम।
गृहाणार्घ्यं मया दत्तं राधया सहितो हरे॥
वन्दे नवघनश्यामं द्विभुजं मुरलीधरं।
पीताम्बरधरं देवं सराधं पुरुषोत्तमं॥

फिर तिल से श्रीराधिका सहित पुरुषोत्तमायनमः स्वाहा इस मन्त्र से होम करना और तर्प्पण मार्ज्जन के पीछे भगवान का नीराजन करना।

मन्त्रः—नीराजयामि देवेश मिन्दीवर दलच्छविम्।
राधिकारमणं प्रेम्णा कोटि कन्दर्प्प सुन्दरम्॥

फिर क्षणभर भगवान का ध्यान करनाः—

अन्तर्ज्योतिरनन्त रत्न रचिते सिंहासने संस्थितम्
वंशीनाद विमोहित व्रजवधूं वृन्दावने सुन्दरम्॥

ध्यायेद्राधिकया सकौस्तुभमणिप्रद्योतितोरस्थलम् ।
राजद्रत्नकिरीट कुण्डलधरं प्रत्यग्र पीताम्बरम् ॥

फिर पुष्पाञ्जलि देना और प्रणाम करना मन्त्रः—

नौमि नव्यघनश्यामं पीतवासस मच्युतम् ॥
श्रीवत्सभासितोरस्कं राधिकासहितं हरिम् ॥

फिर ब्रह्मा को पूर्णपात्र दान करके गोदान करना और घृतपात्र तिलपात्र उमामहेश्वर मोहागपिटारी वस्त्र पद इत्यादि दान करना और जो श्रीमद्भागवत करै तो बड़ा ही पुन्य है पुरुषोत्तम मास में श्री भागवत दान की समता अन्यदान नहीं कर सकते ।

और तीस कासेकी थाली में तीस तीस पूआ रखकर ब्राह्मणों को दान देना और भी अन्न दानादि जो बन पड़े वह देना । अमावस्या को रात को जागरण करके सवेरे पूजा पोठ और सोने की मूर्त्ति दान देना । मन्त्रः—

श्रीकृष्ण जगदाधार जगदानन्ददायक ।
ऐहिकामुष्मिकान्कामान् निखिलान् पूरयाशु मे ॥१॥
मन्त्रहीनम् क्रिया हीनम् विधिहीनम् जनार्दन ।
व्रतम् सम्पूर्णतां यातु त्वत्प्रसादाद्दयानिधे ॥ २ ॥

फिर जो वस्तु का त्याग किया हो उसका यथाक्रम दान कराना यथा—

नक्तव्रत में भोजन अयाचित में स्वर्णदान धात्रीस्नान में दधि फल न खाया होय तो फल तेल छोड़ा होय तो घी घी छोड़ा होय तो दूध अन्न छोड़ा होय तो अन्न भूमि शयन किया होय तो सेज पत्रभोजन किया होय तो घी चीनी मौन लिया होय तो घण्टा तिल और सोना चौर न बनवाया हो तो दर्पण जूता छोड़ा होय तो जूता नमक छोड़ा होय तो घी गुड़ तेल और नमक दीपदान का नेम लिया होय तो तांबे का दिया और सोने की बत्ती और एकान्तर उपवास किया होय तो वस्त्रसहित आठ कुम्भ दान करे । पुरुषोत्तम मास में एक अन्न भोजन करने का बड़ा पुन्य है ।

वाल्मीकिजी से पूर्वजन्म का वृत्तान्त और पुरुषोत्तम महात्म्य सुन करके राजा स्त्री सहित वन में जाकर तपस्या करके अन्त में गोलोक में गया ।

नारायण नारदजी से कहते हैं कि कन्दर्प नामक ब्राह्मण बड़ा पापी था जन्म भर में केवल एक वैश्य को पुरुषोत्तम को पूजा करते दर्शन किया था और कोई पुन्य नहीं किया था इसी पाप से एक जन्म में प्रेत और दूसरे में वह बन्दर हुआ परन्तु पुरुषोत्तम के पूजा के पुन्य से इन्द्रनिर्मित मृगतीर्थ पर उस का निवास हुआ और किसी समय पुरुषोत्तम मास में एकबेर उस ने दुःखित होकर तीन दिन तक कुछ न खाया न पिया और उसी तीर्थ पर प्राण त्याग किया और पुरुषोत्तम के प्रभाव से अन्त में गोलोक गया।

नारद जी के प्रश्न पर श्री नारायण दिन चर्य्या कहते हैं।

प्रातःकाल की क्रिया समाप्त कर के पञ्चभूत देव पितृ बलि देकर अतिथि को भोजन करा कर दो वस्त्र से अकेले एक पात्र में पूर्व्वापर आचमन संयुक्त भोजन करना। भोजन के पीछे पान खाकर भगवान् के ध्यान पूर्व्वक भक्ति शास्त्र का विचार करना। तीसरे पहर धर्म्माविरुद्ध व्यवहार करना। सांझ को तीर्थ पर देहशुद्धि पूर्व्वक सन्ध्या कर के दीपदान करके भगवान् का स्मरण कर के शयन करना।

इस के पीछे नारायण ने पतिव्रता के धर्म्म और पुरुषोत्तम की विशेष महिमा कहा। और विधान किया कि। मन्त्रः—

गोवर्द्धनधरम् वन्दे गोपालम् गोपरूपिणम्।
गोकुलोत्सवमीशानम् गोविन्दम् गोपिकाप्रियम्॥ १॥

इस मन्त्र का पुरुषोत्तम मास में बार बार जप करना।

दोहा।

श्री पुरुषोत्तम पद सुमिरि, धारि हृदय आनन्द।
यह पुरुषोत्तम विधि लिखी, कविवर श्रीहरिचन्द॥ १॥
प्रान पियारे प्रेम निधि, प्रेमिन जीवन प्रान।
तिन के पद अरपन कियो, यह मलमास विधान॥२॥

इति श्री बृहन्नारदीय पुराण से संग्रहीत पुरुषोत्तम माहात्म्य समाप्त हुआ।

अथ श्री पुरुषोत्तम पञ्चक ।

सखी पुरुषोत्तम मेरे प्यारे । प्रान नाथ मेरे मन धन जीवन जमुना नन्द दुलारे ॥ जानत प्रीति रीति सब भांतिन नेह निबाहन हारे । हरीचन्द इन के पद नख पैं जगत जाल सब वारे ॥ १ ॥

सखी पुरुषोत्तम मेरे नाथ । मोर मुकुट सिर कटि पीतांबर सुन्दर मुरली हाथ ॥ गल बनमाल गोप गोपीगन गऊ बच्छ लिये साथ । हरीचंन्द पिय करुना सागर निज जन करन सनाथ ॥ २ ॥

पुरुषोत्तम प्रभु मेरे स्वामी । पतित उधारन करुना कारन तारन खग-पति गामी । पंकज लोचन भव दव मोचन जन रोचन अभिरामी । हरीचन्द सन्तन के सरबस बल्लभह चरन गुलामी ॥ ३ ॥

पुरुषोत्तम प्रभु मेरे सरबस । सब गुन निधि करुना बरुनालय जानत सकल प्रेम रस ॥ प्रीति रीति पहिचान मानत यातें रहत भगत बस । हरीचन्द मेरे प्रान जीवन धन सोच्चौ सर्नाहि तजिक हंस ॥ ४ ॥

पुरुषोत्तम बिन मोहि नहिं कोई । मात पिता परिवार बन्धु धन मम हरि राधा दोई ॥ इन बिनु जगत और जो कीनो आयसु नाहक खोई । हरीचन्द इन चरन सरन रहु मन बिनु साधन छोई ॥ ५ ॥

इत०

कार्तिक-स्नान।



जिसे श्रीयुत भारतभूषण भारतेन्दु हरिश्चन्द्र जी ने

राधामाधवपदभक्तों केलिये विरचा।



अथ कार्तिक स्नान ।

नील पीत दुति अति मधुर · सब ब्रज जन चित चोर ।
जय जय विरहा तपसमन · राधा नन्दकिशोर ॥ १ ॥
जुगल जलद केकी जुगल · दोउ चन्द चकोर ।
उभय रसिक रसरास जय · राधा नन्दकिशोर ॥ २ ॥
जल तरंग बुधि प्रान पुनि · दीप प्रकाश समान ।
जुगल अभिन्नहु दोय वपु · जय राधा भगवान ॥ ३ ॥
नलिन नयन अमृत बयन · वेनुवाद्यरत धीर ।
राधासुखमधुपानरत · जय जय जय बलबीर ॥ ४ ॥
बिनु हरि राधा पद भजन · नाहि न और उपाय ।
क्यों मन तू भटकत वृथा · जगत जाल फंसि धाय ॥ ५ ॥
मथि कै वेद पुरान बहु · यहै लह्यौ इक सार ।
राधा माधव चरन भजु · तजु जप जोग हजार ॥ ६ ॥
भ्रमि मत तू वेदान्त वन · वृथा अरे मन मोर ।
चलु कलिन्दजा कुंज तट · लखु घन श्याम किशोर ॥ ७ ॥
शास्त्र एक गीता परम · मन्त्र एक हरि नाम ।
कर्म एक हरि पद भजन · देव एक घनश्याम ॥ ८ ॥
विधि निषेध जग के जिते · तिन को यह सिर मौर ।
भजनो इक नन्दलाल पद · तजनो साधन और ॥ ९ ॥
साधक गन सों तुम सदा · छिपत फिरत ब्रजराय ।
अति अंधियारो मम हृदय · तहां छिपत किन आय ॥ १० ॥
वेद कहत जग बिरचि हरि · व्यापि रहत ता माहिं ।
मम हिय जग बाहर कहां · जो इत व्यापत नाहि ॥ ११ ॥
तुमहिं रिझावन हित सज्यो · लख चौरासी रूप ।
रीझि देहु गति खीझि कै · बरजहु मोहि ब्रजभूप ॥ १२ ॥
कोउ जप संजम करौ · करौ कोउ तप ध्यान ।

मेरे साधन एक हरि · सपनेहु रचत न आन ॥ १३ ॥
नर्क स्वर्ग के ब्रह्मपद · के चौरासी मांहिं ।
जहां रहौं निज कर्मबस · छुटै कृष्णरति नांहिं ॥ १४ ॥
कृष्ण नाम सुख सों कढ़ौ · सुनौ कृष्ण जस कान ।
मन में कृष्ण सदा बसौ · नयन लखौं हरिध्यान ॥ १५ ॥
चोरि चीर दधि दूध मन · दुरन चहत ब्रजराय ।
मेरे हिय अंधियार में · तौ न छिपत क्यों आय ॥ १६ ॥
हरत दूध दधि चीर मन · हरत फिरत ब्रज राय ।
तौ अघ मेरे किन हरत · यह मोहि देहु बताय ॥ १७ ॥
कृष्ण नाम मनि दीप जो · हिय घर में न प्रकाश ।
दीप बहुत बारे कहा · हिय तम भयो न नाश ॥ १८ ॥
जय जय श्रुति पद बन्दिनी · कीर्त्तिनन्दिनी बाल ।
हरि मन परमा नन्दिनी · कन्दिनि भव भय जाल ॥ १९ ॥

सोरठा ।

जय जय परमानन्द · कृपा कन्द गोविन्द हरि ।
जय जय जसुदानन्द · नंदानंदन दुंद हर ॥ २० ॥

कवित्त ।

पूजि के कालिंहि सत्रु हतौ कोउ लच्छमी पूजि महा धन पायो ।
वेद सरस्वति पंडित होउ गनेसहि पूजि के विघ्न नसायो ॥
त्यौं हरिचंद जू ध्याइ शिवै कोउ चार पदारथ हाथ ही लायो ।
मेरे तो राधिका नायक ही गति लोक दोउ रहौ के नसि जायो ॥ १ ॥
सन्ध्या जू आपु रहौ घर नीकी नहान तुम्है है प्रणाम हमारी ।
देवता पित्र छमौ मिलि मोहि अराधना होइ सकै न तुम्हारी ॥
वेद पुरान सिधारौ तहां हरिचंद जहां तुम्हरी पतियारी ।
मेरे तो साधन एक ही है जग नंदलाल वृषभानदुलारी ॥ २ ॥

भजन ।

जय वृषभानुनन्दिनी राधा । शिव ब्रह्मादि जासु पदपंकज हरि बस हेतु
राधा ॥ करुनामयी प्रसन्न चन्दमुख हंसत हरति भवबाधा । हरीचंद ते
गौं जग जीवत जिन नहिं इनहिं अराधा ॥ १ ॥

जय जय हरि नन्दनंद पूर्णब्रह्म दुख निकंद परमानंद जगत बंद सेवक सुखदाई। परम जस पवित्र गाथ दीनबन्धु दीननाथ स्रवन दरस ध्यान सुखद गोबर्द्धन राई ॥ गोप गोपिकादि पाल सतत असुर बंस काल सकल कला गुन निधान कीरति जग छाई। हरीचंद प्राननाथ कीर्तिसुता लिए साथ पावन गुन अमित विमल श्रुति गन नित गाई ॥ २ ॥

मेरी गति होउ सोई महारानी। जासु भौंह की हिलनि बिलोकत निसुदिन सारंग पानी ॥ खेलन में कबहूं जो आंचर उड़त बात बस जाको। रिसि मुनि वंदित हू हरि मानत परम धन्य करि ताको ॥ परम पुरुष जो जोग जग्य जप क्यों हू लख्यौ न जाई। सो जा पद रज बस निसि बासर तुरत धि प्रगटत धाई ॥ बामबधूटी जा कटाच्छ बल उमा रमाहि सजावैं। हरीचंद ते महा मूढ़ जे इनहिं न अनुछिन ध्यावैं ॥ ३ ॥

जय जय श्री वृंदावन देवी। अखिल विश्वनायक पुरुषोत्तम जा पद पंकज-सेवी ॥ जो निज दृष्टि कोर सौं जग के जीवहि नितहि जिवावै। परमानंद घनहु पै जो निज आनंद कन बरसावै ॥ जगत अधार भूत परमातम जिय अधार सो ताको। हरीचंद स्वामिनि अभिरामिनि तुम न जगत में जाको ॥४॥

विपुल वृंदा विपिन चक्रवर्ती चतुर रसिक चूड़ा रतन जयति राधारमन। गोप गोपी सुखद भक्त नयनानंदा विरहि जन कोटि सन्ताप सन्तति समन ॥ जयति गिरिराज धृत बाम अंगुरि नखन जयति कृत वेनु रव मत्त गज गति गमन। अघ बकी बक सकट पूतनादिक काल जयति हरिचंद हित कारन कालिय दमन ॥ ५ ॥

जय जय गोवर्द्धनधर देव। जय जय देव राज मद मर्दन करत सकल सुर सेव ॥ जय जय श्रुति जस गावत निसि दिन पावत तऊ न भेव। जय जय हरीचन्द्र रच्छ कृत दीन उधारन टेव ॥ ६ ॥

बाजी नैननहीं में लागी। रसिकराज इत उत श्रीराधा परम प्रेम रस पागी ॥ दोऊ हारे दोऊ जीते आपुस के अनुरागी। हरीचंद निज जन सुखदायक रहे केलि निसि जागी ॥ ७ ॥

हम में कौन बड़ो री प्यारी। ठाढ़ी होउ बराबर नापैं बिहंसि कह्यो गिरधारी ॥ सुनत उठी वृषभानुनंदिनी खरी भई मुसुकाई। पद अंगुरी बल उचकि पिया सौं बढ़बन चहत उंचाई ॥ सुंदर मुख आपुहि ढिग आवत लखि चूम्यौ पिय प्यारे। हरीचंद लजि हंसि मुख निरखत पिया कह्यो हम हारे ॥ ८ ॥

राग बिहाग दीपावली।

कारत मिलि दीपदान ब्रजबाला। जमुना सों कर जोरि मनावत मिलैं पिया नन्दलाला॥ स्नान दान जप जोग ध्यान तप संजम नियम बिसाला। इन के फल मैं हरीचंद गल लागै कृष्ण गुन वाला॥ ९॥

प्यारी तू हठ नहिं छाड़त प्यारी। दीपदान मैं मगन ह्वै रही भूलि गई गिरिधारी। तेरे बिनु उत बिनहीं दीपक बिरह अगिनि संचारी। हरीचंद पीतम गर लगि कै कर त्यौहार दिवारी॥ १०॥

हमारे ब्रज के है मणि दीप। पुष्पराग श्रीराधा मरकत गोविंद गोप महीप। सदा प्रकाश करत ब्रज मंडल बृंदाबन अवनीप। हरीचंद सुमिरत बियोगतम कहुं नहि रहत समीप॥ ११॥

राग बिहाग चौताला।

अरी ह्वौ बरजि रही बरज्यौ नहिं मानत सबै छोरि कृष्ण प्रेम दीप जोरि। भरि अखंड दै सनेह एक ली लगाइ वा सों मन बाती राखु ता मैं नित्य बोरि॥ बिरह प्रगट करि जोति सों मिलाइ जोति करि पतंग नेम धरम लाज खोट डारि छोरि। हरीचंद कह्यौ मानि देखि है तू प्रीति पन्थ भाजै गो बियोगतम सुख मोरि॥ १२॥

राग बिहाग दीपावली।

आजु गिरिराज के उच्चतर शिखर पर परम शोभित भई दिव्य दीपावली। मनहुं नगराज निज नाम नग सत्य किय बिबिध मणि जटित तन धारि हारा-वली॥ औषधी गन मनहुं परम प्रज्वलित भई किधौं ब्रजबासहित बनी तारा-वली। दास हरिचंद मन मुदित छवि देखि कै करत जै जै बरषि देव कुसुमा-वली॥ १३॥

आजु तरनि तनया निकट परम परमा प्रगट ब्रजबधुन मिलि रची दीप माला। जोतिजाल जगमग जगत दृष्टि थिर नहिं लगत छूट छबि को परत अति बिसाला॥ खड़ीं नवल बनिता बनी चार दिशि छबिसनी हंसहिं गावहिं बिबिध ख्याला। निरखि सखी हरीचंद अति चकित सी ह्वै कहत जयति राधे जयति नंदलला॥ १४॥

आजु ब्रज छबि की लूट परी। इत नन्दलाल लाड़िलो इत उत दीपक ज्योति बरी॥ इत सहचरी लज्जित ललितादिक सुरछल चंवर ढरै। इत जरतार तास बागो उत भूषण झलक अरै॥ इत नवखण्ड सीस सहला उत दुगनित बिंब परै॥ इत बादलन लपेटी झालर झल बोर झलरै॥ इत सारी कोरन सौं मुकुता मानिक हीरझरै। जमुना जल प्रतिबिंब सुहायो जल छबि मिलि लहरै॥ हरीचन्द मुख चन्द मिलो सब रवि ससि गर्व हरै॥ १५॥

आजु संकेतन दीपक बारे। निपट जानि गोवर्धनघटियां अपने हाथ सवांरे॥ किये प्रकासित गह्वर गिरि थल कुंजपुंज ब्रजसारे हरीचन्द अपनो प्यारी की बाट निहारत प्यारे॥ १६॥

अरी तू हठि चलि प्यारी दीपमण्डल ते क्यों सोभा हरि लेत। तेरे मुख प्रकास दीपकगण मन्द दिखाई देत॥ मंद परे आभा सब मेटी झिलमिलि झि झीने सेत॥ हरीचन्द तू दूरि बैठि कै पार त्योहार सहेत॥ १७॥

ईमन।

कबिन सौं सांचेहि चूकपरी। दीप सिखा को उपमा जिन तुअ प्यारी हेत धरी॥ वह दाहत यह अंग जुड़ावति वह चंचल थिर येह। वह निज प्रेमिन परम दुखद यह सदा सुखद पिय देह॥ ब्रज तें धूम स्वच्छ अति ही यह रैनि दिना इकरास। वह परिछिन्न और बस यह निज बस सर्वत्र प्रकास॥ वह सनेह आधीन और के यह सनेह भरपूर। हरीचन्द दीपक प्यारी की नहिं कोउ बिधि समतूर॥ १८॥

जमुन जल बढ़ी दीप छबि भारी। प्रतिबिम्बित प्रतिबिंब लहरि प्रति तहं राजत पिय प्यारी॥ तैसो ही नभ तर तारावलि तरल वायु गुन होई। तैसेहि उठत गगन गुब्बारे छुटत दारु गति जोई॥ पवनि नीर आकास प्रकासित दीपहि दीप लखाई। मनु ब्रज मण्डल ज्योति रूपता अपनो प्रगट दिखाई॥ सुख प्रकास रंजित सब ही थल सोभा नहिं कहि जाई। हरीचन्द राधे मन मोहन रहे त्योहार मनाई॥ १९॥

तुव बिनु पिय को घर अंधियारो॥ जदपि चहूंदिसि प्रगटि प्रकासमद बिरहानल संचारो॥ कछुन लखात ताहि अति व्याकुल दृग झर लावत भारो। प्रिये प्रिये कहि प्रति कानन में ढूंढ़ि रहत घर सारो॥ तू इत बैठी बदन बनाये उत वह विकल बिचारो॥ हरीचन्द उठि चलुरी प्यारी आउ गरे पिय प्यारो॥ २०॥

दीपन उलटी करी सहाय को। चली गई पिय धाम प्रगट मग काहु न परी लखाय॥ अंधियारी में तो भय भारी मुख ससि नाहिं दुराय॥ इत प्रकाश में मिलि चलिवेको एक भई चमकाय॥ जगमगी बसन कनक मणि भूषण एक भये सब आय। हरीचन्द सिखि के वियोग में दोनो तुरत नसाय॥ २१॥

दिपति दिव्य दीपावली आजु दिपति दिव्य दीपावली। मनु तम नाश कारन को प्रगटी कश्यप सुत बंशावली॥ मनु ब्रज मण्डल कृष्ण चन्द्रमा तहं तारन की मण्डली। जातन कों मनु राहु सेन को अति सुवन किरनावली॥ बिगत भई सब रैनि कालिमा सोभा जागति ह्वै भली। हरीचन्द मनु रतन रासि की उज्ज्वल ज्योति जुगावली॥ २२॥

नेकु चल पिय पै वेगहि प्यारी। देखु करी तेरे हित कैसी मोहन आजु तयारी॥ पड़े पांवड़े मग मखमल के दल गुलाब रुचिकारी। छिरक्यो नीर गुलाब अतर मृगमद चन्दन घनसारी॥ परदे परे झालरैं झमकैं तने बितान सुतारी। फरश गलीचन को अति राजत कोमल बहु रंग डारी॥ धरे साज ढिग अतर पान मधु फूलमाल जल झारी। लगी मिठाई रासि दुहूं दिसि दीपक धरे कतारी॥ बिछी पलंग पय फेनु मैनु सम पोम पल्यो रुचिकारी। पास साज पासन के सोहत कहुं सतरंज संवारी॥ ठौर ठौर आरसी लगाई दूनी द्युतिकरि डारी। प्रति खूंटिन हारावलि माला फूल बसन लै धारी॥ प्रति आले सुगंध सों पूरे पाग मिठाई डारी॥ जहं तहं अदब किये सब सखियां ठाढ़ी साज संवारी। सुरछल चँवर रुमाल अड़ानो पीक दान लै वारी॥ चौंकि चौंकि पिय उठत बिना तुव आगम संक बनवारी। हरीचन्द प्रीतम गर-लगि के कर त्योहार दिवारी॥ २३॥

रच्यो यह तेरेहि हित त्योहार। दीप दियारी युक्ति निकारी तव हित नन्दकुमार॥ तुव महलान की सुरति कारन हित हठरी रुचिर बनाई। तुव सुख चन्द्र प्रकाश लखन हित दीपावली सुहाई॥ हाट लगाई तुव आवन हित और कछु न सन्देह। हरीचन्द बिहरै किन भुज भरि प्रीतम सों करि नेह॥ २४॥

कार्तिक में सांझ के गाइबे को पद।

सांचहि दीप सिखा सी प्यारी। धूमकेश तन जगमगाति द्युति दीपति भई दिवारी॥ स्वयं प्रकाश अकुण्ठ सुहाई बिनु असार छबि छाई। सदा एक रस नित्य अधिक यह बासों चाल लखाई॥ भरत सुगंधन ब्रज कुंजन मग सीतल तन करवारी। प्रीतम तन को बिरह मिटावत हरीचन्द दुख जारी॥२५॥

श्री गीतगोविन्दानन्द

अर्थात्

श्री गीतगोविन्द के अष्टपादियों का हिन्दीभाषा में आनन्द।

श्री हरिश्चन्द्र प्रणीत।

गीतगोविन्दानन्द।

अर्थात्

श्रीगीतगोविन्द की अष्टपदियों का भाषा गीतों में आनन्द।

दोहा।

भरित नेह नव नीर नित, बरसत सुरस अथोर ।
जयति अलौकिक घन कोऊ, लखि नाचत मन मोर ॥ १ ॥
रसिक राज बुध वर विदित, प्रेमी प्रिय पद सेव ।
राधा गुन गायक सदा, मधुवच जय जयदेव ॥ २ ॥
कहं कविवर जयदेव वच, कहं मम मति अति हीन ।
पै दोउ हरि गुन गामिनी, एहि हित यह स्रम कीन ॥ ३ ॥
रसिक राज जयदेव की, कविता को अनुवाद ।
कियो सवन पै नहिं लह्यौ, तिम मैं तौन सवाद ॥ ४ ॥
मेटन सो निज जिय खटक, उर धरि पिय नंदनन्द ।
तिनहीं के पद बल रच्यौ, यह प्रबन्ध हरिचन्द ॥ ५ ॥
जिमि वनिता के चित्र मैं, नहिं कछु हास विलास ।
पै जेहि सो प्रिय सो लहत, याहू मैं सुखरास ॥ ६ ॥
तैसहि गीत गुविन्द अति, सरस निरस मम गीत ।
पै जिन कहं प्रिय तौन ते, करिहैं यासों प्रीत ॥ ७ ॥

अथ मूल मंगलाचरण।

श्लोक

मेघैर्मेदुरमंबरंवनभुवःश्यामास्तमालद्रुमैर्नक्तं-
भीरुरयंत्वमेवतदिमंराधेगृहंप्रापय ॥ इत्थंनंदनि-

देशतश्चालितयोः प्रत्यध्वकुंजद्रुमंराधामाधवयोर्जयंति यमुनाकूलेरहःकेलयः ॥ १ ॥

सवैया—मेघन सों नभ छाइ रहे बन भूमि तमालन सों भई कारी । सांझ भई डरिहै घर याहि दया करिकै पहुंचावहु प्यारी ॥ यों सुनि नंद निदेस चले दोउ कुंजन में हरि भानु दुलारी । सोई कलिन्दी के कूल इकन्त की केलि हरै भवभीति हमारी ॥ १ ॥

वाग्देवताचरितचित्रितचित्तसद्मापद्मावतीचरणचारणचक्रवर्ती । श्रीवासुदेवरतिकेलिकथासमेतमेतंकरोतिजयदेवकविःप्रबंधम् ॥२॥

दोहा—बाणी चारु चरित्र सों, चित्रित जा हिय भीति ।
पद्मावति पद दास जो, जानत कविता रीति ॥१॥
सोई कवि जयदेव यह, गीतगुविन्द रसाल ।
रच्यो कृष्ण कल केलि मय, नव प्रबन्ध रस जाल ॥२॥

यदिहरिस्मरणेसरसंमनोयदिविलासकलासुकुतूहलं ॥ मधुरकोमलकांतपदावलींशृणुतदाजयदेवसरस्वतीं ॥३॥

दोहा—जो हरि सुमिरन होइ मन, जो सिंगार सों हेत ।
तौ बानी जयदेव की, सुन सब सुगुन निकेत ॥३॥

वेदानुद्धरतेजगन्निवहतेभूगोलमुद्बिभ्रतेदैत्यंदारयतेबलिंछलयतेक्षत्रक्षयंकुर्वते ॥ पौलस्त्यंजयते-

हलंकलयतेकारुण्यमातन्वतेम्लेच्छान्मूर्छयतेदशाकृति कृतेकृष्णायतुभ्यंनमः ॥४॥

वेद उधारन मंदरधारन भूमि उधारन ह्वै बजवारी।
दैत विनाशी बलि को छलि क्षय कारक क्षत्रिन को असुरारी॥
रावन मारन त्यों हलधारन वेदनिवारन म्लेच्छ विदारी।
यों दस रूप विधायक कृष्णहि कोटिन्ह कोटि प्रनाम हमारी॥

राग सोरठ।

* जय जय (१) हरि राधा रस केलि। तरनि तनूजा तट एकान्त में बांहु बाहु पर मेलि॥ ध्रु० ❋ एक समै हरि नन्दराय संग रहे बाट में जात। तितही श्रीराधा सुख साधा आइ कढ़ीं हरखात॥ (२) हरि माया करि मेघ बुलाए छाए घेरि (३) अकास। सांझ समय सुर गहि तमाल तरु भई श्याम (४) सुखरास॥ देखि नन्द (५) भय करि श्यामा सों बोले बैन रसाल। यह (६) डरपत लखि कै अंधियारी यारी मेरो (७) लाल॥ आगे हौं लै (८) जाइ सकत नहिं गई (९) भयानक सांझ। राधे करि कै दया याहि तुम पहुँचाओ घर मांझ॥ इमि सुनि नन्द (१०) निदेस चले दोउ विहरत जमुना तीर। हरीचन्द सो निरखि जुगल (११) छबि हरी दृगन की (१२) पीर॥ १॥

---

* ब्रह्मवैवर्त्तपुराण के श्रीकृष्णजन्मखण्ड की यह कथा है।

❋ इस मंगलाचरण में बारहो रस हैं उस में यथा क्रम—

१ शृङ्गार २ अद्भुत ३ वीर ४ रौद्र ५ भयानक ६ हास्य ७ वात्सल्य ८ करुणा ९ वीभत्स १० दास्य ११ माधुर्य्य १२ शान्त।

मालवारागेणरूपकतालेगीयते ।

प्रलयपयोधिजलेधृतवानसिवेदं । विहितवहित्रचरित्रमखेदं ॥ केशवधृतमीनशरीरजयजगदीशहरे ॥ १ ॥ क्षितिरतिविपुलतरेतवतिष्ठतिपृष्ठे । धरणिधरणकिणचक्रगरिष्ठे ॥ केशवधृतकच्छपरूपजयजगदीशहरे ॥ २ ॥ वसतीदशनशिखरेधरणीतवलग्ना । शशिनिकलंककलेवनिमग्ना ॥ केशवधृतसूकररूपजयजगदीशहरे ॥ ३ ॥ तवकरकमलवरेनखमद्भुतशृंगं । दलितहिरण्यकशिपुतनुभृंगं ॥ केशवधृतनरहरिरूपजयजगदीशहरे ॥ ४ ॥ छलयसिविक्रमणेबलिमद्भुतवामन । पदनखनीरजनितजनपावन ॥ केशवधृतवामनरूपजयजगदीशहरे ॥ ५ ॥ क्षत्रियरुधिरमयेजगदपगतपापं ॥ स्नपयसिपयसिशमितभवतापं ॥ केशवधृतभृगुपतिरूपजयजगदीशहरे ॥ ६ ॥ वितरसिदिक्षुरणेदिक्पतिकमनीयं । दशमुखमौलिबलिंरमणीयं ॥ केशवधृतरघुपतिरूपजयजगदीशहरे ॥ ७ ॥ वहसिबपुषिविशदेवसनंजलदाभं । हलहतिभीतिमिलितयमुनाभं ॥ केशवधृतहलधररूपजयजगदीशहरे ॥ ८ ॥ निंदसियज्ञविधेरहहश्रुतिजातं ॥ सदयहृदयदर्शितपशुघातं ॥

केशवधृतबुद्धशरीरजयजगदीशहरे ॥ ९॥ म्लेच्छ-निवहनिधनेकलयसिकरवालं। धूमकेतुमिवकिम-पिकरालं ॥ केशवधृतकल्किशरीरजयजगदीश-हरे ॥१०॥ श्रीजयदेवकवेरिदमुदितमुदारं॥ शृणु-सुखदंशुभदंभवसारं ॥ केशवधृतदशविधरूपजय-जगदीशहरे ॥ ११ ॥

इतिश्रीगीतगोविंदेप्रथमःप्रबंधः ॥ १ ॥

राग मालव।

प्रलय भयानक जलनिधि जल धँसि प्रभु तुम वेद उधारे। करि पतवार पुच्छ निज विहरे मीन सरीरहि धारे ॥ जय जगदीस हरे ॥ १ ॥ कठिन पीठ मन्दर मन्थन किन छिति भार तिल सम राजै। गिरि घूमनि सुहरानि नींद बस कमठ-रूप अति छाजै ॥ जय जगदीस हरे॥ २॥ कनक नयन बस रुधिर छींट मिलि कनक बरन छबि छायो। रद आगें धर मनि कलंक मनु रूप बराह सुहायो ॥ जय जगदीस हरे ॥३॥ खर नख बीतकि पत्र अग्र अलि कनककसिपु तन फार्यो। खंभ फारि निज जन रच्छन हित हरि नरहरि वपु धार्यो ॥ जय जगदीस हरे ॥४। अदभुत वामन बनि बलि छलि कै तीन पैंड़ जग नाप्यौ। दरसन मज्जन पान समन अघ निज नख जल थिर थाप्यौ ॥ जय जगदीस हरे ॥ ५ ॥ अभिमानी छत्री गन बधि तिन रुधिर सींचि धर सारी। इकइस बार निछत्र करी भुव हरि भृगु-पति वपु धारी ॥ जय जगदीस हरे ॥ ६ ॥ दस दिसि दस

सिर मौलि दियो बलि सब सुर गन भय भारे । सिय लछमन सह सोभित सुन्दर राम रूप हरि धारे ॥ जय जगदीस हरे ॥७॥ सुन्दर गौर सरीर नील पट ससि मैं घन लपटायो । करसन कर हल सों जमुना जल हलधर रूप सुहायो ॥ जय जगदीस हरे ॥ ८ ॥ अति करुना करि दीन पसुन पैं निन्दे सब श्रुति बेदा । कलिजुग धरम कहे हरि ह्वै कै बुद्ध रूप हर खेदा ॥ जय जगदीस हरे ॥ ९ ॥ म्लेच्छ बधन हित कठिन धार तरवार धारि कर भारी । नासे जवन सत्ययुग थाप्यो कल्कि रूप हरि धारी ॥ जय जगदीस हरे ॥ १० ॥ नंदनन्दन जग बन्दन स्म बपु धरि लीला बिस्तारी । गाई कवि जयदेव सोई हरीचन्द भक्त भय हारी ॥ जय जगदीस हरे ॥११॥

गुर्जरीरागेणप्रतिमंठतालेगीयते ।

श्रितकमलाकुचमंडलधृतकुंडलए । कलितललितवनमाल ॥ जयजयदेवहरे ॥ १ ॥ दिनमणिमंडलमंडनभवखंडनए । मुनिजनमानसहंस ॥ जयजयदेवहरे ॥ २ ॥ कालीयविषधरगंजनजनरंजनए । यदुकुलनलिनदिनेश ॥ जयजयदेवहरे ॥ ३ ॥ मधमुरनरकविनाशनगरुडासनए । सुरकुलकेलिनिदान । जयजयदेवहरे ॥४॥ अमलकमलदललोचनभवमोचनए । त्रिभुवनभुवननिधान ॥ जयजयदेवहरे ॥५॥ जनकसुताकृतभूषण

जितदूषणए। समरशमितदशकंठ ॥ जयजयदेवहरे ॥ ६ ॥ अभिनवजलधरसुंदरधृतमंदरए। श्रीमुखचंद्रचकोर ॥ जयजयदेवहरे ॥ ७ ॥ तवचरणेप्रणतावयमितिभावयए। कुरुकुशलंप्रणतेषु ॥ जयजयदेवहरे ॥८॥ श्रीजयदेवकवेरिदंकुरुतेमुदए। मंगलमुज्वलगीत॥ जयजयदेवहरे ॥ ९ ॥

इतिश्रीगीतगोविंदेद्वितीयप्रबंध ।

झिंझोटि या खमाच।

कमला उर धरि बाहु बिहारी। कुण्डल कानक गण्ड जुग धारी ॥ ललित कलित बनमाल संवारी। जय जय जय हरि देव सुरारी ॥ १ ॥ जय जय दिनमनि तेज प्रकासन। जय जय जय जय भव भय नासन ॥ मुनि मन मानस जलज बिकासन। जय जय हरि केसव गरुड़ासन ॥ २ ॥ जय कालिय विषधर बल गंजन। जय जय ब्रजजुवती मनरंजन ॥ जदुकुलकमलमूर दृग खंजन। जय जय हरि केसव भव भंजन ॥ ३ ॥ जय जय सुर मधु नरक बिदारन। पन्नगपति गामी जग तारन ॥ जय जय सुर कुल सुख बिस्तारन। जय हरि देव भक्त भय हारन ॥ ४ ॥ जय जय अमल कमल दल लोचन। जय जय भव पति भव दव मोचन ॥ त्रिभुवन गति ब्रजतिय मन रोचन। जय जय हरि सिर वर गोरोचन ॥ ५ ॥ जय जय जनकसुता कृत भूषण। समर विजित त्रिशिरा खर दूषण ॥ जय दशकंठ वनज वनपूषण ॥ जय दृग कटा कमल छवि भूषण ॥ ६ ॥

जय जय अभिनव जलधर सुन्दर । जय धृत पृष्ठ कठिन गिरि मन्दर ॥ जय विहरन गोवर्धन कंदर । श्रीसुख मसि रत गोप पुरंदर ॥ ७ ॥ हम मध तुव पद पंकज दामा । पूरहु निज भक्तन की आसा ॥ तिनको तुम दुख नित नित नासा । जिनकहं तुम चरनन विस्वासा ॥ ८ ॥ श्रीजयदेव रचित मन भाई । मङ्गल उज्वल गीति सुहाई ॥ हरीचन्द गावत मन लाई । ताकी हरि नित करत सहाई ॥ ९ ॥

वसंतरागेणरूपकतालेगीयते ।

ललितलवंगलतापरिशीलनकोमलमलयसमीरे ।
मधुकरनिकरकरंबितकोकिलकूजितकुंजकुटीरे ॥१॥
विहरतिहरिरिहसरसवसंते । नृत्यतियुवतिजनेन-
समंसखिविरहिजनस्यदुरंते ॥ ध्रु० ॥ उन्मदमद-
नमनोरथपथिकवधूजनजनितविलापे ॥ अलिकुल-
संकुलकुसुमसमूहनिराकुलबकुलकलापे ॥२॥ मृग-
मदसौरभरभसवशंवदनवदलमालतमाले । युवज-
नहृदयविदारणमनसिजनखरुचिकिंशुकजाले ॥३॥
मदनमहीपतिकनकदंडरुचिकेशरकुसुमविकाशे ।
मिलितशिलीमुखपाटलिपटलकृतस्मरतूणविलासे ॥४॥
विगलितलज्जितजगदवलोकनतरुणकरुणकृतहासे ।
विरहिनिकृंतनकुंतमुखाकृतिकेतकिदंतुरिताशे ॥५॥
माधविकापरिमलललितेनवमालतिजातिसुगन्धौ ।
मुनिमनसामपिमोहनकारिणितरुणाकारणबंधौ ॥६॥

स्फुरदतिमुक्तलतापरिरंभणमुकुलितपुलकितचूते ।
वृंदावनविपिनेपरिसरपरिगतयमुनाजलपूते ॥ ७ ॥
श्रीजयदेवभणितमिदमुदयतिहरिचरणस्मृतिसारं ।
सरसवसंतसमयवनवर्णनमनुगतमदनविकारं ॥८॥

इतिश्रीगीतगोविंदेतृतीयप्रबंधः ।

बसन्त ।

हरि विहरत लखि रसमय बसन्त । जो बिरही जन कहँ अति दुरन्त ॥ वृन्दावन कुञ्जनि सुख समन्त । नाचत गावत कामिनी कन्त ॥ १ ॥ लै ललित लवङ्ग लता सुबास । डोलत कोमल मलयज बतास ॥ अलि पिक कलरव लहि आस पास । रह्यौ गूंजि कुंज गह्वर अवास ॥ २ ॥ उनमादित ह्वै तपि मदन ताप । मिलि पथिकबधू ठानहिं बिलाप ॥ अलि कुल कलि कुसुम समूह दाप । बन सोभित मौलसिरी कलाप ॥३॥ मृगमद सौरभ के आल बाल । सोभित बहु नव चल दल तमाल ॥ जुव हृदय बिदारन नख कराल । फूले पलास बन लाल लाल ॥४॥ बन प्रफुलित केसर कुसुम आन । मनु कनक छरी लिए मदन रान ॥ अलि मद गुलाब लागे सुहान । विष बुझे मैन के मनहुं बान ॥ ५ ॥ नव नीबू फूलन करि बिकास । जग निलज निरखि मनु करत हास ॥ तिमि बिरही हिय छेदन हतास । बरछी से केतकी पत्र पास ॥६॥ लपटत नव माधविका सुबास । फूली मल्ली मिलि करि उजास ॥ मोहे मुनिजन करि काम आस । लखि तरुन सहायक रितु प्रकास ॥ ७ ॥ पुष्पित लतिका नव संग

प्राय। पुलकित बौराने आम आय॥ बहि सीतल जमुना लहर वाय। पावन वृन्दावन रह्यो सुहाय॥ ८॥ जयदेव रचित यह सरस गीत। रितुपति विहरत हरि जस पुनीत॥ गावत जे करि हरिचन्द प्रीत। ते लहत प्रेम तजि काम भीत॥ ९॥ हरि विहरत लखि रसमय बसन्त॥

रामकरिरागेणरूपकतालेगीयते।

चंदनचर्चितनीलकलेवरपीतवसनवनमाली। केलिचलन्मणिकुंडलमंडितगंडयुगस्मितशाली॥१॥ हरिरिहमुग्धवधूनिकरेविलासिनिविलसतिकेलिपरे॥ ॥ ध्रुवपदं ॥ पीनपयोधरभारभरेणहरिंपरिरभ्यसरागं। गोपवधूरनुगायतिकाचिदुदंचितपंचमरागं॥२॥ कापिविलासविलोलविलोचनखेलनजनितमनोजं॥ ध्यायतिमुग्धवधूरधिकंमधुसूदनवदनसरोजं॥ ३॥ कापिकपोलतलेमिलितालपितुंकिमपिश्रुतिमूले। चारुचुचुंबनितंबवतीदयितंपुलकैरनुकूले॥ ४॥ केलिकलाकुतुकेनचकाचिदमुंयमुनाजलकूले॥ मंजुलवंजुलकुंजगतंविचकर्षकरेणदुकूले॥ ५॥ करतलतालतरलवलयावलिकलितकलस्वनवंशे॥ रासरसेसहनृत्यपराहरिणायुवतिप्रशशंसे॥६॥ श्लिष्यतिकामपिचुंबतिकामपिरम्यतिकामपिरामां। पश्यतिसस्मितचारुतरामपराम-

नुगच्छतिवामां ॥ ७ ॥ श्रीजयदेवकवेरिदमद्भुत-केशवकेलिरहस्यं । वृंदावनविपिनेललितंवितनोतु-शुभानियशस्यं ॥ ८ ॥

इतिश्रीगीतगोविंदेचतुर्थःप्रबंधः ।

मालकोस ।

सखि हरि गोपबधू संग लीने । बिलसत बिबिध बिलास हास मिलि केलि कला रस भीने ॥१॥ ध्रुव ॥ स्याम सरीर खौर चन्दन की पीत बसन बनमाला । रमनि हंसनि भलकत मनि कुण्डल लोल कपोल रसाला ॥२॥ पीन उरोज भार भुकि हरि कों प्रेम सहित गर लाई । गोपबधू कोउ पंचम रागहि ऊंचे सुर रहि गाई ॥ ३ ॥ चपल कटाच्छन जुवती जन उर काम बढ़ावन हारे । मुग्धबधू कोउ धाई रही मन में मन मोहन प्यारे ॥ ४ ॥ कोउ हरि के कपोल ढिग अपने नवल कपोलहि लाई । बात करन मिस चूमति पिय सुख तन पुलकावलि छाई ॥ ५ ॥ जमुनातीर निकुञ्ज पुञ्ज में मदनाकुल कोउ नारी । खेंचत गहि हरि को पीताम्बर हंसत खरे बनवारी ॥ ६ ॥ ताल देत कंकन धुनि मिलि कल बंसी बजत सुहाई । ता अनुसार सरस कोउ नाचति लखि हरि करत बड़ाई ॥ ७ ॥ विहरत कोउ संग कोउ सुख चूमत काहू कों गर रहे लगाई । काहू की सुन्दर सुख देखत चलत कोऊ संग लाई ॥ ८ ॥ जो जयदेव कथित यह अद्भुत हरि बन बिहरनि गावै । वल्लभ बल हरिचन्द सदा सो मङ्गल फल नव पावै ॥ ६ ॥ सखि हरि गोप संग लीने ॥

गुर्ज्जरीरागेणरूपकतालेनगीयते ।

संचरदधरसुधामधुरध्वनिमुखरितमोहनवंशं । चलितदृगंचलचंचलमौलिकपोलविलोलवतंशं ॥१॥ रासेहरिमिहविहितविलासंस्मरतिमनोममकृतपरिहासं ॥ ध्रुवपदं ॥ चंद्रकचारुमयुरशिखंडकमंडलवलयितकेशं । प्रचुरपुरंदरधनुरनुरंजितमेदुरमुदिरसुवेशं ॥२॥ गोपकदंबनितंबवतीमुखचुंबनलंबितलोभं । बंधुजीवमधुराधरपल्लवमुल्लसितस्मितशोभं ॥३॥ विपुलपुलकभुजपल्लववलयितवल्लवयुवतिसहस्रं ॥ करचरणोरसिमणिगणभूषणकिरणविभिन्नतमिस्रं ॥ ४ ॥ जलदपटलचलदिंदुविनिंदकचंदनतिलकललाटं । पीनपयोधरपरिसरमर्दननिर्दयहृदयकपाटं ॥ ५ ॥ मणिमयमकरमनोहरकुंडलमंडितगंडमुदारं । पीतवसनमनुगतमुनिमनुजसुरासुरवरपरिवारं ॥ ६ ॥ विशदकदंबतलेमिलितंकलिकलुषभयंशमयंतं । मामपिकिमपितरंगदनंगदृशामनसारमयंतं ॥ ७ ॥ श्रीजयदेवभणितमतिसुंदरमोहनमधुरिपुरूपं । हरिचरणस्मरणंप्रतिसंप्रतिपुण्यवतामनुरूपं ॥ ८ ॥

इतिश्रीगीतगोविंदेपंचमःप्रबंधः ॥५॥

विहाग ।

जिय तें सो छवि टरत न टारी । रास विलास रमत

लखि मो तन हंसे जौन गिरिधारी ॥ १ ॥ ध्रु० ॥ अधर मधुर मधु पान छकी बंसी धुनि देत कन्हाई । ग्रीव डुलनि चञ्चल कटाच्छ मिलि कुण्डल झलनि सुहाई ॥ २ ॥ घुंघुरारी अलकान पैं प्यारी मोर चन्द्रिका राजै । नवल सजल घन पैं मनु सुन्दर इन्द्रधनुष छबि छाजै ॥ ३ ॥ गोपबधू मुख चूमत अधर अमृत रस लालु लुभाए । बन्धुजीव निन्दक ओठन पैं मन्द हंसनि मन भाए ॥ ४ ॥ भरत भुजन मैं गोपबधूटिन प्रेम पुलक तन पूरे । कर पद गल मनि गन आभूषन मेटत हिय तम दूरे ॥ ५ ॥ स्याम सुभग सिर केसर रेखा घन नव ससि छबि पावै । जुवती जूथ कठिन कुच मींजत जेहि जिय दया न आवै ॥६॥ गंडन पर मनि मण्डित कुण्डल झलकत सब मन मोहै । सुर नर मुनि गन बन्दित कटि तट लपटि पीत पट सोहै ॥७॥ बिमद कदम्ब तरे ठाढ़े जन भव भय मेटन वारे । काम भरी चितवन लखि मम उर काम बढ़ावन हारे ॥८॥ श्रीजयदेव कथित यह हरि को रूप ध्यान मन भायो । बसै सदा रसिकन के हिय हरिचन्द अनूप सुहायो ॥९॥ जिय तें सो छबि टरत न टारी ॥

मालवरागेणएकतालीतालेनगीयते।

निभृतनिकुंजगृहंगतयानिशिरहसिनिलीयवसंतं। चकितविलोकितसकलदिशारतिरभसभरेणहसंतं ॥ १ ॥ सखिहेकेशिमथनमुदारं ॥ रमयमयासहमदनमनोरथभावितयासविकारं ॥ध्रुवपदं॥ प्रथमसमागमलज्जितयापटुचाटुशतैरनुकूलं। मृदु-

मधुरस्मितभाषितयाशिथिलीकृतजघनदुकूलं ॥ २ ॥ किशलयशयननिवेशितयाचिरमुरसिममैवशयानं । कृतपरिरंभणचुंबनयापरिरम्यकृताधरपानं ॥ ३ ॥ अलसनिमीलितविलोचनयापुलकावलिललितकपोलं । श्रमजनसिक्तकलेवरयावरमदनमदादतिलोलं ॥ ४ ॥ कोकिलकलवरकूजितयाजितमनसिजतंत्रविचारं । श्लथकुसुमाकुलकुंतलयानखलिखितघनस्तनभारं ॥ ५ ॥ चरणरणितमणिनूपुरयापरिपूरितसुरतवितानं । मुखरविशृंखलमेखलयासकचग्रहचुंबनदानं ॥ ६ ॥ रतिसुखसमयरसालसयादरमुकुलितनयनसरोजं । निःसहनिपतिततनुलतयामधुसूदनमुदितमनोजं ॥ ७ ॥ श्रीजयदेवभणितमिदमतिशयमधुरिपुनिधुवनशीलं ॥ सुखमुत्कंठितराधिकयाकथितंवितनोतुसलीलं ॥ ८ ॥

इतिश्रीगीतगोविंदेषष्ठःप्रबंधः ।

अरी सखि मोहि मिलाउ मुरारी । मेटौं काम कसक तन की गर लाइ रमन गिरिधारी ॥ १ ॥ ध्रु० ॥ इक दिन गह्वर कुञ्ज गई हौं तहां छिपे रहे प्यारे । चितवत चकित चहूं दिसि मोहि लखि हंसे सुरति सुख धारे ॥ २ ॥ प्रथम समागम लाजि रही बहु बातन तब बिलमाई । बोलत ही हंसि कै कछु मो तिन नीबी सिथिल कराई ॥ ३ ॥ कोमल सेज सुवाइ मोहि उर पर भर दै रहे सोई । हारि अलिङ्गत

चुम्बतही पियो अधर झपटि तन टोई ॥४॥ आलस बस दृग
मूंदतही तिन तन पुलकावलि छाई । खेद सिथिल तन होत
मोहि भए काम विवस ब्रजराई । ५ ॥ बोलतही सम प्रान-
नाथ बहु कोक कला विपतागी । कुन्तल कुसुम खसित लखि
मम कुच जुग नख रेख पसारी ॥ ६ ॥ नूपुर बोलतही पिय
प्यारे सुरत वितानहि तान्यो । रसत गिरत किंकिनि सिर
गहि सुख चूमत अति सुख मान्यो ॥ ७ ॥ रति सुख समुद
मगन मोहि लखि दृग मूंदि रहे मद थाके । विथकित सेज
परी लखि पियहू काम कलोलन छाके ।८॥ गोपवधू सखिसों
इमि भाखत स्याम काम रस पूरी । गाई सो जयदेव सुकवि
हरिचन्द भक्ति रति मूरी ॥९॥ अरी सखि मोहि मिलाव मुरारी ॥

गुर्जरीरागेणप्रतिमंठतालेगीयते ।

मामियंचलिताविलोक्यवृतंवधूनिचयेन । साप-
राधतयामयापिनवारितातिभयेन ॥ १ ॥ हरिहरि-
हतादरतयागतासाकुपितेव ॥ ध्रुवपदं ॥ किंकरि-
ष्यतिकिंवदिष्यतिसाचिरंविरहेण । किंजनेनधने-
नकिंममजीवितेनगृहेण ॥ २ ॥ चिंतयामितदान-
नंकुटिलभ्रूरोषभरेण । शोणपद्ममिवोपरिभ्रमताकु-
लंभ्रमरेण ॥ ३ ॥ तामहंहृदिसंगतामनिशंभृशं-
रमयामि । किंवनेनुसरामितामिहकिंवृथाविलपा-
मि ॥ ४ ॥ तन्विखिन्नमसूययाहृदयंतवाकलया-
मि । तन्नवेद्मिकुतोगतासिनतेनतेनुनयामि ॥ ५ ॥

दृश्यसेपुरतोगतागतमेवमेविदधासि । किंपुरेवससंभ्रमंपरिरंभणंनददासि ॥ ६ ॥ क्षम्यतामपरंकदापितवेदृशंनकरोमि । देहिसुंदरिदर्शनंममसम्मथेनदुनोमि ॥ ७ ॥ वर्णितंजयदेवकेनहरेरिदंप्रणतेन । किंदुबिल्वसमुद्रसंभवरोहिणीरमणेन ॥८॥

इतिश्रीगीतगोविंदेसप्तमःप्रबन्धः ।

हाहा गई कुपितह्वै प्यारी । निज अपमान मानि मन भारी ॥ ध्रु० ॥ मोहि घिरयो लखि बधुन संभारी । बिम करि गई हृदाम विचारी ॥ निज अपराध जानि भय भारी । हौं हू ताहिन सक्यो निवारी ॥१॥ किमि ह्वै है करिहै काहा नारी । का कहिहै मम बिरह दुखारी ॥ धन जन जीवन घर परिवारी । ता बिनु वृथा जगत निधि मारी ॥२॥ सो मुख चन्द जोति उजियारी । कोप कुटिल भौंहैं कजरारी ॥ मनहुं कंवल पर भंवर कतारी ॥३॥ बिसरति हिय तें नाहिं बिसारी । बन बन फिरौं ताहि अनुसारी । बिलपौं वृथा पुकारि पुकारी ॥ अब हौं हिय सों ताहि निकारी । रमिहौं तासों गल भुज डारी ॥४॥ मम अपराध न हिये बिचारी । अतिहि दुखित तोहि जात निहारी ॥ पै नहिं जानौं किते सिधारी । तासों सकत मनाइ न हारी ॥५॥ दृग सो छिनहूं होत न न्यारी । आवत जात लखात लहारी ॥ पै यह अचरज अतिहि हहारी । धाइ लगत गर क्यौं न पियारी ॥६॥ अब कों करु अपराध छमारी । करिहौं फेर न चूक तिहारी ॥ सुन्दरि दरसन दै बलिहारी । दहत मदन तो बिनु तन जारी ॥८। किंदु बिलव वारिधि तम

हारी । गाई कवि जयदेव संवारी ॥ विरहातुर हरि कठिन
कथा री । जो हरिचन्द भक्त सुखकारी ॥८ ।

कर्णाटकरागेणएकतालीतालेगीयते ।

निंदतिचंदनमिंदुकिरणमनुविंदतिखेदमधीरं ।
व्यालनिलयमिलनेनगरलमिवकलयतिमलयस-
मीरं ॥ १ ॥ साविरहेतवदीना ॥ माधवमनसिज ।
विशिखभयादिवभावनयात्वयिलीना ॥ ध्रुवपदं ॥
अविरलनिपतितमदनशरादिवभवदवनायविशालं ।
स्वहृदयमर्मणिवर्मकरोतिसजलनीलनीदलजालं ॥२
कुसुमविशिखशरतल्पमनल्पविलासकलाकमनीयं ।
व्रतमिवतवपरिरंभसुखायकरोतिकुसुमशयनीयं ॥३॥
वहतिविगलितविलोचनजलधरमाननकमलमुदारं ।
विधुमिवविकटविधुंतुददंतदलनगलितामृतधारं ॥४॥
विलिखतिरहसिकुरंगमदेनभवंतमसमशरभूतं ।
प्रणमतिमकरमधोविनिधायकरेचशरंनवचूतं ॥५॥
प्रतिपदमिदमपिनिगदतिमाधवतवचरणेपतिताहं ।
त्वयिविमुखेमयिसपदिसुधानिधिरपितनुतेतनुदाहं ६
ध्यानलयेनपुरःपरिकल्प्यभवंतमतीवदुरापं ।
विपलतिहसतिविषीदतिरोदितिचंचतिमुंचतितापं ७
श्रीजयदेवभणितमिदमधिकंयदिमनसानटनीयं ।
हरिविरहाकुलवल्लवयुवतिसखीवचनंपठनीयं ॥८॥

इतिश्रीगीतगोविंदेस्टगःप्रबंधः ।

प्यारे तुम बिनु व्याकुल प्यारी। काम बान भय ध्यान धरत तुव लीजे ताहि उबारी ॥ १ ॥ चन्दन चन्द न भावत पावत अति दुख धीर न धारै। अहिगन गरल बगारि सरल तन मलयानिल तेहि जारै ॥ २ ॥ अविरल बरसत मदन बान लखि उर महं तुमहिं दुराई। सजल कमल दल कवच बनाइ छिपावत हियहि डराई ॥ ३ ॥ कुसुम सेज कण्टक सी लागत सुख साजन दुख पावै। व्रत मम सुख तजि तुव रति मनवत कोउ बिधि समय बितावै ॥ ४ ॥ अविरल नीर ढरकि नैननि तें बहत कपोलन छाई। मनहुं राहु बिदलित ससि तें जुग अमृतधार बहि आई ॥ ५ ॥ मृगमद लै तुव चित्र बनावति व्याकुल बैठि अकेली। काम जानि तेहि लिखति मकरसर पुनि प्रनवत अलबेली ॥ ६ ॥ पुनि पुनि कहति अहो पिय प्यारे पांय परति अपनाओ। तुम बिनु दहत सुधानिधि प्रीतम गरलगि मरत जिआओ ॥ ७॥ बिलपति हंसति बिखाद करति रोवति कबहूं अकुलाई। कबहुं ध्यान महं तुमहि निरखि गर लागति ताप मिटाई ॥ ८॥ ऐसहिं जो हरि बिरह जलधि महं मगन होइ रस चाहै। सखी बचन जयदेव कथित हरिचन्द गीत अवगाहै ॥ ९ ॥

देशाखरागेणएकतालीतालेगीयते।

स्तनविनिहितमपिहारमुदारं। सामनुतेकृशतनुरतिभारं॥१॥ राधिकाविरहेतवकेशव॥ ध्रुवपदं॥ सरसमसृणमपिमलयजपंकं॥ पश्यतिविषमिववपुषिसशंकं ॥ २ ॥ श्वसितपवनमनुपमपरिणाहं।

मदनदहनमिववहतिसदाहं ॥ ३ ॥ दिशिदिशिकिरतिसजलकणजालं ॥ नयननलिनमिवविगलितनालं ॥ ४ ॥ नयनविषयमपिकिशलयतल्पं ॥ कलयतिविहितहुताशविकल्पं ॥ ५ ॥ त्यजतिनपाणितलेनकपोलं ॥ वालशशिनमिवसायमलोलं॥६॥ हरिरितिहरिरितिजपतिसकामं ॥ विरहविहितमरणेवनिकामं ॥ ७ ॥ श्रीजयदेवेभणितमितिगीतं ॥ सुखयतुकेशवपदमुपनीतं ॥ ८ ॥

इतिश्रीगीतगोविंदेनवमःप्रबंधः ।

तुव वियोग अति व्याकुल राधा । मिलि हरि हरहु मदन मद बाधा ॥ ध्रु० ॥ छिम तन प्रानहु भर सम जाने । हार पहार सरिस उर माने ॥१॥ कोमल चन्दन विष सम लागै । सुख सामा लखि संकित भागै ॥ २ ॥ सित स्वांस गुरु व्याकुल भारी । दहति तनहि मदनागि पजारी ॥३॥ चौंकि चौंकि चितवत चहुं ओरी । स्रवत नीर नलिनी मनु तोरी ॥४॥ तुव बिनु सुमन परस तन जारी । सूनी सेज न सकत निहारी ॥५॥ निज कर सों न कपोल उठावै । नव ससि सांझ गहै मनु भावै ॥६॥ पुनि पुनि हरि तुव नाम उचारै । बिरह मरत कोउ बिधि जिय धारै ॥ ७ ॥ कबि जयदेव कथित यह बानी । हरीचन्द हरि जन सुखदानी ॥ ८ ॥

वराडीरागेणरूपकतालेगेयते.।

वहतिमलयसमीरेमदनमुपनिधाय ॥ स्फुटति-

कुसुमनिकरेविरहिहृदयदलनाय ॥१॥ तवविरहेबनमालीसखिसीदति ॥ध्रुवपदं॥ दहतिशिशिरमयूखेमरणमनुकरोति ॥ पततिमदनविशिखेविलपतिविकलतरोति ॥ २ ॥ ध्वनतिमधुपसमूहेश्रवणमपिदधाति ॥ मनसिवलितविरहेनिशिरुजमुपयाति ॥३॥ वसतिविपिनवितानेत्यजतिललितेधाम ॥ लुठतिधरणिशयनेबहुविलपतितवनाम ॥ ४ ॥ भणतिकविजयदेवेविरहिविलसितेन ॥ मनसिरभसविभवेहरिरुदयतुसकृतेन ॥ ५ ॥

इतिश्रीगीतगोविंदेदशमःप्रबंधः ।

राग झिंझौटी

बिरह बिथा तें ब्याकुल आली । तुव बिनु बहुत बिकल बनमाली ॥ ध्रु० ॥ मलय समीर झकोरन आवत । तन परसत अति काम जगावत ॥ फूले बिबिध कुसुम तरु डारन । बिरहीजन हिय नखन बिदारन ॥ १ ॥ चन्द चांदनी सों तन जारत । तुव बिछुरे पिय प्रान न धारत ॥ मदनबान बिधि ब्याकुल भारी । तलपि तलपि बिलपत बनवारी ॥ २ ॥ मधुर भँवर धुनि सहि नहिं जाई । मूंदे रहत स्रवन हरि राई ॥ जब निसि बढ़त मदन रुज भारी । मोहत बिकल अधीन मुरारी ॥ ३ ॥ छोड़ि देह सुख गेह बिसारी । गिरी बन बास करत गिरिधारी ॥ मुरछि धरनि लोटत बिलखाई । चौंकि रहत राधे रट लाई ॥ ४ ॥ हरि को बिरह बिलास

सुहायो। श्रीजयदेव सुकवि यह गायो ॥ हरीचन्द जेहि यह रस भावत। तेहि हरि अनुभव प्रगट लखावत ॥ ५ ॥ १०॥

केदाररागेणएकतालीतालेगीयते।

रतिसुखसारेगतमभिसारेमदनमनोहरवेषं ॥ नकुरुनितंबिनिगवनविलंबनमनुसरतंहृदयेशं ॥१॥ धीरसमीपेयमुनातीरेवसतिवनेवनमाली । गोपीपीनपयोधरमर्द्दनचलितचपलकरशाली ॥ ध्रुवपदं॥ नामसमेतंकृतसंकेतंवादयतेमृदुवेणुं॥ बहुमनुतेतनुतेतनुसंगतपवनचालितमपिरेणुं ॥ २ ॥ पततिपतत्रेविचलतिपत्रेशंकितभवदुपयानं ॥ रचयतिशयनंसचकितनयनंपश्यतितवपंथानं ॥ ३ ॥ मुखरमधीरंत्यजमंजीरंरिपुमिवकेलिसुलोलं ॥ चलसखिकुंजंसतिमिरपुंजंशीलयनीलनिचोलं ॥ ४ ॥ उरसिमुरारेरुपहितहारेघनइवतरलवलाके॥ तडिदिवपीतेरतिविपरीतेराजसिसुकृतविपाके ॥ ५ ॥ विगलितबसनंपरिहृतरसनंघटयजघनमपिधानं॥ किशलयशयनेपंकजनयनेनिधिमिवहर्षनिधानं ॥ ६ ॥ हरिरभिमानीरजनिरिदानीमियमपियातिविरामं ॥ कुरुममवचनंसत्वररचनंपूरयमधुरिपुकामं ॥ ७ ॥ श्रीजयदेवेकृतहरिसेवेभणतिपरमरमणीयं ॥ प्रमुदितहृदयंहरिमतिसदयंनमतसुकृतकमनीयं ॥८॥

इतिश्रीगीतगोविंदेमहाकाव्येएकादशःप्रबंधः।

बिलम मंत करु पिय सों मिलु प्यारी । बैठे कुञ्ज अकेले तुव हित मदनमथन गिरिधारी ॥ ध्रु० ॥ धीर समीर घाट जमुना तट बन राजत बनमाली । कठिन पीन कुच परमन चंचल कर जुग सोभा माली ॥ १ ॥ लै तुव नाम बदत संकेतहि मधुरी बेनु बजाई । तुव हिम तें जु रेनु उड़ि आवत रहत ताहि हियं लाई ॥ २ ॥ उड़त पखेरुन गिरत पतौअन तुव आगवन बिचारी । सेज संवारत इत उत चितवत चकित पंथ वनवारी ॥ ३ ॥ चंचल मुखर नूपुरहि तजि मुख अञ्चल ओट दुराई । तिमिर पुञ्ज चल कुञ्ज सखी मिलि हियरो लै न सिराई ॥ ४ ॥ रतिबिपरीत पिया उर ऊपर मुक्तमाल ढिग सोहो । घन पैं चपल बलाका सह चपला सी रहु मन मोहो ॥५॥ किङ्किनि तजि कै बसन उतारि निरन्तर अन्तर त्यागी । चढ़ि जिय कोमल किसलय सेज पिया के उर रहु लागो ॥ ६ ॥ हरि बहुनायक मानी रैनहु जात चलो सब बीतो । बेगहि चलु करु पीअ मनोरथ पालि प्रीति की रीतो ॥ ७ ॥ श्री जयदेव कथित दूती बच हरि राधा गुन गाई । जाको प्रेम फल सब हरिचन्द जुगल छबि जीअ बसाई ॥८ ॥

गुणकरीरागेणरूपकतालेगीयते ।

पश्यतिदिशिदिशिरहसिभवंतं ॥ त्वदधरमधुरमधूनिपिबंतं ॥ १ ॥ नाथहरेजयनाथहरेसीदतिराधावासगृहे ॥ ध्रु० त्वदभिसरणरभसेनवलंती ॥ पततिपदानिकियंतिचलंती ॥ २ ॥ विहितविशदबिसकिसलयवलया ॥ जीवतिपरमिहतवरतिक-

लया ॥ ३ ॥ मुहुरवलोकितमंडनलीला ॥ मधुरिपुरहमितिभावनशीला ॥ ४ ॥ त्वरितमुपैतिनकथमभिसारं ॥ हरिरितिवदतिसखीमनुवारं ॥ ५ ॥ श्लिष्यतिचुंबतिजलधरकल्पं ॥ हरिरुपगतइतितिमिरमनल्पं ॥ ६ ॥ भवतिविलंबिनिविगलितलज्जा ॥ विलपतिरोदितिवासकसज्जा ॥ ७ ॥ श्रीजयदेवकवेरिदमुदितं ॥ रसिकजनंतनुतामतिमुदितं ॥ ८ ॥

इतिश्रीगीतगोविंदद्वादशःप्रबंधः ।

तुम बिनु दुखित राधिका प्यारी । तुव मग भई तन सुरति बिसारी ॥ १ ॥ अधर मधुर मधु पिवत कन्हाई । तुमहिं सबै दिसि परत दिखाई ॥ २ ॥ मिलन चलत उठि तुम कहं धाई । गिरि गिरि परत बिरह दुखदाई ॥ ३ ॥ किसलय वलय बिरचि कर धारी । तुव रति ध्यान जियति सुकुमारी ॥ ४ ॥ कबहुं रचति रसरास संवारी । जानति हम हीं मदन मुरारी ॥ ५ ॥ बहति सखिन सों पुनि पुनि आली । अजहुं न क्यों आए बनमाली ॥ ६ ॥ लखि घन मम अंधियार भुलाई । तुव धोखे चूमति गरलाई ॥ ७ ॥ तुव बिलम्ब अति हीं अकुलाई । व्याकुल रोवति सेज सजाई ॥ ८ ॥ श्री जयदेव रचित जो गावै । हरीचन्द हरि पद रति पावै ॥ ९ ॥ १३

गौडमालवरागेणप्रतिमंठतालेनगीयते ।

कथितसमयेपिहरिरहहनययौवनं ॥ ममविफल-

मेतदनुरूपमपियौवनं ।। १ ।। यामिहेकमिहशरणं सखीजनवचनवंचिता ।। ध्रु० ।। यदनुगमनायनिशि गहनमपिशीलितं ॥ तेनममत्हृदयमिदमसमशरकीलितं ॥ २ ॥ ममरणमेववरमतिवितिथकेतना ॥ किमितिविषहामिविरहानलमचेतना ॥ ३ ॥ मामहहविधुरयतिमधुरमधुयामिनी ।। कापिहरिमनुभवतिकृतसुकृतकामिनी ॥ ४ ॥ अहहकलयामिवलयादिमणिभूषणं ॥ हरिविरहदहनवहनेनबहुदूषणं ॥ ५ ॥ कुसुमसुकुमारतनुमतनुशरलीलया । स्रगपिहृदिहंतिमामतिविषमशीलया ।। ६ ॥ अहमिहनिवसामिनगणितवनवेतसा ।। स्मरतिमधुसूदनोमामपिनचेतसा ॥ ७॥ हरिचरणशरणजयदेवकविभारती ॥ वसतुहृदियुवतिरिवकोमलकलावती ॥ ८ ॥

इतिश्रीगीतगोविंदेत्रयोदशःप्रबंधः ।

हा हरि अजहूं बन नहिं आए। बैठे बाट बिलोकत बीतो औधहु कित बिलमाए ।। ध्रु० ।। सखियन झूठ बोलि बहरायो हा! अब कौन उपाई। प्राननाथ बिनु बिफल भवै मम नव जोबन सुन्दराई ॥ १ ॥ जाके मिलन हेत कारी निसि बन बन डोलत धाई। मदन बान बेदना देत मोहि सोई निठुर कन्हाई ॥२॥ घरहू छुथ्यो हरिहु नहिं आए तौ अब सरनहिं

नीको। कहा लाभ बिरहागिनि दाहि तन रखिबो जीवन फीको ॥ ३ ॥ इत मधु मधुर जामिनी मो हिय वेदन देत पजारी। उत कोउ बड़भागिनि कामिन संग ह्वै हैं रमत मुरारी ॥ ४ ॥ कर कञ्चन कङ्कन बाजूबन्द बिरहानल तपि जारैं। बिष से बिषय साज सब लागत उलटे दुखहि प्रचारैं ॥ ५ ॥ कुसुम सरिस सम कोमल तन पैं फूल माल हू भारी। तीछन काम बान सी बेधति बिनु प्यारे गिरिधारी ॥ ६ ॥ हम जाके हित बेत कुञ्ज में बैठी त्यागि हवेली। सो हरि भूलेहु सुमिरत नहिं मोहि छाड़ी हाय अकेली ॥ ७ ॥ इमि बिलपति वृषभानुलली हरि बिरह बिथा अकुलाई। श्रीजयदेव सुकबि मधुरी हरिचन्द कथा सोइ गाई ॥ ८ ॥ १४

वसंतरागेणयतितालेनगीयते ।

स्मरसमरोचितविरचितवेशा ॥ गलितकुसुमदलविलुलितकेशा ॥ १ ॥ कापिचपलामधुरिपुणा ॥ विलसतियुवतिरधिकगुणा ॥ ध्रुवपदं ॥ हरिपरिरंभणवलितविकारा ॥ कुचकलशोपरितरलितहारा ॥ २ ॥ विचलदलकललिताननचंद्रा ॥ तदधरपानरभसकृततंद्रा ॥ ३ ॥ चंचलकुंडलललितकपोला ॥ मुखरितरशनजघनगतिलोला ॥ ४ ॥ दयितविलोकितलज्जितहसिता ॥ बहुविधकूजितरतिरसरसिता ॥ ५ ॥ विपुलपुलकपृथुवेपथुभंगा ॥ श्वसितनिमीलितविकसदनंगा ॥ ६ ॥ श्रमजल-

कणभरसुभगशरीरा ॥ परिपतितोरसिरतिरणधीरा ॥ ७ ॥ श्रीजयदेवभणितमतिललितं ॥ कलिकलुषंशमयतुहरिरमितं ॥ ८ ॥

इतिश्रीगीतगोविंदेचतुर्दशःप्रबंधः ।

हरि संग विहरति ह्वै है कोउ । बड़भागिनि जुवती गुन वारी दै गल मैं भुज दोउ ॥ ध्रु० ॥ मदनसमर हित उचित भेस कै कंचुकि कुच कसि बांधे । कच विगलित कुसुमन सों मानहुं बीर सुमन सर साधे ॥ १ ॥ हरि गल लागत खेद छिकलन मदन विकारहु जागे । कुचकलसन पर मुकाहार बहु हिलत सुरतरस पागे ॥ २ ॥ मुख ससि निकट ललित अलकावलि भमरि घुमरि रहिकाई । पिय अधरासव पान छकी तिमि झूमत तिय अलसाई ॥ ३ ॥ परसत उभकि कपोलन चञ्चल कुंडल जुगल सुहाए । किङ्किनि कलरव करति हिलत जब जुगल जङ्घ मन भाए ॥ ४ ॥ पिय तिय दिसि निरखत चितवति कछु हंसि करि नैन लजीले । विविध भाव रस भरी दिखावति जाहि रति रसिक रसीले ॥ ५ ॥ रोम पांति उलहति तन वेपथु होत गरो भरि आए । मूंदि मूंदि दृग खोलति लैलै स्वास सुरति सुख पाए ॥ ६ ॥ झलकत मुकाजाल से तन पर स्रम सीकर अति नीके । रतिरन अभिरत थाकि परी गल लगि कै हिय पर पीके ॥७॥ श्रीजयदेव सुकवि भाखित यह हरि बिहार रस गावै । काम बिमुख ह्वै सो हरिचन्द प्रेम फल अनुपम पावै ॥ ८ ॥

गुर्जरीरागेणएकतालीतालेनगीयते ।

समुदितमदनेरमणीवदनेचुंबनवलिताधरे ॥
मृगमदतिलकंलिखतिसपुलकंमृगमिवरजनिकरे ॥१॥
रमतेयमुनापुलिनवने ॥ विजयिमुरारिरधुना ॥
ध्रुवपदं । घनचयरुचिरेरचयतिचिकुरेतरलिततरुणानने ॥ कुरुबककुसुमंचपलासुषमंरतिपतिमृगकानने ॥ २ ॥ घटयतिसुघनेकुचयुगगगनेमृगमदरुचिरूषिते ॥ मणिसरममलंतारकपटलंनखपदशशिभूषिते ॥ ३ ॥ जितबिसशकलेमृदुभुजयुगलेकरतलनलिनीदले ॥ मरकतवलयंमधुकरनिचयंवितरतिहिमशीतले ॥ ४ ॥ रतिगृहजघनेविपुलापघनेमनसिजकनकासने ॥ मणिमयरशनंतोरणहसनंविकिरतिकृतवासने ॥ ५ ॥ चरणकिसलयेकमलानिलयेनखमणिगणपूजिते ॥ बहिरपवरणंयावकभरणंजनयतिहृदियोजिते ॥ ६ ॥ रमयतिसुदृशंकामपिसदृशंखलहलधरसोदरे ॥ किमफलमवसंचिरमिहविरसंवदसखिविटपोदरे ॥ ७ ॥
इहरसभणनेकृतहरिगुणनेमधुरिपुपदसेवके ॥
कलियुगचरितंनवसतुदुरितंकविनृपजयदेवके ॥८॥

इतिश्रीगीतगोविंदेपंचदशःप्रबंधः ।

माधव नवरमनी संग लीने। बंसीवट जमुनातट विहरत रतिरन जय रस भीने ॥ ध्रु० ॥ सदन पुलक तन चूमन पिय मुख फरकत अधर लखाहीं । मृगमद तिलक देत ता मुख मैं मनु ससि मैं मृगछाहीं ॥ १ ॥ जुव जन मन हर रतिपति मृग बन सघन सुघन सम कारे । चिकुर निकर कर लिए संवारत गूंथि कुसुम बहु प्यारे ॥ २ ॥ नभमण्डल सम कुच जुग मैं घन मृगमद लपटि सुहावैं । नखछत ससि लखि नखत माल सो मुक्तामाल पहिरावैं ॥ ३ ॥ नवल-नलिन भुज कोमल करतल सुकमलदल से राजैं । मरकत कङ्कन तहं पहिरावत मधुप माल सम भ्राजैं ॥ ४ ॥ सघन जघन मनु मदन हेम सिंहासन सुरुचि सोहायो । सुरङ्गवसन पर तोरन सम पिय किङ्किनि जाल बंधायो ॥ ५ ॥ कमला-लय नख मनि गन भूखित पद पल्लव हिय लाई । निज मन हित मनु सेतु बनावत जावक रेख सुहाई ॥ ६ ॥ इमि बलबीर निठुर बन बिहरत संग लै दूजी नारी । ता हित तरुतर बैठि बिलोकत बाट वृथा हम हारी ॥ ७ ॥ यों हरि रस मय होय कहति सखियन सों व्याकुल प्यारी । सो कवि-वर जयदेव कह्यो हरिचन्द कलुख कलि हारी ॥ ८ ॥

देशांकरागेणरूपकतालेनगीयते।

अनिलतरलकुवलयनयनेन ॥ तपतिनसाकि-सलयशयनेन ॥ सखियारमितावनमालिना ॥ ध्रु०॥१॥ विकसितसरसिजललितमुखेन ॥ स्फुट-तिनसामनसिजविशिखेन ॥ २ ॥ अमृतमधुरतर-

मृदुवचनेन ॥ ज्वलतिनसामलयजपवनेन ॥ ३ ॥ स्थलजलरुहरुचिकरचरणेन ॥ लुठतिनसाहिमकरकिरणेन ॥ ४ ॥ सजलजलदसमुदयरुचिरेण ॥ दलतिनसाह्लादिचिरविरहेण ॥ ५ ॥ कनकनिकषरुचिशुचिवसनेन ॥ श्वसतिनसापरिजनहसनेन ॥६॥ सकलभुवनजनवरतरुणेन ॥ वहतिनसारुजमतिकरुणेन ॥ ७ ॥ श्रीजयदेवभणितरमणेन ॥ प्रविशतुहरिरपिहृदयमनेन ॥ ८ ॥

इतिश्रीगीतगोविंदेषोडशःप्रबंधः ।

कमललोचन पिया जाहि गरलाइ है । सो न सजनौं कबहुं विरह दुख पाइ है ॥ देखि किसलय सेज सो न दुख मानि है । प्रान प्रीतमहि निज निकट करि जानि है ॥ १ ॥ अमल कोमल कमल बदन हिय धारि है । तेहि न सर कुटिल कामहुं कबहुं मारि है ॥२॥ अमृत मधु मधुर पिय बच स्रवन पारि है । ताहि अति मलिन मलयानिल न जारि है ॥ ३ ॥ थलकमल सम चरन कारन हिय चाहि है । ताहि चन्दहुं न निज किरिन सर दाहि है ॥ ४ ॥ श्यामसुन्दर सजल जलद तन लागि है । तासु हिय कबहुं नहिं बिरह दुख पागि है ॥५॥ कनक सम पीतपट लपटि मुख सानि है । सो न गुरुजन हंसन संक जिय मानि है ॥ ६ ॥ तरुन मनि कृष्ण सौं मुरत सुखठानि है । सो न सपनेहुं कबौं बिरह दुख जानि है ॥ ७॥ सुकबि जयदेव कृत गीत जो गाइ है । सो न हरिचन्द भव दुखन घबराइ है ॥ ८ ॥ १७ ॥

भैरवरागेणयतितालेनगीयते ।

रजनिजनितगुरुजागररागकषायितमलसनिमे-
षं ॥ वहतिनयनमनुरागमिवस्फुटमुदितरसाभिनि-
वेशं ॥ १ ॥ हरिहरियाहिमाधवयाहिकेशवमावद-
कैतववादं ॥ तामनुसरसरसीरुहलोचनयातवहर-
तिविषादं ॥ ध्रु० ॥ कज्जलमीलनविलोचनचुंबन-
विरचितनीलिमरूपं ॥ दशनवसनमरुणंतवकृष्ण-
तनोतितनोरनुरूपं ॥ २ ॥ वपुरनुवहतितवस्मर-
संगरखरनखरक्षतरेखं ॥ मरकतशकलकलितकल-
धौतलिपेरिवरतिजयलेखं ॥ ३ ॥ चरणकमलग-
लदलक्तकसिक्तमिदंतवहृदयमुदारं ॥ दर्शयतवि-
बहिर्मदनद्रुमनवकिशलयपरिवारं ॥ ४ ॥ दशन-
पदंभवदधरगतंममजनयतिचेतसिखेदं ॥ कथयति
कथमधुनापिमयासहतववपुरेतदभेदं ॥ ५ ॥ बहि
रिवमलिनतरंतवकृष्णमनोपिभविष्यतिनूनं ॥ क-
थमथवंचयसेजनमनुगतमसमशरज्वरदूनं ॥ ६ ॥
भ्रमतिभवानबलाकवलायवनेषुकिमत्रविचित्रं ॥ प्र-
थयतिपूतनिकैववधूवधनिर्दयबालचरित्रं ॥ ७ ॥
श्रीजयदेवभणितरतिवंचितखंडितयुवतिविलापं ॥
शृणुतसुधामधुरंविबुधा विबुधालयतोपिदुरापं ॥८॥

इतिश्रीगीतगोविंदेसप्तदशःप्रबंधः ।

भैरव।

हम सों झूठ न बोलहु माधव जाहु जू केशव जाओ।
जो जिय बसी रैन निवसे जहं ताही कौं गर लाओ ॥ ध्रु०॥
अनिशारे हग आलस भीने पलकें घुरि घुरि जाहीं। जागि
निशा रस पागि न प्रगटत निज अनुराग लखाहीं ॥ १ ॥ बार
बार चूमन सों रस भरि तिय जुग हग कजरारे। लाल रहे
तुव अधर लाल पै भए अङ्ग मम कारे ॥ २ ॥ रतिरन
अभिरत स्याम सुभग तन नखछत लखत सुहायो ॥ मदन
नील पट कनक लेखनी मनु जयपत्र लिखायो ॥ ३ ॥ पिय
तुव हिय तिय पद को जावक लखहु न कैसो सोहै। मनु
नियकाम लता उलही है पल्लव पसरि रह्यो है ॥ ४ ॥ तुम
अति निठुर तदपि हम तुम सों तनिकहु बिलग न प्यारे।
तुव अधरन रद छद पै ताकी पिय उर पीर हमारे ॥ ५ ॥
तन जिमि कारो तिमि मनहू तुव कुटिल कपट सों कारो।
अपनो जानि औरहू हम कहं बाद मदनानल जारो ॥ ६ ॥
वन वन बधुन बधन हित डोलत निरदय बने सिकारी।
यामें अचरज नाहिं तुम प्रथमहि नारि पूतना मारी ॥ ७ ॥
सुनि तियबचन सरोस पिया हठि लीनी कंठ लगाई। श्री
जयदेव सुकवि हरिचन्द विलास कथा सोइ गाई ॥ ८ ॥ १८॥

गुर्जरीरागेणयतितालेगीयते।

हरिरभिसरतिवहतिमधुपवने ॥ किमपरमधिकसुखं-
सखिभुवने ॥१॥ माधवेमाकुरुमानिनिमानमये ॥ध्रु०॥
तालफलादपिगुरुमतिसरसं ॥ किंविफलीकुरुषेकु-

चकलशं ॥ २ ॥ कतिनकथितामिदमनुपदमाचिरं ॥ मापरिहरहरिमतिशयरुचिरं ॥ ३ ॥ किमितिवि-षीदसिरोदिषिविकला ॥ विहसतियुवतिसभातव-सकला ॥ ४ ॥ मृदुनलिनीदलशीतलशयने ॥ हरि-मवलोकयसफलयनयने ॥ ५ ॥ जनयसिमनसि-किमितिगुरुखेदं । शृणुममवचनमनीहितभेदं ॥६॥ हरिमुपयातुवदतुबहुमधुरं ॥ किमितिकरोषिहृदय-मतिविधुरं ॥ ७ ॥ श्रीजयदेवभणितमतिललितं ॥ सुखयतुरसिकजनंहरिचरितं ॥ ८ ॥

मानी माधव पिय सों मानिनि मान न करु मम मान कही । बहत पवन लखि हरि उठि आए तू कोहि मुख घर बैठि रही ॥ १ ॥ कुच जुग कलस ताल फल सी गुरु मरम तिनहि कित बिफल करै । बार बार सखि तोहि समझावति किन सुन्दर हरि सों बिहरै ॥ २ ॥ बिलपति बिकल तोहि लखि सखि गन हंसहिं न तू तऊ लाज धरै । बैठे सजल नलिन दल सेजन हरि लखि किन दृग पीर हरै ॥ ३ ॥ किन जिय खेद करति सुनु मम बच हरि सों मिलि मृदु बोलि अली । मुनि जयदेव सखी हरिचन्द कथन निज उर दुख दूर दरी ॥ ४ ॥ १९ ॥

देशवराडीरागेण आडवतालेगीयते ।

वदसियदिकींचिदपिदंतरुचिकौमुदी । हर-तिदरतिमिरमतिघोरं ॥ स्फुरदधरसीधवेतववदन-

चंद्रमा ॥ रोचयतिलोचनचकोरं ॥ १ ॥ प्रियेचा
रुशीले ॥ मुंचमयिमानमनिदानं ॥ सपदिमदना-
नलोदहतिममसानसं ॥ देहिमुखकमलमधुपानं ॥
ध्रु० ॥ सत्यमेवासियदिसुदतिमयिकोपिनी ॥
देहिखरनखरशरघातं ॥ घटयभुजबंधनंजनय-
रदखंडनं ॥ येनवाभवतिसुखजातं ॥ २ ॥
त्वमसिममभूषणंत्वमसिममजीवनं ॥ त्वमसिमम
भवजलधिरत्नं ॥ भवतुभवतीहमयिसतत-
मनुरोधिनी ॥ तत्रममहृदयमतियत्नं ॥ ३ ॥
नीलनलिनाभमपितन्वितवलोचनं ॥ धारयति-
कोकनदरूपं ॥ कुसुमशरबाणभावेनयदिरं-
जयसि ॥ कृष्णमिदमेतदनुरूपं ॥ ४ ॥ स्फुरतुकुच-
कुंभयोरुपरिमणिमंजरीरंजयतुतवहृदयदेशं ॥ रस-
तुरसनापितवघनजघनमंडलेघोषयतुमन्मथनिदे -
शं ॥ ५ ॥ स्थलकमलगंजनंममहृदयरंजनंजनित-
रतिरंगपरभागं ॥ भणमसृणवाणिकरवाणिचरण-
द्वयंसरसलसदलक्तकरागं ॥ ६ ॥ स्मरगरलखंडनं-
ममशिरसिमंडनं ॥ देहिपदपल्लवमुदारं ॥ ज्वलति-
मयिदारुणोमदनकदनानलो ॥ हरतुतदुपहितवि-
कारं ॥ ७ ॥ इतिचटुलचाटुपटुचारुमुरवैरिणो ॥

राधिकामधिवचनजातं ॥ जयति*जयदेवकविभारतीभूषितं ॥ मानिनीजनजनितशातं ॥ ८ ॥

इतिश्रीगीतगोविंदेऊनविंशतिमःप्रबंधः ।

मान तजि मानु मनु प्रानप्यारी । दहत मोहि मदन तुव विरह जर जाल मों अधर मधुपान दै लै उबारी ॥ ध्रु० ॥ मधुर कछु बोलि मुख खोलि जामों निरखि दसन दुति बिरह तम दूर नाऊं । अधर मधु मधुर सुन्दर सुधा सिंधु मुख ससिहि लखि दृग चकोरहि जुड़ाऊं ॥ १ ॥ सांचही होइ रूठी जुपै कोप करि तौ न क्यों नयन सर मोहि मारै । बांधि भुज पास मों अधर दसन मर्दसि क्यों न अपराध बदलो निवारै ॥ २ ॥ तुही मम प्रान धन भव जलधि रतन तू तोहि लगि जगत हौं जीव धारौं । तनिक जो तू कृपा कोर सों दृसि लखै तौ जगहि तोहि पर वारि डारौं ॥ ३ ॥ नील नलिनी सुदल सरिस तुव नयन जुग कोप सों कोकनद रूप धारे । तौन किन जानि मोहि कृष्ण हति काम सर अरुन करु तरुन अनुराग भारे ॥ ४ ॥ क्यों न सोभित करति कुम्भ कुच हार सों होय जामों दुगुन होइ राजै । सघन निज जघन पैं बांधि किङ्किनि कलित मदन नौबति सरिस मुरत बाजै ॥ ५ ॥ थल कमल मान हर मम हृदय प्रान कर सरस रति रंग तुव चरन प्यारे । कहै तो लाइ हिय मैं महावर भरौं हरौं जिय ताप आनन्द धारे ॥ ६ ॥ मदन सन्ताप को मर्दन मोहि कदन हित दहत अति अगिनितन मैं बढ़ाई ।

* पाठान्तर—जयति पद्मावती रमण जयदेवकवि भारती भणितमतिशातम् ।

चरन पल्लव जुगल गरल हर सीस मम धारि छिन तेहि तुरत दै बुझाई ॥ ७ ॥ भाखि इमि चतुर हरि पगन परि तियहि रिझयो लियो मङ्क तजि चङ्क जाई । सोई पद्मावती प्रान जयदेव कवि कही हरिचन्द लीला बनाई ॥ ८ ॥ २० ॥

वसंतरागेणरूपकतालेगीयते ।

विरचितचाटुवचनरचनंचरणरचितप्रणिपातं ॥
संप्रतिमंजुलवंजुलसीमनिकेलिशयनमनुयातं ॥
मुग्धेमधुमथनमनुगतमनुसरराधिके ॥ ध्रु० ॥
घनजघनस्तनभारभरेदरमंथरचरणविहारं ॥ मुख-
रितमणिमंजीरमुपैहिविधेहिमरालविकारं ॥ २ ॥
शृणुरमणीयतरंतरुणीजनमोहनमधुरिपुरावं ।
कुसुमशरासनशासनबंदिनिपिकनिकरेभजभावं ॥ ३ ॥
अनिलतरलकिसलयनिकरेणकरेणलतानिकुरंबं ॥
प्रेरणमिवकरभोरुकरोतिगतिंप्रतिमुंचविलंबं ॥ ४ ॥
स्फुरितमनंगतरंगवशादिवसूचितहरिपरिरंभं ॥
पृच्छमनोहरहारविमलजलधारममुंकुचकुंभं ॥ ५ ॥
अधिगतमखिलसखीभिरिदंतववपुरपिरतिरणसज्जं ।
चंडिरसितरशनारवडिंडिममभिसरसरसमलज्जं ६ ॥
स्मरशरसुभगनखेनसखीमवलंब्यकरेणसलीलं ॥
चलवलयक्कणितैरवबोधयहरिमपिनिजगतिशीलं ॥ ७ ॥
श्रीजयदेवभणितमधरीकृतहारमुदासितवामं ॥ हरि

विनिहितमनसामधितिष्ठतुकंठतटीमभिरामं ॥ ८॥

इतिश्रीगीतगोविंदेविंशतिमःप्रबंधः ।

उठि चलु मोहन ढिग प्यारी । मंजुल वंजुल कुञ्ज बिलोकत तुव मग गिरिधारी ॥ गनावत तो कहं जे हारे । कियो विनय बहु तुव पद पैं निज सीस रहे धारे ॥ सुरत करि उनकी तू नारी । मंजुल वंजुल कुंज बिलोकत तुव मग गिरिधारी ॥ १ ॥ पहिरि पग मनि नूपुर सोरे पीन पयोधर सघन जघन भर चलु धीरे धीरे । चाल सों हंसहि लजवाई । चलु सुनु तरुनी ञन मोहन मनमोहन बच धाई ॥ सफल करु श्रवनहिं में बारी । मंजुल० ॥ २ ॥ कुञ्ज में सुनु कोइल बोलैं । काम नृपति के बन्दीजन से मदन बिरद खोलैं । चलत मलयानिल मदमाती । नव पल्लव हिलि तोहि बुलावत निकट बिरिक पांती ॥ बिलंब न करु गजगति-वारी । मंजुल वंजुल० ॥ ३ ॥ देखु फरकत जोबन दोऊ । मदनरङ्ग सों उमड़ि अलिङ्गन चहत पियहि सोऊ ॥ गवन हित सगुन मनहुं कीने । हीर हार जलधार भरे जुग घट मनमुख लीने । चूक मति समयहि बलिहारी । मंजुल वंजुल० ॥४॥ सखिन तोहि रतिरन हित साज्यो । तो किन अबलौं मदन भेरि तुव किङ्किन रव बाज्यो ॥ द्रवत तजि लाज न क्यों रूठी । चलति न क्यों सखि कर गहि बैठी मानिनि ह्वै झूठी । बिना तुव व्याकुल बनवारी । मंजुल वंजुल० ॥ ५ ॥ कह्यौ लै मानिनि मम मानी । सूचत रति अभिसार बजावत चलु कङ्कन रानी ॥ मिलत लखि तोहि

हम सुख पावैं । जुगल रूप जयदेव सुकवि लखि हिय मध पधरावैं । छोड़ हरिचन्दहु बलिहारी । मंजुल वंजुल कुंज बिलो-कत तुव मग गिरिधारी ॥ १६ ॥ २१ ॥

वराडीरागेणआडवतालेनगीयते ।

मंजुलतरकुंजतलकेलिसदने ॥ प्रविशराधे ॥ माधवसमीपमिहविलस ॥ रतिरभसहसितवदने ॥१॥ नवभवदशोकदलशयनसारे ॥ प्र० ॥ कुचकलशतरलहारे ॥ २ ॥ कुसुमचयरचितशुचिवासगेहे ॥ प्र० ॥ कुसुमसुकुमारदेहे ॥ ३ ॥ मृदुचलमलयपवनसुरभिशीते ॥प्र०॥ रसवलिततललितगीते ॥४॥ विततबहुवल्लिनवपल्लवघने ॥ प्र० ॥ चिरमीलितपीनजघने ॥५॥ मधुमुदितमधुपकुलकलितरावे ॥ ॥ प्र० ॥ मदनरभसरसभावे ॥ ६ ॥ मधुतरलपिकनिकरनिनदमुखरे ॥ प्र० ॥ दशनरुचिरुचिरशिखरे ॥ ७ ॥ विहितपद्मावतीसुखसमाजे ॥ कुरुमुरारेमंगलशतानिभणतिजयदेवकविराजराजे ॥८॥

इतिश्रीगीतगोविंदेएकविंशतिमःप्रबंधः ।

माधव ढिग चल राधाप्यारी । विलस पिया गल मैं भुज धारी ॥ ध्रु० ॥ मंजु कुंज मधि सेज बिछाई । बिहर तहां हंसि हंसि सुखदाई ॥ माधव ढिग० ॥१॥ कुच कलसन पर तरलित माला । बिहर असोक सेज पर बाला ॥ माधव ढिग० ॥ २ ॥ त्रिविध कुसुम लै कुंजन बांधे । विलस कुसुम

कोमल तन राधे ॥ माधव ढिग० ॥ बहत सीत मलयानिल धाई। विहर सुरत रत हरि गुन गाई ॥ माधव ढिग० ॥४॥ सघन जघन कदु मफन मुहाए। लखु पल्लव बल्लिन लपटाए॥ माधव ढिग० ॥ ५ ॥ गूंजत मधुप मदन मदमाती। विहर कृष्ण संग रति रस राती ॥ माधव ढिग० ॥ ६ ॥ सुनु गावत पिक काम बधाई। चलु लै निज पिय कों हिय लाई ॥ माधव ढिग० ॥ ७ ॥ कवि जयदेव केलि रस गावै। हरीचन्द सुनि जनम सिरावै ॥ ८ ॥ २२ ॥

वराडीरागेणरूपकतालेगीयते।

राधावदनविलोकनविकसितविविधविकारबिभंगं। जलनिधिमिवविधुमंडलदर्शनतरलिततुंगतरंगं ॥१॥ हरिमेकरसंचिरमभिलषिताविलासं ।। सा ददर्शगुरुहर्षवशंवदवदनमनंगनिवासं ।। धृ० ॥ हारममलतरतारसुरसिदधतंपरिलंबितदूरं ॥ स्फुटतरफेनकदंबकरंबितमिवयमुनाजलपूरं ॥ २ ॥ श्यामलमृदुलकलेवरमंडनमधिगतगौरदुकूलं ।। नीलनलिनमिवपीतपरागपटलभरवलयितमूलं ॥ ३ ॥ तरलदृगंचलचलनमनोहरवदनजनितरतिरागं । स्फुटकमलोदरखेलितखंजनयुगमिवशरदितडागं ॥४॥ वदनकमलपरिशीलनमीलितमिहिरसमकुंडलशोभं। स्मितरुचिरुचिरसमुल्लसिताधरपल्लवकृतरतिलोभं॥५ शशिकिरणच्छुरितोदरजलधरसुंदरकुसुमसुकेशं ।

निसिरोद्धितविधुमंडलनिर्मलमलयजतिलकनिवेशं॥६
विपुलपुलकभरदंतुरितंरतिकेलिकलाभिरधीरं ।
मणिगणकिरणसमूहसमुज्वलभूषणसुभगशरीरं॥७॥
श्रीजयदेवभणितविभवोद्दिगुणीकृतभूषणभारं ।
प्रणमतहृदिविनिधायहरिंभवजलसुकृतोदयसारं॥८

इतिश्रीगीतगोविंदद्वाविंशतितमःप्रबंधः ।

राधा कौशिकुंज मधि जाई । बैठे बाट बिलोकत निरखे रत उगमी हरिराई ॥ ध्रु० ॥ राधा ममिमुख निरखि हरखि-तन रम समुद्र लहराने । रमन मनोरथ करत मदनवम विविध भाव प्रगटाने ॥१॥ स्याम सुभग हिय पर झुमि मोहत सुन्दर मोतिन माला । जमुनाजल मनु सेत कमल की सोभित छीन रमाला ॥२॥ मृगमद सोचक मेचक तन पैं पीत बसन लपटायो । मानहु नीलकमल पै पसयो पीतपराग सुहायो ॥ ३ ॥ रसमय तन में सुन्दरवदन बिलोचन जुग मतवारे । सरद सरोवर कमलनि खेलत जुग खंजन अनि-यारे ॥ ४ ॥ कमल वदन में दुहुं दिसि कुण्डल रवि से सुभग लखाहीं । हिलत अधर मुसुकात मनहुं पिय मुख चूमन ललचाहीं ॥ ५ ॥ वारन कुसुम गुथे मनु घन महं कहुं कहुं चांदनि राजै । नव ससि अरुन किरिन सम सिर पैं कुंकुम तिलक बिराजै ॥ ६ ॥ मनिगन भूषन भूषित सब अङ्ग सुन्दर सुभग सरीरा । पुलकित तन रति आतुर बैठे मोहन पिय बल-बीरा ॥ ७ ॥ श्रीजयदेव कथित हरि को बपु जा जिय में छिन आवै । सो हरिचन्द धन्य जग में निज जीवन को फल पावै ॥ ८ ॥ २२ ॥

विभासरागेणएकतालीतालेनगीयते ।

किसलयशयनतलेकुरुकामिनिचरणनलिनविनिवेशं।
तवपदपल्लववैरिपराभवमिदमनुभवतुसुवेशं ॥
क्षणमधुनानारायणमनुगतमनुसरमोराधिके॥ध्रु०॥१॥
करकमलेनकरोमिचरणमहमागमितासिविदूरं ।
क्षणमुपकुरुशयनोपरिमामिवनूपुरमनुगतिशूरं ॥२॥
वदनसुधानिधिगलितममृतमिवरचयवचनमनुकू -
लं ॥ विरहमिवापनयामिपयोधररोधकमुरसिदुकू -
लं ॥ ३ ॥ प्रियपरिरंभणरभसवलितमिवपुलकित-
मन्यदुरापं ॥ मदुरसिकुचकलशंविनिवेशयशोषय-
मनसिजतापं ॥ ४ ॥ अधररसुधारसमुपनयभामि-
निजीवयमृतमिवदासं ॥ त्वयिविनिहितमनसंवि-
रहानलदग्धवपुषमविलासं ॥ ५ ॥ शशिमुखिमुख-
रयमणिरसनागुणमनुगुणकंठनिदानं ॥ मम्श्रुति-
युगुलेपिकरवविकलेशमयचिरादवसादं ॥ ६ ॥ मा-
मतिविफलरुषाविफलीकृतमवलोकितुमधुनेदं ॥ मी-
लितिलज्जितमिवनयनंतवविरमविसृजरतिखेदं ॥७॥
श्रीजयदेवकवेरिदमनुपदनिगदितमधुरिपुमोदं ॥
जनयतुरसिकजनेषुमनोरमरतिरसभावविनोदं ॥८॥

इतिश्रीगीतगोविंदेत्रयोविंशतिमःप्रबंधः ।

राधे मेरी आस पुजाओ । प्रानपिया हरि की कहनो करि मिल पिय सों सुख पाओ ॥ ध्रु० ॥ नव किसलय सों सेज संवारी कोमल पद तहं धारी । हरु पल्लव अभिमानहि अरुन चरन दरसाइ पियारी ॥ १ ॥ अतिश्रम भयो प्रान-प्यारी तोहि चरन पलोटौं तेरे । नूपुर धरौं उतारि सेज पर बैठु आइ ढिग मेरे ॥ २ ॥ बोलि मधुर कछु छिन निज पिय को व्याकुल हियो जुड़ावै । कहु तो उर सों अंचल छाया उतारि अधिक सुख पावै ॥३॥ पिय गर लगन हेत फरकौंहैं जुगल कलस कुच प्यारी । पिय पुलकित हिय लाइ हरत छिन मदनताप सुकुमारी ॥ ४ ॥ निज बिरहानल तपत देखि मोहि क्यौं न दया उर लावै । अधर मधुर रस सुधा स्वाद दै छिन मोहि मरत जियावै ॥ ५ ॥ तुव बिन कोकिल नाद सुनत रहे स्रवन सदा दुख पाई । दै तिन कहं सुख भाखि मधुर कछु किङ्किन कलित बजाई ॥ ६ ॥ नाहक मान ठान दुख दीनो अब मो दिस लखु प्यारी । नीचे नैनन लाज भरी करु दै रति सुख बलिहारी ॥ ७ ॥ श्री जयदेव सुकवि हरि भाखित सरस गीत जो गावै । ता जिय मैं हरिचन्द प्रेम बस काम बिकार न आवै ॥ ८ ॥ २४ ॥

रामकरीरागेणयतितालेगीयते ।

कुरुयदुनंदनचंदनशिशिरतरेणकरेणपयोधरे ॥ मृगमदपत्रकमत्रदनोभवमंगलकलशसहोदरे ॥ निजगादसायदुनंदने ॥ क्रीडतित्हृदयानंदने ॥ ध्रु० ॥ १ ॥ अलिकुलगंजनसंजनकंरतिनायक

सायकमोचने ॥ त्वदधरचुंबनलंबितकज्जलमुज्वल-
यप्रियलोचने ॥ २ ॥ नयनकुरंगतरंगविलासनि-
रोधकरेश्रुतिमंडले ॥ मनसिजपाशविलासधरेशुभ-
वेशनिवेशयकुंडले ॥ ३ ॥ भ्रमरचयंरचयंतमुपरि-
रुचिरंसुचिरंममसन्मुखे ॥ जितकमलेविमलेपरिकर्म-
यनर्मजनकमलकंमुखे ॥४॥ मृगमदरसवलितंललितं
कुरुतिलकमलिकरजनीकरे ॥ विहितकलंककलंक-
कमलाननविश्रामितश्रमसीकरे ॥ ५ ॥ ममरुचिरे-
चिकुरेकुरुमानदमनसिजध्वजचामरे ॥ रतिगलि-
तेललितेकुसुमानिशिखंडिशिखंडकडामरे ॥ ६ ॥
सरसघनेजघनेममशंबरदारणवारणकंदरे ॥ मणि-
रसनावसनाभरणानिशुभाशयवासयसुंदरे ॥ ७ ॥
श्रीजयदेववचसिशुभदेहृदयंसदयंकुरुमंडने ॥ हरि-
चरणस्मरणामृतनिर्मितकलिकलुषज्वरखंडने ॥८॥

इतिश्रीगीतगोविंदेचतुर्विंशतिःप्रबंधः ।

यह सुनि राधा पिय सों बोली । मान छाड़ि निज प्रान-नाथ सों गांठ हृदय की खोली ॥ ध्रु० ॥ मङ्गल कलस सरिस मम जुग कुच म्टग मद चित्र बनाओ । चन्दन से सीतल बार निय धरि जिय को ताप मिटाओ ॥ १ ॥ कामबान चलि कुल मद गंजन नैननि अंजन प्यारे । तुव चूमन सों फैलि रह्यो तेहि देहु संवारी दुलारे ॥ २ ॥ दृग कुरङ्ग गति मेड़

सरिस मम स्रवनन पिय गिरिधारी । काम फांस से कुण्डल प्यारे निज कर देहु संवारी ॥ ३ ॥ मेरे मुख पर प्रीतम सुन्दर निज कर बिरचि संवारी । चपल कमल पर अलि कुल सरिस अलक निरुवारि बगारी ॥ ४ ॥ अस सीअरहि पोंछि मम सिर बिय निज कर रुचिर बनाओ । पूरन ससि पै मृग छाया सों मृग मद तिलक लगाओ ॥ ५ ॥ मदन चौंर धुन से मम सुन्दर केस पास निरुवारी । केकि पच्छ से वारन गूथहु सुन्दर कुसुम संवारी ॥ ६ ॥ सरस सघन मम जंघन पर कल किङ्किनि कलित सजाओ । सुन्दर बसन अभूषन रचि रचि मम अङ्गनि पहिराओ ॥ ७ ॥ इमि राधा बच सुनत कृष्ण गर लगि बिहरे सुखपायो । सो जयदेव सुकबि हरिचन्द बिहार कुतूहल गायो ॥ ८ ॥ २५ ॥

दोहा ।

अष्टपदी चौबीस इमि, गाई कवि जयदेव ।
भाषा करि हरिचन्द सोइ, कही प्रेम रस भेव ॥ १ ॥
गुप्त मन्त्र सम पद सबै, प्रगटे भाषा माहिँ ।
यह अपराध महा कियो, यामैं संसय नाहिँ ॥ २ ॥
छमिहैं निज जनजानि सो, जुगल दास तकसीर ।
हरिहैं अपनो समुझि जिय, कठिन मोह भव पीर ॥३॥

इति श्रीहरिचन्द्र विरचित गीतगोविन्दानन्द समाप्त ।